

# हिंदी

(कक्षा-11)



माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज  
द्वारा प्रकाशित

**Royalty Paid Book**



प्रथम संस्करण : 2023-24

द्वितीय संस्करण : 2025-26

© माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज

प्रकाशक : माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश  
प्रयागराज-211001

## सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रानिकी मशीनी, फोटो प्रतिलिपि, रिकार्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक किसी अन्य प्रकार से व्यापार, पुनर्विक्रय या किराये पर न दी जायेगी और न बेची जायेगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

**मूल्य ₹ 49.00**

पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण में 80 जी.एस.एम. मैपलीथो पेपर IS मार्क नवीनतम संशोधित BIS Specification 1848/2007 Updated Revised पेपर (सेतिया पेपर मिल्स लि., के. आर. पल्प एण्ड पेपर्स लिमिटेड, बिन्दल पेपर मिल्स लि., मोहित पेपर मिल्स लि., ट्राइडेन्ट लि.) के मानक का प्रयुक्त किया गया है।

मुद्रक एवं वितरक :

**राजीव प्रकाशन**

48/13A रामबाग, प्रयागराज

दूरभाष : 2402474, 2404980

# प्राक्कथन

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को परिवेश के प्रति संवेदनशील बनाना एवं समकालीन परिवर्तनों के बारे में समझ और दृष्टि का विकास करना है। इस महत्वपूर्ण उद्देश्य की सफलता के लिए समयानुसार पाठ्य-पुस्तकों का अद्यतन होना परमावश्यक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 का उद्देश्य एक ऐसी शिक्षा-प्रणाली को तैयार करना है, जो भारत के सभी विद्यार्थियों में ज्ञान और कौशल का विकास करते हुए भारत को एक 'वैश्विक ज्ञान-महाशक्ति' के रूप में स्थापित करे। 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति' इस बात पर बल देती है कि भारत को 'ज्ञान-महाशक्ति' बनाने में भाषा की भूमिका अहम होगी इसलिए भारतीय भाषाओं की जीवंतता बरकरार रखते हुए सृजनात्मक लेखन की पहुँच व्यापक बनायी जाए। साहित्य की पहुँच व्यापक समाज तक बनाने में पुस्तकें सेतु का कार्य करती हैं। माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज द्वारा इस दिशा में कार्य करते हुए 'आजादी का अमृत महोत्सव वर्ष' में हाईस्कूल और इण्टरमीडिएट की पाठ्यपुस्तकों का नवीन परिवर्तित संस्करण प्रस्तुत किया जा रहा है।

हिंदी साहित्य का संसार बहुत व्यापक है। साहित्य की सार्थकता इस बात में निहित है कि वह मनुष्य को एक संवेदनशील इंसान बनाने में या बनाये रखने में अपनी स्पष्ट भूमिका का निर्वहन करे। हिंदी-साहित्य ने सदैव इस चुनौतीपूर्ण दायित्व को स्वीकारा है और उसका निर्वाह किया है। हिंदी 'भाषा' और 'साहित्य' दोनों स्तरों पर एक समृद्ध परंपरा का ध्यान रखते हुए हमारा उद्देश्य विद्यार्थियों में भाषायी योग्यता का विकास करना, उनमें साहित्य की विभिन्न विधाओं के प्रति अनुराग उत्पन्न करना, उन्हें साहित्यिक नवीनता एवं उपलब्धियों से परिचित कराते हुए सफल इंसान बनाना है। हमारा प्रयास है कि पुस्तक में संकलित 'पाठ्य-सामग्री' विद्यार्थियों में मौलिक चिन्तन, समीक्षात्मक दृष्टिकोण एवं सृजनात्मक प्रतिभा के विकास के साथ-साथ उनमें मानवीय मूल्यों के प्रति गहरी आस्था उत्पन्न करने वाली, भारतीय सांस्कृतिक चेतना जाग्रत करने वाली तथा उन सब में राष्ट्रीय भावना भरने वाली हो। हिंदी साहित्य का उद्देश्य रहा है कि प्रतिबद्ध नागरिकों का निर्माण किया जाए ताकि समाज और देश की बौद्धिक उन्नति की पताका वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठापित हो सके। इस पुस्तक के माध्यम से हमारी हर संभव कोशिश है कि हम विद्यार्थियों को ऐसी पाठ्यसामग्री उपलब्ध करायें जो उनकी अभिरुचियों का परिमार्जन करते हुए उनमें यथोचित अभिवृत्तियों, भावात्मक एकता, आत्मीय संवेदनशीलता तथा वैचारिक प्रखरता का विकास कर सके। अतः हिंदी की इस पाठ्यपुस्तक का अध्ययन एवं वाचन अत्यंत उपयोगी और ज्ञानवर्द्धक है। संस्कृत भाषा की एक सामान्य समझ विकसित हो सके, इसका भी पुस्तक में ध्यान में रखा गया है।

माध्यमिक शिक्षा परिषद् उत्तर प्रदेश, प्रयागराज ने पाठ्यक्रम और परीक्षा प्रणाली के सभी पक्षों को दृष्टि में रखते हुए विद्वान परामर्शदाताओं, सुयोग्य एवं अनुभवी विषय-विशेषज्ञों तथा विभागीय सदस्यों के अथक परिश्रम से कक्षा 9-10 एवं 11-12 के लिए हिंदी की सुंदर एवं उत्कृष्ट पुस्तकें तैयार करायी हैं। आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि ये पुस्तकें शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए अत्यंत बोधगम्य और उपयोगी साबित होंगी। सुझावों का स्वागत रहेगा।

डॉ. महेन्द्र देव

निदेशक (मा0) / सभापति  
माध्यमिक शिक्षा परिषद्  
उत्तर प्रदेश, प्रयागराज

# पाठ्यपुस्तक-निर्माण-समिति

## संरक्षक :

श्री दीपक कुमार, अपर मुख्य सचिव, माध्यमिक शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश शासन।

## निर्देशक :

डॉ० महेन्द्र देव, शिक्षा निदेशक (माध्यमिक), उत्तर प्रदेश लखनऊ।

## संयोजक :

श्री दिव्यकान्त शुक्ल, सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज।

## सह-संयोजक :

श्री अशोक कुमार गुप्ता, अपर सचिव (पा०पु०रा०), माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज।

श्रीमती श्रद्धा शुक्ला, उपसचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज।

श्रीमती मनीषा कुशवाहा, सहायक सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज।

## परामर्शदाता मण्डल

1. प्रो. उमाकांत यादव, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
2. डॉ. कुमार वीरेंद्र, एसोसिएट प्रो., हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
3. डॉ. आशुतोष पार्थश्वर, एसोसिएट प्रो., हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
4. डॉ. अमृता, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
5. डॉ. लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।
6. डॉ. जनार्दन, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

## विषय-विशेषज्ञ

1. डॉ० श्रीश कुमार उपाध्याय, असिस्टेंट प्रोफेसर, काशी नरेश पी० जी० कॉलेज, ज्ञानपुर भदोही।
2. उमेश दत्त तिवारी, असिस्टेंट प्रोफेसर, काशी नरेश राजकीय पी० जी० ज्ञानपुर, भदोही।
3. डॉ० सन्तोष कुमार मिश्र, प्रधानाचार्य, श्री लाल बहादुर शास्त्री इ० का० चायल, कौशाम्बी।
4. मनुजेन्द्र मिश्र, प्रवक्ता, गोमती इण्टर कॉलेज, फूलपुर, प्रयागराज।
5. डॉ० अनीता, प्रवक्ता, राजकीय बालिका इण्टर कॉलेज, मुंगारी, करछना, प्रयागराज।
6. अरुणा यादव, प्रवक्ता, राजकीय बालिका इण्टर कॉलेज, फूलपुर, प्रयागराज।
7. जयशंकर मिश्र, प्रवक्ता, अग्रसेन इण्टर कॉलेज, प्रयागराज।
8. अनिता पाल सिंह, प्रवक्ता, नीना थापा इण्टर कॉलेज, गोरखपुर छावनी, गोरखपुर।

## समन्वयक

सरोज यादव, साहित्यिक सहायक, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ० प्र० प्रयागराज।

इन्दु यादव, शोध सहायक, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ० प्र० प्रयागराज।

## चित्रांकन

आशीष नारायन।



# भूमिका

किसी भी राष्ट्र एवं समाज की सभ्यता और संस्कृति के स्पष्ट चित्रण का 'वहन' वहाँ का साहित्य करता है। एक उत्तम एवं श्रेष्ठ साहित्य अपने प्रगतिशील विचार, सृजनात्मक संस्कार एवं संवेदनाओं को लिखित स्वरूप में वैशिष्ट्य प्रदान करते हुए अपने युग का ढाँचागत स्वरूप तैयार करता है। साहित्य 'युग तथा समाज' की संवेदनाओं को समेकित करते हुए विद्यार्थियों में जीवन मूल्यों की स्थापना कर सके तथा साहित्य में जिस सुंदर और आदर्श समाज की कल्पना की गयी है, उस कल्पना को मूर्तरूप देने में सक्षम हो सके, जैसे मूल भाव को केंद्र में रखकर कक्षा 11 के विद्यार्थियों के लिए निर्धारित पाठ्य पुस्तक तैयार की गयी है।

प्रस्तुत पुस्तक में संकलित की गयी पाठ्यवस्तु पूर्व में संचालित पाठ्यक्रम का ही संशोधित और परिमार्जित रूप है। पूर्व में संकलित की गयी कुछ पाठ्यवस्तु अपने मूल स्वरूप से इतर हो गयी थी इसलिए विषय विशेषज्ञों और परामर्शदाताओं द्वारा संबंधित रचनाओं का उसके मूल स्रोत (मूल पाठ से) की गहनता से परीक्षण करके उससे मिलान करने का अक्षरशः प्रयत्न किया गया है उत्तर प्रदेश क्षेत्रफल और आबादी के दृष्टिकोण से बहुत बड़ा राज्य है। जिसके तहत यहाँ जनमानस में परस्पर सम्प्रेषण हेतु हिंदी की कई बोलियाँ, उपभाषा तथा अन्य भाषाएँ भी प्रयोग में लायी जाती हैं। अतः क्षेत्रीय भाषायी विविधता के कारण विद्यार्थियों को अपनी पाठ्यवस्तु समझने में कठिनाई का सामना करना पड़े, इसलिए उनके बौद्धिक स्तर के अनुरूप पाठ्यवस्तु को ग्राह्य बनाने हेतु भाषा के सरलीकरण एवं उसमें एकरूपता लाने का भरसक प्रयास किया गया है। इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा गया है कि रचनाओं की मौलिकता, भाषा प्रवाह एवं साहित्यिक सौंदर्य अप्रभावित रहे।

प्रस्तुत पुस्तक में सम्मिलित की गयी पाठ्यवस्तु पाँच खण्डों—पद्यखंड, गद्यखंड, संस्कृतखंड, संस्कृत—हिंदी व्याकरण खंड एवं कथा साहित्य में विभाजित है। गद्यखंड में हिंदी गद्य साहित्य के इतिहास के साथ साथ दस निबंधों को भी संकलित किया गया है जो अपने विचारों, भावों, उद्देश्यों और विधाओं के अनुरूप विद्यार्थियों के लिए उपयोगी हैं।

राष्ट्र-प्रेम एवं उसके विकास की भावना सर्वोपरि होती है इसी भाव से ओत—प्रोत भारतेंदु हरिश्चंद्र का निबंध 'भारत वर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?' पाठ्यक्रम में संकलित किया गया है जो विद्यार्थियों में सहयोग की भावना, उद्यमशीलता, साक्षरता, जागरूकता के लिए प्रेरित करने में सक्षम होगी। द्विवेदी युग के प्रवर्तक महावीर प्रसाद द्विवेदी का निबंध 'महाकवि माघ का प्रभात वर्णन' विद्यार्थियों में प्रकृति के प्रति प्रेम और संरक्षण की भावना पोषित करने तथा जागरूक करने के

साथ-साथ नैसर्गिक सौंदर्य के विविध आयामों के प्रति संवेदनशीलता के भाव जागृत कराने में सहयोगी होगा। सभ्यता और संस्कृति ही हमारे राष्ट्र का सार्वकालिक अलंकरण है जिसकी परिपुष्टि सरदारपूर्ण सिंह के निबंध 'आचरण की सभ्यता' से परिलक्षित होती है। महान् शिक्षाविद् डॉ० संपूर्णानंद का उत्कृष्ट निबंध 'शिक्षा का उद्देश्य' शिक्षा और संस्कार के मूल भाव पर ही केंद्रित है जो विद्यार्थियों के मनोबल को मजबूत करने के लिए सक्षम होगा, क्योंकि शिक्षा ही हमारी सभी समस्याओं का निदान करने के साथ ही सभी प्रश्नों का जवाब भी देती है क्योंकि यह सर्वविदित है "मानव युग हमेशा प्रश्न पक्ष रहा है, तो शिक्षा उत्तर पक्ष।" गद्य काव्य के प्रणेता रायकृष्ण दास की कृति 'आनंद की खोज एवं पागल पथिक' आत्मचिंतन और मननशीलता के लिए प्रेरित करती है। आधुनिक गद्य की सबसे लोकप्रिय विधा यात्रावृत्त "अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा" उद्देश्यपूर्ण पर्यटन देश-विदेश की संस्कृति, शिक्षा एवं धर्म के प्रति प्रेम और तादात्म्य स्थापित करने की भावना पर बल देती है। प्रतीकात्मक और लाक्षणिक शैली में लिखा गया रामवृक्ष बेनीपुरी का निबंध 'गेहूँ बनाम गुलाब' इन्द्रिय-संयम और आचरण के माध्यम से शारीरिक और मानसिक विकास में संतुलन बनाये रखने पर बल देती है। चरैवेति-चरैवेति ही सफल जीवन का मूलमंत्र है, परंतु बाहर की दुनिया में चलने के लिए कुछ महत्वपूर्ण वैधानिक नियम होते हैं, जिसका पालन करने से यात्रा सुखद और सुरक्षित होती है। इसी के मद्देनजर इस पाठ्यपुस्तक में 'सड़क-सुरक्षा शीर्षक लेख में यातायात से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण नियम बताए गए हैं। 'गंगा संरक्षण एवं पर्यावरण' लेख भावी पीढ़ी में तत्सम्बन्धी जागरूकता उत्पन्न करने में उपयोगी सिद्ध होगा, अतः इससे प्रकृति के प्रति जागरूकता एवं प्रेम की भावना विकसित करने का प्रयास किया गया है।

पद्यखंड में हिंदी साहित्य के भक्तिकाल एवं रीतिकाल के प्रमुखतः दस कवियों की रचनाओं के साथ पद्य साहित्य के संक्षिप्त इतिहास को भी पाठ्य पुस्तक में संकलित किया गया है। भक्तिकाल एवं रीतिकाल के कवियों की रचनाओं को पाठ्य पुस्तक में स्थान देने का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में काव्य सौंदर्य की समझ विकसित करना तथा संवेदना के साथ साथ अनुभूति एवं अभिव्यक्ति पक्ष का अपेक्षित विकास तथा साहित्य में रुचि उत्पन्न करना है। विद्यार्थियों की संवेदनशीलता और साहित्य की आनन्दभूत आस्वाद्यकता में स्तरीय वृद्धि के लिए कालजयी रचनाकारों/कवियों जैसे, कबीरदास, मलिक मुहम्मद जायसी, महाकवि सूरदास, गोस्वामी तुलसीदास, केशवदास, कविवर बिहारी लाल, महाकवि भूषण एवं विविधा के अंतर्गत रीतिमुक्त कवियों, घनानंद देव, सेनापति की रचनाओं के साथ साथ उनका संक्षिप्त जीवन एवं साहित्यिक परिचय भी दिया गया है। जो विद्यार्थियों के ज्ञानवर्धन के लिए उपयोगी होगा।

कथा साहित्य तो मानव सभ्यता की सहचर है। कोई भी कहानी कभी भी विचार, भाव अथवा उद्देश्य शून्य नहीं होती है। किसी एक घटना, पात्र अथवा समस्या आदि को केंद्र में रखकर लिखी

गई कहानी खुद को सम्पूर्णता के साथ प्रस्तुत करती है जो विद्यार्थियों को समाज के प्रति संवेदनशील और जागरूक बनाए रखने में सफल साबित होगी। हिंदी साहित्य में कहानी तत्वों के आधार पर उसे एक विधागत प्रमुखता प्रदान करने में जिन कहानीकारों और कथाकारों ने सहयोग दिया है। उनकी प्रसिद्ध कहानियों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है। विद्यार्थियों की सृजनात्मक प्रतिभा को विकसित करने के लिए कहानी की प्रवृत्तियाँ एवं कहानी तत्व के साथ-साथ कहानी की विकास यात्रा के विविध आयामों से परिचित कराने का प्रयास भी इस पुस्तक में किया गया है।

हमारी सभ्यता और संस्कृति की वाहक देववाणी 'संस्कृत भाषा' आज भी युगानुकूल हमारी गौरवपूर्ण पहचान भाषा के वैश्विक मानचित्र पर एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में हमारी गुरुतापूर्ण उपस्थिति बनाए रखने में सक्षम है। भावी पीढ़ी को संस्कृत भाषा साहित्य से जुड़े रहने के लिए हिंदी के पाठ्यक्रम में संस्कृत के 10 पाठ संकलित किये गये हैं जो विद्यार्थियों में संस्कृत भाषा के महत्त्व, हमारी सभ्यता संस्कृति की मूल पहचान से जोड़े रखने के साथ-साथ उनमें नैतिक मूल्यों के विकास करने में भी सक्षम होगी।

भाषा सम्प्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है। प्रयोग के आधार पर इसके चार कौशल होते हैं सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना। उक्त कौशल के विकसित रूप को स्थायित्व देने के लिए भाषा को अनुशासित करना पड़ता है जिसे व्याकरण कहा जाता है। साहित्यानुभूति के साथ-साथ विद्यार्थियों में अभिव्यक्ति कौशल को भी व्यवस्थित रूप से विकसित किया जा सके। इसके लिए पाठ्यक्रम में संस्कृत व्याकरण एवं हिंदी व्याकरण को भी यथोचित स्थान देने की कोशिश की गयी है।

यह तो सच है कि भाषा शब्दों से निर्मित होकर ही ऊर्जास्वित होती है लेकिन यह अनिवार्य सच है कि भाषा शब्दों पर ही समाप्त नहीं हो जाती है। इसके लिए उसका विभिन्न दृष्टिकोण से विश्लेषण करना अपेक्षित होता है। पाठ के अंत में शब्द एवं उसके अर्थ, केंद्रीय भाव, अनुभूति एवं अभिव्यक्ति, भाषा के रंग तथा अभ्यास के प्रश्न रखने के पीछे यही उद्देश्य रहा है कि विद्यार्थियों में हिंदी भाषा के प्रति प्रेम, रुचि एवं परिपक्वता विकसित की जा सके।

पुस्तक संपादन के पीछे के महत् उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो सके, इसके लिए यह अति आवश्यक है कि विद्यार्थियों को स्वाध्ययन के नियमानुकूल पाठों को घर पर पहले बोलकर पढ़ने का अभ्यास करना चाहिए, फिर मौन रहकर पाठों में व्यक्त विचार और संवेदनाओं पर चिंतन मनन करना चाहिए। इससे लाभ यह होगा कि उच्चारण में शुद्धता आएगी, पाठ में निहित विचारों को समझने का विवेक उत्पन्न होगा और समझ के साथ अच्छी सोच और दृष्टिकोण का विकास होगा। हमें आशा ही नहीं, बल्कि पूर्ण विश्वास है कि इस पुस्तक के अध्ययन, मनन, चिंतन, वाचन और प्रयोग से विद्यार्थियों की भाषिक क्षमता, उनकी मानसिक क्षितिज, जीवन जगत के संबंध में उनका ज्ञानार्जन संवर्धित होने

के साथ साथ नैतिक विकास होगा तथा साहित्य की विभिन्न विधाओं के प्रति औत्सुक्य और आकर्षण बढ़ेगा ।

पुस्तक में संकलित पाठों के चयन में और संपादन में साहित्यिक लोकतंत्र विवेकसंगत परंपरा, वस्तुपरक निष्पक्षता, सामाजिक सांस्कृतिक सद्भावना, राष्ट्रीयता की भावना, आधुनिकता बोध, सांविधानिक और मानवीय मूल्यों को यथासंभव ध्यान में रखा गया है ।

हम उन सभी रचनाकारों—लेखकों के प्रति नतमस्तक हैं, जिनकी रचनाएँ एवं कृतियाँ प्रस्तुत पुस्तक में संकलित हैं और जिनके होने से हिंदी भाषा और साहित्य का संसार विस्तृत और समृद्ध हुआ है । पुस्तक को नये कलेवर में प्रस्तुत करने में अत्यंत गंभीरता एवं तल्लीनता के साथ संलग्न रहे सभी विद्वत्जनों के प्रति हार्दिक आभार ज्ञापित करने के साथ ही उम्मीद करते हैं कि यह पुस्तक विद्यार्थी और अध्यापक के बीच एक संवादात्मक संबंध बनाने में सेतु का काम करेगी । सुझावों का सदैव स्वागत रहेगा ।



# अनुक्रमणिका

प्राक्कथन  
भूमिका

iii  
v

## भाग — I

### पद्य खंड

कवि/लेखक	पाठ का नाम	
1. हिन्दी पद्य साहित्य का इतिहास		3-13
(1) कबीरदास*	— साखी, पदावली	14-22
(2) मलिक मुहम्मद जायसी	— नागवती—वियोग—वर्णन	23-31
(3) सूरदास*	— विनय, वात्सल्य, भ्रमर गीत	32-40
(4) गोस्वामी तुलसीदास*	— भरत—महिमा, कवितावली, गीतावली, दोहावली, विनय—पत्रिका	41-54
(5) केशवदास	— स्वयंवर—कथा, विश्वामित्र और जनक की भेंट	55-63
(6) कविवर बिहारी*	— भक्ति, शृंगार	64-69
(7) महाकवि भूषण*	— शिवा—शौर्य, छत्रसाल—प्रशस्ति	70-76
(8) विविधा	— सेनापति, देव, घनानन्द	77-84

### गद्य खंड

2. हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास		87-101
(1) भारतेन्दु हरिश्चंद्र*	— भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?	102-110
(2) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी*	— महाकवि माघ का प्रभात वर्णन	111-119
(3) डॉ० श्यामसुंदर दास	— भारतीय साहित्य की विशेषताएँ	120-129
(4) सरदार पूर्णसिंह*	— आचरण की सभ्यता	130-142
(5) डॉ. संपूर्णानंद*	— शिक्षा का उद्देश्य	143-152
(6) राय कृष्णदास	— आनंद की खोज, पागल पथिक	153-158
(7) राहुल सांकृत्यायन*	— अथातो घुमक्कड़—जिज्ञासा	159-170
(8) रामवृक्ष बेनीपुरी*	— गेहूँ बनाम गुलाब	171-179
(9) —	सड़क सुरक्षा*	180-181
(10) —	गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण*	182-184

### कथा—साहित्य

3. हिन्दी कहानी का उद्भव एवं विकास		187-195
(1) प्रेमचंद*	— बलिदान	196-203
(2) जयशंकर प्रसाद*	— आकाशदीप	204-212
(3) भगवतीचरण शर्मा*	— प्रायश्चित	213-218
(4) यशपाल *	— समय	219-225
(5) जैनेंद्र कुमार	— ध्रुवयात्रा	226-238



## भाग – II

### संस्कृत खंड

(1)	वंदना*	241-242
(2)	प्रयागः*	243-245
(3)	सदाचारोपदेशः*	246-248
(4)	हिमालयः*	249-251
(5)	गीतामृतम्*	252-254
(6)	चरैवेति चरैवेति	255-256
(7)	लोभः पापस्य कारणम्*	257-259
(8)	विश्ववन्द्याः कवयः	260-262
(9)	चतुरश्चौरः	263-265
(10)	सुभाषचंद्रः	266-268

### व्याकरण एवं पत्र-लेखन

(1)	संस्कृत व्याकरण—	271-298
	● संधि*	
	● समास	
	● शब्दरूप* एवं धातुरूप	
	● प्रत्यय एवं विभक्ति ।	
	(विशेष— (1) दीर्घ, गुण, यण्, अयादि संधि सामान्य हिंदी हेतु ।	
	(2) संज्ञा— आत्मन्, नामन्, राजन्, जगत्, सरित् ।	
	(3) सर्वनाम— सर्व इदम् यद् ।	
(2)	हिंदी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद ।	299-306
	हिंदी व्याकरण— शब्द, शब्द रचना एवं प्रयोग*, वाक्यों में त्रुटि मार्जन* ।	307-318
(3)	काव्य सौंदर्य के तत्त्व—	318-344
	(1) रस—शृंगार*, हास्य*, करुण*, वीर*, रौद्र, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शांत*, वात्सल्य रस ।	
	(2) अलंकार— (क) शब्दालंकार — अनुप्रास*, यमक*, श्लेष* ।	
	(ख) अर्थालंकार — उपमा*, रूपक*, उत्प्रेक्षा*, संदेह*, भ्रांतिमान*, अन्वय, प्रतीप, दृष्टान्त, अतिशयोक्ति ।	
	(3) छंद — (क) मात्रिक — चौपाई*, दोहा*, सोरठा*, रोला, कुण्डलिया*, हरिगीतिका, वरबै ।	
	(ख) वार्णिक (वर्णवृत्त) — इंद्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, सवैया, मतगयंद, सुमुखी, सुंदरी, वसंततिलका	
	(ग) मुक्तक — मनहर ।	
(4)	मुहावरा एवं लाकोक्ति*	345-353
(4)	पत्र-लेखन*	354-366



नोट : \* सामान्य हिंदी हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु ।

# भाग—I

## पद्य-खंड



# हिंदी पद्य साहित्य का विकास

(आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ एवं विकास)

हिंदी काव्य का आरंभ आठवीं शताब्दी से माना जाता है। इस समय अपभ्रंश भाषा का प्रभाव समाप्त हो रहा था, कवियों की रुचि अवहट्ट (लोकभाषा) की तरफ बढ़ रही थी। विद्वानों ने अवहट्ट को ही पुरानी हिंदी के रूप में स्वीकार किया है। पुरानी हिंदी अर्थात् आरंभिक हिंदी अपभ्रंश से बहुत अधिक मिलती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी प्राकृत की अंतिम अवस्था अपभ्रंश से ही हिंदी काव्य का आरंभ स्वीकार किया है। अतः स्पष्ट है कि हिंदी काव्य का विकास अपभ्रंश से हुआ है।

विद्वानों ने हिंदी काव्य के उद्भव को सरहपा, स्वयंभू, पुष्य आदि कवियों से जोड़ा है। शिवसिंह सेंगर ने सातवीं शताब्दी के पुष्य नामक किसी कवि को हिंदी का पहला कवि माना है। राहुल सांकृत्यायन ने सरहपा को हिंदी का पहला कवि मानते हुए उनका समय 769 ई० स्वीकार किया है। इस आधार पर हिंदी काव्य का उद्भव आठवीं सदी के मध्य से माना जा सकता है।

हिंदी पद्य साहित्य को आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक कुल चार भागों में विभाजित किया गया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा किया गया काल विभाजन सर्वाधिक मान्य है, जो इस प्रकार है—

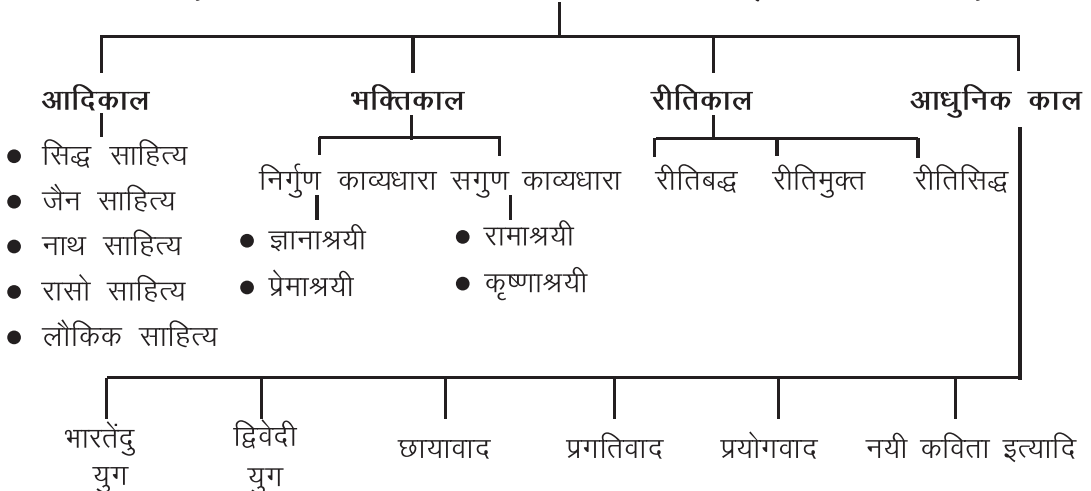
**आदिकाल** — सन् 993 — 1318 ई. (संवत् 1050 — 1375 वि.)

**भक्तिकाल** — सन् 1318 — 1643 ई. (संवत् 1375 — 1700 वि.)

**रीतिकाल** — सन् 1643 — 1843 ई. (संवत् 1700 — 1900 वि.)

**आधुनिककाल** — सन् 1843 — अद्यतन (सन् 1900 ई. — अद्यतन)

काल विभाजन एवं नामकरण के आधार पर हिंदी पद्य साहित्य के इतिहास की शाखा एवं उपशाखा



भाषायी विकास क्रम को ध्यान में रखकर आदिकाल का आरंभ आठवीं सदी के मध्य से माना जाता है। इस युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर विभिन्न आलोचकों ने इसे अलग-अलग नाम दिया है :

#### नामकरण

वीरगाथाकाल

आदिकाल

सिद्ध सामंत काल

बीजवपन काल

संधिकाल एवं चारण काल

#### विद्वान

रामचंद्र शुक्ल

हजारीप्रसाद द्विवेदी

राहुल सांकृत्यायन

महावीरप्रसाद द्विवेदी

रामकुमार वर्मा

आदिकाल के काव्य में सिद्ध, नाथ, जैन, रासो साहित्य के साथ-साथ लौकिक साहित्य भी मिलता है।

**सिद्ध साहित्य**— बौद्धों की वज्रयान शाखा में सिद्धों की परंपरा मिलती है। इसीलिए सिद्धों का संबंध बौद्ध धर्म से भी जोड़ा जाता है। सिद्धों की संख्या 84 प्रसिद्ध है, जिनमें सबसे प्रमुख सिद्ध सरहपा हैं। इन्हें 'राहुलभद्र' भी कहा जाता है। इनकी रचनाओं का संकलन 'दोहाकोश' है।

सरहपा के अलावा सिद्ध साहित्य में लुइपा, शबरपा, डोंभिपा, कण्हपा आदि कवि प्रसिद्ध हैं। सिद्धों की रचनाओं में रहस्यभावना की प्रधानता है, जिनमें शबरपा की रचना 'चर्यापद', डोंभिपा की 'योगचर्या', 'अक्षरद्विकोपदेश' आदि प्रसिद्ध हैं।

**जैन साहित्य**— जैन धर्म से संबंध रखने वाले कवियों की रचनाएँ जैन साहित्य के अंतर्गत आती हैं। देवसेन, स्वयंभू, पुष्पदंत, हेमचंद्र, शालिभद्रसूरि रामसिंह आदि प्रसिद्ध हैं। इनकी रचनाओं में स्वयंभू का 'पउमचरित', पुष्पदंत का 'महापुराण', शालिभद्रसूरि का भरतेश्वर बाहुबलीरास, रामसिंह का 'पाहुड़दोहा', हेमचंद्र का 'कुमारपालचरित' और 'शब्दानुशासन' आदि प्रमुख हैं।

**नाथ साहित्य**— सिद्धों की वाममार्गी भोग प्रधान, योगसाधना की प्रतिक्रिया स्वरूप नाथ पंथियों की हठयोग साधना आरंभ हुई। नाथ साहित्य के आरंभकर्ता गोरखनाथ माने जाते हैं। ये मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य थे। नाथों की संख्या नौ मानी गई है— नागार्जुन, जड़भरत, हरिश्चंद्र, सत्यनाथ, भीमनाथ, गोरक्षनाथ, चर्पट जलंधर और मलयार्जुन शामिल हैं। गोरखनाथ ने योग—साधना तथा नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों की स्थापना के लिए कई ग्रंथों का सृजन किया है, जो इस प्रकार हैं— 'सबदी', प्राणसांकली शिष्यादरसन, आत्मबोध, ज्ञानतिलक आदि। पितांबरदत्त बड़थवाल ने इनकी रचनाओं का संकलन 'गोरखबानी' नाम से प्रकाशित कराया है।

**रासो साहित्य**— आदिकाल में प्रबंधकाव्य एवं 'वीर—गीतिकाव्य' के दोनों रूपों में वीरगाथाएँ मिलती हैं। ये वीरगाथा से परिपूर्ण काव्य रासो के नाम से भी जाने जाते हैं। रासो शब्द का संबंध विद्वानों ने रसायण, रासक, रास, रहस्य आदि से जोड़ा है। आदिकाल के इन ग्रंथों में वीर एवं शृंगार रस की प्रधानता देखने को मिलती है। इनमें राजाओं के वीरतापूर्ण युद्धों एवं विवाहों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन मिलता है। हिंदी के कुछ प्रमुख वीरगाथा काव्य निम्नलिखित हैं :

रासो ग्रंथ	रचनाकार
पृथ्वीराजरासो	चंदबरदाई
खुमाणरासो	दलपत विजय
हम्मीररासो	शारंगधर
विजयपाल रासो	नल्लसिंह
परमालरासो (आल्हखंड)	जगनिक
बीसलदेवरासो	नरपतिनाल्ह
जयचंदप्रकाश	भट्टकेदार
जयमयंक जसचंद्रिका	मधुकर

**अन्य प्रमुख कवि एवं उनका काव्य**— आदिकाल के अन्य प्रमुख कवियों में अमीर खुसरो और विद्यापति का नाम महत्वपूर्ण है। अमीर खुसरो ने बोलचाल की भाषा में मुहावरों, लोकोक्तियों को स्थान देते हुए काव्य सृजन किया और अपनी पहेलियों एवं मुकरियों के द्वारा जन लोक में अपना स्थान बनाया इन्होंने खड़ी बोली में रचना आरंभ की और खड़ीबोली हिंदी के प्रथम कवि कहलाए। इनका 'खालिकबारी' नाम से फारसी-हिंदी शब्दकोश भी प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त हिंदी साहित्य के आदि गीतिकार माने जाने वाले प्रसिद्ध कवि विद्यापति का स्थान हिंदी साहित्य में अग्रगण्य है। विद्यापति को मैथिलकोकिल के नाम से भी जाना जाता है। इनकी रचनाओं में कीर्तिलता, कीर्तिपताका, पदावली आदि का नाम उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त रास काव्य परंपरा में जैन धर्म से इतर 'संदेश रासक' नामक रास काव्य लिखने वाले कवि अब्दुर्रहमान का नाम भी आदिकालीन कवियों में प्रसिद्ध है।

### आदिकाल की प्रवृत्तियाँ—

**भाषा के विविध रूप**— सिद्ध और जैन साहित्य में अपभ्रंश भाषा का प्रभाव देखा जा सकता है। इसके साथ ही अमीर खुसरो की रचनाओं में आम बोलचाल के शब्द तथा खड़ी बोली का प्रयोग भी हुआ है। विद्यापति की पदावली में जहाँ मैथिली भाषा को प्रयोग हुआ है, वहीं कीर्तिलता अवहट्ट भाषा में है।

**बाह्याडंबरों का खंडन**— नाथों एवं सिद्धों की रचनाओं में बाह्याडंबरों का खुलकर विरोध हुआ है। इन्होंने आचरण की शुद्धता पर बल दिया है।

**आश्रयदाताओं की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा**— इस परंपरा के अधिकतर कवि राज्याश्रित थे, आश्रयदाताओं को खुश करने के लिए उनकी वीरता, सौंदर्य एवं दानशीलता आदि की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा किया करते थे, जिसके कारण आदिकाल में आश्रयदाताओं की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा की प्रवृत्ति बहुलता से पायी जाती है।

**युद्धों का सजीव वर्णन**— आदिकाल के ये कवि कविता लिखने के अलावा राजाओं के साथ युद्धों में भी जाया करते थे और वहाँ पर अपने वीरतापूर्ण कौशल को प्रदर्शित करते थे, जिसके कारण अपनी

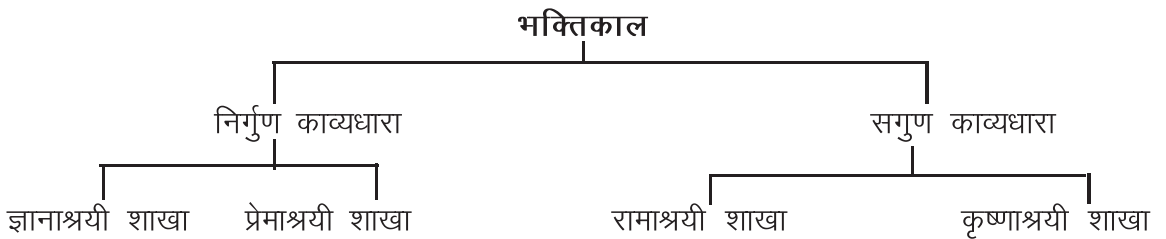
रचनाओं में युद्धों का आँखों देखा वर्णन करते थे। यही वजह है कि इनके युद्ध संबंधी वर्णनों में सजीवता पायी जाती है।

**वीर एवं शृंगार रस की प्रधानता—** कवियों ने अपनी रचनाओं में वीर एवं शृंगार रस का प्रयोग बहुतायत में किया है। इसमें बीसलदेव रासो (शृंगार रस) को छोड़कर अधिकतर रासो ग्रंथों में वीर रस का प्रयोग हुआ है। विद्यापति की पदावली और बीसलदेव रासो में शृंगार रस की प्रधानता है।

**सामूहिक एकता की भावना का अभाव—** आदिकालीन राजा छोटी-छोटी रियासतों के लिए आपस में लड़ा करते थे। राजाओं के लिए राज्य ही उनका राष्ट्र था, जिसकी रक्षा करना अपना कर्तव्य समझते थे। सामूहिक एकता की भावना का अभाव होने के कारण देश पर बाहरी आक्रमण भी निरंतर होते रहते थे जिसके फलस्वरूप उस समय के साहित्य में एकता की भावना का अभाव दिखाई देता है।

### भक्तिकाल

आदिकाल के समाप्त होने तक तत्कालीन सामाजिक राजनैतिक परिस्थितियाँ परिवर्तित हो चुकी थीं। आदिकाल में जहाँ राजाओं के आपसी युद्धों का वर्णन और उनकी प्रशंसा मिलती है, वहीं भक्तिकाल में राजाओं की प्रशंसा की जगह सामाजिक समस्याओं एवं भगवद्भक्ति ने ले ली। इस काल में रैदास, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा, रहीम, रसखान जैसे मूर्धन्य कवियों का आविर्भाव हुआ। भक्तिकाल को हिंदी साहित्य का 'स्वर्ण युग' स्वीकार किया जाता है। धार्मिक मत एवं भक्ति रचना के आधार पर भक्ति काल के प्रमुख अंग निम्नलिखित हैं—



**निर्गुण भक्तिधारा :** जैसा कि नाम से ही विदित है निर्गुण भक्ति काव्य धारा में ईश्वर के निर्गुण एवं निराकार रूप की उपासना को प्रमुखता दी गई। निर्गुण भक्ति धारा की दो प्रमुख उपशाखाएँ हैं —

(i) ज्ञानाश्रयी शाखा (ii) प्रेमाश्रयी शाखा।

**(i) ज्ञानाश्रयी शाखा :** ज्ञानाश्रयी शाखा के संतकवि 'एकेश्वरवाद' को मान्यता देते हैं। उनके ईश्वर निर्गुण व निराकार हैं। इस युग के कवियों में उपदेश (ज्ञान) देने तथा बाह्याडंबरों का विरोध करने की प्रवृत्ति प्रमुख रही है। इस शाखा के प्रमुख कवि कबीरदास हैं। इनकी वाणी का संग्रह **बीजक** नाम से प्रसिद्ध है, जो तीन भागों में विभक्त है— साखी, सबद और रमैनी। इस शाखा के अन्य कवियों में संत रविदास(रैदास), नानक, दादू, मलूकदास, धर्मदास, सुंदरदास आदि प्रमुख हैं।

(ii) **प्रेमाश्रयी शाखा** : प्रेमाश्रयी शाखा के कवियों ने ईश्वर की प्राप्ति के लिए प्रेम को माध्यम बनाया। इस शाखा के अधिकांश कवि सूफी साधक थे, इसलिए इस शाखा के अंतर्गत रचे गए साहित्य को सूफी साहित्य भी कहा जाता है। इस काल के कवियों ने लोक प्रचलित प्रेमाख्यानक चुनकर उन्हें इस प्रकार से काव्य का रूप दिया कि लोग प्रेम के महत्त्व को पहचानकर ईश्वर-प्रेम में लीन हों तथा प्रेम को ईश्वर प्राप्ति का माध्यम बनाएँ। फारसी की मसनवी शैली में दोहा तथा चौपाई छंदों में रची गई इन रचनाओं में प्रेम की पीर, विरह-वेदना की तीव्रता, कथानक की रोचकता के साथ कल्पना और इतिहास का सुंदर सम्मिश्रण इस काव्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि मलिक मोहम्मद जायसी हैं। इनकी सबसे प्रसिद्ध काव्य रचना **पद्मावत** है। अवधी भाषा में रचित इस प्रेमाख्यानक रचना में 'लौकिक' आख्यान द्वारा 'पारलौकिक' प्रेम की अद्भुत व्यंजना की गई है।

**इस शाखा के प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ—**

कवि	रचनाएँ
कुतुबन	मृगावती
मंझन	मधुमालती
उस्मान	चित्रावली
शेखनबी	ज्ञानदीप
कासिमशाह	हंस जवाहिर
नूर मुहम्मद	इंद्रावती, अनुराग बाँसुरी

**सगुण भक्तिधारा** : निर्गुण भक्ति धारा में ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना को प्रमुखता दी गई थी और इसी स्वरूप को काव्य का माध्यम बनाया गया। इसके विपरीत सगुण भक्ति धारा में ईश्वर के सगुण व साकार स्वरूप को महत्त्व देते हुए काव्य-सृजन किया गया। इस काव्य धारा की दो प्रमुख उप-शाखाएँ हैं — (i) रामाश्रयी (रामभक्ति) शाखा (ii) कृष्णाश्रयी (कृष्णभक्ति) शाखा।

(i) **रामाश्रयी शाखा** : ग्यारहवीं शताब्दी में स्वामी रामानुजाचार्य ने ईश्वर भक्ति के क्षेत्र में अवतार-भावना को प्रतिष्ठित कर सगुण भक्ति धारा का आरंभ किया। इन्हीं की शिष्य परंपरा को आगे बढ़ाते हुए स्वामी रामानंद ने समाज की चित्तवृत्तियों को समझते हुए जनता के बीच रामभक्ति का प्रचार-प्रसार किया। गोस्वामी तुलसीदास ने रामभक्ति परंपरा को आगे बढ़ाते हुए **रामचरितमानस** की रचना की। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम के 'शक्ति-शील और सौंदर्य' से समन्वित रूप का चित्रण कर न केवल भारत वरन् विश्व को 'लोक-आदर्श' एवं रामराज्य की महान् कल्पना की अनुपम सौगात दी।



अवधी भाषा में रचित 'रामचरितमानस' की कथा का मूल स्रोत 'वाल्मीकि रामायण' है। 'रामचरितमानस' में दोहा-चौपाई छंद का प्रयोग किया गया है। रचना-कौशल, प्रबंध-पटुता, भाव-प्रवणता, रस, रीति, छंद, अलंकार आदि सभी दृष्टियों से उत्कृष्ट इस महाकाव्य में लोक-मंगल की अद्भुत भावना विद्यमान है।

तुलसीदास की अन्य रचनाओं में **विनयपत्रिका, दोहावली, गीतावली, कृष्णगीतावली, कवितावली, बरवै रामायण, पार्वतीमंगल, जानकीमंगल** आदि प्रमुख हैं। अन्य रचनाकारों में नाभादास, अग्रदास, प्राणचंद चौहान, हृदयराम आदि हैं।

**(ii) कृष्णाश्रयी शाखा :** सगुण भक्ति शाखा की दूसरी प्रमुख उप-शाखा कृष्णाश्रयी शाखा है। इस काव्य धारा के रचनाकारों ने कृष्ण को पूर्ण ब्रह्म मानते हुए इनकी भक्ति पर आधारित साहित्य का सृजन किया। कृष्ण भक्ति शाखा को आरंभ करने का श्रेय श्री वल्लभाचार्य को जाता है।

इस शाखा के प्रमुख कवि सूरदास हैं। सूरदास के कृष्ण-लीला पर केंद्रित मधुर पदों ने जन-मानस को आनंद मग्न करते हुए भक्ति, प्रेम और संगीत की अद्भुत धारा बहाई। उनके **सूरसागर** में श्रीकृष्ण के जीवन से जुड़े बाल-लीला, गोचारण, गोपी-प्रेम, भ्रमर-गीत आदि से संबंधित अत्यंत मनोरम पद हैं। **सूरसारावली** और **साहित्य लहरी** उनकी अन्य प्रमुख रचनाएँ हैं। कुंभनदास, परमानंददास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविंदस्वामी, चतुर्भुजदास, नंददास आदि इस धारा के प्रमुख कवि हैं। आठ कवियों के इस समुदाय को ही **अष्टछाप** कहा जाता है। इसके अतिरिक्त कृष्णाश्रयी शाखा में मीराबाई, रसखान आदि का भी नाम उल्लेखनीय है।

**भक्तिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ :** ईश्वर में सहज आस्था और विश्वास, ईश्वर का भक्त वत्सल स्वरूप, ईश्वर के नाम-स्मरण तथा जप, कीर्तन, भजन की महत्ता, लोक मंगल की भावना, सामाजिक कुरीतियों का विरोध, गुरु का सम्मान, अहंकार की भावना का त्याग जैसे आदर्शों का होना इस युग की सामान्य प्रवृत्तियाँ थी। इन प्रवृत्तियों को कबीर, सूर, जायसी, तुलसी जैसे संत महात्माओं की वाणी ने काव्यात्मक रूप से जनमानस तक पहुँचाया। इन सब कारणों तथा भावपक्ष व कला-पक्ष के उत्कृष्टतम स्वरूप के कारण इस युग को हिंदी साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहा जाता है।

इस समय भक्ति, प्रेम और नीति से संबंधित रचनाएँ हुईं। कबीर ने समाज में व्याप्त ऊँच-नीच, जाति-व्यवस्था के भेदभाव को दूर करने का संदेश दिया तो, जायसी ने प्रेम के द्वारा परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग दिखाया। सूरदास ने कृष्ण भक्ति मार्ग को प्रशस्त किया, तो तुलसी ने स्वयं को राम का दास मानकर स्वांतःसुखाय एवं लोकमंगल हेतु राम भक्ति का मार्ग दिखाया। नाभादास का 'भक्तमाल', अग्रदास का 'रामाष्टयाम', 'हितोपदेश', प्राणचंद चौहान का 'रामायण महानाटक', हृदयराम का 'हनुमन्नाटक' आदि रामकाव्य परंपरा की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

कृष्ण-काव्य को प्रतिष्ठित करने का श्रेय वल्लभाचार्य एवं अष्टछाप के कवियों को दिया जाता है। अष्टछाप की स्थापना वल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ ने की थी जिसमें वल्लभाचार्य के चार शिष्य

सूरदास, कुंभनदास, परमानंददास, कृष्णदास और विट्ठलनाथ के चार शिष्य नंददास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, गोविंदस्वामी आदि शामिल हैं। कुल मिलाकर अष्टछाप में आठ कवियों को स्थान मिला है, सूरदास इनमें सबसे प्रमुख हैं। कृष्णभक्ति धारा के कवियों ने कृष्ण की बाललीलाओं का बहुत ही मनोहारी चित्रण किया है, जो वात्सल्य रस में डूबा हुआ है। इसके साथ ही प्रेमलीलाओं के संदर्भ में शृंगार रस का प्रयोग भी हुआ है। सूरदास का 'सूरसागर' नंददास का 'रासपंचाध्यायी', 'रुक्मिणी मंगल', 'अनेकार्थ मंजरी'; चतुर्भुजदास का 'द्वादशयश', 'हितजू को मंगल', परमानंददास का 'परमानंद सागर'; मीराबाई का 'गीतगोविंद की टीका', 'नरसीजी का मायरा', रसखान की 'प्रेमवाटिका', 'सुजान रसखान' आदि कृष्णाश्रयी शाखा की प्रमुख रचनाएँ हैं।

**अवधी एवं ब्रजभाषा की प्रधानता—** भक्तिकालीन काव्य में अवधी एवं ब्रजभाषा की प्रधानता रही है। कृष्ण भक्तिशाखा के कवियों ने ब्रजभाषा में काव्य सृजन किया है। रामभक्ति शाखा में तुलसीदास ने ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं में रचना की। सूफी कवियों ने अवधी को काव्य की भाषा बनाया तथा कबीर की भाषा सधुक्कड़ी और पंचमेल खिचड़ी कही गई।

**भक्ति भावना की प्रचुरता—** इस युग के नामकरण से ही स्पष्ट हो जाता है कि इस काल के कवियों की रचनाओं में भक्ति भावना की प्रधानता थी। कवियों ने भगवान के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों की आराधना की। सगुण धारा की कवियों के आराध्य राम और कृष्ण रहे हैं। जिनमें ईश्वर के प्रति सख्य, दास्य, माधुर्य आदि सभी भक्ति भावों का समावेश है।

**गुरु की महत्ता—** सगुण एवं निर्गुण दोनों शाखाओं के कवियों ने गुरु की महत्ता को स्वीकार किया है। कबीर दास कहते हैं—

**बलिहारी गुरु आपणैं द्यौ हाड़ी कै बार।**

**जिन मानिष तैं देवता करत न लागी बार॥**

जायसी ने 'गुरु सुआ जेहि पंथ देखावा' कह कर गुरु के महत्व को स्थापित किया। इस युग के कवियों ने गुरु को ईश्वर से भी बड़ा बताया है क्योंकि ईश्वर तक पहुँचने का ज्ञान गुरु से मिलता है।

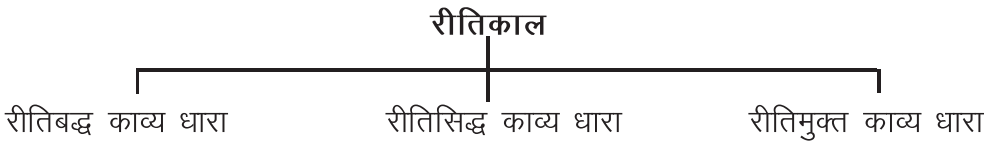
**बाह्याडम्बरो का विरोध—** संतमत के कवियों ने लोक कल्याण के लिए बाह्याडम्बरो का विरोध किया, उनके अनुसार मन की एकाग्रता एवं समर्पण भाव से ईश्वर की प्राप्ति संभव है, उसके लिए बाह्याडम्बरो की आवश्यकता नहीं।

**मुक्तक एवं प्रबंध शैली—** बंध की दृष्टि से काव्य के दो भेद माने गए हैं— प्रबंधकाव्य एवं मुक्तक काव्य। भक्तिकालीन काव्य में दोनों शैली की प्रधानता है।

**स्वांतःसुखाय सृजन—** भक्तिकाल के कवियों में तुलसी दास जी ने स्वीकार किया है कि उन्होंने स्वयं के सुख के लिए काव्य की रचना की — 'स्वांतः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा।'

## रीतिकाल

सत्रहवीं शताब्दी के मध्य से लेकर 19वीं शताब्दी के मध्य तक का काल हिंदी साहित्य में रीतिकाल के नाम से जाना जाता है। यहाँ रीति शब्द का अभिप्राय काव्यरचना-पद्धति और उसके पर्याय मार्ग से है। रीतिकाल में संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों के आधार पर काव्यांगों को लेकर लक्षण ग्रंथों की रचना की गई। यह समय भारतीय इतिहास में सुख एवं वैभव का काल था। राजदरबारों में भी कवियों का सम्मान था, जिसके कारण कविता पर दरबारी संस्कृति का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। साथ ही कुछ कवि ऐसे भी थे जो स्वच्छंद होकर रचना कर रहे थे। उनके काव्य में न तो लक्षणग्रंथों की बाध्यता दिखाई देती है न दरबारी संस्कृति का प्रभाव। इन्हीं विशेषताओं के कारण रीतिकाल को मिश्र बंधुओं ने 'अलंकारकाल' विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'शृंगारकाल' रमाशंकर शुक्ल रसाल ने 'कला काल' आदि नामों से अभिहित किया है। काव्य की प्रवृत्ति एवं रचना शैली के आधार पर रीतिकाल की तीन धाराएँ स्वीकार की गयी हैं—



**रीतिबद्ध काव्यधारा—** इस धारा के कवियों ने काव्यशास्त्र की शिक्षा देने के लिए रीतिग्रंथो या काव्यशास्त्रीय ग्रंथो का प्रणयन किया वे। इन कवियों का मुख्य उद्देश्य काव्य शास्त्र के नियमों के लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत करना था। इनमें रस, अलंकार, छंद आदि के विवेचन से जुड़े ग्रंथों की रचना हुई है। रीतिबद्धकाव्य धारा के प्रमुख कवियों में केशवदास, चिंतामणि, मतिराम, देव, भिखारीदास, ग्वाल आदि हैं। इसमें केशवदास की 'कविप्रिया', 'रामचंद्रिका', 'विज्ञानगीता', मतिराम का 'रसरज', 'ललित-ललाम' 'मतिराम-सतसई' देव का 'भाव विलास', 'भवानी विलास', 'अष्टयाम' भिखारीदास का 'काव्य निर्णय', 'रस सारांश' आदि प्रमुख हैं।

**रीतिमुक्त काव्यधारा—** इस धारा के कवियों ने काव्यशास्त्रीय परंपरा में बँधकर रचना न करके स्वच्छंद होकर काव्य सृजन किया। इनकी रचनाओं में प्रेम का विषय सांसारिक जीव (प्राणी) और ईश्वर दोनों रहे हैं इस धारा के प्रमुख कवियों ने घनानंद, आलम, बोधा, ठाकुर का नाम उल्लेखनीय है। घनानंद की रचनाओं में मार्मिकता, भावात्मकता एवं स्वच्छंदता आदि के गुण विद्यमान हैं। घनानंद की 'सुजान सागर', 'बिरहलीला', 'कोकसार', 'रसकेलिवल्ली' आदि; बोधा की 'विरहवारीश', 'इश्कनामा', ठाकुर की 'ठाकुर-ठसक' इस धारा की प्रमुख रचनाएँ हैं।

**रीतिसिद्ध काव्यधारा—** इस काव्यधारा के कवियों ने काव्यशास्त्र के नियमों के आधार पर काव्य का सृजन किया किंतु रीतिग्रंथों की रचना नहीं की। उनके ग्रंथ में अलंकार, रस आदि प्रत्यक्षतः निरूपित नहीं हुए हैं, किंतु इनके काव्य में सभी काव्य लक्षणों के सटीक उदाहरण मिलते हैं। इस काव्यधारा के सर्वाधिक प्रसिद्ध कवि बिहारीलाल हैं। इनकी लोकप्रिय रचना 'बिहारी-सतसई' है।

**रीतिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ—** रीतिकालीन काव्य तत्कालीन समय की सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों की देन हैं। इस प्रकार रीतिकालीन काव्य की प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं—

**काव्यांगविवेचन**— रीतिकाल की अधिकांश रचनाओं में काव्यांगों का विवेचन हुआ है। काव्य के ये विशिष्ट अंग हैं— रस, अलंकार, छंद, गुण, नायिकाभेद एवं शब्दशक्ति इत्यादि।

**अलंकारों की प्रधानता**— रीतिकालीन कवियों की रुचि अलंकारों की तरफ अधिक थी। अपनी कविता में आकर्षण एवं चमत्कार लाने के लिए कवियों ने अलंकारों का बहुतायत प्रयोग किया है। इसीलिए केशव दास लिखते हैं—

जदपि सुजात सुलच्छिनी, सुबरन सरस सुवृत्त।

भूषण बिनु न विराजइ, कविता बनिता मित्त॥

**शृंगार रस की प्रधानता**— रीतिकालीन कवियों ने अपने काव्य में शृंगार रस को प्रमुखता से स्थान दिया तथा शृंगार के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों पर लिखा।

**ब्रजभाषा की प्रधानता**— भक्तिकाल में जहाँ पर अवधी और ब्रज दोनों भाषाओं में प्रचुर मात्रा में कवियों ने लिखा, वहीं रीतिकाल में ब्रजभाषा ने साहित्यिक क्षेत्र में बहुत उन्नति प्राप्त की। प्रायः सभी कवियों की रचनाओं में ब्रज भाषा का सौंदर्य विद्यमान है।

**प्रकृति चित्रण का अभाव**— रीतिकाल में प्रायः प्रकृति का स्वतन्त्र रूप में चित्रण नहीं मिलता है। अधिकांशतः प्रकृति—चित्रण उद्दीपक के रूप में किया गया है। प्रकृति चित्रण की दृष्टि से इस काल के प्रमुख कवि सेनापति हैं।

## अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

- सुमेलित नहीं है—  
 (क) विद्यापति — आदिकाल  
 (ख) जायसी — रीतिकाल  
 (ग) कुभनदास — भक्तिकाल  
 (घ) बिहारी — रीतिकाल
- सिद्ध साहित्य के कवि हैं—  
 (क) सरहपा (ख) स्वयंभू (ग) गोरखनाथ (घ) चंदबरदाई
- हिंदी के प्रथम कवि माने जाते हैं—  
 (क) सरहपा (ख) शबरपा (ग) डोंभिपा (घ) इनमें से कोई नहीं
- 'सिद्ध सामंत काल' नामकरण किस काल का है?  
 (क) भक्तिकाल (ख) आदिकाल (ग) रीतिकाल (घ) आधुनिककाल
- आदिकाल का संबंध है—  
 (क) सिद्धों से (ख) नाथों से (ग) जैनियों से (घ) उपर्युक्त सभी
- सरहपा की रचना है—  
 (क) नेमिनाथ चउपई (ख) रामचरितमानस (ग) सूरसागर (घ) दोहाकोश

7. सिद्धों की संख्या कितनी मानी गई है—  
 (क) 16 (ख) 60 (ग) 09 (घ) 84
8. नाथों की संख्या है—  
 (क) 16 (ख) 60 (ग) 09 (घ) 84
9. निम्नलिखित में कौन सा सुमेलित है—  
 (क) पुष्पदंत — रासो साहित्य  
 (ख) नागार्जुन — जैन साहित्य  
 (ग) चंदबरदाई — नाथ साहित्य  
 (घ) मीराबाई — भक्ति साहित्य
10. पृथ्वीराजरासो के रचनाकार हैं—  
 (क) चंदबरदाई (ख) गोरखनाथ (ग) मीराबाई (घ) कुंभनदास
11. सुमेलित है—  
 (क) अमीर खुसरो — पहेलियाँ  
 (ख) विद्यापति — सवैया  
 (ग) अब्दुर्रहमान — पदावली  
 (घ) रसखान — संदेश रासक
12. अवहट्ट भाषा में रचित 'कीर्तिलता' के रचनाकार हैं—  
 (क) विद्यापति (ख) अब्दुर्रहमान (ग) अमीरखुसरो (घ) गोरखनाथ
13. कबीरदास किस काल के कवि हैं ?  
 (क) रीतिकाल (ख) भक्तिकाल (ग) आदिकाल (घ) आधुनिक काल
14. निम्न में से कौन-सा कवि अष्टछाप से संबंधित नहीं है?  
 (क) कुंभनदास (ख) नंददास (ग) सुंदरदास (घ) सूरदास
15. निम्न में से कौन-सा कवि अष्टछाप के अंतर्गत आता है ?  
 (क) छीतस्वामी (ख) रसखान (ग) मीराबाई (घ) उस्मान
16. 'रामचरितमानस' किस भाषा में रचित ग्रंथ है ?  
 (क) अवधी (ख) बघेली (ग) खड़ी बोली (घ) ब्रजभाषा
17. मीराबाई किस काल से संबंधित हैं ?  
 (क) आदिकाल (ख) भक्तिकाल (ग) रीतिकाल (घ) आधुनिककाल
18. निम्न में से कौन कवि भक्तिकाल से संबंधित नहीं है ?  
 (क) सूर (ख) तुलसी (ग) मधुकर (घ) मंझन
19. पद्मावत के रचनाकार हैं :  
 (क) जायसी (ख) मंझन (ग) उस्मान (घ) नूरमुहम्मद

20. आल्हखंड किस रचना का लोकप्रिय नाम है ?  
 (क) खुमाणरासो (ख) हम्मीररासो (ग) बीसलदेव रासो (घ) परमालरासो
21. 'बीजक' किसकी रचनाओं का संग्रह है ?  
 (क) कबीर (ख) तुलसी (ग) जायसी (घ) सूर
22. ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि हैं—  
 (क) कुतुबन (ख) कबीरदास (ग) जायसी (घ) तुलसीदास
23. निम्नलिखित में रीतिकाल के कवि हैं—  
 (क) तुलसीदास (ख) सूरदास (ग) जायसी (घ) बिहारीलाल
24. भक्तिकालीन कवि नहीं हैं—  
 (क) तुलसीदास (ख) घनानंद (ग) जायसी (घ) मीराबाई
25. 'अष्टछाप' की स्थापना किसने की थी—  
 (क) वल्लभाचार्य (ख) कुंभनदास (ग) तुलसीदास (घ) विट्ठलनाथ
26. रीतिकाल से संबंधित काव्यधारा है—  
 (क) रीतिबद्ध काव्यधारा (ख) रीतिसिद्ध काव्यधारा (ग) रीतिमुक्त काव्यधारा (घ) उपर्युक्त सभी
27. सुमेलित नहीं हैं—  
 (क) केशवदास — कविप्रिया  
 (ख) बिहारी — बिहारी सतसई  
 (ग) घनानंद — सुजान सागर  
 (घ) चिंतामणि — बिरहलीला
28. रीतिकाल को कहा गया है—  
 (क) शृंगारकाल (ख) कलाकाल (ग) अलंकारकाल (घ) उपर्युक्त सभी
29. सुमेलित नहीं हैं—  
 (क) अलंकार काल — मिश्रबंधु  
 (ख) कलाकाल — रमाशंकर शुक्ल 'रसाल'  
 (ग) शृंगार काल — विश्वनाथ प्रसाद मिश्र  
 (घ) रीतिकाल — रामकुमार वर्मा
30. रीतिकालीन कवि नहीं हैं—  
 (क) केशव (ख) पद्माकर (ग) रहीम (घ) ग्वाल
31. रीतिकालीन काव्य में किस भाषा का मुख्यतः प्रयोग हुआ है—  
 (क) ब्रज भाषा (ख) खड़ी बोली (ग) मानक हिंदी (घ) मैथिली

# कबीरदास

भक्तिकाल की निर्गुण धारा के प्रतिनिधि कवि कबीर के जन्म और मृत्यु के बारे में अनेक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। कहा जाता है कि सन् 1398 ई. में काशी में उनका जन्म हुआ और सन् 1518 ई. के आसपास मगहर में देहांत। उनका पालन-पोषण नीमा और नीरू नामक जुलाहा दंपति ने किया था। उन्होंने अपनी रचनाओं में स्वयं को जुलाहा और काशी निवासी बताया है। कबीर ने अपना गुरु रामानंद को माना है।

कबीर ने विधिवत शिक्षा नहीं पाई थी। उन्होंने कहा भी है कि मसि कागद छुयो नहीं, कलम गह्यो नहिं हाथ। उनके काव्य में धर्म के बाह्याडंबरों का विरोध है और राम-रहीम की एकता की स्थापना का प्रयत्न भी। उन्होंने ईश्वर के नाम पर चलने वाले हर तरह के पाखंड, भेदभाव और कर्मकांड का खंडन किया है और संप्रदाय भेद के स्थान पर प्रेम, सद्भाव और समानता का समर्थन किया है। वे अपनी बात को साफ एवं दो टूक शब्दों में प्रभावी ढंग से कह देने के हिमायती थे।

कबीर के काव्य में सत्संग, ज्ञान तथा वैराग्य, ईश्वर-प्रेम, गुरु-भक्ति, आत्म-बोध और जगत्-बोध की अभिव्यक्ति है। उनकी कविता अनुभव के ठोस धरातल पर टिकी होने के कारण प्रामाणिक और विश्वसनीय है। जिसमें गहरी सामाजिक चेतना प्रकट होती है। जनभाषा के समीप होने के कारण उनकी काव्यभाषा में दार्शनिक चिंतन को सरल ढंग से व्यक्त करने की शक्ति है।

कबीर के शिष्य धर्मदास ने उनकी रचनाओं का संग्रह बीजक नाम से किया, जिसके तीन भाग हैं—साखी, सबद और रमैनी। कबीर की सम्पूर्ण रचनाओं का संकलन डॉ० श्यामसुन्दर दास द्वारा 'कबीर ग्रन्थावली' के नाम से नागरी प्रचारिणी सभा काशी से प्रकाशित किया गया। कबीर की भाषा को विद्वानों ने 'सधुक्कड़ी एवं पंचमेल खिचड़ी' की संज्ञा दी है। उनकी रचनाओं में हिंदी की लगभग सभी बोलियों के शब्द प्रयुक्त हुए हैं, जिसमें राजस्थानी, हरियाणवी, पंजाबी, खड़ी बोली, अवधी, ब्रजभाषा आदि के शब्दों की बहुलता देखने को मिलती है। इसी से हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर को वाणी का डिक्टेटर कहा है।



(सन् 1398–1518 ई.)

सन्त कबीर एक उच्चकोटि के सन्त तो थे ही, हिन्दी साहित्य में एक श्रेष्ठ एवं प्रतिभावान कवि के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। ये केवल राम जपने वाले जड़ साधक नहीं थे, सत्संगति से जो बीज मिला उसे उन्होंने अपने पुरुषार्थ से वृक्ष का रूप दिया।

**डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कहा था—**“हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। महिमा में यह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्दी जानता है — तुलसीदास।”

ज्ञानमार्गी कबीरदास का हिंदी साहित्य में मूर्धन्य स्थान है। उनकी रचनाओं में जीवन एवं समाज के हर क्षेत्र में सत्य, पवित्रता एवं अहिंसा पर बल मिलता है। समाज सुधार, राष्ट्रीय और धार्मिक एकता उनके उपदेशों का काव्यमय स्वरूप था। तत्कालीन समाज की विसंगतियों और विषमताओं को उन्होंने निद्वंद्व भाव से अपनी साखियों के माध्यम से व्यक्त किया। वे सारग्रही महात्मा थे। अनुभूति की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति की ईमानदारी उनका सबसे बड़ा गुण था। उनकी शिक्षाप्रद रचनाएँ आज भी समाज के लिए उपयोगी एवं सार्वकालिक हैं।

प्रस्तुत **साखी** शब्द साक्षी शब्द का तद्भव रूप है। साक्षी, ‘साक्ष्य’ शब्द से बना है। जिसका अर्थ होता है—प्रत्यक्ष ज्ञान। ‘साखी’ वस्तुतः दोहा छंद है। इस पाठ में संकलित साखियों में प्रेम का महत्त्व, ज्ञान की महिमा, गुरु की महिमा, संत के लक्षण और बाह्याडंबरों का विरोध आदि भावों का उल्लेख हुआ है।

प्रस्तुत **पदावली** में कबीर ने रहस्यवाद का उद्घाटन किया है। यहाँ पर पति और पत्नी को प्रतीक मानकर जीवात्मा और परमात्मा के मिलन की बात कही है। ऐसी परिस्थिति में वे अपने आपको बहुत भाग्यशाली समझते हैं, कि घर बैठे ही मुझे परमात्मा के दर्शन हो गए। साथ ही गर्वोक्ति के साथ कहते हैं कि यह संसार भले ही नष्ट हो जाए, पर मेरा अब विनाश नहीं हो सकता क्योंकि मेरी आत्मा परमात्मा के साथ एकाकार हो चुकी है।





# साखी

बलिहारी गुर आपणैं, घौं हाड़ी कै बार।  
जिनि मानिष तैं देवता, करत न लागी बार॥1॥

सतगुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपगार।  
लोचन अनंत उघाड़िया, अनन्त दिखावणहार॥2॥

दीपक दीया तेल भरि, बाती दर्ई अघट्ट।  
पूरा किया बिसाहुणों, बहुरि न आवों हट्ट॥3॥

बूड़े थे परि ऊबरे, गुर की लहरि चमंकि।  
भेरा देख्या जरजरा, ऊतरि पड़े फरंकि॥4॥

चिंता तौ हरि नाँव की, और न चिंता दास।  
जे कछु चितवै राम बिन, सोइ काल कौ पास॥5॥

तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ मैं रही न तूँ।  
बारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ॥6॥

कबीर सूता क्या करै, काहे न देखै जागि।  
जाका संग तैं बीछुड़्या, ताही के संग लागि॥7॥

केसौ कहि कहि कूकिये, ना सोइयै असरार।  
राति दिवस कै कूकणौ, कबहूँ लगै पुकार॥8॥

लंबा मारग दूरि घर, विकट पंथ बहु भार।  
कहौ संतौ क्यूँ पाइये, दुर्लभ हरि दीदार॥9॥

यहुँ तन जारौ मसि करौं, लिखौं राम का नाउँ।  
लेखणि करूँ करंक की, लिखि-लिखि राम पठाउँ॥10॥

कै बिरहनि कूँ मीच दे, कै आपा दिखलाइ।  
आठ पहर का दाझणां, मोपै सह्या न जाइ॥11॥

कबिरा रेख सिंदूर की, काजल दिया न जाइ।  
नैनूँ रमइया रमि रह्या, दूजा कहाँ समाइ॥12॥

सागर नाही सीप बिन, स्वांति बूँद भी नाहिं।  
 कबीर मोती नीपजै, सुन्नि सिषर गढ़ माँहिं॥ 13॥  
 पाणी ही तें हिम भया, हिम है गया बिलाइ।  
 जो कुछ था सोई भया, अब कछु कहा न जाइ॥ 14॥  
 पंखि उड़ाणीं गगन कूँ, प्यंड रह्या परदेस।  
 पाणी पीया चंच बिन, भूलि गया यहु देस॥ 15॥  
 पिंजर प्रेम प्रकासिया, अंतरि भया उजास।  
 मुख कसतूरी महमहीं, बाणी फूटी बास॥ 16॥  
 नैनां अंतरि आव तूँ, ज्यूँ हों नैन झँपेउँ।  
 ना हों देखौँ और कूँ, ना तुझ देखन देउँ॥ 17॥  
 कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही ना थाकि।  
 पाका कलस कुँभार का, बहुरि न चढ़हिं चाकि॥ 18॥  
 हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ।  
 बूँद समानी समंद मे, सो कत हेरी जाइ॥ 19॥  
 कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।  
 सीस उतारै हाथि करि, सो पैठे घर माहिं॥ 20॥  
 जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।  
 सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहिं॥ 21॥

## पदावली

दुलहनी गावहु मंगलचार।

हम घरि आए हो राजा राम भरतार।।

तन रति करि मैं, मन रति करिहूँ पंचतत बराती।।

रामदेव मोरैं पाहुँनैं आये, मैं जोबन मैं माती।।

सरीर सरोवर बेदी करिहूँ, ब्रह्मा बेद उचार।।

रामदेव संगि भाँवरी लैहूँ, धनि धनि भाग हमार।।

सुर तेतीसूँ कौतिग आये, मुनिवर सहस अट्यासी।।

कहै कबीर हँम व्याहि चले हैं, पुरिष एक अबिनासी।।1।।

बहुत दिनन थैं मैं प्रीतम पाये।

भाग बड़े घरि बैठे आये।।

मंगलाचार माँहि मन राखौँ, राम रसाँइण रसना चाषौँ।।

मंदिर माँहि भयो उजियारा, ले सूतो अपना पीव पियारा।।

मैं रनि राती जे निधि पाई, हमहिं कहाँ तुमहिं बड़ाई।

कहै कबीर मैं कछु न कीन्हा, सखी सुहाग मोहिं दीन्हाँ।।2।।

संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।

भ्रम की टाटी सबे उड़ाणी, माया रहै न बाँधी रे।

दुचिते की द्वै थूँनी गिराँनी, मोह बलिंडा तूटा।

त्रिस्नाँ छाँनि परि घर ऊपरि, कुबुधि का भाँडाँ फूटा।।

जोग जुगति करि संतौ बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।

कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।

आँधी पीछै जो जल बूठा, प्रेम हरि जन भीनाँ।।

कहै कबीर माँन के प्रगटे, उदित भया तम भीनाँ।।3।।

पंडित बाद बदंते झूठा।

राम कह्यौ दुनियाँ गति पावै, खाँड कह्यौ मुख मीठा।

पावक कह्यौ पाँव जे दाझैं, जल कहि त्रिषा बुझाई।

भोजन कह्यौ भूष जे भाजै, तौ सब कोइ तिरि जाई।।

नर कै साथ सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जाणै।

जो कबहूँ उड़ि जाइ जँगल में, बहुरि न सुरतै आणै॥  
साची प्रीति विषै माया सँ, हरि भगतनि सँ हासी।  
कहै कबीर प्रेम नहिं उपज्यौ, बाँध्यौ जमपुरि जासी॥ 4॥

हम न मरैं मरिहैं संसारा।  
हम कूँ मिल्या जियावनहारा।  
अब न मरौं मरनै मन माना, ते मूए जिनि राम न जाँना।  
साकत मरैं संत जन जीवै, भरि भरि राम रसाइन पीवै॥  
हरि मरिहैं तौ हमहूँ मरिहैं, हरि न मरैं हँम काहे कूँ मरिहैं।  
कहै कबीर मन मनहि मिलावा, अमर भये सुख सागर पावा॥ 5॥

काहे री नलिनी तूँ कुम्हिलौनी,  
तेरे ही नालि सरोवर पाँनी।  
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलिनी तोर निवास॥  
ना तलि तपति ना ऊपरि आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि॥  
कहैं कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हँमरे जाँन॥ 6॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

- कबीरदास शाखा मार्ग के कवि हैं ?  
(क) ज्ञानाश्रयी शाखा (ख) रामाश्रयी शाखा  
(ग) सगुण भक्ति शाखा (घ) इनमें से कोई नहीं
- कबीर के पदों एवं साखियों का संग्रह है—  
(क) सबद (ख) रमैनी (ग) बीजक (घ) साखी
- कबीर के अनुसार निर्गुण ब्रह्म कहाँ मिलता है ?  
(क) मंदिर में (ख) कैलाश पर (ग) सर्वत्र (घ) काबा में
- ज्ञान की आँधी के आने से क्या समाप्त हो जाता है ?  
(क) भ्रम (ख) प्रभु-प्रेम (ग) भक्ति (घ) आस्था
- अज्ञान का अंधकार किस से नष्ट हुआ ?  
(क) ज्ञान-रूपी दीपक (ख) ज्ञान-रूपी चंद्रमा (ग) ज्ञान-रूपी सूर्य (घ) ज्ञान-रूपी मशाल
- “कुबुधि का भाँडो फूटा” से क्या आशय है ?  
(क) बर्तन टूट गए (ख) भेद खुल गया (ग) बुद्धि फूट गई (घ) इनमें से कोई नहीं

## II. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

1. 'हिंदी साहित्य में कबीरदास का स्थान' विषय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. कबीर के भक्ति के स्वरूप का निर्धारण कीजिए।
3. कबीर की भाषा की विवेचना कीजिए।
4. "कबीर एक समाज सुधारक थे" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
5. कबीर के रहस्यवाद पर प्रकाश डालिए।
6. कबीर की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
7. कबीर का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं सहित साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।

## III दिये गये पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

(क) दीपक दीया तेल भरि, बाती दर्ई अघट्ट।

पूरा किया बिसाहुणों, बहुरि न आवैं हट्ट।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) कबीर ने दीपक किसे बताया है ?
- (iv) कबीर की आत्मा दोबारा इस संसार में क्यों नहीं आना चाहती ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त अलंकार लिखिए और उसे स्पष्ट कीजिए।

(ख) केसौ कहि कहि कूकिये, ना सोइयै असरार।

राति दिवस कै कूकणौ, कबहूँ लगै पुकार।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश के शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) कबीर प्रभु-स्मरण से क्या प्राप्त करना चाहते हैं ?
- (iv) उपर्युक्त पद्यांश का मूल भाव स्पष्ट कीजिए।
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ग) पाणी ही तें हिम भया, हिम हवै गया बिलाइ।

जो कुछ था सोई भया, अब कछु कहा न जाइ।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) कबीर ने पानी और बर्फ का उदाहरण देकर क्या बताया है ?
- (iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iv) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त छंद लिखिए तथा उसे स्पष्ट कीजिए।
- (v) 'पाणी' एवं 'बिलाइ' का अर्थ लिखिए।

(घ) संतों भाई आई ग्यान की आँधी रे।

भ्रम की टाटी सबै उड़ाणी, माया रहै न बाँधी रे।

दुचिते की द्वैई थूनी गिरानी, मोह बलिंडा तूटा।

त्रिस्नाँ छाँनि परि घर ऊपर, कुबुधि का भाँडाँ फूटा।।

जोग जुगति करि संतों बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।

कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।

आँधी पीछै जो जल बूठा, प्रेम हरि जन भीनाँ।।

कहै कबीर माँन के प्रगटे, उदित भया तम षीनाँ

(i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) उपर्युक्त पद्यांश में कबीर ने ज्ञान के महत्व को किस प्रकार प्रतिपादित किया है ?

(iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iv) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य सौंदर्य लिखिए।

(v) शारीरिक अहंकार नष्ट होने का क्या परिणाम हुआ ?

(ङ) पंडित बाद बंदते झूठा।

राम कह्यो दुनियाँ गति पावै, खाँड कह्यो मुख मीठा।

पावक कह्यो मूष जे दाझै, जल कहि त्रिषा बुझाई।

भोजन कह्यो भूष जे भाजै, तौ सब कोई तिरि जाई।।

नर कै साथ सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जाणै।

जो कबहुँ उड़ि जाइ जँगल में, बहुरि न सुरतै आएँ।।

साची प्रीति विषै माया सँ, हरि भगतनि सँ हासी।

कहै कबीर प्रेम नहिं उपज्यौ, बाँध्यौ जमपुरि जासी।

(i) उपर्युक्त पद्यांश का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पंडित लोग किस बात को निरर्थक बताते हैं ?

(iv) किसकी संगति में तोता-राम नाम का उच्चारण करने लगता है ?

(v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(च) काहे री नलिनी तूँ कुम्हिलाँनी,

तेरे ही नालि सरोवर पाँनी।

जल में उतपति जल में बास, जल में नलनी तोर निवास।।

ना तलि तपति ना ऊपर आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि।।

कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हँमरे जाँन।

(i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

- (iii) कबीर ने कमलिनी और जल को किसका प्रतीक माना है ?
- (iv) कबीर जीवात्मा को क्या कहते हैं ?
- (v) उपर्युक्त पद में कौन-सा अलंकार है ? स्पष्ट कीजिए।

#### IV भाषा के रंग :

- (क) संतों भाई आई ग्यान की आँधीरे” पंक्ति में प्रयुक्त अलंकार एवं उनके लक्षण स्पष्ट कीजिए।
- (ख) ‘दुलहनी’ गावहु मंगलचार’ पद में प्रयुक्त काव्य-सौंदर्य को स्पष्ट कीजिए।

#### V अनुभूति और अभिव्यक्ति :

निम्नलिखित दोहे के समान कोई अन्य काव्य पंक्ति दीजिए।

तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ में रही न हूँ।

बारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ।।

### शब्दार्थ

**घौहाड़ी कै बार**—प्रतिदिन कितने ही बार—बेला (आपकी बलिहारी है।), बार—देरी। **विसाहुणाँ**—क्रय—विक्रय, जन्म मरण से हमेशा के लिए छूटने की व्यंजना। **लहरि**—कृपा रूपी तरंग। **सुन्नि** **सिखर**—शून्य शिखर, सुषुम्ना नाड़ी का ऊपरी भाग। **थाकि**—प्यास, तृष्णा। **पाका कलस**—ज्ञानी के शरीर का प्रतीक। **बूँद समानी समद मैं**—जीव का ब्रह्म में लय। **दुलहनी**—जीव रूपी दुल्हन। **पंचतत्त्व**—पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु। **नलिनी**—कमलिनी। **सरोवर**—तालाब। **सूवा**—तोता। **भूष**—भूख।



# मलिक मुहम्मद जायसी

मलिक मुहम्मद जायसी हिंदी साहित्य के भक्तिकाल की निर्गुण धारा प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि थे। वे अत्यंत उच्चकोटि के सरल और उदार सूफी महात्मा थे। सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी के जन्म के संबंध में अनेक मत हैं। उनकी रचनाओं के अनुसार जायसी का जन्म सन् 1492 ई० के लगभग उत्तर प्रदेश के अमेठी के निकट के 'जायस' नामक स्थान पर हुआ था। वे स्वयं कहते हैं—'जायस नगर मोर अस्थानू'। जायस के निवासी होने के कारण ही वह जायसी कहलाए। वे अपने समय के सिद्ध और पहुँचे हुए फकीर माने जाते हैं। उन्होंने सैयद अशरफ और शेख बुरहान का अपने गुरुओं के रूप में उल्लेख किया है। मात्र सात वर्ष की अवस्था में चेचक हो जाने के कारण उनका एक कान और एक आँख खराब हो गई। जिससे वह देखने में कुरूप लगने लगे। एक बार बादशाह शेरशाह ने उनकी कुरूपता को देखकर हँस दिया, तो जायसी जी ने बड़ी उदारता के साथ बादशाह से पूछा—“मोंहिका हँसेसि, कि कोंहारहिं ?” इस पर बादशाह बहुत लज्जित हुए। उनका देहांत सन् 1542 ई० में हो गया था।



(सन् 1492—1542 ई.)

जायसी रहस्यवादी कवि हैं, और उनके रहस्यवाद की प्रमुख विशेषता उनकी 'प्रेम—मूलक भावना' रही है। साथ ही उनकी रचनाओं में 'साधनात्मक रहस्यवाद' का भी चित्रण मिलता है, जो कबीर दास की रचनाओं से प्रभावित हैं। जायसी सूफी परंपरा के प्रवर्तक कवि हैं। सूफी संत अपनी उदारता, मानवता के प्रति गहरी सहानुभूति तथा उच्च कोटि की प्रेमभावना के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। जायसी की रचनाओं में भी इन भावनाओं की झलक देखने को मिलती है।

'पद्मावत', 'अखरावट', 'आखिरी कलाम', 'चित्ररेखा' आदि जायसी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इनमें 'पद्मावत' सर्वोत्कृष्ट है जो जायसी के साथ-साथ प्रेमाश्रयी शाखा की अमूल्य कृति है। भारतीय लोककथा पर आधारित इस प्रबंधकाव्य में सिंहल देश की राजकुमारी पद्मावती और चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के प्रेम की कथा है। जायसी ने इस लौकिक कथा को इस प्रकार वर्णित किया है कि उसमें अलौकिक और परोक्ष सत्ता का आभास होने लगता है।

जायसी का भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष बहुत ही समृद्ध है। उनके काव्य की प्रमुख भाषा ठेठ अवधी है, और काव्य शैली अत्यंत प्रौढ़ और गंभीर। परंतु उनमें बोलचाल की लोकभाषाओं का भी



उत्कृष्ट रूप देखा जा सकता है जिसके फलस्वरूप उनकी काव्य रचनाओं में श्रेष्ठता और जीवंतता देखने को मिलती है। उनकी रचनाओं में अलंकारों का पुट स्वाभाविक रूप से है। स्पष्ट होता है कि चमत्कारपूर्ण कथन की प्रवृत्ति जायसी में नहीं रही है। उनकी रचनाओं में दोहा और चौपाई छंद की शैली तथा रूपक, उपमा लोकोक्ति तथा मुहावरों का भरपूर प्रयोग देखने को मिलता है। उनकी कविता का आधार लोक जीवन का व्यापक अनुभव रहा है। जिसके कारण उनकी काव्य भाषा पर लोक संस्कृति का प्रभाव दिखाई पड़ता है जो उनकी रचनाओं में नवीनता तथा सौंदर्य को प्रदर्शित करता है।

### नागमती-वियोग-वर्णन

जायसी के विरहाकुल हृदय की गहनानुभूति का सर्वाधिक मार्मिक-चित्रण नागमती के विरह-वर्णन में प्राप्त होता है। नागमती का पतिप्रेम विरहावस्था में प्रगाढ़तर हो गया। संयोग-सुख के समान उसने विरह का भी अभिनंदन किया। स्मृतियों के सहारे, पति के प्रत्यागमन की आशा में उसने पथ पर पलकें बिछा दीं। एक वर्ष व्यतीत हो गया, प्रवास आजीवन प्रवास में बदल न जाए इस आशंका मात्र से ही उसका हृदय टूक-टूक हो जाता था। एक साधारण स्त्री के रूप में नागमती की विरह-दशा का वर्णन जायसी ने प्रकृति का सहारा लेते हुए बारहमासा के माध्यम से किया है।



## नागमती-वियोग-वर्णन

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।  
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मार पिउ मोसौं हरा।।  
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।  
भयउ नरायन बाबन करा। राज करत राजा बलि छरा।।  
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।  
मानत भोग गोपिचंद भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।  
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी ?

**सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?**

**झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।।१।।**

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।  
धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग पाँति देखाए।।  
खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।  
ओनइ घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।  
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।  
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा ?  
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई ?

**जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।**

**कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्व।।२।।**

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी।।  
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा।।  
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी।।  
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियरि भूमि कुसुंभी चोला।।  
हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह भुलाइ देइ झकझोरा।।  
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर भा, फिरै भँभीरी।।  
जग जल बूड़ जहाँ लागि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी।।

परबत समुद अगम बिच, बीहड़ घन बनढाँख।

किमि कै भेंटों कंत तुम्ह ? ना मोहि पाँवन पाँख।।3।।

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहुँ आउ, कंत! तन लटा।।  
तोहि देखे पिउ! पलुहै कया। उतरा चीतु बहुरि करु मया।।  
चित्रा मित्र मीन घर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा।।  
उआ अगस्त, हस्ति घन गाजा। तुरय पलानि चढ़े रन राजा।।  
स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।  
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खँजन देखाए।।  
भा परगास, बाँस बन फूले। कंत न फिरे बिदेसहिं भूले।।

बिरह हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।

बेगि आई, पिउ! बाजहु, गाजहु होइ सदूर।।4।।

कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।  
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा।।  
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।  
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।  
अबहुँ, नितुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।  
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावैं, बिछुरी मोरि जोरी।।  
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा।। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।

सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।

हौं का गावैं कंत बिनु, रही हार सिर मेलि।।5।।

अगहन दिवस घटा, निसि बाढ़ी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढ़ी?  
अब यहि बिरह दिवस भी राती। जरैं बिरह जस दीपक बाती।।  
काँपै हिया जनावै सीऊँ। तो पै जाइ होइ सँग पीऊँ।।  
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप रँग लेइगा नाहू।।  
पलटि न बहुरा गा जो बिछोई। अबहुँ फिरै, फिरै रँग सोई।।  
सियरि अगिनि बिरहिन हिय जारा। सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा।।  
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करै भसमंतू।।

**पिउ सौ कहेउ सँदेसड़ा, हे भौरा! हे काग!**

**सो धनि बिरहै जरि मुई, तेहि का धुवाँ हम्ह लाग।।6।।**

पूस जाड़ थर थर तन काँपा। सुरुजु जाइ लंका दिसि चाँपा।।  
बिरह बाढ़, दारुन भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ।।  
कंत कहाँ लागौं ओहि हियरे। पथ अपार, सूझ नहिं नियरे।।  
सौर सपेती आवै जूड़ी। जानहु सेज हिवंचल बूड़ी।।  
चकई निसि बिछुरै दिन मिला। हौं दिन राति बिरह कोकिला।।  
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी। कैसे जियै बिछोही पखी।।  
बिरह सचान भएउ तन जाड़ा। जियत खाइ औ मुए न छाँड़ा।।

**रकत दुरा माँसू गरा, हाड़ भएउ सब संख।**

**धनि सारस होइ ररि मुई, पीऊ समेटहि पंख।।7।।**

लागेउ माघ, परै अब पाला। बिरहा काल भएउ जड़काला।।  
पहल पहल तन रूई झाँपै। हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै।।  
आइ सूर होइ तपु, रे नाहा। तोहि बिनु जाड़ न छूटै माहा।।  
एहि माह उपजै रसमूलू। तू सो भौर, मोर जोबन फूलू।।  
नैन चुवहिं जस महवट नीरू। तोकह बिनु अंग लग सर चीरू।।  
टप टप बूँद परहिं जस ओला। बिरह पवन होइ मारै झोला।।  
केहि क सिंगार को पहिरु पटोरा। गीउ न हार, रही होइ डोरा।।

**तुम बिनु काँपै धनि हिया, तन तिनउर भा डोल।**

**तेहि पर बिरह जराइ कै, चहै उड़ावा झोल।।8।।**

फागुन पवन झकोर बहा। चौगुन सीउ जाइ नहिं सहा।।  
तन जस पियर पात भा मोरा। तेहि पर बिरह देइ झकझोरा।।  
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा। भइ ओनंत फूलि फरि साखा।।  
करहिं बनसपति हिये हुलासू। मो कहँ भा जग दून उदासू।।  
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्ह जस होरी।।  
जो पै पीउ जरत अस पावा। जरत मरत मोहि रोष न आवा।।  
राति दिवस सब यह जिउ मोरे। लगौं निहोर कंत अब तोरे।।

**यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन! उडाव'।**

**सकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरै जहँ पाव।।9।।**

चैत बसंता होइ धमारी। मोहि लेखें संसार उजारी॥  
 पंचम बिरह पंच सर मारै। रक्त रोइ सगरौं बन ढारै॥  
 बूड़ि उठे सब तरिवर पाता। भीजि मजीठ, टेसु बन राता॥  
 बौरे आम फरै अब लागे। अबहूँ आउ घर, कंत सभागे॥  
 सहस भाव फूलीं बनसपती। मधुकर घूमहिं सँवरि मालती॥  
 मो कहँ फूल भए सब काँटे। दिस्टि परत जस लागाहिं चाँटे॥  
 फरि जोबन भए नारँग साखा। सुआ बिरह अब जाइ न राखा॥

**घिरिनि परेवा होइ पिउ! आउ बेगि परु टूटि।**

**नारि पराए हाथ है, तोहि बिनु पाव न छूटि।।10।।**

भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चँदन भी आगी॥  
 सूरुज जरत हिवंचल ताका। बिरह बजागि सौंह रथ हाँका॥  
 जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ अंगारन्ह माहाँ॥  
 तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फलवारी॥  
 लागिउँ जरै, जरै जस भारु। फिर फिर भूँजेसि, तजेउँ न बारु॥  
 सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइ कै बिहराई॥  
 बिहरत हिया करहु, पिउ! टेका। दीठि दवंगरा मेरवहु एका॥

**कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयउ सुखाइ।**

**कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सीचैं आइ।।11।।**

तपै लागि अब जेठ असादी। मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी॥  
 तन तिनउर भा, झूरीं खरी। भइ बरखा, दुख आगरि जरी॥  
 बँध नाहिं और कंध न कोई। बात न आव कहाँ का रोई ?  
 साँठि नाठि जग बात को पूछा ? बिनु जिउ फिरै मूँज तनु छूँछा॥  
 भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँभ नाहिं उठि सकै न थूनी॥  
 बरसै मेघ चुवहिं नैनाहा। छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा॥  
 कोरौं कहाँ ठाट नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा॥

**अबहुँ मया दिस्टि करि, नाह निदुर! घर आउ।**

**मँदिर उजार होत है, नव कै आइ बसाउ।।12।।**

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. जायसी हिंदी साहित्य की किस काव्य-धारा से हैं?  
 (क) प्रेममार्गी शाखा (ख) ज्ञानमार्गी शाखा  
 (ग) सगुण भक्ति काव्य (घ) रामभक्ति शाखा
2. निम्नलिखित में कौन-सी रचना जायसी की नहीं है?  
 (क) पद्मावत (ख) अखरावट (ग) कामायनी (घ) आखिरी कलाम
3. जायसी के काव्य की भाषा कौन-सी थी?  
 (क) ब्रज (ख) खड़ीबोली (ग) अरबी (घ) अवधी
4. जायसी के पद्मावत में किसके वियोग-दुःख का संतप्त वर्णन है?  
 (क) नागमती का (ख) रत्नसेन का (ग) हीरामन का (घ) इनमें से कोई नहीं
5. जायसी के पद्मावत में 'हीरामन' कौन था ?  
 (क) राजा (ख) रानी (ग) तोता (घ) ब्राह्मण
6. सुमेलित कीजिए—  
 (क) सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। — मोहिं बिनु पिउ को आदर देई॥  
 (ख) अद्रा लागि लागि भुइँ लेई। — जनहुँ जरैं सब धरति अकासा॥  
 (ग) चौदह करा चाँद परगासा। — परब देवारी होइ संसारा॥  
 (घ) अबहूँ, निटुर! आउ एहि बारा। — पीउ नहिं जात, जात बरु जीऊ॥
7. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए—  
 पिउ ये कहेउ सँदेसड़ा, हे .....! हे .....!  
 (क) कबूतर, कौआ (ख) भ्रमर, कबूतर (ग) भ्रमर, काग (घ) भौंरा, काग
8. 'काग' का पर्यायवाची है?  
 (क) एकाक्ष (ख) कौआ (ग) करट (घ) उपर्युक्त सभी।

### II निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

1. नागमती के विरह-वर्णन की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
2. मलिक मुहम्मद जायसी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं सहित साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
3. जायसी की काव्यगत विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।

### III दिये गये पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

(क) नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।  
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मार पिउ मोसौं हरा।।  
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।  
भयउ नरायन बाबन करा। राज करत राजा बलि छरा।।  
करन पास लीन्हैउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।  
मानत भोग गेपिचंद भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।  
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी।।

**सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह ?**

**झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।**

- उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- पद्यांश में प्रयुक्त तोते का नाम क्या है ?
- नागमती किसका बाट (रास्ता) देख रही है ?
- प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ख) कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।  
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरै सब धरति अकासा।।  
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।  
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।  
अबहुँ निटुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।  
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावैं, बिछुरी मोरि जोरी।।  
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।

**सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।**

**हौं का गावैं कंत बिनु, रही हार सिर मेलि।।**

- उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- नागमती को कौन-सा दुःख है प्रस्तुत पद्यांश के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
- नागमती की सखियाँ क्या-क्या कर रही हैं ?
- प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ग) चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।  
 धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बान पाँति देखाए।।  
 खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बन बरसहिं घन घोरा।।  
 ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।  
 दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।  
 पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा।।  
 अद्रा लाग लागि भुईं लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई।।

जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।

कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश के शीर्षक और कवि का नाम बताइए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) आषाढ़ के महीने में नागमती को बिजली की चमक तथा मेघों की गड़गड़ाहट कैसे प्रतीत होती है ?
- (iv) आषाढ़ महीने में कौन-सी स्त्रियाँ गर्व का अनुभव करती हैं ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

#### IV भाषा के रंग :

1. “स्वाति बूंद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे”।। पंक्ति का काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
2. रूपक अलंकार का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक उदाहरण लिखिए।

#### V अनुभूति और अभिव्यक्ति :

1. नागमती वियोग खंड में वियोग शृंगार का वर्णन किया गया है। वियोग शृंगार से जुड़ी अन्य कविताओं का संग्रह कीजिए।
2. नागमती वियोग वर्णन में वर्षा ऋतु के कई नक्षत्रों का वर्णन किया गया है। सभी नक्षत्रों के नाम लिखिए।
3. आपको नागमती के विरह-वर्णन में किस मास एवं ऋतु का चित्रण सबसे अधिक मर्मस्पर्शी लगता है। अपने शब्दों में लिखिए।

#### शब्दार्थ

अलोपो—गायब हो गया। बाउर—बावला। अकरूर—अक्रूर। भाखा—भाषा। खनहिं—क्षण में। पींजर—अस्थि पंजर। मेहा—बादल। तरिबर—शरीर। मृगसिरा—नक्षत्र जो ग्रीष्म ऋतु में उदित होता है। पलुहंत—पल्लवित। दुंद-दल—युद्धसेना। सेतधजा—श्वेत ध्वजा। बगपाँति—बगुलों की पंक्ति। बीजु—बिजली। उबारु—बचाओ। झुरानी—सूख गये। सरेखा—चतुर। भुँइ—पृथ्वी। दूभर—कठिन। लटा—दुर्बल हो गया। दारुन—भयंकर, कठिन। सौर—रजाई। सचान—बाज। छार—राख। पखी—पक्षी। छाजन—छप्पर। छूँछा—खाली। धौंभ—खम्भा। तिनउर—तिनका। बिगसा—खिला। दवँगरा—वैशाख की वर्षा का प्रथम जल।



# सूरदास

हिंदी साहित्य में सगुण भक्ति धारा की कृष्णाश्रयी शाखा को समुन्नत करने वाले कवियों में सूरदास का स्थान सर्वोच्च है। उनका जीवनवृत्त उनकी अपनी कृतियों में आंशिक रूप से तथा बाह्य साक्ष्य के आधार पर अधिक उपलब्ध होता है। “चौरासी वैष्णवन की वार्ता” में लिखा गया है कि सूरदास का जन्म दिल्ली के निकट ब्रज की तरफ स्थित ‘सीही’ नामक गाँव में हुआ था परंतु कुछ विद्वान उनका जन्म, आगरा के ‘रुनकता’ नामक स्थान को मानते हैं। सूरदास का जन्म सन् 1478 ई0 में माना जाता है।

वार्ता-ग्रंथों के अनुसार 1509-10 ई0 के आसपास उनकी भेंट महाप्रभु वल्लभाचार्य से हुई और उन्होंने शिष्यत्व ग्रहण किया। वल्लभाचार्य के शिष्य बनने के बाद वे पारसोली गाँव में रहने लगे थे, वहीं 1583 ई0 में उनका देहावसान हुआ। उनकी मृत्यु पर गो0 विट्ठलनाथ ने शोकार्त होकर कहा था—



(सन् 1478–1583 ई.)

**“पुष्टिमारग को जहाज जात है,  
सो जाको कछु लेना होय सो लेउ।”**

सूरदास की शिक्षा आदि के विषय में किसी ग्रंथ में कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता है, उनकी शिक्षा के बारे में हरिराय जी ने केवल इतना ही लिखा है कि वे अपने गांव से चार कोस दूर रहकर पद-रचना में लीन रहा करते थे, तथा उन पदों को गाया करते थे। गायन विधा में भी प्रवीण माने जाते थे। उनके अधिकांश पद विनय और दैन्य-भाव से सिक्त हैं। श्रीवल्लभाचार्य के संपर्क में आने पर उनसे प्रेरित होकर सूरदास दास्यभाव युक्त विनय के पद लिखना बंद कर दिये तथा सख्य, वात्सल्य और माधुर्य भाव की पद रचना करने लगे। ‘सूरसागर’, ‘सूरसारावली’ और ‘साहित्य लहरी’ उनकी श्रेष्ठ कृतियाँ हैं।

‘सूरसागर’ की रचना ‘भागवत’ की पद्धति पर द्वादश स्कंधों में हुई है। ‘साहित्य-लहरी’ सूरदास के सुप्रसिद्ध दृष्टकूट पदों का संग्रह है।

सूर-काव्य का मुख्य विषय कृष्ण भक्ति है। ‘भागवत पुराण’ को उपजीव्य मान कर उन्होंने राधा-कृष्ण की अनेक लीलाओं का वर्णन ‘सूरसागर’ में किया है।

सूर के भाव-चित्रण में वात्सल्य भाव को श्रेष्ठतम कहा जाता है। बाल-भाव और वात्सल्य से सिक्त मातृहृदय के प्रेम-भावों के चित्रण में सूर अपनी सानी नहीं रखते।

ब्रजभाषा के सिद्धहस्त कवि सूरदास ने इस भाषा को जो गौरव-गरिमा प्रदान की, उसके परिणामस्वरूप ब्रजभाषा अपने युग में काव्य भाषा के राजसिंहासन पर आसीन हो सकी। सूर की भाषा शैली में चित्रात्मकता, आलंकारिकता, भावात्मक सजीवता तथा ध्वन्यात्मकता के गुण पूर्ण रूप से विद्यमान हैं।

सूरदास ने प्रेम और विरह के द्वारा सगुण मार्ग से कृष्ण को साध्य मानकर रचना की है। सख्य भक्ति का 'सूरसागर' में दो रूपों में प्रस्फुटन हुआ है। पहले रूप के अंतर्गत गोप व ग्वालों के साथ कृष्ण का सखा-रूप में विचरण करना और कृष्ण के अतिरिक्त किसी और में ध्यान न रखना वर्णित है। गोप व ग्वालों का कृष्ण के साथ ऐसा अटूट प्रेम-संबंध है, जिसमें न तो ऊँच-नीच का भेदभाव है और न किसी प्रकार का दुराव छिपाव। दूसरा रूप है — गोपियों का कृष्ण के प्रति प्रेम-भाव उसमें विरह जन्य वेदना के कारण सूरदास ने तल्लीनता की मात्रा अधिक व्यक्त की है। विरह में विभोर गोपियों की व्यथा का सजीव वर्णन भ्रमरगीत संबंधी पदों में देखने को मिलता है। भ्रमरगीत के पदों में गोपियों की मार्मिक विरह-भावना सगुण-निर्गुण विवेचन, ज्ञान और भक्ति के तारतम्य तथा भक्ति की सीमाओं का जैसा सुंदर चित्रण हुआ है, वह सूरदास की भक्ति पद्धति के दार्शनिक एवं भावुक, दोनों रूप सामने लाने में समर्थ हैं।

प्रस्तुत पाठ में सूरदास के **विनय एवं वात्सल्य** के पदों के साथ **भ्रमर गीत** प्रसंग भी आया है। विनय के पद में भगवान श्रीकृष्ण से मुसीबत से उबारने के लिए प्रार्थना करते हुए प्रभु की कृपा का गुणगान किया गया है तथा भगवद्भक्ति को ही जीवन का लक्ष्य स्वीकार किया गया है। वात्सल्य के पद में भगवान श्रीकृष्ण के बाल सौंदर्य की शोभा और लीलाओं को देखकर यशोदा के प्रसन्न होने का वर्णन किया गया है। भ्रमर-गीत में श्रीकृष्ण ब्रज को भूल पाने में असमर्थता व्यक्त करते हैं और गोपियों को श्रीकृष्ण के विरह में ब्रज के वृक्ष, लता सब कुछ वैरी के समान नजर आते हैं। ऐसे में कृष्ण का संदेश लेकर ब्रज आये हुए उद्धव गोपियों को योग-मार्ग अपनाने को कहते हैं, जिसे गोपियाँ कृष्ण के सगुण रूप के आगे उद्धव के निर्गुण ब्रह्म की योग साधना को विभिन्न तर्क देकर मानने से इनकार कर देती हैं।



## विनय

अब कै राखि लेहु भगवान ।  
हौं अनाथ बैद्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान ।  
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर दुक्यौ सचान ।  
दुहँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान ।  
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान ।  
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान ॥ 1 ॥

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै ॥  
जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै ।  
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै ।  
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै ।  
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यों करील-फल भावै ।  
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ॥ 2 ॥

## वात्सल्य

हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि ।  
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि ।  
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि ।  
रहे बिवरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि डरनि ।  
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि ।  
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फर्यौ अद्भुत फरनि ।  
चलत पद-प्रतिबिम्ब मनि आँगन घुटुरुवनि करनि ।  
जलज-संपुट-सुभग-छबि भरि लेति उर जनु धरनि ।  
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नँद-घरनि ।  
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखनि ॥ 3 ॥

## भ्रमर गीत

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं ।

हँस-सुता की सुंदर कगरी, अरु कुञ्जनि की छाँहीं ।

वै सुरभी वै बच्छ दोहिनी, खरिक दुहावन जाहीं ।

ग्वाल-बाल मिलि करत कुलाहल, नाचत गहि गहि बाहीं ।

यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं ।

जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तन नाहीं ।

अनगन भाँति करी बहु लीला, जसुदा नंद निबाहीं ।

सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं ॥ 4 ॥

बिनु गुपाल बैरिनि भई कुंजै ।

तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजै ।

बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजै ।

पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भई भुंजै ।

यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजै ।

सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भई छुंजै ॥ 5 ॥

हमारैं हरि हारिल की लकरी ।

मनक्रम बचन नंद-नंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी ।

जागत-सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जकरी ।

सुनत जोग लागत है ऐसौ, ज्यों करुई ककरी ।

सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए, देखी सुनी न करी ।

यह तौ सूर तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी ॥ 6 ॥

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ।

अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं ।

तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं ।

ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं ।

स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं ।

चंदन तजि अँग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं ।

जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।  
 सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यों घट तैं परछाहीं॥7॥

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटत।  
 कहा कहौ ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत॥

वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।  
 नटवर भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तैं आवनि॥  
 चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं बिष सम लागत।  
 सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत॥8॥

कहत कत परदेसी की बात।  
 मंदिर अरध अवधि बदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।  
 ससि-रिपु बरष, सूर-रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।  
 मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।  
 नखत, वेद, ग्रह, जोरि, अर्ध करि, सोइ बनत अब खात।  
 सूरदास बस भई बिरह के, कर मीजैं पछितात॥9॥

निसि दिन बरषत नैन हमारे।  
 सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।  
 दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।  
 कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।  
 आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।  
 सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे॥10॥

ऊधौ भली भई ब्रज आए।  
 बिधि कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए।  
 रँग दीन्हौ हो कान्ह साँवरैं, अँग-अँग चित्र बनाए।  
 पातैं गरे न नैन नेह तैं, अवधि अटा पर छाए।  
 ब्रज करि अँवा जोग ईधन करि, सुरति आनि सुलगाए।  
 फूँक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए।  
 भरे सँपूरन सकल प्रेम-जल, छुवन न काहू पाए।  
 राज काज तैं गए सूर प्रभु, नंद नँदन कर लाए॥11॥

अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।  
 कैसैं रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।  
 अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।  
 अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखीं।  
 बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिबत पतूखीं।  
 सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं॥१२॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'साहित्य-लहरी' के रचयिता हैं—  
 (क) तुलसीदास (ख) कबीरदास (ग) सूरदास (घ) मीरा
2. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना सूरदास की नहीं है—  
 (क) सूरसागर (ख) सबद (ग) सूरसारावली (घ) साहित्य लहरी
3. सूरदास के गुरु थे—  
 (क) वल्लभाचार्य (ख) निम्बर्काचार्य (ग) शंकराचार्य (घ) इनमें से कोई नहीं
4. सूरदास के काव्य का मुख्य विषय है—  
 (क) शिव-भक्ति (ख) वैष्णव-भक्ति (ग) राम-भक्ति (घ) कृष्ण-भक्ति
5. महाकवि सूरदास द्वारा लिखा गया काव्य ग्रंथ है—  
 (क) सूरसागर (ख) भारत-भारती (ग) उद्धव-शतक (घ) गंगालहरी।
6. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए—  
 सूर सु कत हठि ..... चलावत, ये ..... हैं सूखी।  
 (क) समुद्र, सूर्य (ख) नाव, पेड़ (ग) नाव, सरिता (घ) तालाब, गाय
7. सुमेलित कीजिए—  
 (क) अबला सार ज्ञान कह जानैं — हम तैं सुनी न जाहीं।  
 (ख) तेई मूँदन नैन कहत हौ, — कैसै ध्यान धराहीं।  
 (ग) ऐसी कथा कपट की मधुकर — ये दुख कौन समाही।  
 (घ) स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु — हरि मूरति जिन माहीं।
8. हंससुता का पर्यायवाची है—  
 (क) यमुना (ख) कालिंदी (ग) सूर्यजा (घ) उपर्युक्त सभी

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. सूर के भ्रमर गीत का भाव स्पष्ट कीजिए।
2. सूर की भक्ति भावना पर प्रकाश डालिए।
3. महाकवि सूरदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं सहित साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
4. सूरदास की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।।

जैसेँ उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।  
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौ ध्यावै।  
परम गंग कौ छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।  
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यों करील-फल भावै।  
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ कीजिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या लिखिए।
- (iii) सूरदास जी उपर्युक्त पद्यांश में पंछी और जहाज के संदर्भ में क्या कह रहे हैं ?
- (iv) “जैसे उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै। पंक्ति में अलंकार है ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ख) बिनु गुपाल बैरिनि भइ कुंजै।

तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजै।  
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमत-फूलानि अलि गुंजै।  
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भई भुंजै।  
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजै।  
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भई छुंजै।।

- (i) पद्यांश का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) गोपियों को क्या देखकर दुःख होता है ?
- (iv) विरह की स्थिति में गोपियों के लिए क्या दाहक बन गया है ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश में प्रयुक्त अलंकार एवं रस का नाम परिभाषा सहित लिखिए।

(ग) ऊधौ जोग जोग हम नाहीं।

अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसेँ ध्यान धराहीं।  
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं।  
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं।  
स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं।  
चंदन तजि अँग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं।  
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।  
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यों घट तैं परछाहीं।।7।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) योग-साधना के संबंध में गोपियाँ उद्धव से क्या कह रही हैं ?
- (iv) 'ऊधौ जोग जोग हम नाहीं' काव्य पंक्ति में अलंकार है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त छंद के लक्षण सहित नाम लिखिए।

(घ) निसि दिन बरसत नैन हमारे।

सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे,  
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।  
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।  
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।  
सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) 'कंचुकि पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे' काव्य पंक्ति में कौन सा अलंकार है?
- (iv) अपने नेत्रों के काजल के संदर्भ में गोपियाँ क्या कह रही हैं ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ङ) अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।

कैसेँ रहति रूप-रस रँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।  
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।  
अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखीं।  
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिबत पतूखीं।  
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।।



- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) गोपियों की आँखें किसके लिए व्याकुल हैं ?
- (iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iv) गोपियाँ उद्धव से क्या प्रार्थना कर रही हैं ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश में रस एवं छंद का नाम लक्षण सहित लिखिए।

#### IV भाषा के रंग :

1. “बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजै।” प्रस्तुत पद्य में कौन-सा रस है ? परिभाषा के साथ स्पष्ट कीजिए।
2. ‘चरन कमल की सौह करति हौं। प्रस्तुत काव्य-पंक्ति में प्रयुक्त अलंकार का नाम, परिभाषा सहित लिखिए।
3. “हमारै हरि हारिल की लकरी” पंक्ति का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

#### V अनुभूति और अभिव्यक्ति :

भ्रमरगीत प्रसंग में गोपियों को योग की बातें करुई ककरी के समान लगने के क्या कारण हो सकते हैं ? यदि आप स्वयं उस जगह होते तो आपको कैसा महसूस होता ? अपने शब्दों में लिखिए।

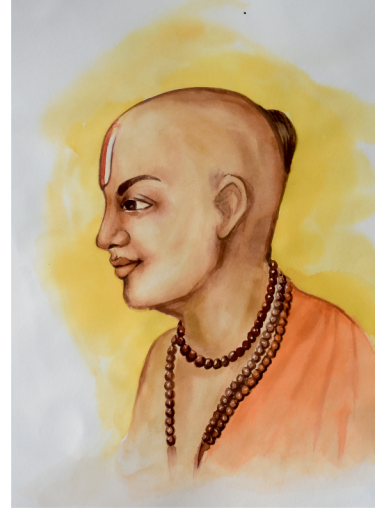
### शब्दार्थ

सचान—बाज पक्षी। परधि—बहेलिया। अंबुज—कमल। दुरमति—दुर्बुद्धि। अनत—अन्यत्र। वदन—मुख। बिधु—चंद्रमा। मेचक—श्याम रंग। फरनि—फलों से। हंससुता—सूर्य की पुत्री यमुना। सुरभी—गाय। खरिक—गौओं के रहने का बाड़ा। मुक्ताहल—मोती। घनसार—कपूर। दधिसुत—चंद्रमा। छुंजै—क्षीण होना। जकरी—बकती है। मधुकर—भौरा, उद्धव जी से आशय है। हरि अहार—सिंह का भोजन मांस तथा मास-तीस दिन का महीना भी। मघ पंचक—मघा नक्षत्र से पाँचवाँ नक्षत्र। चित्रा—चित्त या मन। परंखौ—दुश्चिंतायुक्त विस्मय। कुलाल—कुंभकार। झूखीं—दुखी हुईं। पतूखी—पत्तों से बनी दोनियाँ।



# गोस्वामी तुलसीदास

हिंदी साहित्य की सगुण भक्तिधारा के प्रसिद्ध कवि गोस्वामी तुलसीदास के जन्म के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। 'गोसाईं चरित', 'तुलसी प्रकाश', 'गौतम चंद्रिका', 'घट रामायण' आदि ग्रंथों को आधार मानकर उनकी जन्मतिथि एवं जन्म-स्थान को सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। शिवसिंह सेंगर और राम गुलाम द्विवेदी गोस्वामी जी का जन्म-स्थान राजापुर मानते हैं जबकि गौरीशंकर द्विवेदी, रामनरेश त्रिपाठी एवं डॉ. रामदत्त भारद्वाज के अनुसार इनका जन्म-स्थान 'सोरो' है। प्रचलित रूप में तुलसीदास का जन्म सन् 1532 ई. में चित्रकूट जिले के 'राजापुर' ग्राम में माना जाता है। उनके पिता का नाम आत्माराम दूबे तथा माता का नाम हुलसी था। उनका बचपन का नाम 'रामबोला' था तुलसीदास का बचपन बहुत संघर्षपूर्ण था। जीवन के प्रारंभिक वर्षों



(सन् 1532—1623 ई.)

में ही माता-पिता से विछोह हो जाने पर बाबा नरहरिदास ने उनका पालन-पोषण किया और ज्ञान-भक्ति की शिक्षा-दीक्षा भी दी। गोस्वामी तुलसीदास का विवाह 'रत्नावली' से हुआ था। ऐसा माना जाता है कि 'रत्नावली' की फटकार से ही इनके मन में वैराग्य और भक्ति-भाव उत्पन्न हुई। इसके बाद काशी में उन्होंने वेद-वेदांग का ज्ञान प्राप्त किया। उनके जीवन का अधिक समय काशी, अयोध्या और चित्रकूट में व्यतीत हुआ। गोस्वामी तुलसीदास की मृत्यु सन् 1623 ई. में हुई।

कवितावली के "मातु पिता जग जाइ तज्यो विधिहू न लिख्यो कछु भाल-भलाई" अथवा "बारे तैं ललात बिललात द्वारे-द्वारे दीनु, जानत हौं चारि फल चारि चनक को" आदि पंक्तियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि तुलसीदास का बचपन अनेक आपदाओं के बीच व्यतीत हुआ है।

उनके द्वारा रचित महाकाव्य 'श्रीरामचरितमानस', भाषा, भाव, उद्देश्य, कथावस्तु, चरित्र-चित्रण तथा संवाद की दृष्टि से हिंदी साहित्य का एक अद्भुत कालजयी ग्रंथ है। उनकी अन्य प्रमुख रचनाएँ—'विनयपत्रिका', 'कवितावली', 'गीतावली', श्रीकृष्ण गीतावली 'दोहावली', 'जानकी-मंगल', 'पार्वती-मंगल', 'वैराग्य-संदीपनी', 'बरवै-रामायण', 'रामाज्ञा-प्रश्नावली', 'हनुमानबाहुक' तथा 'रामलला-नहछू' हैं। तुलसीदास एक उत्कृष्ट कवि ही नहीं बल्कि महान लोकनायक और तत्कालीन समाज के दिशा-निर्देशक भी थे।

गोस्वामी तुलसीदास एक विलक्षण प्रतिभासंपन्न, लोकहितवादी एवं समन्वय-भावना से युक्त महाकवि थे। भाव-चित्रण, चरित्र-चित्रण, एवं लोकहितकारी आदर्श के चित्रण की दृष्टि से उनकी

काव्यात्मक प्रतिभा उच्चकोटि की थी। उन्होंने अपने काव्य में भक्ति के साथ-साथ शील, आचार, मर्यादा और जनमानस के आंतरिक भावों की अभिव्यक्ति की। उन्होंने शैव तथा वैष्णव संप्रदाय के पारस्परिक मतभेदों को दूर कर उनको और भी संगठित कर दिया।

गोस्वामी तुलसीदास कविता में लोकमंगल की भावना को सर्वोपरि मानते हैं। लोकमंगल के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहते हैं—

**कीरति भनिति भूति भलि सोई, सुरसरि सम सबकर हित होई।**

अर्थात् भनिति (कविता) वही सार्थक है जो गंगा की भौति सर्वहितकारिणी हो।

तुलसीदास ने ब्रज एवं अवधी दोनों भाषाओं में रचनाएँ कीं। उनका लोकप्रिय महाकाव्य 'रामचरितमानस' अवधी भाषा में लिखा गया है। 'विनय पत्रिका', 'गीतावली', और कवितावली' में ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है। उन्होंने चौपाई, दोहा, सोरठा, कवित्त, सवैया, बरवै, छप्पय आदि अनेक छंदों के साथ ही काव्य में अलंकारों का प्रयोग सहज एवं स्वाभाविक रूप में किया गया है। लोक-भाषा अवधी व ब्रज के सूक्ष्म ज्ञान का प्रमाण उनकी कृतियों में मिलता है। भाषा की स्वाभाविकता उनकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता रही है। 'अर्थ अमित अति आखर थोरे' वाली उक्ति उनकी रचनाओं पर लागू होती है।

रामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड से उद्धृत 'भरत-महिमा' में तुलसीदास ने आदर्श भ्रातृ-प्रेम को दर्शाया है। राम को पिता के द्वारा वनवास दिए जाने के बाद भरत उनको वापस बुलाने के लिए पैदल ही वन की ओर चल देते हैं। यहाँ पर पारिवारिक संतुलन के उच्चादर्श स्वरूप की स्थापना की गई है।

'कवितावली' में हनुमान जी द्वारा जलाई जा रही लंका और लंकानिवासी राक्षसों की व्याकुलता का अत्यंत सजीव चित्रण हुआ है।

'दोहावली' के दोहों में नीति संबंधी बातें बतायी गयी हैं, कवि कहता है कि स्वार्थ के लिए तो सभी मीत बन जाते हैं, लेकिन रघुनाथ ही ऐसे हैं जो परमार्थ को सर्वोपरि मानते हैं। इसी प्रकार की अनेक सूक्तियाँ दोहावली में दी गई हैं।

'विनय पत्रिका' ब्रजभाषा में रचित सुन्दर गीतिकाव्य है। आत्मग्लानि भक्त हृदय का समर्पण, आराध्य के प्रति भक्त का दैन्य ही विनय.पत्रिका के मुख्य विषय हैं।



## भरत-महिमा

दो०— चलत पयादेँ खात फल पिता दीन्ह तजि राजु।  
जात मनावन रघुबरहि भरत सरिस को आजु॥१॥  
भायप भगति भरत आचरनू। कहत सुनत दुख दूषन हरनू॥  
जो किछु कहब थोर सखि सोई। राम बंधु अस काहे न होई॥  
हम सब सानुज भरतहि देखें। भइन्ह धन्य जुबती जन लेखें॥  
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं। कैकइ जननि जोगु सुतु नाहीं॥  
कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिन। बिधि सबु कीन्ह हमहि जो दाहिन॥  
कहँ हम लोक बेद विधि हीनी। लघु तिय कुल करतूति मलीनी॥  
बसहिँ कुदेस कुगाँव कुबामा। कहँ यह दरसु पुन्य परिनामा॥  
अस अनंदु अचिरिजु प्रति ग्रामा। जनु मरुभूमि कलपतरु जामा॥

दो०— तेहि बासर बसि प्रातहीं चले सुमिरि रघुनाथ।  
राम दरस की लालसा भरत सरिस सब साथ॥२॥  
मंगल सगुन होहिँ सब काहू। फरकहिँ सुखद बिलोचन बाहू॥  
भरतहिँ सहित समाज उछाहू। मिलिहहिँ रामु मिटिहि दुख दाहू॥  
करत मनोरथ जस जियँ जाके। जाहिँ सनेह सुराँ सब छाके॥  
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिँ। बिहवल बचन पेम बस बोलहिँ॥  
रामसखाँ तेहि समय देखावा। सैल सिरोमनि सहज सुहावा॥  
जासु समीप सरित पय तीरा। सीय समेत बसहिँ दोउ बीरा॥  
देखि करहिँ सब दंड प्रनामा। कहि जय जानकि जीवन रामा॥  
प्रेम मगन अस राजसमाजू। जनु फिरि अवध चले रघुराजू॥

दो० — भरत प्रेमु तेहिसमय जस तस कहि सकइ न सेषु।  
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह मम मलिन जनेषु॥३॥  
सकल सनेह सिथिल रघुबर कें। गए कोस दुई दिनकर ढरकें॥  
जलु थलु देखि बसे निसि बीतें। कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीतें॥

उहाँ रामु रजनी अवसेषसा। जागे सीयँ सपन अस देखा॥  
 सहित समाज भरत जनु आए। नाथ वियोग ताप तन ताए॥  
 सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखीं सासु आन अनुहारी॥  
 सुनि सिय सपन भरे जल लोचन। भए सोचबस सोच बिमोचन॥  
 लखन सपन यह नीक न होई। कठिन कुचाह सुनाइहि कोई॥  
 अस कहि बंधु समेत नहाने। पूजि पुरारि साधु सनमाने॥

छं०— सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भए।  
 नभ धूरि खग मृग भूरि भागे बिकल प्रभु आश्रम गए॥  
 तुलसी उठे अवलोकि करनु काह चित सचकित रहे।  
 सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे॥

सो०— सुनत सुमंगल बैन मन प्रमोद तन पुलक भर।  
 सरद सरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह जल॥४॥

दो०— भरतहि होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ।  
 कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ॥५॥  
 तिमिरु तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगनु मगन मकु मेघहिं मिलई॥  
 गोपद जल बूझिं घटजोनी। सहज छमा बरु छाड़ै छोनी॥  
 मसक फूँक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमदु भरतहि भाई॥  
 लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना॥  
 सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता॥  
 भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा॥  
 गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥  
 कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ॥

दो०— सुनि रघुबर बानी बिबुध देखि भरत पर हेतु।  
 सकल सराहत राम सो प्रभु को कृपानिकेतु॥६॥  
 जौं न हो जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को॥  
 कबि कुल अगम भरत गुन गाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा॥  
 लखन राम सियँ सुनि सुर बानी। अति सुखु लहेउ न जाइ बखानी॥  
 इहाँ भरतु सब सहित सहाए। मंदाकिनी पुनीत नहाए॥

सरित समीप राखि सब लोग। मागि मातु गुर सचिव नियोगा॥  
चले भरतु जहँ सिय रघुराई। साथ निषादनाथु लघु भाई॥  
समुझि मातु करतब सकुचाहीं। करत कुतरक कोटि मन माहीं॥  
रामु लखनु सिय सुनि मम नाऊँ। उठि जानि अनत जाहिं तजि ठाऊँ॥

दो०— मातु मते महुँ मानि मोहि जो कछु करहिं सो थोर।  
अघ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर॥७॥  
जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी॥  
मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं॥  
जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना॥  
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता॥  
फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी॥  
जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ। तब पथ परत उताइल पाऊ॥  
भरत दसा तेहि अवसर कैसी। जल प्रवाहँ जल अलि गति जैसी॥  
देखि भरत कर सोचु सनेहू। भा निषाद तेहि समयँ बिदेहू॥

दो०— मिलि सपेम रिपुसूदनहिं केवटु भेंटेउ राम।  
भूरि भायँ भेंटे भरत लछिमन करत प्रनाम॥८॥  
भेंटेउ लखन ललकि लघु भाई। बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई॥  
पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे। अभिमत आसिष पाइ अनंदे॥  
सानुज भरत उमगि अनुरागा। धरि सिर सिय पद पदुम परागा॥  
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए। सिर कर कमल परसि बैठाए॥  
सीयँ असीस दीन्ह मन माहीं। मगन सनेहँ देह सुधि नाहीं॥  
सब बिधि सानुकूल लखि सीता। भे निसोच उर अपडर बीता॥  
कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूँछा। प्रेम भरा मन निज गति छूँछा॥  
तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि। जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि॥

दो० – नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुर लोग।  
 सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल वियोग॥१॥  
 सीलसिंधु सुनि गुर आवगवनू। सिय समीप राखे रिपुदवनू॥  
 चले सबेग रामु तेहि काला। धीर धरम धुर दीनदयाला॥  
 गुरहि देखि सानुज अनुरागे। दंड प्रनाम करन प्रभु लागे॥  
 मुनिवर धाइ लिए उर लाई। प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई॥  
 प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि ते दंड प्रनामू॥  
 रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा॥  
 रघुपति भगति सुमंगल मूला। नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला॥  
 एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठ सम को जग माहीं॥  
 दो०— जेहि लखि लखनहु तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ।  
 सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रभाउ॥१०॥

## कवितावली

### लंका-दहन

बालधी विसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं,  
 लंक लीलबे को काल रसना पसारी है।  
 कैधों ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,  
 बीररस बीर तरवारि सी उघारी है॥  
 तुलसी सुरेस चाप, कैधौं दामिनी कलाप,  
 कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है।  
 देखे जातुधान जातुधानी आकुलानी कहैं,  
 कानन उजार्थों अब नगर प्रजारी है॥१॥  
 हाट, बाट, कोट, ओट, अट्टनि, अगार, पौरि,  
 खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है।  
 आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,  
 ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि हैं॥

बालधी फिरावै बार बार झहरावै, झरें  
 बूँदिया सी लंक पघिलाइ पाग पागिहैं।  
 तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं  
 चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहैं॥2॥  
 लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,  
 धूम अकुलाने पहिचाने कौन काहि रे।  
 पानी को ललात, बिललात, जरे गात जात,  
 परे पाइमाल जात, "भ्रात! तू निबाहि रे।  
 प्रिया तू पराहि, नाथ तू पराहि, बाप,  
 बाप! तू पराहि, पूत पूत, तू पराहि रे"।  
 तुलसी बिलोकि लोग ब्याकुल बिहार कहैं,  
 लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे॥3॥  
 बीथिका बजार प्रति, अट्टनि अगार प्रति,  
 पँविर पगार प्रति बानर बिलोकिए।  
 अध ऊर्ध बानर, बिदिसि दिसि बानर हैं,  
 मानहु रह्यो है भरि बानर तिलोकिए॥  
 मूँदे आँखि हीय में, उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,  
 धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किए।  
 लेहु अब लेहु, तब कोऊ न सिखाओ मानो,  
 सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिए॥4॥

## गीतावली

जो पै हों मातु मते महँ हवैहों।  
 तौ जननी! जग में या मुख की कहाँ कालिमा धवैहों ?  
 क्यों हों आजु होत सुचि सपथनि ? कौन मानिहै साँची ?  
 महिमा-मृगी कौन सुकृती की खल-बच-बिसिखन बाँची ?  
 गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै।  
 दीनबंधु कारुन्य-सिंधु बिनु कौन हिए की बूझै ?



तुलसी रामबियोग-बिषम-बिष-बिकल नारिनर भारी ।  
 भरत-स्नेह-सुधा सींचे सब भए तेहि समय सुखारी ॥ 1 ॥  
 मेरो सब पुरुषारथ थाको ।  
 बिपति बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको ?  
 सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर फेर्यो बदन विधाता ॥  
 ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लखन सो भ्राता ॥  
 गिरि कानन जैहैं साखामृग, हौं पुनि अनुज सँघाती ॥  
 हवैहै कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ॥  
 तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि सकल बिकल हिय हारे ।  
 जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि प्रचारे ॥ 2 ॥  
 हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै ।  
 पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै ॥  
 मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै ।  
 सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै ॥  
 तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै ॥  
 उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यों दीजै खीरै-नीरै ॥ 3 ॥

## दोहावली

हरो चरहिं, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ ।  
 तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥ 1 ॥  
 मान राखिबो, माँगिबो, पियसों नित नव नेहु ।  
 तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु ॥ 2 ॥  
 नहिं जाचत नहिं संग्रहीं, सीस नाइ नहिं लेइ ।  
 ऐसे मानी माँगनेहिं को बारिद बिन देइ ॥ 3 ॥  
 चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल ।  
 छीर-नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल ॥ 4 ॥  
 आपु आपु कहँ सब भलो, आने कहँ कोइ कोइ ।  
 तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥ 5 ॥

ग्रह, भेषज, जल, पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग।  
 होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग॥6॥  
 जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ।  
 उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ॥7॥  
 बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ।  
 तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होइ॥8॥  
 मंत्री, गुरु अरु बैद जो प्रिय बोलहिं भय आस।  
 राज, धरम, तन तीनि कर होइ बेगिही नास॥9॥  
 तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन।  
 अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहैं कौन ?

## विनय पत्रिका

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।  
 श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाव गहौंगो॥  
 जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो॥  
 परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।  
 परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।  
 बिगत मान, सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो॥  
 परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो।  
 तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि भक्ति लहौंगो॥1॥  
 ऐसी मूढ़ता या मन की।  
 परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की॥  
 धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।  
 नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की॥  
 ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।  
 तुटत अति आतूर अहार बस छति बिसारि आनन की॥  
 कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।  
 तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की॥2॥

हे हरि! कस न हरहु भ्रम भारी ?  
 जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी।।  
 अर्थ अबिद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाईं।  
 बिनु बाँधे निज हठ सठ परबस पर्यो कीर की नाई।।  
 सपने ब्याधि बिबिध बाधा भइ, मृत्यु उपस्थित आई।  
 बैद अनेक उपाय करहिं, जागे बिनु पीर न जाई।।  
 स्रुति-गुरु-साधु-सुमृति-संमत यह दृश्य सदा दुखकारी।  
 तेहि बिन तजे, भजे बिन रघुपति बिपति सकै को टारी ?।।  
 बहु उपाय संसार-तरन कहँ बिमल गिरा स्रुति गावै।  
 तुलसीदास 'मै-मोर' गए बिनु जिय सुख कबहुँ न पावै।।3।।  
 अब लौं नसानी अब न नसैहौं।  
 राम कृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।।  
 पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।  
 स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।  
 परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।  
 मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं।।4।।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

- तुलसीदास द्वारा लिखा गया महाकाव्य है—  
 (क) प्रेम-माधुरी (ख) गंगा लहरी (ग) विष्णु लहरी (घ) श्रीरामचरित मानस
- 'जानकी मंगल' के रचनाकार हैं—  
 (क) नरोत्तमदास (ख) सूरदास (ग) कबीरदास (घ) तुलसीदास
- तुलसीदास द्वारा रचित विनय पत्रिका किस भाषा में रचित है?  
 (क) अवधी भाषा (ख) ब्रज भाषा (ग) संस्कृत भाषा (घ) इनमें से कोई नहीं
- तुलसीदास जी ने ज्ञान एवं भक्ति की शिक्षा किससे प्राप्त की थी ?  
 (क) नरहरिदास (ख) नाभादास (ग) नरोत्तमदास (घ) इनमें से कोई नहीं

5. निम्नलिखित में से किस काव्य ग्रंथ के रचनाकार महाकवि तुलसीदास नहीं हैं ?  
 (क) शिवा बावनी के (ख) बरवै रामायण के (ग) वैराग्य संदीपनी के (घ) जानकी मंगल के
6. साखामृग का पर्याय नहीं है—  
 (क) बंदर (ख) कपि (ग) कीष (घ) कीर
7. सुमेलित कीजिए—  
 (क) मंगल सगुन होहिं सब काहु। (1) जनु फिरि अवध चले रघुराजू॥  
 (ख) भरतहिं सहित समाज उछाहू। (2) कीन्ह दूरि ते दंड प्रनामू॥  
 (ग) प्रेम मगन अस राजसमाजू। (3) मिलिहहिं रामु मिटिहि दुख दाहू॥  
 (घ) प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। (4) फरकहिं सुखद विलोचन बाहू॥

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. भरत-राम मिलाप प्रसंग का भावपूर्ण चित्रण अपने शब्दों में कीजिए।
2. कवितावली के आधार पर 'लंका दहन' का संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. तुलसीदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कर, उनके साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. तुलसीदास के काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

## III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) तिमिरु तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगनु मगन मकु मेघहिं मिलई॥  
 गोपद जल बूझिं घटजोनी। सहज छमा बरु छाड़ै छोनी॥  
 मसक फूँक मकु मेरु उडाई। होइ न नृपमदु भरतहि भाई॥  
 लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना॥  
 सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता॥  
 भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा॥  
 गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥  
 कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ॥

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) श्रीराम शपथ लेकर क्या कहते हैं ?
- (iv) भरतु हंस रबिबंस तड़ागा पंक्ति में कौन सा अलंकार है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ख) मातु मते महुँ मानि मोहि जो कछु करहिं सो थोर।

अघ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर।।

जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी।।

मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं।।

जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।।

अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता।।

फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी।।

जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ। तब पथ परत उताइल पाऊ।।

भरत दसा तेहि अवसर कैसी। जल प्रवाहँ जल अलि गति जैसी।।

देखि भरत कर सोचु सनेहू। भा निषाद तेहि समय बिदेहू।।

(i) उपर्युक्त पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) भरत के अनुसार उनकी शरण कौन-सी है ?

(iv) रामचंद्र से मिलने के लिए जाते समय भरत जी मन में क्या विचार कर रहे हैं ?

(v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त अलंकार, रस एवं छंद का नाम लिखिए।

(ग) हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै।

पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै।।

मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै।

सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै।।

तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धनि न सकत धीरौ धीरै।।

उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यौं दीजै खीरै-नीरै।।

(i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) राम और लक्ष्मण के प्रेम के संबंध में तुलसीदास ने क्या कहा है ?

(iv) पद्यांश के अनुसार लक्ष्मण के घाव की पीड़ा को श्रीरामचंद्र जी किस प्रकार जान सकते हैं ?

(v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।

(घ) अब लौं नसानी अब न नसैहौं।

राम कृपा भवनि सा सिरानी जागे फिर न डसैहौं॥

पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।

स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहं कसैहौं।

परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस हवै न हँसैहौं।

मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं॥

(i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) तुलसीदास को कौन-सी चिंतामणि प्राप्त हो गई है ?

(iv) रघुनाथ की कृपा से तुलसी का क्या-क्या समाप्त हो गया है ?

(v) उपर्युक्त पद्यांश की भाषा-शैली स्पष्ट कीजिए।

(ङ) ऐसी मूढ़ता या मन की।

परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की॥

धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।

नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की॥

ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।

टूटत अति आतूर अहार बस छति बिसारि आनन की॥

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।

तुलसीदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की॥

(i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) कवि अपने उद्धार के लिए किससे विनती कर रहा है ?

(iv) कवि के अनुसार यह मन किस प्रकार की मूर्खता कर रहा है ?

(v) 'धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की' पंक्ति में कौन-सा अलंकार है ?

#### IV. भाषा के रंग :

1. "सुनत सुमंगल.....सनेह जल," पंक्तियों में कौन-सा छंद है ? उसका लक्षण लिखिए।
2. "हरो चरहि, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ," पंक्ति में काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
3. रामचरितमानस में सर्वाधिक प्रयुक्त छंद कौन-सा है ? उसका लक्षण लिखिए।

### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

1. जब भरत को पता चलता है कि उन्हें 'राज्य' और राम को 'वनवास' दिया गया है तो वे राम को बुलाने वन को जाते हैं। ऐसी स्थिति में आप क्या करते ? अपने शब्दों में लिखिए।
2. तुलसीदास जी ने दोहावली में कहा है कि मंत्री, गुरु, और चिकित्सक को भय के कारण झूठ नहीं बोलना चाहिए नहीं तो राज, धर्म और षरीर का विनाश शीघ्र हो सकता है। क्या आप इस बात से सहमत हैं ? अपने शब्दों में लिखिए।

### शब्दार्थ

बासर—दिन। उछाहू—प्रसन्नतापूर्वक। बिहवल—बेचैन। पय—दूध। मलिन—मुरझाया। तिमिरु—अंधकार। पयोधि—सागर। बिबुध—देवता। मंदाकिनी—नदी। नियोगा—आज्ञा। कोटि—करोड़। मीना—मछली। उताइल पाऊ—पैर जल्दी-जल्दी पड़ने लगते हैं। लखि—देखना। बालधी—पूँछ। ज्वाल-जाल—आग का समूह। कैधौं—अथवा। ब्योम-बीथिका—आकाशरूपी गली में। कृसानु-सरि—अग्नि की सरिता। जातुधान—राक्षस। खोरि-खोरि—गली-गली से। चख—आँख। अगार—घर। रसना—जीभ। साखामृग—वानर। कीरै—तोता। छति लाहु—हानि-लाभ। खीरै नीरै—दूध और पानी। पसारहिं—फैलाते हैं। मीत—मित्र। फबैं—शोभा देते हैं। मराली—हंस जैसी। बक—बगुला। भेषज—औषधि। करषत—खींचना। बेगिही—शीघ्र ही। दादुर—मेढक। परुष—कठोर। परिहरि—छोड़कर। अविचल—अडिग, अचंचल। चातक—पपीहा। तृषित—प्यासा। सेन—बाज पक्षी। छति—हानि। विसारि—भूलकर। मृषा—मिथ्या। भासै—प्रतीत होता है। सुमृति—स्मृति। भवनिसा—संसार रूपी रात्रि। चिंतामनि—समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली एक विशिष्ट मणि। खसैहों—गिराऊँगा। कसौटी—एक विशेष काले पत्थर का नाम है जिस पर सोने की शुद्धता की परीक्षा की जाती है, मापदंड, परख। पन—प्राण। बसैहों—बसने के लिए बाध्य कर दूँगा।



# केशवदास

हिंदी काव्य जगत में रीतिकाल के प्रमुख महाकवि केशवदास का जन्म मध्य प्रदेश के ओरछा (बुंदेलखंड) में सन् 1555 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० काशीनाथ मिश्र था। केशवदास के पिता एवं पितामह संस्कृत के विद्वान थे, इसलिए इन्हें भी संस्कृत का अच्छा ज्ञान हो गया था। केशवदास ओरछा-नरेश राजा मधुकरशाह द्वारा विशेष रूप से सम्मानित थे। ओरछा नरेश राजा इंद्रजीत इनको अपना गुरु मानते थे। सन् 1617 ई० में इनकी मृत्यु हो गई।

केशवदास द्वारा लिखे गए प्रमुख ग्रंथ हैं—‘रामचंद्रिका’, ‘रसिकप्रिया’, ‘कविप्रिया’, ‘वीरसिंहचरित’, ‘विज्ञानगीता’, ‘रतनबावनी’, और ‘जहांगीरजसचंद्रिका’। इनमें से ‘रामचंद्रिका’ हिंदी रामकथा-परंपरा के अंतर्गत एक विशिष्ट कृति है। इसे ‘छंदों का अजायबघर’ कहा जाता है। ‘कविप्रिया’ अलंकार से संबंधित ग्रंथ है।



(सन् 1555–1617 ई.)

भाषा पर केशव जी का असाधारण अधिकार था। इन्होंने प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग किया है तथा भाषा में विषय के अनुरूप प्रसाद, माधुर्य और ओज गुण विद्यमान हैं। ओजस्विता, लाक्षाणिकता तथा प्रवाह इनकी भाषा की प्रमुख विशेषताएँ हैं। केशव की भाषा प्रमुखतः ब्रजभाषा है, जिसमें बुंदेली का पुट है। केशवदास ने पांडित्य प्रदर्शन और चमत्कार दिखाने के लिए संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग अत्यधिक किया है। इन्होंने प्रबंध और मुक्तक दोनों ही शैलियों को अपनाया है। ‘रामचंद्रिका’ में प्रबंध शैली है तो ‘कविप्रिया’ और ‘रसिकप्रिया’ में मुक्तक शैली।

“भूषण बिनु न विराजई, कविता, बनिता मित्त” इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि बिना अलंकार के काव्य का सौंदर्य नहीं बढ़ सकता, अतः इन्होंने अपने काव्य में अलंकारों का इतना अधिक प्रयोग किया है कि इन्हें ‘अलंकारवादी कवि’ कहा जाता है। इनके काव्य में रूपक, यमक, श्लेष, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, विरोधाभास, संदेह, अनुप्रास आदि अलंकारों के बहुत अधिक प्रयोग हुए हैं।

काव्य को काव्यशास्त्र के सिद्धांतों के अनुरूप ढालने एवं उसके वस्तु-निरूपण, शब्द-योजना, अलंकार-योजना एवं छंद-विधान आदि को नियमबद्धता प्रदान करने के लिए महाकवि आचार्य केशवदास को सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। हिंदी साहित्य के अंतर्गत, रीति-ग्रंथों के सृजन का श्रेय सर्वप्रथम



इन्हीं को दिया जाता है। काव्य के कलापक्ष पर उनका अद्भुत स्वामित्व था। इनके कलापक्ष की विलक्षणता को देखकर ही इन्हें 'आचार्य' की उपाधि मिली थी।

प्रस्तुत पाठ **स्वयंवर कथा** में धनुष के शोभित होने के साथ स्वयंवर सभा के सौंदर्य का वर्णन बहुत की आकर्षक ढंग से किया गया है। स्वयंवर की शोभा देखकर ऐसा लगता है कि धरती पर चाँदनी फैल गई है, उस सौंदर्य को देखने के लिए विश्वरूप अर्थात् भगवान् विष्णु स्वयं आए हुए हैं, साथ ही राम का आगमन, विश्वामित्र द्वारा राजा जनक से परिचय, राम द्वारा धनुष भंग करना तथा भृगुनंद के क्रोध आदि का संवादात्मक शैली में वर्णन किया गया है।



## स्वयंवर-कथा

खंडपरस को सोभिजै, सभामध्य कोदंड ।  
मानहुँ शेष अशेष धर, धरनहार बरिबंड ॥ 1 ॥

(सवैया)

सोभित मंचन की अवली गजदंतमयी छवि उज्ज्वल छाई ।  
ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई ।  
तामहुँ केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई ।  
देवन स्यों जनु देवसभा सुभ सीयस्वयंवर देखन आई ॥ 2 ॥

(घनाक्षरी)

पावक पवन मणिपन्नग पतंक पितृ,  
जेते ज्योतिवंत जग ज्योतिषिन गाये हैं ।  
असुर प्रसिद्ध सिद्ध तीरथ सहित सिंधु,  
केशव चराचर जे वेदन बताये हैं ।  
अजर अमर अज अंगी और अनंगी सब,  
बरणि सुनावै ऐसे कौन गुण पाए हैं ।  
सीता के स्वयंवर को रूप अवलोकिबे को,  
भूपन को रूप धरि विश्वरूप आये हैं ॥ 3 ॥

(सवैया)

सातहु दीपन के अवनीपति हारि रहे जिय में जब जाने ।  
बीस बिसे व्रत भंग भयो, सो कहौ, अब, केशव, को धनु ताने ।  
शोक की आगि लगी परिपूरण आइ गये घनश्याम बिहाने ।  
जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरुपुण्य पुराने ॥ 4 ॥

## विश्वामित्र और जनक की भेंट

(दोधक छंद)

आइ गये ऋषि राहें लीने। मुख्य सतानंद विप्र प्रवीने।  
देखि दुवौ भये पाँयनि लीने। आशिष शीरषबासु लै दीनै॥ 5॥

(सवैया)

विश्वामित्र

केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन कीरतिबेलि बयी है।  
दान-कृपान-विधानन सों सिगरी वसुधा जिन हाथ लयी है।  
अंग छ सातक आठक सों भव तीनिहु लोक में सिद्धि भयी है॥  
वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योगमयी है॥ 6॥

(सोरठा)

जनक— जिन अपनो तन स्वर्ण, मेलि तपोमय अग्नि मैं।  
कीन्हों उत्तमवर्ण, तेई विश्वामित्र ये॥ 7॥

(मोहन छंद)

लक्ष्मण— जन राजवंत। जग योगवंत।  
तिनको उदोत। केहि भाँति होत॥ 8॥

(विजय छंद)

श्रीराम—

सब छत्रिन आदि दै काहु हुई न छुए बिजनादिक बात डगै।  
न घटै न बढ़ै निशि बासर केशव लोकन को तमतेज भगै।  
भवभूषण भूषित होत नहीं मदमत्त गजादि मसी न लगै।  
जलहूँ थलहूँ परिपूरण श्री निमि के कुल अद्भुत ज्योति जगै॥ 9॥

(तारक छंद)

जनक—

यह कीरति और नरेशन सोहै।  
सुनि देव अदेवन को मन मोहै।  
हम को बपुरा सुनिए ऋषिराई।  
सब गाँऊँ छ सातक की ठकुराई॥ 10॥

## (विजय छंद)

विश्वामित्र –

आपने आपने ठौरनि तौ भुवपाल सबै भुव पालै सदाई ।  
 केवल नामहि के भुवपाल कहावत हैं भुवि पालि न जाई ।  
 भूपति की तुमहीं धरि देह बिदेहन में कल कीरति गाई ।  
 केशव भूषन को भवि भूषण भू तन तै तनया उपजाई ॥ 11 ॥

## (दोधक छंद)

जनक – ये सुक कौन के सोभहिं साजे ?

सुंदर श्यामल गौर विराजे ।  
 जागत हौं जिय सोदर दोऊ ।  
 कै कमला विमला पति कोऊ ॥ 12 ॥

## (घनाक्षरी)

विश्वामित्र –

दानिन के शील, पर दान के प्रहारी दिन,  
 दानवारि ज्यों निदान देखिए सुभाय के ।  
 दीप दीप हूँ के अवनीपन के अवनीप,  
 पृथु सम केशोदास दास द्विज गाय के ।  
 आनंद के कंद सुरपालक के बालक ये,  
 परदारप्रिय साधु मन वच काय के ।  
 देहधर्मधारी पै विदेहराज जू से राज,  
 राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के ॥ 13 ॥

## (तारक छंद)

रघुनाथ शरासन चाहत देख्यो ।  
 अति दुष्कर राजसमाजनि लेख्यो ।

जनक – ऋषि है वह मंदिर मँझ मँगाऊँ ।

गहि ल्यावहि हौं जनयूथ बुलाऊँ ॥ 14 ॥

## (दंडक छंद)

बज्र तें कठोर है, कैलास ते विशाल, काल-  
 दंड तें कराल, सब काल काल गावई ।

केशव त्रिलोक के विलोक हारे देव सब,  
छोड़ चंद्रचूड़ एक और को चढ़ावई ?  
पन्नग प्रचंड पति प्रभु की पनच पीन,  
पर्वतारि-पर्वत-प्रभा न मान पावई।  
विनायक एकहू पै आवै न पिनाक ताहि,  
कोमल कमलपाणि राम कैसे ल्यावई ॥ 15 ॥

(तोमर)

विश्वामित्र –

सुनि रामचंद्र कुमार। धनु आनिए यहि बार ॥  
पुनि बेगि ताहि चढ़ाव। यश लोक लोक बढ़ाव ॥ 16 ॥

(दोहा)

ऋषिहि देखि हरष्यो हियो, राम देखि कुम्हलाइ।  
धनुष देखि डरपै महा, चिंता चित्त डोलाइ ॥ 17 ॥

(स्वागता छंद)

रामचंद्र कटिसों पटु बाँध्यो। लील्यैव हर को धनु साँध्यो ॥  
नेकु ताहि करपल्लव सों छवै। फूलमूल जिमि टूक कर्यो द्वै ॥ 18 ॥

(सवैया)

उत्तम गाथ सनाथ जबै धनु श्री रघुनाथ जू हाथ कै लीनो।  
निर्गुण ते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो।  
ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाच्छ नराच नवीनो।  
राजकुमारि निहारि सनेह सों शंभु को साँचो शरासन कीनो ॥ 19 ॥

प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद,  
चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंड को।

चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल,  
पालि ऋषिराज के बचन परचंड को।

सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,  
क्रोधु उपजाइ भृगुनंद बरिवंड को।

वाधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग, धनु-  
भंग को शब्द गयो भेदि ब्रह्मांड को ॥ 20 ॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'रामचंद्रिका' के रचयिता हैं—  
 (क) तुलसीदास (ख) केशवदास (ग) मैथिलीशरण गुप्त (घ) सूरदास
2. केशवदास द्वारा रचित है—  
 (क) अनघ (ख) पद्माभरण (ग) उत्तरा (घ) कविप्रिया
3. केशवदास किस नरेश द्वारा विशेष रूप से सम्मानित थे ?  
 (क) ओरछा नरेश (ख) जयपुर नरेश (ग) ग्वालियर नरेश (घ) इनमें से कोई नहीं
4. महाकवि केशवदास किस काव्यधारा के प्रवर्तक एवं प्रचारक समझे जाते हैं—  
 (क) रीतिवादी (ख) भक्तिकाल (ग) सूफी काव्यधारा (घ) इनमें से कोई नहीं
5. 'रसिक प्रिया' के रचनाकार हैं—  
 (क) मतिराम (ख) केशवदास (ग) जगन्नाथदास रत्नाकर (घ) घनानंद
6. सुमेलित कीजिए—  
 (क) जन राजवंत जग योगवंत — जनक  
 (ख) यह कीरति और नरेषन सोहै — लक्ष्मण  
 (ग) केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में, जिन कीरति बेलि बयी है — राम  
 (घ) सब छत्रिन आदि दै काहु हुई न छुए बिजनादिक बात डगै — विश्वामित्र
7. निम्नलिखित में से कौन जोन्हाई का पर्यायवाची नहीं है :  
 (क) चाँदनी (ख) कौमुदी (ग) ज्योत्सना (घ) अवनि
8. कोदंड का पर्यायवाची है  
 (क) धनुष (ख) तीर (ग) बंदूक (घ) गोली

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. सीता के स्वयंवर की संक्षिप्त कथा अपने शब्दों में लिखिए।
2. केशव की संवाद-योजना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. आचार्य केशवदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनके साहित्यिक योगदान एवं उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए।
4. केशव की काव्यगत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

### III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) खंडपरस को सोभिजै, सभामध्य कोदंड।

मानहुँ शेष अशेष धर, धरनहार बरिबंड।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंशों में व्याख्या कीजिए।
- (iii) शिवधनुष की तुलना किससे की गई है ?
- (iv) शेषनाग की कौन-कौन-सी विशेषता यहाँ बताई गई है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त अलंकार का नाम लिखिए।

(ख) सोभित मंचन की अवली गजदंतमयी छवि उज्ज्वल छाई।

ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई।

तामहँ केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई।

देवन स्यों जनु देवसभा सुभ सीयस्वयंवर देखन आई।।

- (i) उपर्युक्त का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) राजकुमारों की तुलना किससे की गई है ?
- (iv) सीय के स्वयंवर को कौन देखने चली आई है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ग) यह कीरति और नरेशन सोहै।

सुनि देव अदेवन को मन मोहै।

हम को बपुरा सुनिए ऋषिराई।

सब गाँऊँ छ सातक की ठकुराई।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) पद्यांश का मूल भाव स्पष्ट कीजिए।
- (iv) किसने 'किसको' 'बपुरा' कहा है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त रस एवं छंद लिखिए एवं उनके लक्षण लिखिए।

(घ) उत्तम गाथ सनाथ जबै धनु श्री रघुनाथ जू हाथ कै लीनो।

निर्गुण ते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो।

ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाच्छ नराच नवीनो।

राजकुमारि निहारि सनेह सों शंभु को साँचो शरासन कीनो।।

- (i) उपर्युक्त प्रस्तुत पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) राम के तिरछे कटाक्ष ने कौन-सा काम कर दिया ?

(iv) निर्गुण से गुणवंत कौन हो गया ?

(v) उपर्युक्त पद्यांश में प्रयुक्त अलंकार का नाम लिखिए।

(ड) प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद,  
चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंड को।  
चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल,  
पालि ऋषिराज के बचन परचंड को।  
सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,  
क्रोधु उपजाइ भृगुनंद बरिवंड को।  
वाधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग, धनु-  
भंग को शब्द गयो भेदि ब्रह्मांड को।।

(i) उपर्युक्त प्रस्तुत पद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) धनुष के टूटने से कौन-कौन विचलित हो गए ?

(iii) भृगुनंद को किस कारण क्रोध उत्पन्न हुआ ?

(iv) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

#### IV. भाषा के रंग :

1. "ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधर मंडल मंडि जोन्हाई" पंक्ति में काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
2. निम्न पदों में समास-विग्रह कीजिए और समास का नाम लिखिए—  
अवनिपति, वेदत्रयी, त्रिलोक, कमलपाणि।

#### अनुभूति और अभिव्यक्ति :

स्वयंवर कथा मे आये हुए वार्तालाप कथोपकथन की तरह आप भी अपने मित्रों के साथ किसी घटना पर किये गए वार्तालाप को कथोपकथन शैली में लिखिए।

#### शब्दार्थ

खंडपरस—महादेव जी। कोदंड—धनुष। अवली—पंक्ति। जोन्हाई—ज्योत्सना। मणिपन्नग—बड़े-बड़े सर्प, शेष, वासुकि। अंगी—शरीरी। अनंगी—अशरीरी। बिहाने—प्रातःकाल। प्रवीने-पुरोहित-कार्य में कुशल। शीरषबासु—सिर सूँघकर। कीरतिबेलि—यशरूपी लता। कृपान-विधानन—युद्ध करके। बयी—बोया। उदोत—अभ्युदय। विजना—व्यंजन, पंखा। तमतेज—घना अंधकार। भूव—पृथ्वी। भूतन—पृथ्वी के शरीर से। विदेहन—जीवन-मुक्त। कंद—बादल, विष्णु। सुरपालक—इंद्र। परदार—लक्ष्मी। चंद्रचूड़—महादेव। पिनाक—धनुष। नराच—बाण। चंड कोदंड—कठोर धनुष। अचला—पृथ्वी। भृगुनंद—परशुराम। ईश—महादेव। छालि—तोड़कर।



# बिहारीलाल



बिहारी रीतिकाल के रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। इनका जन्म सन् 1595 ई० में ग्वालियर जिले के बसुआ गोविंदपुर गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम केशवराय था। बिहारी ने संस्कृत-प्राकृत के काव्यग्रंथों का स्वाध्ययन किया था। यह जयपुर नरेश महाराजा जयसिंह के दरबारी कवि थे। कहा जाता है कि महाराजा जयसिंह ने दूसरा विवाह किया था और अपनी नवोद्गा पत्नी के साथ भोग-विलास में पड़कर राजकाज की बिल्कुल चिंता नहीं कर रहे थे। महाराजा जयसिंह की यह आसक्ति देखकर बिहारी ने निम्नलिखित दोहा लिखकर उनके पास भेजा :

(सन् 1595—1663 ई.)

**“नहिं परागु नहिं मधुर मधु, नहिं विकासु इहि काल।**

**अली कली ही सौं बंध्यौ, आगे कौन हवाल।।”**

इस दोहे को पढ़कर राजा जयसिंह बहुत प्रभावित हुए और पुनः कर्तव्य पथ पर अग्रसर हो गए। इनके प्रत्येक दोहे पर महाराज इन्हें एक स्वर्ण-मुद्रा भेंट करते थे। इनकी मृत्यु सन् 1663 ई० में हुई थी।

कविवर बिहारी की एकमात्र कृति ‘बिहार सतसई’ ही उनकी अक्षुण्ण कीर्ति का आधार है। अपने दोहों में इन्होंने समासोक्ति द्वारा जो भाव-गुंथन किया है, उसके महत्त्व को दर्शाते हुए निम्नलिखित उक्ति प्रसिद्ध है—

**सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।**

**देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर।।**

बिहारी गागर में सागर भरने के लिए विख्यात हैं। शृंगारिक कवि होने पर भी बिहारी ने भक्ति और नीति संबंधी अनेक दोहों की रचना की है। इन्होंने कोई लक्षण ग्रंथ नहीं लिखा, परंतु इनके दोहों में रस, अलंकार, लक्षणा, व्यंजना आदि शब्दशक्तियों की बहुलता पायी जाती है। इनके दोहों से उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति और चमात्कारिक प्रतिभा का पता चलता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने शायद इसीलिए उनके दोहों को ‘रस के छींटे’ कहा है।

बिहारी की भाषा साहित्यिक ब्रजभाषा है, जिसमें पूर्वी एवं पश्चिमी हिंदी की बोलियों के साथ उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग बहुलता से किया गया है। शब्द चयन की दृष्टि से बिहारी अद्वितीय हैं।

बिहारी ने मुक्तक काव्य-शैली को स्वीकार किया है, जिसमें समास शैली का अनूठा योगदान है। 'दोहा' जैसे छोटे छंद में भी इन्होंने अनेक भावों को भर दिया है। अलंकारों के प्रयोग में बिहारी दक्ष थे। इनके काव्य में श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अन्योक्ति और अतिशयोक्ति अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है।

रीतिकालीन कवि बिहारी अपने ढंग के अद्वितीय कवि हैं। तत्कालीन परिस्थितियों से प्रेरित होकर इन्होंने जिस साहित्य का सृजन किया, वह हिंदी-साहित्य की अमूल्य निधि है। भाव और शिल्प दोनों ही दृष्टि से इनकी अनूठी काव्य कृति 'बिहारी-सतसई' उत्कृष्ट है।

'बिहारी-सतसई' से संकलित प्रस्तुत दोहों में '**भक्ति एवं शृंगार रस**' के दोनों पक्षों 'संयोग एवं वियोग' का वर्णन किया गया है।

# भक्ति एवं शृंगार

करो कुबत जगु, कुटिलता तजौ न, दीनदयाल ।  
दुखी होहुगे सरल हिय बसत, त्रिभंगी लाल ॥ 1 ॥  
अजौ तरयौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक रंग ।  
नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुकतनु कै संग ॥ 2 ॥  
मकराकृति गोपाल कै सोहत कुंडल कान ।  
घर्यो मनौ हिय घर समरु ड्यौढ़ी लसत निसान ॥ 3 ॥  
बतरस-लालच लाल की, मुरली-धरी लुकाइ ।  
सौंह करे भौंहनु हँसै, दैन कहैं नटि जाई ॥ 4 ॥  
कर लै, चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ, भुज भेटि ।  
लहि पाती पिय की लखति, बाँचति, धरति समेटि ॥ 5 ॥  
अंग-अंग-नग जगमगत दीप सिखा सी देह ।  
दिया बढ़ाएँ हूँ रहै, बड़ौ उज्यारौ गेह ॥ 6 ॥  
सहज सेत पँचतोरिया पहिरत अति छबि होति ।  
जल चादर के दीप लौं जगमगाति तन-जोति ॥ 7 ॥  
औंधाई सीसी, सु लखि बिरह-बरनि बिललात ।  
बिच ही सूखि गुलाबु गौ, छींटौ छुई न गात ॥ 8 ॥  
करी बिरह ऐसी, तरु गैल न छाड़तु नीचु ।  
दीनै हूँ चसमा चखनु चाहै लहैं न मीचु ॥ 9 ॥  
पिय कै ध्यान गही गही रही वही हवै नारि ।  
आपु आपु ही आरसी लखि रीझति रिझवारि ॥ 10 ॥  
जोग-जुगति सिखए सबै मनौ महामुनि मैन ।  
चाहत पिय-अद्वैतता काननु सेवत नैन ॥ 11 ॥  
मूढ़ चढ़ाएउ रहै पर्यौ पीठि कच-भारु ।  
रहै गरें परि, राखिबौ तरु हियै पर हारु ॥ 12 ॥

खेलन सिखए, अलि, भलैं चतुर अहेरी मार।  
कानन-चारी नैन-मृग नागर नरनु सिकार ॥ 13 ॥

ललन, सलोने अरु रहे अति सनेह सौं पागि।  
तनक कचाई देत दुख सूरन लौं मुँह लागि ॥ 14 ॥

अनियारे, दीरघ दृगनु किती न तरुनि समान।  
वह चितवनि औरे कछू जिहिं बस होत सुजान ॥ 15 ॥

क्यों बसियै, क्यों निबहियै, नीति नेह-पुर नाँहि।  
लगा लगी लोइन करै, नाहक मन बैधि जाँहि ॥ 16 ॥

दृग उरझत टूटत कुटुम, जुरत चतुर-चित प्रीति।  
परति गाँठि दुरजन हियैं, दर्ई, नई यह रीति ॥ 17 ॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'बिहारी-सतसई' के रचनाकार हैं—

(क) रत्नाकर (ख) बिहारी (ग) हरिऔध (घ) घनानंद

2. बिहारी की रचना है—

(क) सिद्धराज (ख) रसकलश (ग) बिहारी-सतसई (घ) बावरा अहेरी

3. बिहारी किसके दरबारी कवि थे ?

(क) महाराजा जयसिंह के (ख) मानसिंह के  
(ग) अकबर के (घ) इनमें से कोई नहीं

4. 'बिहारी-सतसई' की भाषा है—

(क) ब्रजभाषा (ख) अवधी (ग) मैथिली (घ) खड़ी बोली

5. बिहारी किस काल के प्रसिद्ध कवि हैं?

(क) भक्तिकाल के (ख) रीतिकाल के (ग) आदिकाल के (घ) इनमें से कोई नहीं

6. 'मकराकृत' का आशय है—

(क) मछली की आकृति (ख) मकड़ी की आकृति  
(ग) मृग की आकृति (घ) मगर की आकृति

7. "जोग—जुगति सिखए सबै मनौ महामुनि मैन" काव्य पंक्ति में अलंकार है—

(क) उपमा (ख) उत्प्रेक्षा (ग) अनुप्रास (घ) यमक

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये—

1. बिहारी के 'गागर में सागर' की उक्ति को स्पष्ट कीजिए।
2. बिहारी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. "बिहारी को रीतिकाल का प्रतिनिधि कवि कहा जाता है"— तर्क सहित उत्तर दीजिए।
4. कविवर बिहारी का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं सहित साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
5. बिहारी की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

## III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) अजौं तरयौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक रंग।

नाक बास बेसरि लह्यौ बसि मुकतनु कै संग॥

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) बेसर नामक आभूषण कहाँ पहना जाता है ?
- (iv) वेदों के अध्ययन से श्रेष्ठ किसे बताया गया है ?
- (v) उपर्युक्त दोहे में प्रयुक्त अलंकार का नाम लिखिए व उनकी परिभाषा लिखिए।

(ख) बतरस-लालच लाल की, मुरली-धरी लुकाइ।

सौंह करै भौहनु हँसै, दैन कहैं नटि जाई॥

- (i) उपर्युक्त दोहे का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) श्रीकृष्ण की मुरली को राधा क्यों चुरा कर रखती हैं ?
- (iv) श्रीकृष्ण के द्वारा अपनी मुरली के बारे में पूछे जाने पर राधा क्या करने लगी ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ग) अनियारे, दीरघ दृगनु किती न तरुनि समान।

वह चितवनि औरै कछू, जिहिं बस होत सुजान॥

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का शीर्षक और कवि का नाम बताइए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) चतुर लोग किन पर अनुरक्त होते हैं ?
- (iv) किनकी रीति एक जैसी नहीं होती ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश किस रस का उपयुक्त उदाहरण है ? स्पष्ट कीजिए।

## IV. भाषा के रंग :

1. “नाक बास बेसरि लह्यौ, बसि मुकतनु के संग”। पंक्ति में प्रयुक्त अलंकार का नाम एवं उसका लक्षण लिखिए।
2. ‘जल चादर के दीप लौं जगमगाति तन-जोति।’ पंक्ति में काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
3. सोरठा छंद का लक्षण लिखते हुए पठित अंश से एक-एक उदाहरण दीजिए।

## V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

बिहारी भक्ति एवं शृंगार में किस पक्ष के प्रति अधिक न्याय कर पाये हैं? सोदाहरण स्पष्ट कीजिये।

## शब्दार्थ

कुबत-निंदा (बुरी बात)। अजौं-आज तक। श्रुति-कान, वेद। समरु-समर, कामदेव। निशान-झंडा। लुकाइ-छिपाकर। नटि जाय-मना कर देती है। कच-बाल। मीचु-मृत्यु। गैल-पीछा। मैन-कामदेव। सलोने-सुंदर, लवणयुक्त। सनेह-प्रीति। अनियारे-नुकीले। अहेरी-शिकारी। मार-कामदेव। कानन-चारी-कानों तक विचरने वाले, अथवा दीर्घ जंगल में ‘विचरने वाले।



# महाकवि भूषण

रीतिकाल के अंतर्गत वीर रस की रचना करने वाले कवि भूषण के जीवन के संबंध में बहुत अल्प सामग्री मिलती है और वह भी परस्पर विरोधों से युक्त है। इनका जन्म सन् 1613 ई० में कानपुर के तिकवाँपुर नामक ग्राम में हुआ था। मिश्र बंधुओं तथा रामचंद्र शुक्ल ने इनका समय सन् 1613 से 1715 ई० माना है। इनके पिता का नाम पं० रत्नाकर त्रिपाठी था। चित्रकूट के राजा रुद्रसाह-सोलंकी ने इन्हें 'भूषण' की उपाधि से सम्मानित किया और इस उपनाम से ये इतने प्रसिद्ध हुए कि आज इनका वास्तविक नाम ही शोध का विषय बन गया है। भूषण के प्रमुख आश्रयदाता महाराजा शिवाजी तथा छत्रसाल बुंदेला थे। इन्होंने अपने काव्य में इन्हीं दोनों की वीरता और पराक्रम का ओजपूर्ण वर्णन किया है।



(सन् 1613—1715 ई.)

शिवाजी के आश्रय में इन्होंने 'शिवराजभूषण' शिवा बावनी' तथा अनेक स्फुट छंदों की रचना की। छत्रसाल की प्रशस्ति में इन्होंने 'छत्रसालदशक' की रचना की। छत्रसाल और शिवाजी के गुणों का गुणगान करते हुए भूषण ने कहा था—'सिवा को बखानों कै बखानों छत्रसाल को।' शिवराज—भूषण अलंकार से संबंधित ग्रंथ है। इसके अतिरिक्त 'भूषण-उल्लास', 'दूषण-उल्लास' और भूषण हजारा नामक ग्रंथ भी इनके बताए जाते हैं।

भूषण की कविता में प्रधानतः वीर रस का ही परिपाक हुआ है। वीर रस के सहकारी रौद्र और भयानक भी मिलते हैं। यद्यपि भूषण की कविता ब्रजभाषा में है, परन्तु इसमें ब्रजभाषा के माधुर्य की नहीं, ओज की प्रधानता है। इनकी भाषा में स्थानीय पुट भी अनायास आ गया तथा अरबी-फारसी के शब्दों का भी निःसंकोच प्रयोग किया है। भूषण अलंकारों के मर्मज्ञ थे। इन्होंने कवित्त, सवैया, दोहा, छप्पय आदि छंदों को अपने काव्य का आधार बनाया है। इनका काव्य प्रबंध—काव्य न होकर मुक्तक है इसीलिए शैली में वर्णनात्मकता नहीं है।

रीतिकाल में जब अधिकतर कवि शृंगारी काव्य परंपरा में डूबे हुए थे उस समय भूषण ने वीररस और ओज गुण से युक्त कविता लिखकर अपनी अलग पहचान बनाई। इन्होंने अपने आश्रयदाताओं के

गुणों का अत्यधिक संकीर्तन तथा उनके आतंक एवं प्रताप के विविध रूपों का वर्णन अत्यधिक उत्साह के साथ किया। उदाहरण स्वरूप यह कवित्त द्रष्टव्य है—

“इंद्रजिमि जंभ पर, बाड़व सुअंभ पर।

रावन संदर्भ पर रघुकुल राज है।”

अन्ततः भक्ति और रीतिकाल के वीर काव्य के कवियों में भूषण का स्थान अद्वितीय है। जब कभी हिंदी के पाठकों या विद्वानों में कवि-चर्चा होती है, तो वीर रस के कवि के रूप में भूषण का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। भूषण की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने विलासिता के युग में शिवाजी एवं छत्रसाल की वीरता, शौर्य एवं पराक्रम का वर्णन करके, सुप्त राष्ट्रीय-भावना को जागृत किया और जनमानस में वीरता के भावों का संचार किया।

प्रस्तुत पाठ के **शिवा-शौर्य** शीर्षक कविता में शिवाजी के शौर्य का वर्णन किया गया है, जिसमें वीर रस का प्रवाह दिखाई देता है। वीरता के शौर्यपूर्ण वर्णन में अतिशयोक्तिपूर्ण उक्तियों की भरमार है।

प्रस्तुत पंक्तियाँ **‘छत्रसाल-दशक’** शीर्षक से ली गई हैं। जिसमें कवि ने छत्रसाल के युद्ध-स्थल प्रस्थान के वर्णन के साथ-साथ उनके तलवार और बरछी चलाने के पराक्रमपूर्ण कौशल का वर्णन ओजपूर्ण भाषा में किया है।





# शिवा-शौर्य

साजि चतुरंग सैन अंग मैं उमंग धारि,  
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।  
भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,  
नदी नद मद गैबरन के रलत है।  
ऐलफैल खैलभैल खलक में गैलगैल,  
गजन की टैलपैल सैल उसलत है।  
तारा सो तरनि धूरिधारा में लगत जिमि,  
थारा पर पारा पारावार यों हलत है॥१॥

बाने फहराने घहराने घंटा गजन के,  
नाहीं ठहराने रावराने देसदेस के।  
नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि,  
बाजत निसाने सिवराजजू नरेस के।  
हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,  
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।  
दल के दरारन ते कमठ करारे फूटे,  
केरा के से पात बिहराने फन सेस के॥२॥

छूटत कमान बान बंदूकरु कोकबान,  
मुसकिल होत मुरचानहूँ की ओट में।  
ताही समैं सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो,  
दावा बाँधि द्वेषिन पै बीरन लै जोट में।  
भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहाँ,  
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट में।  
ताव दै दै मूँछन कंगूरन पै पाँव दै दै,  
घाव दै दै अरि मुख कूदि परैं कोट में॥३॥

इंद्र निज हेरत फिरत गजइंद्र अरु,  
 इंद्र को अनुज हेरै दुग्धनदीस को।  
 भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरै,  
 बिधि हेरै हंस को चकोर रजनीस को।  
 साहितनै सरजा यों करनी करी है तैं वै,  
 होतु हैं अचंभो देव कोटियों तैंसीस को।  
 पावन न हेरे तेरे जस में हिराने निज,  
 गिरि को गिरीस हेरै गिरिजा गिरीस को॥४॥  
 प्रतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरि हूँ,  
 मिलि मिलि आपुस में गवात बधाई है।  
 भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से,  
 जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जोरि आई है।  
 किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली,  
 डिम डिम डमरु दिगंबर बजाई है।  
 सिवा पूछैं सिव सों समाज आजु कहाँ चली,  
 काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है॥५॥

## छत्रसाल-प्रशस्ति

निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलैभानु कैसी,  
 फारैं तमतोम से गयंदन के जाल कों।  
 लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी,  
 रुद्रहिं रिझावै दै दै मुंडन के माल कों।  
 लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,  
 कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल कों।  
 प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,  
 कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों॥  
 भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी-सी,  
 खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के॥

बखतर पाखरन बीच धँसि जाति मीन,  
 पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के।  
 रैयाराव चंपति के छत्रसाल महाराज,  
 भूषण सकै करि बखान को बलन के।  
 पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर,  
 तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के॥

### अभ्यास

#### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'भूषण' द्वारा लिखा गया काव्य है—  
 (क) बीजक (ख) पद्मावत (ग) शिवराज-भूषण (घ) शृंगार लहरी
2. 'छत्रसाल-दशक' के कवि हैं—  
 (क) केशव (ख) बिहारी (ग) भूषण (घ) कबीर
3. किस राजा के द्वारा कवि भूषण को 'भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया गया है ?  
 (क) राजा जयसिंह द्वारा (ख) राजा रुद्र द्वारा  
 (ग) राजा मानसिंह द्वारा (घ) इनमें से कोई नहीं
4. कवि भूषण किस काल के कवि माने जाते हैं?  
 (क) रीतिकाल के (ख) भक्तिकाल के (ग) आदिकाल के (घ) इनमें से कोई नहीं
5. कवि भूषण ने अपनी रचना में किसकी वीरता एवं पराक्रम का वर्णन किया है ?  
 (क) शिवाजी एवं छत्रसाल की (ख) रानी लक्ष्मीबाई की  
 (ग) मराठों की (घ) इनमें से कोई नहीं
6. निकसत म्यान ते मयूखै प्रलैभानु कैसी पंक्ति का संबंध है ?  
 (क) छत्रसाल से (ख) शिवाजी से (ग) मानसिंह से (घ) जयसिंह से
7. पारावार का पर्यायवाची है—  
 (क) नदी (ख) कोपल (ग) समुद्र (घ) महल

#### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये—

1. भूषण के शिवा-शौर्य का भावार्थ संक्षेप में लिखिए।
2. छत्रसाल की बरछी की क्या विशेषताएँ हैं ? शिवाजी की तलवार से उसकी तुलना कीजिए।
3. कवि भूषण का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचना सहित साहित्यिक योगदान का उल्लेख कीजिए।
4. भूषण की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

### III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

(क) साजि चतुरंग सैन अंग मैं उमंग धारि,

सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत हैं।

भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,

नदी नद मद गैबरन के रलत है।

ऐलफैल खेलभैल खलक में गैलगैल,

गजन की ठैलपैल सैल उसलत है।

तारा सो तरनि धूरिधारा में लगत जिमि,

थारा पर पारा पारावार यों हलत है।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) प्रस्तुत पद में किसके शौर्य एवं पराक्रम का वर्णन किया गया है ?
- (iv) शिवाजी के युद्ध प्रस्थान के समय पहाड़ों की स्थिति क्या हो जाती है ?
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

(ख) बाने फहराने घहराने घंटा गजन के,

नाहीं ठहराने रावराने देस देस के।

नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि,

बाजत निसाने सिवराजजू नरेस के।

हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,

भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।

दल के दरारन ते कमठ करारे फूटे,

केरा के से पात बिहराने फन सेस के।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) उड़ते हुए भौरे किस प्रकार प्रतीत हो रहे थे ?
- (iv) शिवाजी के सैन्य प्रस्थान से कछुए और शेषनाग की क्या दशा हुई ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश में प्रयुक्त रस एवं अलंकार का नाम लक्षण सहित लिखिए।

(ग) निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलैभानु कैसी,

फारैं तमतोम से गयंदन के जाल कों।

लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी,

रुद्रहिं रिझावै दै दै मुंडन के माल कों।

लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,  
 कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल कों।  
 प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,  
 कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल कों।।

- (i) उपर्युक्त पद्यांश के शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) महाराजा छत्रसाल के तलवार की तुलना किससे की गई है ?
- (iv) छत्रसाल की तलवार शिवजी को कैसे प्रसन्न करती है ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

#### IV. भाषा के रंग :

1. "भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरैं,  
 विधि हेरैं हंस को चकोर रजनीस को"।। पंक्ति में काव्य सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
2. "तेरी बरछी ने पर छीने हैं खलन के" पंक्ति में जो अलंकार है, उसे लक्षण के साथ स्पष्ट कीजिए।
3. निम्नलिखित वाक्यांशों के लिए एक शब्द लिखिए –  
 (क) रात्रि में विचरण करने वाला।  
 (ख) भूमि को धारण करने वाला।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

प्रस्तुत पाठ में षिवाजी और छत्रसाल के वीरता का वर्णन कवि ने कविता के माध्यम से किया है। आप अपने आस पास के साहसिक कार्य करने वाले व्यक्तियों की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

### शब्दार्थ

चतुरंग-रथ, हाथी, घोड़े एवं पैदल-इन चारों अंगों से युक्त सेना चतुरंग कही जाती थी।  
 गैबरन-हाथियों के। जंग-युद्ध। खेल-भैल-खलबली। तरनि-सूर्य। पारावार-समुद्र। बाने-ध्वज।  
 नग-पर्वत। कुंजर-हाथी। कमठ-कच्छप। दुग्धनदीस-क्षीरसागर। सुरसरिता-देवनदी, गंगा।  
 रजनीस-चंद्रमा। गिरीस-शिव। गिरिजा-पार्वती। मयूखें-किरणें। गयंदन-हाथी। रुद्रहि-शिव को।  
 करवाल-तलवार। कटक-सेना। किलकि-प्रसन्न हो कर। संगिनी-आजीवन साथ देने वाली।  
 दलन-सेना। बर-बल, शक्ति। पर-पंख।

# विविधा

## घनानंद

**जीवन परिचय**—घनानंद का जन्म सन् 1689 ई० में माना जाता है। ये मुहम्मदशाह रंगीला के दरबारी कवि थे, दरबार की नर्तकी सुजान पर आसक्त थे, इनकी कविताओं में सुजान का उल्लेख बार—बार हुआ है। ये सुजान को अपने साथ ले जाना चाहते थे पर उसके मना करने पर अकेले ही दरबार छोड़कर चले गये और वृंदावन में रहने लगे। यहीं से उन्होंने कृष्ण भक्ति आधारित काव्य की रचना की। इनका निधन सन् 1739 ई० में माना जाता है।

घनानंद की प्रमुख कृतियाँ हैं—सुजान-सागर, सुजानहित प्रबंध, वियोगबेलि, प्रेम-पत्रिका, प्रीति पावस, बिरह-लीला, कोकसार, रसकेलिवल्ली, कृपाकंद आदि।

घनानंद के काव्य की भाषा ब्रजभाषा है इनकी भाषा में स्वच्छता, सुघड़ता एवं एकरूपता के दर्शन होते हैं। घनानंद ने अपने काव्य में मुख्यतः कवित्त, सवैया एवं घनाक्षरी छंदों का प्रयोग किया है।

अंततः रीतियुगीन कवियों में रीतिमुक्त काव्य-धारा से संबंधित कवियों में घनानंद का सर्वश्रेष्ठ स्थान माना जाता है।

रीतिमुक्त कवियों के प्रतिनिधि कवि घनानंद ने अपने काव्य की रचना प्रेम को आधार बनाकर की। इनका समस्त काव्य 'प्रेम की पीर' का परम रूप है। इन्होंने अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में सुजान नाम की रूपवती नर्तकी से प्रेम किया था। प्रेम के मार्ग में तनिक भी सयानेपन और कुटिलता को इन्होंने श्रेयस्कर नहीं समझा। इनका मानना था कि प्रेम के ऐसे मार्ग पर अहंभाव को त्याग कर सच्चे लोग ही चल सकते हैं।

अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।  
तहाँ साँचें चलैं तजि आपुनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं।  
'घनानंद' प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक से दूसरो आँक नहीं।  
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं॥१॥  
डगमगी डगरि धरनि छबि ही के भार,  
ढरनि छबीले उर आछी बनमाल की।  
सुंदर बदन तर कोटिक मनद वारैं,  
चित चुभी चितवनि लोचन बिसाल की।

काल्हि हि गली अली निकसे औचक आय,  
 कहा कहौं 'अटक मटक' तिहि काल की।  
 भिजई हौं रोम रोम आनंद के घन छाये,  
 बसी मेरी आँखिन मैं आवनि गुपाल की॥2॥  
 एक काजहि देह को धारे फिरौ,  
 परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।  
 निधि नीर सुधा के समान करौ,  
 सबही विधि सज्जनता सरसौ।  
 'घनआनंद' जीवनदायक हौं,  
 कछु मेरियौ पीर हिये परसौ।  
 कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन,  
 मो अँसुवान को लै बरसौ॥3॥

## सेनापति

**जीवन परिचय**—कविवर सेनापति ने अपने ग्रंथ 'कवित्त-रत्नाकर' में अपना परिचय दिया है, जो इस प्रकार है —

"दीक्षित परसराम दादौ है विदित नाम,  
 जिन कीने जज्ञ जा की जग मैं बड़ाई है।  
 गंगाधर पिता गंगाधर के समान जाकौ,  
 गंगातीर बसति अनूप जिन पाई है।  
 सेनापति सोई सीतापति के प्रसाद जाकी,  
 सब कवि कान दै सुनत कविताई है॥"

इस छंद से स्पष्ट होता है कि इनके पितामह का नाम परशुराम दीक्षित था तथा इनके पिता गंगाधर दीक्षित गंगा के किनारे अनूप बस्ती में रहते थे। 'अनूप' का अर्थ गंगा के किनारे स्थित प्रसिद्ध नगर, अनूप शहर भी हो सकता है, जो उत्तर प्रदेश के बुलंद शहर जिले में स्थित है। सेनापति का जीवन काल इनकी कृति 'कवित्त-रत्नाकर' के आधार पर सन् 1584-88 ई0 के आस-पास माना जाता है और मृत्यु भी सत्रहवीं शताब्दी ई0 के अंतिम चरण के लगभग हुई होगी। सेनापति प्रधानतया रामभक्त ही थे। 'कवित्त रत्नाकर' के तीन मंगलाचरण संबंधी छंदों से इस बात का संकेत मिलता है।

ब्रजभाषा के प्रचलित साहित्यिक तथा मौखिक रूपों से सेनापति का घनिष्ठ परिचय था। श्लिष्ट छंदों के चमत्कार का बहुत बड़ा श्रेय कवि का, भाषा पर पूर्ण अधिकार को जाता है।

निम्न काव्य-पंक्तियों में सेनापति ने प्रकृति चित्रण किया है। प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से सेनापति अद्वितीय प्रतिभा के धनी थे। शृंगारी कवियों में इनके जैसा ऋतु-वर्णन और किसी कवि ने नहीं किया है।

बृष कौं तरनि, तेज सहसौ किरन करि  
ज्वालन के जाल बिकराल बरसत है।  
तचति धरनि जब जरत झरनि सीरी  
छाँह कौं पकरि पंथी-पंछी विरमत है।  
'सेनापति' नैक दुपहरी के ढरत होत,  
धमका विषम ज्यों न पात खरकत है।  
मेरे जान पौनों सीरी ठौर कौं पकरि कौनों  
घरी एक बैठि कहूँ घामै वितवत है॥१॥  
सिसिर मैं ससि कौं सरूप पावै सविताऊ,  
घामहूँ मैं चाँदिनी की दुति दमकति है।  
'सेनापति' होत सीतलता है सहस गुनी,  
रजनी की झाँई बासर मैं झमकति है।  
चाहत चकोर सूर ओर दृग छोर करि,  
चकवा की छाती तजि धीर धसकति है।  
चंद के भरम होत मोद है कमोदनी कौं,  
ससि संक पंकजिनी फूलि न सकति है॥२॥

## देव

**जीवन-परिचय** — रीतिकालीन काव्य जिन कवियों के कृतित्व के कारण प्रतिष्ठित हुआ उन कवियों में देव का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके ग्रंथों के आधार पर इनका जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में सन् 1673 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम बिहारीलाल दूबे था। इनका पूरा नाम देवदत्त था। इनकी मृत्यु सन् 1767 ई० के आस-पास हुई थी।

इनके प्रमुख ग्रंथ हैं — 'भाव-विलास', 'अष्टयाम', 'भवानी-विलास', 'प्रेम-तरंग', 'कुशल-विलास', 'जाति-विलास', 'रस-विलास', 'प्रेमचंद्रिका', 'शब्द-रसायन', 'रागरत्नाकर', 'देवशतक' आदि।



देव प्रमुख रूप से दरबारी कवि थे। ये अपने जीवनकाल में अनेक राजा, रजवाड़ों का आश्रय प्राप्त किया था।

देव एक समर्थ कवि तथा प्रतिभा संपन्न आचार्य के रूप में सम्मानित हुए। लेकिन आचार्यत्व की अपेक्षा इनका कवित्व अधिक सशक्त रहा है। इनके काव्यों का मूल विषय शृंगार रहा है। इनकी रचनाएँ कल्पना की चारुता, अर्थवैभव की सुंदरता, विषयानुकूल शब्द-चयन तथा आनुप्रासिकता के कारण प्रशंसनीय बन गयी है। इनकी भाषा प्रवाहपूर्ण ब्रजभाषा है जिनमें शब्दों का तोड़-मरोड़ और व्याकरण रूपों की अव्यवस्था कुछ अधिक देखने को मिलती है, फिर भी उनका काव्य सरस, भावपूर्ण तथा हृदयग्राही बन गया है।

[देव रसवादी आचार्य थे और रस को आनंदमयी अनुभूति मानते थे। देव ने अपने काव्य में शृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का चित्रण किया है। निम्न पंक्तियों में देव ने बसंत का वर्णन बालक के रूप में किया है तथा नायिका द्वारा नायक के सौंदर्य का वर्णन भी कराया है॥

डार द्रुम पलना, बिछौना नवपल्लव, के,  
 सुमन झंगूला सोहै तन छबि भारी दै।  
 पवन झुलावै, केकी कीर बहरावै, 'देव',  
 'कोकिल हलावै, हुलसावै करतारी दै॥  
 पूरित पराग सौं उतारौ करै राई-लोन,  
 कंजकली नायिका लतानि सिर सारी दै॥  
 मदन महीपजू को बालक बसंत, ताहि,  
 प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै॥१॥

झहरि झहरि झीनी बूँद हैं परति मानो,  
 घहरि घहरि घटा घेरी है गगन में।  
 आनि कह्यो स्याम मो सौं, चलौ झूलिबे को आज,  
 फूली न समानी भई ऐसी हौं मगन में।  
 चाहत उद्योई उठि गई सो निगोड़ी नींद,  
 सोय गए भाग मेरे जानि वा जगन में।  
 आँख खोलि देखौं तौं न घन हैं, न घनस्याम,  
 वेई छाई बूँदें मेरे आँसू हवै दृगन में ॥२॥

धार मैं धाड़ धँसी निरधार हवै,  
 जाइ फँसी उकसीं न उबेरी।  
 री! अंगराय गिरीं गहिरी, गहि  
 फेरे फिरीं और घिरीं नहिं घेरी।

‘देव’ कछू अपनो बसु ना, रस-  
 लालच लाल चितै भई चेरी।  
 बेगि ही बुड़ि गयीं पँखियाँ,  
 अँखियाँ मधु की मँखियाँ भई मेरी॥३॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. ‘कवित्त रत्नाकर’ के रचयिता हैं—  
 (क) हरिऔध (ख) सेनापति (ग) रत्नाकर (घ) बिहारी
2. ‘भावविलास’ एवं ‘अष्टयाम’ के रचनाकार हैं—  
 (क) सेनापति (ख) देव (ग) घनानंद (घ) केशवदास
3. कवि देव द्वारा रचित काव्य-ग्रंथ हैं—  
 (क) वियोगबेलि (ख) प्रेम-पहेली (ग) प्रेम-तरंग (घ) शकुंतला
4. घनानंद द्वारा रचित ग्रंथ है—  
 (क) सुजान सागर (ख) रसराज (ग) जगदविनोद (घ) अनव
5. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना घनानंद की है ?  
 (क) प्रेम-सरोवर (ख) पद्मभरण (ग) विरहलीला (घ) चंद्रहस्त

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. सेनापति के प्रकृति-चित्रण का वर्णन अपने शब्दों में लिखिए।
2. घनानंद के अनुसार प्रेम का मार्ग कैसा है ? उनके पद्यांश के आधार पर प्रकाश डालिए।
3. सेनापति का संक्षिप्त जीवन परिचय देते हुए उनकी काव्यगत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. देव का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए, उनकी रचनाओं सहित साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
5. घनानंद का जीवन-परिचय देते हुए उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए तथा उनकी प्रमुख रचनाओं को लिखिए।

### III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

- (क) अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।  
 तहाँ साँचें चलैं तजि आपुनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं।  
 ‘घनआनंद’ प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक से दूसरो आँक नहीं।  
 तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं॥
- (i) उपर्युक्त कविता का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
  - (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

- (iii) प्रेममार्ग की विशेषताएँ बताइए।
- (iv) कपटी किस मार्ग पर चलते हुए झिझकते हैं ?
- (v) प्रस्तुत पद्यांश का काव्य सौंदर्य लिखिए।

(ख) एक काजहि देह को धारे फिरौ,

परजन्य जथारथ हवै दरसौ।

निधि नीर सुधा के समान करौ,

सबही विधि सज्जनता सरसौ।

‘घनआनंद’ जीवनदायक हौं,

कछु मेरियौ पीर हिये परसौ।

कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन,

मो अँसुवान को लै बरसौ।।

- (i) उपर्युक्त कविता का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) कवि ने किस कारण से देह धारण करने के लिए कहा है ?
- (iv) ‘निधि’ और ‘सुधा’ शब्द के दो-दो पर्यायवाची शब्द लिखिए।
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य सौंदर्य लिखिए।

(ग) सिसिर मैं ससि कौं सरूप पावै सविताऊ,

घामहूँ मैं चौंदिनी की दुति दमकति है।

‘सेनापति’ होत सीतलता है सहस गुनी,

रजनी की झाँई बासर मैं झमकति है।

चाहत चकोर सूर ओर दृग छोर करि,

चकवा की छाती तजि धीर धसकति है।

चंद के भरम होत मोद है कमोदनी कौं,

ससि संक पंकजिनी फूलि न सकति है।।

- (i) उपर्युक्त कविता का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) कवि के अनुसार चंद्रमा और कुमदिनी में कैसी भ्रामक स्थिति बनी हुई है ?
- (iv) ‘बासर’ और ‘रजनी’ शब्द के दो-दो पर्यायवाची शब्द लिखिए।
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य सौंदर्य लिखिए।

(घ) डार द्रुम पलना, बिछौना नवपल्लव, के,  
सुमन झंगूला सोहै तन छबि भारी दै।  
पवन झुलावै, केकी कीर बहरावै, 'देव',  
'कोकिल हलावै, हुलसावै करतारी दै।।  
 पूरित पराग सौं उतारौ करै राई-लोन,  
 कंजकली नायिका लतानि सिर सारी दै।।  
 मदन महीपजू को बालक बसंत, ताहि,  
 प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै।।

- (i) उपर्युक्त कविता का शीर्षक एवं कवि का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) कवि के अनुसार कंजकली नायिका क्या कर रही है ?
- (iv) 'केकी' और 'कीर' शब्द के अर्थ लिखिए।
- (v) उपर्युक्त पद्यांश का काव्य-सौंदर्य लिखिए।

#### IV. भाषा के रंग :

1. 'बृष कौं तरनि तेज सहसौ किरन करि,  
 ज्वालन के ज्वाल विकराल बरसत है।' पंक्ति में काव्य-सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
2. निम्नलिखित शब्दों के तत्सम रूप लिखिए—  
 पंछी, सिसिर, सहस्र, भरम, कमोदनी, मगन, नींद, जगन।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

1. भीषण गर्मी एवं अतिशय शीत के विषय में जैसा वर्णन सेनापति ने किया है उसी भावानुभूति में (उसी परिप्रेक्ष्य में) विचार कीजिए कि ये दोनों ऋतुएँ हमारी जीवन-शैली को किस रूप में प्रभावित करती हैं?
2. गाय चराकर लौटते हुए श्रीकृष्ण के सौंदर्य का वर्णन घनानंद की भाँति रसखान ने भी 'गोरज बिराजै भाल लहलही बनमाल' के रूप में किया है। इन दोनों कवियों में किसकी काव्य-पंक्तियाँ आपको अधिक रुचिकर लगती हैं, और क्यों ? कारण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. प्रेम के मार्ग को घनानंद ने सैद्धांतिक रूप से सरल व सहज बताया है जबकि व्यावहारिक रूप में नायिका 'मन भर लेकर छटाँक भर' देने का चतुराई पूर्ण व्यवहार करती है। ऐसे में आपकी दृष्टि में प्रेम का मार्ग वस्तुतः कैसा है; सरल या कुटिल ? स्पष्ट कीजिए।

## शब्दार्थ

### घनानंद

नेकु—थोड़ा भी। सयानप—चतुरता। झझकै—झिझकते हैं। आँक—अंक। वारों—न्योछावर करती हूँ। आवनि—आने का ढंग। परजन्य—मेघ, बादल। जथारथ—यथार्थ।

### सेनापति

वृष—वृष राशि। तचटि—तपती है। सीरी—शीलम। नैक—थोड़ा। पौनों—पवन भी। पकरि—आश्रय लेकर। घामै—घाम, धूप। सिसिर—शिशिर ऋतु। सरूप—स्वरूप। सार्वताऊ—सूर्य भी। दुति—कांति। रजनी—रात्रि। झाई—छाया। बासर—दिन।

### देव

केकी—मोर। कीर—तोता। करतारी दै—हाथ की ताली बजाकर। महिप—राजा। आनि—आकर। निगोड़ी—निकृष्ट, नीच। निरधर—निरालंब, बेसहारा।



गद्य-खंड



# हिंदी गद्य का उद्भव और विकास

‘गद्य’ शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के ‘गद्’ धातु में ‘यत्’ प्रत्यय लगने से हुई है, जिसका अर्थ है बोलना या कहना। दैनिक जीवन में बोलचाल की भाषा में सामान्यतः गद्य का प्रयोग किया जाता है। गद्य विचार प्रधान, छंद, लय एवं तुकबंदी से मुक्त होता है। इसमें अपने विचारों को सहज, सरल एवं प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। हिंदी भाषा कई बोलियों का समुच्चय है, इसमें पश्चिमी हिंदी, राजस्थानी, पहाड़ी एवं पूर्वी बोलियों का विपुल साहित्य संचित है। हिंदी उत्तर भारत की प्रमुख भाषा है तथा यह पूरे भारत में समझी एवं बोली जाती है।

हिंदी गद्य के आविर्भाव के संबंध में विद्वानों में मतभेद है, कुछ विद्वान दसवीं शताब्दी से हिंदी गद्य की शुरुआत मानते हैं तो अधिकतर विद्वान तेरहवीं शताब्दी से हिंदी गद्य की शुरुआत मानते हैं। हिंदी गद्य के प्राचीनतम रूप राजस्थानी एवं ब्रजभाषा में मिलते हैं। ग्यारहवीं शताब्दी से राजस्थानी गद्य तथा चौदहवीं शताब्दी से ब्रजभाषा-गद्य की रचना मिलना प्रारंभ हो जाती है। अतः यह स्पष्ट है कि हिंदी गद्य साहित्य का आविर्भाव ग्यारहवीं से चौदहवीं शताब्दी के मध्य हुआ था। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हिंदी गद्य साहित्य को निम्नलिखित कालक्रमों में विभक्त किया जा सकता है—

1. पूर्व भारतेंदु युग – 13वीं शताब्दी से 1868 ई०
2. भारतेंदु युग – सन् 1868 से 1900 ई०
3. द्विवेदी युग – सन् 1900 से 1918 ई०
4. शुक्ल युग – सन् 1918 से 1938 ई०
5. शुक्लोत्तर युग – सन् 1938 से 1947 ई०
6. स्वातंत्र्योत्तर युग – सन् 1947 से अब तक

## हिंदी गद्य का उद्भव

हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास लगभग एक सहस्र वर्ष का है; जिसमें अपभ्रंश से लेकर राजस्थानी, ब्रजभाषा, अवधी आदि भाषाओं का विपुल साहित्य उपलब्ध होता है। हिंदी-गद्य-साहित्य का क्रमबद्ध विकास 19वीं शती से प्राप्त होता है। हिंदी गद्य का प्रारंभ विक्रम की चौदहवीं शताब्दी से माना जाता है। कुछ विद्वान ग्यारहवीं शताब्दी से हिंदी भाषा और साहित्य का प्रारंभ मानते हैं, किन्तु गोरखनाथ से पहले गद्य का नमूना प्राप्त नहीं हुआ है। कुछ विद्वान गोरखनाथ का समय चौदहवीं शताब्दी मानते हैं। गद्य का प्रचार-प्रसार गोरखपंथी साधुओं द्वारा किया गया। गोरखपंथी साधुओं के हठयोग, ब्रह्मज्ञान, शून्य साधना आदि से संबंध रखने वाले ग्रंथों को आचार्य शुक्ल ने 1343 ई० के आसपास के ब्रजभाषा गद्य का नमूना स्वीकार किया है।



### पूर्व भारतेंदु युग (आदिकालीन हिंदी गद्य)

आदिकालीन गद्य के स्वरूप-विकास की सूचना 9वीं शती में उद्योतन सूरि द्वारा रचित 'कुवलयमालाकथा' से मिलती है। इसमें बोलचाल की तात्कालिक भाषा का प्रभाव है। 'राउलवेल' रोडा कवि द्वारा ग्यारहवीं शती में रचित एक प्रेमकाव्य है, इसका पाठ शिलांकित है। इस कृति के अंत में गद्य का प्रयोग किया गया है, इसकी भाषा मूलतः मध्यदेशीय अपभ्रंश है। दामोदर शर्मा का 'उक्तिव्यक्ति-प्रकरण' तथा ज्योतिरीश्वर ठाकुर का 'वर्णरत्नाकर' में भी गद्य का नमूना प्राप्त होता है। चौदहवीं शती में रचित विद्यापति की 'कीर्तिलता' के बीच-बीच में गद्य का प्रयोग किया गया है। इन ग्रंथों से हिंदी गद्य के उद्भव की झलक मिलती है। राजस्थानी गद्य में दानपत्र और परवानों पर अंकित लेख प्राप्त होते हैं, इस गद्य में अपभ्रंश की अधिकता है, किंतु भाषा का स्वरूप अति शुद्ध गद्यात्मक है और लिपि भी तेरहवीं शताब्दी के प्रथम चरण की प्रतीत होती है। परंतु प्रसिद्ध इतिहासकार पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने इनका काल सत्रहवीं शताब्दी के आसपास स्वीकार किया। परंतु राजस्थानी गद्य में लिखी गयी अनेक 'ख्यात' एवं 'बात' मिलती हैं।

ब्रजभाषा-गद्य के प्रारंभ के विषय में बहुत मतभेद नहीं है। ब्रजभाषा-गद्य का प्राचीनतम रूप आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 14वीं शती के मध्य से माना जा सकता है। 'काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा' की खोज-रिपोर्ट के अनुसार गोरखनाथ का एक ग्रंथ है, जिसमें गद्य का अपरिमार्जित एवं अव्यवस्थित रूप मिलता है। ब्रजभाषा गद्य का व्यापक प्रयोग भक्तिकाल से प्रारंभ हुआ। श्रीवल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ कृत 'शृंगार रसमंडन' तथा विट्ठलनाथ के पुत्र गोसाईं गोकुलनाथ कृत 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' आदि कृतियों में प्रयुक्त गद्य को ब्रजभाषा-गद्य का प्रचलित रूप माना गया है।

बनारसीदास जैन कृत 'अर्द्धकथानक' आत्मकथा की दृष्टि से हिंदी का प्रथम ग्रंथ माना जाता है। लेखक ने इसकी वचनिका के रूप में सुंदर गद्य लिखा है। उनका गद्य परिमार्जित एवं विराम-चिह्नों से युक्त है। सुरति मिश्र का 'बैताल पच्चीसी' ग्रंथ इसी परंपरा में आता है। इन ग्रंथों के अतिरिक्त ब्रजभाषा-गद्य में लिखी टीकाओं का युग प्रारंभ होता है।

### खड़ी बोली-गद्य का विकास

खड़ी बोली-गद्य के उद्भव के संबंध में विद्वान दो वर्गों में विभक्त हैं। पहला वर्ग फोर्ट विलियम कॉलेज से खड़ी बोली गद्य का प्रारंभ मानते हैं, इस वर्ग में जार्ज ग्रियर्सन, गार्सा द तासी तथा नलिन मोहन सान्याल हैं। इनका मानना है कि फोर्ट विलियम कॉलेज के हिंदुस्तानी अध्यक्ष डॉ० जॉन गिलक्राइस्ट की प्रेरणा से लल्लूलाल तथा सदल मिश्र ने क्रमशः 'प्रेमसागर' एवं 'नासिकेतोपाख्यान' नामक गद्य की पुस्तक लिखी। दूसरे वर्ग के मत के संस्थापक आचार्य रामचंद्र शुक्ल हैं। उनके अनुसार गद्य की प्रथम पुस्तक गंगकवि कृत 'चंद छंद बरनन की महिमा' है। इसके लगभग सौ वर्ष तक खड़ी बोली गद्य की पुस्तक

का अभाव दिखाई देता है। सन् 1741 में पटियाला के रामप्रसाद निरंजनी कृत 'भाषा योगवशिष्ट' ग्रंथ साफ-सुथरी खड़ी बोली में मिलता है, जिसकी शुद्ध एवं व्यवस्थित भाषा आश्चर्यचकित करती है।

फोर्ट विलियम कॉलेज के बाहर रहकर इंशा अल्ला खाँ और मुंशी सदासुखलाल 'नियाज' खड़ी बोली गद्य में रचना कर रहे थे। इंशा अल्ला खाँ 'रानी केतकी की कहानी' में सुबोध तथा रोचक भाषा का प्रयोग करते हुए, हिंदीपन से रँगी हुई चुलबुली भाषा में सफलतापूर्वक गद्य लिखा और मुंशी सदासुखलाल 'नियाज' ने कथा-वाचकों, पंडितों तथा साधु-संतों में प्रचलित शैली का प्रयोग करते हुए सहज एवं प्रवाहमयी खड़ी बोली गद्य लिखा। इन दोनों का खड़ी बोली के उन्नायकों में विशिष्ट स्थान है।

हिंदी प्रदेश में ईसाई धर्म-प्रचारकों का प्रवेश अंग्रेजी राज्य स्थापित होने के बहुत पहले ही हो चुका था। सन् 1796 में विलियम कैरी ईसाई धर्म प्रचार का केंद्र श्रीरामपुर में स्थापित कर चुके थे। सन् 1820 में लंदन मिशनरी सोसाइटी ने बनारस को अपना प्रचार क्षेत्र बनाया। इन धर्म-प्रचारकों का उद्देश्य जनता की साधारण बोली में, अपने धर्म का प्रचार-प्रसार करना था। इसके लिए ईसाई धर्म की पुस्तकों का अनुवाद और पैफलेट बराबर निकलते रहे। सन् 1818 में समग्र ईसाई धर्म-पुस्तक का अनुवाद पूरा हुआ। इस प्रकार मिशनरियों द्वारा बराबर विशुद्ध हिंदी में पैफलेट आदि छपते रहे जिनमें कुछ खंडन-मंडन, उपदेश और भजन आदि रहते थे।

ईसाइयों के धर्म-प्रचार का प्रभाव साधारण हिंदू जनता पर तीव्र गति से पड़ रहा था। हिंदू शिक्षित वर्ग के बीच स्वधर्म-रक्षा के लिए व्याकुल होना स्वाभाविक था। फलस्वरूप उत्तर भारत में आर्य समाज का झंडा लेकर स्वामी दयानंद सरस्वती खड़े हुए। उन्होंने 1874 ई० में 'सत्यार्थ प्रकाश' द्वारा अपने विचारों को हिंदी-गद्य में प्रस्तुत किया। स्वामीजी की भाषा संस्कृत की ओर झुकी हुई थी। इनके गद्य में ब्रज भाषा के प्रयोग भी मिलते हैं और पंडितारूपन भी कम नहीं है। तर्क-शैली का प्रयोग स्थान-स्थान पर मिलता है। व्यंग्य और कटाक्ष की प्रवृत्ति भी देखी जाती है।

कंपनी सरकार के समय में भी शिक्षा का प्रबंध किया गया था। कंपनी जनता को यूरोपीय ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराना चाहती थी। 'कलकत्ता बुक सोसाइटी' (1817 ई०), आगरा कॉलेज (1823 ई०), दिल्ली कॉलेज, बरेली कॉलेज आदि का स्थापना कंपनी की इसी नीति के आधार पर हुई थी। सन् 1838 और 1850 ई० के बीच इन शिक्षण संस्थाओं में पाठ्य-पुस्तकों की रचना के लिए हिंदी गद्य का प्रयोग हुआ। अनगढ़ एवं शिथिल होने पर भी इसे हम हिंदी-गद्य के विकास का अग्रिम कदम अवश्य मान सकते हैं।

सन् 1926 ई० में कानपुर के पं० जुगलकिशोर शुक्ल ने 'उदंत मार्तंड' नामक एक समाचार-पत्र निकाला। यह साप्ताहिक समाचार-पत्र था, जो एक वर्ष बाद ही बंद हो गया। यह हिंदी का प्रथम समाचार पत्र है। इसके तीन वर्ष बाद 1829 ई० में 'बंगदूत' नामक पत्र निकला। यह हिंदी के अतिरिक्त 'अंग्रेजी', 'फारसी' और 'बंगला' में भी प्रकाशित होता था। सन् 1845 में बनारस से 'बनारस अखबार' निकला। पत्र

की भाषा उर्दू ही रही यद्यपि लिपि देवनागरी थी। इस पत्रिका के स्पर्धा में 'सुधाकर' (1850 ई०) नामक पत्र बाबू तारामोहन मैत्रेय के संपादकत्व में निकला। इसके थोड़े दिन बाद कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) से सन् 1854 में हिंदी का सर्वप्रथम दैनिक पत्र 'समाचार सुधावर्षण' श्यामसुंदर सेन के संपादन में निकला।

अतएव गद्य अपना स्वरूप ग्रहण कर रहा था। जनता देवनागरी लिपि एवं सरल व्यावहारिक हिंदी को ही अपनी समझती थी। 'भारतेंदु' के पूर्व भाषा-विषयक नीति-निर्धारक एवं उसके स्वरूप पर स्थायी प्रभाव डालने वालों में राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिंद' और राजा लक्ष्मणसिंह प्रमुख हैं।

राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' (सन् 1823-1895 ई०) देवनागरी लिपि को तो पसंद करते थे, किंतु वे हिंदी अथवा 'भाखा' को गँवारी बोली समझते थे और हृदय से उर्दू के पक्षपाती थे। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं – 'राजा भोज का सपना', 'इतिहास तिमिर नाशक', 'मानव धर्मसार', 'उपनिषद् सार'।

राजा लक्ष्मण सिंह (सन् 1836-1896 ई०) राजा शिवप्रसाद के उर्दूपन के विपरीत संस्कृतनिष्ठ हिंदी का पक्ष लिया। लक्ष्मण ने 'अभिज्ञानशाकुंतलम्', 'रघुवंशम्' और 'मेघदूतम्' के गद्य अनुवाद के माध्यम से हिंदी का प्रांजल रूप सामने लाकर उसका पक्ष सुदृढ़ किया। 1863 ई० के आस-पास पंजाब के श्रद्धाराम फुल्लौरी ने अपने पांडित्यपूर्ण एवं निर्भीक व्याख्यानों से हिंदी गद्य के विकास में योगदान दिया। इनका 'भाग्यवती' उपन्यास हिंदी के प्रथम मौलिक उपन्यास के रूप में प्रसिद्ध है।

उपर्युक्त रूप से हिंदी खड़ी बोली गद्य विकसित हो रही थी। ठीक ऐसी अनुकूल परिस्थिति में भारतेंदु का आगमन होता है। भारतेंदु हिंदी के अनन्य साधक थे और हिंदी गद्य के क्षेत्र में मध्यम मार्ग को स्वीकार कर हिंदी को परिनिष्ठित करना चाहते थे।

## भारतेंदु युग

आधुनिककाल में भारतेंदु का आगमन हिंदी साहित्य के क्षेत्र में एक युगांतकारी घटना है। इन्हें आधुनिककाल का प्रवर्तक साहित्यकार माना जाता है। हिंदी साहित्य परंपरा, रुढ़िबद्धता और रीतिबद्धता से मुक्त होकर नई चेतना एवं आधुनिकता को ग्रहण करने लगा। वे कौन-सी परिस्थितियाँ थीं ? जिससे आधुनिकता का आगमन हुआ।

19वीं शताब्दी में देश की केंद्रीय सत्ता अंग्रेजों के हाथ में थी। अंग्रेज भारत का तीव्र गति से शोषण करने और छोटे-छोटे आंदोलनों को दबाने के लिए तीव्र यातायात के साधनों के लिए रेल का संचालन किया। रेल का संचालन शुरू होने पर अंग्रेजों की पहुँच पूरे भारत में हो गई। मुद्रणालयों की स्थापना के द्वारा पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हो गया, जिससे पढ़े-लिखे लोग लाभान्वित होने लगे और उनकी सामाजिक एवं राजनीतिक समझ बढ़ी। 1857 ई० के स्वतंत्रता संग्राम ने देश के जन-मानस के मस्तिष्क को उद्वेलित किया। इन कारणों से आधुनिकता के आगमन में सहायता मिली।

भारतीय समाज में अनेक कुरीतियाँ एवं परंपराएँ व्याप्त थीं। जाति-प्रथा, बाल-विवाह, सती-प्रथा, विधवा-विवाह निषेध आदि के कारण भारतीय समाज जड़-सा हो गया था। परंपरा एवं रुढ़ि से ग्रस्त

समाज आधुनिकता से सर्वथा अपरिचित था। आंग्ल-भारतीय समाज सुधारकों की सहायता से इन कुशीतियों पर प्रतिबंध लगाकर भारत में पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त किया। राजा राममोहन राय तथा ईश्वरचंद्र विद्यासागर जैसे समाज सुधारकों का नाम आदर से लिया जाता है। भारतेन्दु युगीन लेखकों पर इन स्थितियों का प्रभाव है। भारतेन्दु को रीतिकालीन नायिका भेद, नख-शिख वर्णन, अलंकार, शृंगार रस आदि कम आकृष्ट करते हैं तथा देश-प्रेम, भाषा, समाज सुधार, पाखंड आदि इनके लेखन के प्रमुख क्षेत्र हैं। वे देश की आर्थिक विपन्नता का चित्रण जिन शब्दों से करते हैं, वह प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं के शब्दों से मिलता-जुलता है।

19वीं शताब्दी तक पूरे देश में नवजागरण की लहर दौड़ गई। इस नवजागरण पर यूरोप और भारत की साझा संस्कृति का प्रभाव पड़ा। अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर किए जा रहे शोषण एवं अत्याचार, 1857 ई0 की क्रांति, राजाराममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, रामकृष्ण परमहंस, दयानंद सरस्वती आदि का प्रभाव हिंदी पट्टी पर पड़ा। भारतेन्दु इस नवजागरण के अग्रदूत थे। भारतेन्दु एवं भारतेन्दु मंडल के साहित्यकारों की रचनाओं से हिंदी साहित्य में आधुनिकता का प्रवर्तन हुआ। आधुनिकता के संबंध में नंददुलारे वाजपेयी का मत है कि “प्रत्येक देश का आधुनिक भाव-बोध, उसके सामाजिक परिवेश और लक्ष्य तथा उद्देश्य के आधार पर बनाया जाता है।” इससे स्पष्ट है कि आधुनिक काल के साहित्यकार सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विषमताओं का उद्घाटन करके अपने साहित्य कर्म से इस विषमता को पाटने का प्रयास कर रहे थे।

## भारतेन्दु युग के प्रमुख रचनाकार

भारतेन्दु हरिश्चंद्र

(सन् 1850-1885 ई0)

जीवन के अल्पकाल में ही युगप्रवर्तक भारतेन्दु ने साहित्य की बहुत बड़ी सेवा की। भारतेन्दु ने हिंदी-गद्य के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए सन् 1883-84 ई0 के लगभग ‘हिंदी भाषा’ नामक एक छोटी-सी पुस्तक प्रकाशित की। ‘कश्मीर कुसुम’ एवं ‘बादशाह दर्पण’ लिखकर इतिहास की पुस्तकों की ओर भी भारतेन्दु ने लेखकों का ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने पुस्तक रचना के अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाओं में स्फुट निबंध लिखे जैसे— ‘राजनीति’, ‘समाजदशा’, ‘ऋतु वर्णन’, ‘पर्व-त्यौहार’, ‘जीवन-चरित’ आदि। इसके अतिरिक्त नाटकों के माध्यम से गद्य का परिमार्जन किया।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने ‘विद्यासुंदर’ नाटक का हिंदी में अनुवाद किया। उन्होंने—कविवन सुधा (1868 ई0), हरिश्चंद्र मैगजीन (1873), (हरिश्चंद्रिका) तथा बालाबोधिनी (1873 ई0) का संपादन किया। ‘कविवचन सुधा’ में साहित्यिक रचनाओं के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि विषयों पर टिप्पणियाँ प्रकाशित होती थीं।

भारतेंदु बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। उन्होंने नाटक, उपन्यास, निबंध, इतिहास आदि विधाओं पर लेखन कार्य किया। भारतेंदु ने सबसे अधिक संख्या में नाटक लिखे और अनुवाद किया। मौलिक नाटकों में 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'चंद्रावली', 'विषस्य विषमौषधम्', 'भारत दुर्दशा', 'नील देवी', 'अंधेर नगरी', 'प्रेम जोगिनी', 'सती प्रताप' और अनूदित नाटकों में 'विद्यासुंदर', 'पाखंड-बिडंबन', 'धनंजय-विजय', 'कर्पूर मंजरी', 'मुद्राराक्षस', 'सत्य हरिश्चंद्र' है।

भारतेंदु के नाटक मुख्यतः पौराणिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विषयों पर आधारित हैं। अपने मौलिक नाटकों में उन्होंने सामाजिक कुरीतियों एवं धर्मों के नाम पर होने वाले कुकृत्यों आदि पर तीखा व्यंग्य किया है। 'पाखंड-बिडंबन', 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' इसी प्रकार के नाटक हैं। 'चंद्रावली' नाटिका में प्रेम के आदर्श रूप का चित्रण है तो 'नीलदेवी' ऐतिहासिक नाटक है। 'भारत दुर्दशा' में भारतेंदु की राष्ट्र-भक्ति का स्वर उद्घोषित हुआ है। इसमें अंग्रेज को भारत दुर्दैव के रूप में चित्रित करते हुए भारतवासियों के दुर्भाग्य की कहानी को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र की रचनाओं में तद्भव, देशज शब्दों तथा मुहावरों का प्राधान्य है; साथ ही ब्रजभाषा के चलते शब्दों का भी अभाव नहीं है। इन्होंने अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि विदेशी भाषा के शब्दों को ग्रहण करने से भी परहेज नहीं किया।

### प्रतापनारायण मिश्र (सन् 1856-1894 ई०)

प्रतापनारायण मिश्र 'ब्राह्मण' के संपादक और सिद्ध निबंध लेखक थे। बात, वृद्ध, भौ, दाँत आदि साधारण विषयों पर इनके मनोरंजक निबंध हैं। उन्होंने 'कलिकौतुक', 'संगीत शाकुंतल', 'भारत दुर्दशा', 'हठी हम्मीर', 'गोसंकट', 'कलिप्रभाव', 'जुआरी-खुआरी' नाटक लिखे। उनके गद्य में विराम-चिह्नों का अभाव-सा है। शब्द-चयन और वाक्य-विन्यास बोलचाल की भाषा के अधिक निकट है। मिश्रजी की भाषा में हँसाने की पूरी शक्ति है पर जहाँ भाव-गांभीर्य होता है, वहाँ भाषा भी तदनुकूल संयत और साफ हो जाती है।

### बालकृष्ण भट्ट (सन् 1844-1914 ई०)

बालकृष्ण भट्ट का 'हिंदी प्रदीप' साहित्यिक पत्र था, जिसमें हास्यपूर्ण तथा गंभीर दोनों प्रकार के साहित्यिक निबंध रहते थे। भट्टजी अपने समय के सर्वाधिक प्रगतिशील और यथार्थवादी लेखक थे। साहित्य को जनसमूह के हृदय का विकास मानते थे। उन्होंने कलिराज की सभा, रेल का विकट खेल, बाल विवाह आदि नाटकों की रचना की तथा बाँग्ला के अनेक नाटकों का अनुवाद भी किया।

बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' (सन् 1855-1922 ई०) भारतेंदु के घनिष्ठ मित्रों में थे। वे गद्य रचना को एक कला के रूप में ग्रहण करने वाले लेखक थे। उन्होंने 'आनंद कादंबिनी' और 'नागरी नीरद'

नामक पत्रों का संपादन किया। 'भारत-सौभाग्य', 'प्रयाग-रामागमन' उनके प्रसिद्ध नाटक हैं। विनोदपूर्ण प्रहसन अपनी पत्रिका में बराबर निकालते रहे।

भारतेंदु युग के अन्य साहित्यकारों में ठाकुर जगमोहन सिंह, पं० राधाचरण गोस्वामी, अंबिकादत्त व्यास, लाला श्रीनिवास दास आदि प्रमुख हैं।

## भारतेंदु युगीन गद्य

भारतेंदु युगीन गद्य में विविध नई विधाओं का प्रारंभ या नवीनीकरण हुआ। इसमें निबंध प्रमुख है। खड़ी बोली गद्य और उसमें भी निबंध रचना की दृष्टि से उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध महत्वपूर्ण है। बालकृष्ण भट्ट 'हिंदी प्रदीप' के संपादक थे और उन्होंने बहुत से लेख लिखकर निबंध के विविध रूपों का विकास किया, आँख, नाक, कान आदि प्रमुख निबंध हैं। पं० प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी, भारतेंदु आदि इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं। इनके प्रमुख निबंध क्रमशः 'समझदार की मौत', 'यमलोक की यात्रा', 'स्वर्ग में विचार सभा' है।

भारतेंदु युग के अधिकांश नाटककार पौराणिक एवं ऐतिहासिक नाटकों को नए रूप में ढाला तथा प्रगतिशील विचारधारा को अपनाकर नाटक लिखते रहे और समाज-सुधार के कार्यों में योग देते रहे।

हिंदी साहित्य में समालोचना शीर्षक से भारतेंदु युग में ग्रंथों का प्रणयन नहीं हुआ किंतु तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में काव्य, नाटक, उपन्यास आदि के संबंध में जो समीक्षात्मक वक्तव्य छपते थे, वे ही समालोचना के प्रारंभिक सूत्र कहे जा सकते हैं। 'मुद्राराक्षस' नाटक की भूमिका लिखकर भारतेंदु ने आलोचना का पथ प्रशस्त किया था। 'नाटक' शीर्षक निबंध तो समीक्षा का अच्छा निदर्शन है। लाला श्रीनिवासदास ने 'संयोगिता स्वयंवर' नाटक लिखा, जिसके गुण-दोष का निदर्शन बालकृष्ण भट्ट 'हिंदी प्रदीप' में बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' 'आनंद कादिम्बनी' में करते हैं। इसी कारण शुक्ल जी 'प्रेमघन' और 'भट्ट' से हिंदी समालोचना की शुरुआत मानते हैं।

इस युग में उपन्यास का लेखन कार्य प्रारंभ हुआ। श्रद्धाराम फुल्लौरी ने 'भाग्यवती', लाला श्रीनिवास दास ने 'परीक्षा गुरु' (1882 ई०), बालकृष्ण भट्ट ने 'नूतन ब्रह्मचारी', ठाकुर जगमोहन सिंह ने 'श्यामा स्वप्न' नामक उपन्यास लिखा। 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति' उपन्यास के प्रणेता देवकीनंदन खत्री हैं। इसकी प्रसिद्धि और लोकप्रियता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए लोगों ने हिंदी सीखी। यह तिलस्मी और ऐयारी उपन्यास है।

इस युग में कहानी लेखन का विकास नहीं हो सका परंतु प्रयास अवश्य किया गया। भारतेंदु की 'कुछ आप-बीती कुछ जग-बीती' कहानी अपूर्ण है। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' ने 'राजा भोज का सपना' नामक कहानी लिखी। भारतेंदु युग में गद्य धीरे-धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर रहा था। इसलिए भारतेंदु युग की भाषा में एकरूपता का अभाव है। भाषा में खुलापन होने के कारण क्षेत्रीयता का आना स्वाभाविक है। इस युग में नाटक एवं निबंध बहुतायत मात्रा में लिखे गए। पत्र-पत्रिकाओं ने नवीन

विधा के सृजन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस युग में हिंदी साहित्य रीतिकाल के सीमित दायरे से बाहर निकलकर साहित्य के विस्तृत प्रांगण में फैल गया। इसका श्रेय युग के लेखकों का प्रतिनिधित्व करने वाले भारतेन्दु हरिश्चंद्र को ही दिया जाएगा।

### भारतेन्दुयुगीन गद्य की प्रवृत्तियाँ

- इस युग के गद्य का उत्कृष्ट रूप नाटकों में देखा जा सकता है। इसमें गद्य के विविध रूप दिखाई पड़ते हैं।
- इस युग में खड़ी बोली व्याकरण-सम्मत होने लगी थी, परंतु ब्रजभाषा और पूर्वी बोली का प्रभाव बना हुआ था।
- इनका गद्य जन भाषा से मिलता-जुलता है।
- भारतेन्दु युग में ललित तथा व्यक्तिपरक निबंध लिखे गए।
- इस युग में समीक्षा, उपन्यास, कहानी जैसी नवीन गद्य विधाओं का प्रवर्तन हुआ।
- हिंदी गद्य में मुहावरों का प्रयोग खूब किया गया।
- भारतेन्दु युग में हिंदी-गद्य बोलचाल और भाषण शैली से अधिक प्रभावित है।

### द्विवेदी युग

(सन् 1900-1918 ई०)

सन् 1900 ई० में 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के साथ ही द्विवेदी युग का प्रारंभ माना जाता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी इस युग के व्यवस्थापक साहित्यकार हैं। सन् 1903 ई० में आपने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादन का कार्य-भार सँभाला। 'सरस्वती' के संपादक के रूप में उन्होंने भाषा की अस्थिरता की ओर लेखकों का ध्यान आकर्षित किया तथा विराम चिह्नों एवं लेखों को पैराबद्ध करने की आवश्यकता पर बल दिया। हिंदी में अश्लील शब्दों का विरोध किया तथा व्यापक स्वीकृति वाले शब्दों का समर्थन किया।

भारतेन्दु युग में गद्य की भाषा खड़ी बोली तथा काव्य की भाषा ब्रज ही रही। द्विवेदी जी ने कवियों और गद्यकारों की भाषा में एकरूपता लाकर खड़ी बोली को व्यवस्थित किया। साहित्यकारों को नए विषय सुझा रहे थे। द्विवेदी जी दूसरों के दोषों की स्पष्ट आलोचना कर रहे थे। 'सरस्वती' के माध्यम से अनेक लेखकों की रचनाओं का संशोधन किया और समय-समय पर साहित्यकारों की भाषा का परिमार्जित किया। हिंदी-गद्य में यह कार्य उस समय एकरूपता लाने के लिए अत्यंत आवश्यक था। यह कार्य द्विवेदी जी जैसा कर्मशील विद्वान ही कर सकता है।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरल ढंग से कहानी कहने की शैली अपनायी। द्विवेदी जी सरल शब्दों में सब-कुछ कह देते थे और देश की अन्य भाषाओं के साहित्य से हिंदी साहित्य का सामंजस्य भी बैठा रहे थे। उन्होंने साहित्य को 'ज्ञानराशि का संचित कोश' कहा है। द्विवेदी जी ने मुख्यतः ज्ञानार्जन की ही साधना की।



## द्विवेदी युगीन साहित्य

### उपन्यास

भारतेंदु युग में ही 'भाग्यवती' एवं 'परीक्षागुरु' नामक उपन्यास लिखा जा चुका था और देवकी नंदन खत्री का प्रसिद्ध उपन्यास 'चंद्रकांता' एवं 'चंद्राकांता संतति' प्रकाशित हो चुका था। किंतु उपन्यास की अविच्छिन्न परंपरा द्विवेदी युग से ही प्रारंभ हुई। इस क्षेत्र में लेखकों की प्रवृत्ति कुतूहल, रहस्य और रोमांच करने में अधिक रही है। प्रवृत्ति-भेद के आधार पर द्विवेदीयुगीन उपन्यासों को पाँच वर्गों में रखा जा सकता है।

पं० किशोरीलाल गोस्वामी (1865-1932) उन्नीसवीं शदी के अंतिम दशक से उपन्यास लिखते आ रहे थे। उपन्यास रचना में इनका उद्देश्य प्रेम का विज्ञान प्रस्तुत करना था, उसमें वासना का रंग चटकीला है। गोस्वामी जी के ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास-सम्मत सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों का चित्रण नहीं के बराबर हुआ है तथा अनेक स्थलों पर कालदोष भी है।

हिंदी में जासूसी उपन्यासों का प्रवर्तन गोपालराम गहमरी ने किया। गहमरी जी अंग्रेजी के प्रसिद्ध जासूसी उपन्यासकार आर्थर कानन डायल से प्रभावित थे। 'सरकटी लाश', 'जासूस की भूल', 'भोजपुर का ठग', 'बड़ा-भाई' आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। मन्नन द्विवेदी, लज्जाराम शर्मा, गंगा प्रसाद गुप्त, हरिऔध आदि ने भी उपन्यास लिखा।

### कहानी

भारतेंदु युग में कहानी का वास्तविक स्वरूप सामने नहीं आया था। हिंदी गद्य में कहानी शीर्षक से प्रकाशित प्रथम रचना 'रानी केतकी की कहानी' (1803 ई०) है। इसके बाद राजा शिवप्रसाद 'सितारे-हिंदी' की 'राजा भोज का सपना', भारतेंदु का 'अद्भुत अपूर्व स्वप्न' का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें कहानी सी रोचकता मिलती है। द्विवेदी युग हिंदी कहानियों का प्रारंभिक दौर है। इनकी कहानियाँ घटना-वैचित्र्य एवं भाव-व्यंजकता की ओर प्रारंभ से ही झुकी है। आधुनिक ढंग की कहानियों के दर्शन पहले-पहल 'सरस्वती' में हुए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानियों का विवरण अपने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में इस प्रकार दिया है— (1) इंदुमती (1900 ई० में) – किशोरीलाल गोस्वामी, (2) गुलबहार (1902 ई०) – किशोरीलाल गोस्वामी, (3) प्लेग की चुड़ैल (1902 ई०) – मास्टर भगवानदास, (4) ग्यारह वर्ष का समय (1903 ई०) – रामचन्द्र शुक्ल, (5) पंडित और पंडितानी (1903 ई०) – गिरिजादत्त वाजपेयी, (6) दुलाईवाली (1907 ई०) – बंग महिला। इस प्रकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'इंदुमती' को हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी माना है।

प्रारंभिक कहानीकारों के अनंतर हिंदी में जयशंकर प्रसाद, विश्वंभर नाथ शर्मा 'कौशिक', राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह आदि ने इसी समय कहानियाँ लिखना प्रारंभ किया। काशी से इंदु (1909 ई०) पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ, 1911 ई० में प्रसाद की 'ग्राम' कहानी इस पत्रिका में प्रकाशित हुई। कौशिकजी की सामाजिक-पारिवारिक कहानी 'रक्षाबंधन' 1913 ई० में छपी। उन्होंने समाज सुधार को



अपनी कहानी-कला का लक्ष्य बनाया। उनकी कहानियों की शैली अत्यंत सरल, सरस और रोचक है। कौशिकजी ने लगभग 200 कहानियों की रचना की। राधिकारमण प्रसाद सिंह की कहानी 'कानों में कंगना' 1913 ई० में 'इंदु' में प्रकाशित हुई।

प्रेमचंद की प्रारंभिक कहानियाँ द्विवेदी युग में ही प्रकाशित हुईं। प्रेमचंद का उर्दू में प्रकाशित संग्रह 'सोजे-वतन' (1907 ई०) स्वतंत्र भावनाओं से ओत-प्रोत होने के कारण अंग्रेज सरकार ने जब्त कर दिया। 1916 ई० में उनकी हिंदी में रचित प्रथम कहानी 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई। हिंदी साहित्य में तीन कहानियाँ लिखकर अमर हो जाने वाले कहानीकार श्री चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' का हिंदी कहानी के क्षेत्र में बहुत ऊँचा स्थान है। उनकी कहानी 'उसने कहा था' का प्रकाशन 1915 ई० में 'सरस्वती' में हुआ था। इसमें किशोरावस्था के प्रेम का विकास, त्याग और बलिदान की पवित्र भावना के रूप में किया गया है। कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से यह अपने युग की श्रेष्ठ कहानी मानी जाती है।

### निबंध

भारतेंदु युग में निबंध साहित्य की पूर्ण प्रतिष्ठा हो चुकी थी। द्विवेदी-युग में व्यक्ति व्यंजक निबंधों की परंपरा का ह्रास लक्षित होता है। लेखकों का ध्यान ज्ञान के विविध क्षेत्रों से सामग्री संचय की तरफ आकर्षित हुआ, आत्म-व्यंजना की ओर कम। इस युग के निबंधकारों में महावीर प्रसाद द्विवेदी, गोविंद नारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, माधव प्रसाद मिश्र, श्यामसुंदर दास, चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' और अध्यापक पूर्णसिंह प्रमुख हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के प्रारंभिक निबंध द्विवेदी युग के ही हैं।

द्विवेदी युग में गंभीर और ललित दोनों प्रकार के निबंध लिखे गए, किंतु विचारपरक निबंध अधिक महत्त्व रखते हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदीजी के बहुसंख्यक निबंध परिचयात्मक या आलोचनात्मक टिप्पणियों के रूप में हैं, जिनके स्वर प्रायः नियामक एवं सुनियोजित हैं। द्विवेदीजी का आदर्श निबंधकार बेकन था। उन्होंने बेकन के निबंधों का अनुवाद 'बेकन विचार-रत्नावली' के रूप में किया। बेकन की भाँति द्विवेदीजी के निबंधों में भी विचारों की प्रमुखता है। द्विवेदी जी के निबंध 'कविता', 'साहित्य की महत्ता' आदि नए-नए विचारों से गुंफित हैं। उनके निबंधों की भाषा में शुद्धता, सार्थकता, एकरूपता, शब्द-प्रयोग-पटुता आदि गुण तो मिलते हैं, पर्यवेक्षण की सूक्ष्मता, विश्लेषण की गंभीरता, चिंतन की मौलिकता उसमें बहुत कम है। फिर भी द्विवेदी जी के निबंधों में व्यास शैली के कारण सरसता आ गयी तथा उनके निबंधों में कहीं-कहीं हास्य-व्यंग्य का पुट भी देखा जा सकता है।

बाबू श्यामसुंदरदास (सन् 1875-1945 ई०) उच्च कोटि के आलोचक होने के साथ-साथ सफल निबंधकार थे। आपके निबंध प्रायः विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर लिखे गए हैं, जो उस समय की बहुत बड़ी आवश्यकता थी।

चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' (सन् 1883-1920 ई०) इस युग के प्रसिद्ध निबंधकार हैं। गुलेरी जी ने निबंध संख्या में कम हैं, परंतु उनमें अगाध पांडित्य और आधुनिकता का अपूर्व समन्वय मिलता है। उनके

निबंधों में गंभीरता के साथ विनोद, पांडित्य के साथ, चुलबुलापन, प्राचीनता के साथ नवीनता, संस्कृति के साथ प्रगतिशीलता का सुंदर सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। गुलेरीजी की भाषा हिंदी गद्य का प्रतिमान स्थापित करती है। आपके प्रसिद्ध निबंध 'कछुआ धर्म' और 'मारेसि मोहिं कुठौव' हैं।

अध्यापक पूर्णसिंह (सन् 1881-1931 ई०) ने 'सच्ची वीरता', 'आचारण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम', 'कन्यादान' जैसे निबंध लिखे। उनके निबंध भाव-प्रधान होते हुए भी विचार-तत्त्व से सर्वथा हीन नहीं हैं। पूर्णसिंह इस युग के श्रेष्ठ आत्मव्यंजक निबंधकार हैं।

द्विवेदी युग के अन्य निबंधकारों में बालमुकुंद गुप्त और पद्म सिंह शर्मा प्रमुख हैं। बालमुकुंद गुप्त व्यंग्य-विनोदपूर्ण शैली एवं चुहलबाजी के कारण विशिष्ट हैं। अपने निबंध 'शिवशंभू का चिट्ठे' में ब्रिटिश साम्राज्य की नीतियों की खबर ली। 'पद्मपराग' और 'प्रबंध-मंजरी' पद्मसिंह शर्मा के निबंध संग्रह हैं। उनकी शैली में वैयक्तिकता, भावात्मकता एवं सरलता का पुट मिलता है।

### नाटक

भारतेंदु युग के उपरांत हिंदी साहित्य के इतिहास में मौलिक नाटकों का अभाव एक ध्यातव्य घटना है। किंतु इस युग में विभिन्न भाषाओं के नाटकों का अनुवाद बृहद पैमाने पर हुआ। शेक्सपीयर के नाटक 'रोमियो जुलियट', 'मैकबेथ' और 'हैमलेट' का अनुवाद हुआ। बँगला भाषा के गिरीश घोष तथा डी० एल० राय० के नाटकों का अनुवाद किया गया। संस्कृत भाषा के नाटक 'मृच्छकटिकम्', 'उत्तररामचरितम्', 'मालती माधवम्', 'मालविकाग्निमित्रम्' का हिंदी अनुवाद सीताराम बी० ए० ने किया।

मौलिक नाटककारों में किशोरीलाल गोस्वामी का 'चौपट चपेट', 'मयंक मंजरी', हरिऔध का 'रुक्मिणी परिणय', 'प्रद्युम्न विजय', शिवनंदन सहाय का 'सुदामा' आदि प्रसिद्ध नाटक हैं। उल्लिखित लेखकगण साहित्य की अन्य विधाओं के लिए विख्यात रहे हैं, नाटक के लिए नहीं।

### आलोचना

भारतेंदु युग में पुस्तक-समीक्षा का सूत्रपात हो चुका था। द्विवेदी युग में निबंध के ही अंतर्गत समालोचना का रूप देखा जा सकता है। इस युग में साहित्य समीक्षा की ओर लेखकों का ध्यान गया। महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'समालोचक' तथा 'सरस्वती' में कुछ समीक्षाएँ प्रकाशित हुईं। रचनाकार विशेष के गुण-दोष निदर्शन के लिए हिंदी आलोचना की पहली पुस्तक महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'हिंदी कालिदास की आलोचना' है।

सन् 1913 ई० में मिश्रबंधुओं ने (गणेश बिहारी मिश्र, श्यामबिहारी मिश्र और शुकदेव बिहारी मिश्र) 'मिश्रबंधु विनोद' शीर्षक से एक 'कवि वृत्त संग्रह' प्रकाशित किया, जिसमें कवि परिचय तथा संक्षिप्त समीक्षा की गई थी। मिश्रबंधुओं द्वारा रचित 'हिंदी-नवरत्न' में हिंदी के नौ कवियों पर विस्तारपूर्वक समालोचना लिखी गयी। इस पुस्तक में देव को ऊँचा स्थान दिया गया और उन्हें सूर-तुलसी के समकक्ष रखा गया। इससे उनकी रीतिवादी मनोवृत्ति का पता चलता है, परंतु श्रीधर पाठक की खड़ी बोली कविता का स्वागत करते हैं। 'हिंदी नवरत्न' से तुलनात्मक समीक्षा का हिंदी में श्रीगणेश हुआ।

इसी युग में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने समालोचना के क्षेत्र में पर्दापण कर लिया था, उनका 'साहित्य' नामक निबंध 1904 ई० की सरस्वती में छपा था, किंतु उनके आलोचनात्मक ग्रंथ बाद में प्रकाशित हुए। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने समीक्षा के द्वारा कविता के महत्त्व की पुनः स्थापना करने का प्रयास किया, उन्होंने कविता को केवल भोग-विलास की सामग्री नहीं माना; काव्य कलेवर के पक्ष में उनके विचार क्रांतिकारी थे। संक्षेप में द्विवेदीयुगीन हिंदी समालोचना को हम साधारण कोटि की समीक्षा मानते हैं।

### द्विवेदीयुगीन गद्य की प्रवृत्तियाँ

- द्विवेदीयुग में विचार-प्रधान निबंधों की रचना बहुतायत मात्रा में हुई।
- 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली गद्य को संस्कार प्रदान कर, उसे व्यवस्थित किया।
- द्विवेदीजी इस युग के लेखकों को रीतिबद्धता से मुक्त कर आधुनिक समस्याओं से संयुक्त किया।
- इस युग में प्रचुर मात्रा में अनुवाद कार्य किया गया।
- द्विवेदी युग निबंध, उपन्यास, कहानी, समालोचना आदि का प्रारंभिक दौर है। इस युग में ये विधाएँ अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थीं।

### अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'शृंगार-रस-मंडन' ग्रंथ के लेखक कौन हैं ?  
(क) गोकुलनाथ (ख) विट्ठलनाथ (ग) बल्लभाचार्य (घ) जोइंदु
2. 'दानपत्र, पट्टे और परवानों पर अंकित गद्य लेख' किस भाषा में लिखे गए?  
(क) राजस्थानी (ख) ब्रजभाषा (ग) खड़ीबोली (घ) अवधी
3. 'अर्द्धकथानक' आत्मकथा के लेखक हैं—  
(क) सुरति मिश्र (ख) गंगकवि (ग) गोकुलनाथ (घ) बनारसीदास जैन
4. 'फोर्ट विलियम कॉलेज' के हिंदुस्तानी विभाग के अध्यक्ष कौन थे ?  
(क) जार्ज ग्रियर्सन (ख) लल्लूलाल  
(ग) जॉन गिलक्राइस्ट (घ) सदल मिश्र
5. हिंदीपन से रँगी हुई चुलबुली भाषा में सफलतापूर्वक गद्य कौन लिखा ?  
(क) लल्लूलालजी (ख) सदलमिश्र  
(ग) मुंशी सदासुखलाल 'नियाज' (घ) इंशा अल्ला खाँ
6. 'प्रेमसागर' की रचना किस लेखक ने हिंदी भाषा में की है ?  
(क) इंशा अल्ला खाँ (ख) लल्लूलाल (ग) सदासुखलाल (घ) सदल मिश्र

7. इंशा अल्ला खाँ ने किस प्रसिद्ध पुस्तक की रचना किया ?  
 (क) प्रेमसागर (ख) नासिकेतोपाख्यान (ग) सुखसागर (घ) रानी केतकी की कहानी
8. विलियम कैरी ने ईसाई धर्म प्रचार का केंद्र श्रीरामपुर में कब स्थापित किया ?  
 (क) 1796 ई० (ख) 1806 ई० (ग) 1816 ई० (घ) 1820 ई०
9. 'नासिकेतोपाख्यान' के रचयिता हैं—  
 (क) सदासुखलाल (ख) सदल मिश्र (ग) इंशा अल्ला खाँ (घ) लल्लूलाल
10. 'कलकत्ता बुक सोसायटी' की स्थापना कब हुई ?  
 (क) 1817 ई० (ख) 1823 ई० (ग) 1838 ई० (घ) 1850 ई०
11. हिंदी भाषा का प्रथम समाचार-पत्र किसे माना जाता है ?  
 (क) बंगदूत (ख) सुधाकर (ग) उदंतमार्तंड (घ) बनारस अखबार
12. 'राजा भोज का सपना' पुस्तक के लेखक कौन हैं ?  
 (क) सदल मिश्र (ख) लल्लूलाल  
 (ग) राजा लक्ष्मण सिंह (घ) राजा शिवप्रसाद 'सिंतारे हिंद'
13. राजा लक्ष्मण सिंह ने किन प्रसिद्ध ग्रंथों का अनुवाद किया ?  
 (क) उत्तररामचरितम्, मालतीमाधव (ख) किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवध  
 (ग) अभिज्ञानशाकुंतलम्, रघुवंशम्, मेघदूतम् (घ) दशकुमारचरितम्, काव्यादर्श
14. 'सत्यार्थ प्रकाश' के रचयिता कौन हैं ?  
 (क) रामकृष्ण परमहंस (ख) स्वामी विवेकानंद  
 (ग) दयानंद सरस्वती (घ) राजा राममोहन राय
15. हिंदी भाषा के प्रचार में इनमें से किस संस्था का योगदान सर्वाधिक रहा ?  
 (क) आर्यसमाज (ख) प्रार्थना समाज  
 (ग) रामकृष्ण मिशन (घ) ब्रह्मसमाज
16. 'हिंदी प्रदीप' पत्रिका के संपादक हैं—  
 (क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (ख) प्रताप नारायण मिश्र  
 (ग) बालकृष्ण भट्ट (घ) बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'
17. 'परीक्षागुरु' उपन्यास के लेखक हैं—  
 (क) श्रद्धाराम फिल्लौरी (ख) बालकृष्ण भट्ट  
 (ग) लज्जाराम मेहता (घ) श्रीनिवासदास ।
18. भारतेन्दु हरिश्चंद्र किस पत्रिका के संपादक नहीं हैं ?  
 (क) कविवचन सुधा (ख) हरिश्चंद्र चंद्रिका  
 (ग) नागरी नीरद (घ) बालाबोधिनी

19. 'बात', 'वृद्ध', 'भौं', 'दाँत' निबंध किसने लिखा है ?  
 (क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (ख) राधाचरण गोस्वामी  
 (ग) बालकृष्ण भट्ट (घ) प्रतापनारायण मिश्र
20. बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' द्वारा संपादित पत्रिका है—  
 (क) ब्राह्मण (ख) हिंदी प्रदीप (ग) आनंद-कादम्बिनी (घ) कवि वचन सुधा
21. श्रद्धाराम फिल्लौरी द्वारा लिखित उपन्यास है—  
 (क) श्यामा स्वप्न (ख) नूतन ब्रह्मचारी (ग) परीक्षा गुरु (घ) भाग्यवती
22. 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' नाटक के लेखक हैं—  
 (क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (ख) प्रतापनारायण मिश्र  
 (ग) बालकृष्ण भट्ट (घ) बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'
23. आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी की प्रथम कहानी किसे मानते हैं ?  
 (क) रानी केतकी की कहानी (ख) राजा भोज का सपना  
 (ग) इंदुमती (घ) ग्यारह वर्ष का समय
24. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका का संपादन कब से प्रारंभ किया ?  
 (क) 1900 ई० (ख) 1901 ई० (ग) 1902 ई० (घ) 1903 ई०
25. 'साहित्य को ज्ञानराशि का संचित कोश' किसने कहा ?  
 (क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी  
 (ग) आचार्य रामचंद्र शुक्ल (घ) हजारी प्रसाद द्विवेदी
26. प्रसिद्ध उपन्यास 'चंद्रकांता' के लेखक हैं—  
 (क) देवकी नंदन खत्री (ख) लाला श्रीनिवासदास  
 (ग) श्रद्धाराम फुल्लौरी (घ) बालकृष्ण भट्ट
27. प्रसिद्ध जासूसी उपन्यासकार 'आर्थर कानन डायल' से प्रभावित उपन्यासकार हैं—  
 (क) बालकृष्ण भट्ट (ख) लज्जाराम मेहता  
 (ग) किशोरीलाल गोस्वामी (घ) गोपालराम गहमरी
28. 'कानों में कंगना' किसकी कहानी है ?  
 (क) राधिका रमण प्रसाद सिंह (ख) जयशंकर प्रसाद  
 (ग) विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' (घ) मुंशी प्रेमचंद
29. प्रेमचंद के किस कहानी संग्रह को अंग्रेजों ने जब्त कर दिया ?  
 (क) बूढ़ी काकी (ख) सोजे वतन (ग) मानसरोवर (घ) पंच परमेश्वर।

30. 'उसने कहा था' कहानी के लेखक हैं—

- |                            |                            |
|----------------------------|----------------------------|
| (क) जयशंकर प्रसाद          | (ख) सुदर्शन                |
| (ग) राधिका रमण प्रसाद सिंह | (घ) चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' |

31. 'बेकन विचार रत्नावली' में किसने बेकन के निबंधों का अनुवाद प्रस्तुत किया—

- |                            |                            |
|----------------------------|----------------------------|
| (क) महावीर प्रसाद द्विवेदी | (ख) चंद्रधर धर्मा 'गुलेरी' |
| (ग) प्रतापनारायण मिश्र     | (घ) बालकृष्ण भट्ट          |

32. किसके निबंध विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर लिखे गए—

- |                            |                      |
|----------------------------|----------------------|
| (क) महावीर प्रसाद द्विवेदी | (ख) माधवप्रसाद मिश्र |
| (ग) बाबू श्यामसुंदर दास    | (घ) बालकृष्ण भट्ट    |

33. 'सच्ची वीरता', 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम' निबंध के लेखक हैं—

- |                         |                          |
|-------------------------|--------------------------|
| (क) अध्यापक पूर्ण सिंह  | (ख) बालमुकुंद गुप्त      |
| (ग) बाबू श्यामसुंदर दास | (घ) गोविंद नारायण मिश्र। |

34. 'हरिऔध' का प्रसिद्ध नाटक है—

- |               |                     |
|---------------|---------------------|
| (क) चौपट चपेट | (ख) पद्मपराग        |
| (ग) अंधायुग   | (घ) रुक्मिणी परिणय। |

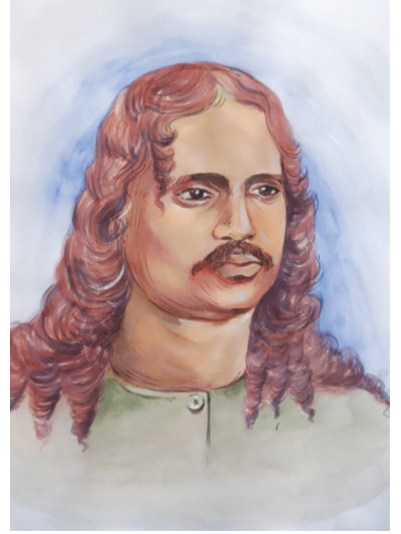
35. इनमें से 'मिश्रबंधु विनोद' के लेखक नहीं हैं—

- |                       |                          |
|-----------------------|--------------------------|
| (क) कृष्णबिहारी मिश्र | (ख) गणेश बिहारी मिश्र    |
| (ग) श्यामबिहारी मिश्र | (घ) शुकदेव बिहारी मिश्र। |



# भारतेंदु हरिश्चंद्र

भारतेंदु युग (सन् 1868–1900 ई.) के प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म सन् 1850 ई० में काशी में हुआ था। उनके पिता का नाम गोपालचंद्र था जो 'गिरिधरदास' उपनाम से काव्य रचना करते थे। जब वे पाँच वर्ष के थे तब उनकी माता पार्वती देवी एवं दस वर्ष की अवस्था में उनके पिता का देहांत हो गया था। विमाता मोहन बीबी का उन पर विशेष प्रेम न होने के कारण उनका पालन-पोषण कालीकदमा दाई और तिलकधारी नौकर ने किया। पिता की असामयिक मृत्यु के कारण उनकी शिक्षा-दीक्षा का समुचित प्रबंध न हो सका। उनकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई, जहाँ उन्होंने हिंदी, उर्दू, बँगला एवं अंग्रेजी का अध्ययन किया। इसके पश्चात् क्वींस कॉलेज वाराणसी में प्रवेश लिया, किंतु काव्य-रचना में रुचि होने के कारण उनका मन अध्ययन में नहीं लगा और शीघ्र ही उन्होंने कॉलेज छोड़ दिया। तेरह वर्ष की अवस्था में उनका विवाह मन्ना देवी के साथ हुआ था। काव्य-रचना के अतिरिक्त उनकी रुचि यात्राओं में भी थी। सन् 1885 ई० में उनका देहावसान हो गया था।



(सन् 1850–1885 ई.)

भारतेंदु हरिश्चंद्र पुनर्जागरण की चेतना के अप्रतिम नायक थे। बँगला के प्रख्यात मनीषी और पुनर्जागरण के विशिष्ट नायक ईश्वरचंद्र विद्यासागर से उनका आत्मीय संबंध था। पराधीनता से मुक्ति की चेतना और आधुनिकता की रोशनी से हिंदी क्षेत्र को आलोकित करने के लिए उनका मानस हमेशा व्याकुल रहता था। उन्होंने समानधर्मा रचनाकारों को प्रेरित-प्रोत्साहित किया, 'तदीय समाज' की स्थापना पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन तथा विविध विधाओं में साहित्य-रचना का कार्य किया। उन्होंने 'कविवचन सुधा' नामक पत्रिका निकाली तथा 'हरिश्चंद्र मैगजीन' का संपादन किया। बाद में यही पत्रिका (जून मास से) 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' के नाम से प्रकाशित होने लगी। स्त्री शिक्षा के लिए उन्होंने 'बालाबोधिनी' पत्रिका का प्रकाशन किया।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'कालचक्र' में लिखा है कि 'हिंदी नई चाल में ढली—1873 वर्ष'। यह 'चाल' शिल्प और संवेदना की दृष्टि से सर्वथा नवीन थी। हिंदी नाटक और निबंध की परंपरा भारतेंदु से शुरू होती है। भारतेंदु का प्रभाव उनके समकालीनों पर स्पष्ट देखा जा सकता है। उन्होंने अपने समकालीन

लेखकों का तो नेतृत्व किया ही, साथ ही परवर्ती लेखकों के लिए पथ-प्रदर्शक का कार्य भी किया। उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर काशी के विद्वानों ने सन् 1880 ई० में उन्हें 'भारतेंदु' की उपाधि से सम्मानित किया।

भारतेंदु का खड़ीबोली एवं ब्रजभाषा दोनों पर ही समान अधिकार था। उन्होंने अपने काव्य सृजन हेतु ब्रजभाषा को ही अपनाया प्रचलित शब्दों, मुहावरों एवं कहावतों का यथास्थान प्रयोग किया। उन्होंने मुख्य रूप से मुक्तक शैली का प्रयोग किया। उनके द्वारा प्रयुक्त शैली प्रवाहपूर्ण, सरल, सरस एवं भावपूर्ण है।

भारतेंदु की लिखी 'पहेलियाँ' और 'मुकरियाँ' लोक में खूब प्रचलित हैं। भाषा की उन्नति के संदर्भ में भारतेंदु की काव्य पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं—

निज भाषा उन्नति अहै,  
सब उन्नति को मूल।  
बिन निज भाषा ज्ञान के,  
मिटत न हिय को शूल।

उन्होंने बँगला के कई नाटकों का अनुवाद भी किया, जिसमें 'विद्यासुंदर', 'पाखंड विडंबन', 'धनंजय विजय', 'सत्य हरिश्चंद्र', तथा 'मुद्राराक्षस' आदि प्रमुख हैं। उनके मौलिक नाटक हैं— 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'श्रीचंद्रावली', 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'नीलदेवी' आदि उनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं— 'भक्ति सर्वस्व', 'प्रेम-मालिका', 'प्रेममाधुरी', 'प्रेमतरंग', 'होली', 'प्रेम प्रलाप', 'वर्षा विनोद', 'फूलों का गुच्छा', 'प्रेम फुलवारी', 'कृष्ण चरित्र', 'बकरी विलाप' आदि।

प्रस्तुत पाठ '**भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है**' मूलतः भाषण है। यह भाषण भारतेंदु ने सन् 1884 में बलिया (ददरी) के पशु मेले में दिया था। यहाँ उसी भाषण का संपादित पाठ संकलित है। इसमें लेखक ने कुरीतियों और अंधविश्वासों का त्यागकर अच्छी से अच्छी शिक्षा प्राप्त करने, उद्योग-धंधों को विकसित करने, सहयोग एवं एकता पर बल देने तथा सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दी है।





# भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

आज बड़े आनंद का दिन है कि इस छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाय वही बहुत है। हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन ये सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिंदुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे। या हिंदुस्तानी राजे महाराजे, नवाब, रईस या हाकिम। राजे-महाराजों को अपनी पूजा, भोजन, झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सरकारी काम घेरे रहता है, कुछ बॉल, घुड़दौड़, थिएटर, अखबार में समय गया। कुछ बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गंदे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवें। बस वही मसल हुई—

**तुम्हें गैरों से कब फुरसत, हम अपने गम से कब खाली।**

**चलो बस हो चुका मिलना, न हम खाली न तुम खाली।।**

पहले भी जब आर्य लोग हिंदुस्तान में आकर बसे थे, राजा और ब्राह्मणों ही के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावें और अब भी ये लोग चाहें तो हिंदुस्तान प्रतिदिन कौन कहे, प्रतिछिन बढ़े। पर इन्हीं लोगों को सारे संसार के निकम्मेपन ने घेर रखा है।

हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि उनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कूटियों में बैठ करके बाँस की नलियों से जो तारा ग्रह आदि वेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीनें बनी हैं उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंग्रेजी विद्या की ओर जगत की उन्नति की कृपा से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं। तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन, अंग्रेज फ्रंसीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमीं पहले छू लें। उस समय हिंदू काटियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको, औरों को जाने दीजिए, जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देखकर भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जाएगा फिर कोटि उपाय किए भी आगे न बढ़ सकेगा। इस लूट में इस बरसात में भी जिसके सिर पर कमबख्ती का छाता और आँखों में मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उन पर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रों ने कहा था कि तुम इस विषय पर आज कुछ कहो कि हिंदुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है।

भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ ? भागवत में एक श्लोक है 'नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारं मयाऽनुकूलेन नभः स्वतेरितुं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा।' भगवान कहते हैं कि पहले तो मनुष्य-जनम ही बड़ा दुर्लभ है, सो मिला और उस पर गुरु की कृपा और मेरी अनुकूलता। इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार सागर के पार न जाए, उसको आत्महत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिंदुस्तान की है।

बहुत लोग यह कहेंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती बाबा हम क्या उन्नति करें ? तुम्हारा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनकी बहुत भूल है। इंग्लैंड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा, दूसरे हाथ से उन्नति की राह के काँटों को साफ किया, क्या इंग्लैंड में किसान, खेतवाले, गाड़ीवान, मजदूर, कोचवान आदि नहीं हैं ? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किंतु वे लोग जहाँ खेत जोतते-बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते हैं कि ऐसी और कौन नई कल या मसाला बनावें जिसमें इस खेती में आगे से दूना अन्न उपजै। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पिएगा या गप्प करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। वहाँ के लोग गप्प ही में देश के प्रबंध छाँटते हैं। सिद्धांत यह कि वहाँ के लोगों का यह सिद्धांत है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाए। उसके बदले वहाँ के लोगों में जितना निकम्मापन हो उतना ही वह बड़ा अमीर समझा जाता है आलस यहाँ इतनी बढ़ गई है कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला—“अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गए, सबके दाता राम।” चारों ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है। रोजगार कहीं कुछ भी नहीं है। चारों ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि दरिद्र कुटुंबी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है, जैसे लाजवंती बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाए जाती है। वही दशा हिंदुस्तान की है।

मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन-दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन-दिन कमती होता जाता है। तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलैगा कि रुपया भी बढ़े और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा। भाइयों, राजा-महाराजों का मुँह मत देखो, मत यह आशा रखो कि पंडित जी कथा में कोई ऐसा उपाय भी बतलावेंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े। तुम आप ही कमर कसो, आलस छोड़ो कब तक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे। दौड़ो, इस घुड़दौड़ में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं। 'फिर कब राम जनकपुर ऐहैं'। अबकी जो पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे।

अब भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं रहो। और वह सुधारना भी ऐसा होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चालचलन में, शरीर बल में, बल में, समाज में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरुष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की

सब अवस्था, सब जाति, सब देश में उन्नति करो। सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कंटक हों, चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहें या नंगा कहें। कृस्तान कहें या भ्रष्ट कहें, तुम केवल अपने देश की दीनदशा का देखो और उनकी बात मत सुनो।

**अपमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा तु पृष्ठतः।**

**स्वकार्यं साधयेत् धीमान् कार्यध्वंसो हि मूर्खता॥**

जो लोग अपने को देश हितैषी लगाते हों, वह अपने सुख को होम करके, अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो। देखा-देखी थोड़े दिन में सब हो जाएगा। अपनी खराबियों के मूल कारणों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में, कोई देश की चाल की आड़ में, कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चोरों को वहाँ-वहाँ से पकड़-पकड़कर लाओ। उनको बाँध-बाँधकर कैद करो। इस समय जो-जो बातें तुम्हारे उन्नति पथ में काँटा हों उनकी जड़ खोदकर फेंक दो।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई, हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधरना किस चिड़िया का नाम है ? किसको अच्छा समझें ? क्या लें, क्या छोड़ें ? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता से मेरे ध्यान में आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो—

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो, अंग्रेजों की धर्मनीति और राजनीति परस्पर मिली है इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो। तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति, समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो-एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है ? जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते, दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग साल में एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं यहाँ से ले जाएँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है ? जिसमें महीने में दो-एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाए। गंगा जी नहाने जाते हो तो पहिले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है ? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाए। होली इसी हेतु है कि बसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि बलने से स्वच्छ हो जाए। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी हैं। ऐसे ही सब पर्व, सब तीर्थ व्रत आदि में कोई हिकमत है। उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने ये धर्म क्यों मान लिए थे इसका लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयों, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरण कमल का भजन है।

ये सब तो समाज धर्म हैं जो देश काल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नए-नए धर्म बनाकर शास्त्रों में धर दिए। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गए। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन

बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनाई और उनमें देश और काल के जो अनुकूल और उपकारी हों, उसको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी हैं, किंतु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है, उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा-विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन में ही ब्याह करके उनका बल, वीर्य, आयुष्य सब मत घटाइए। आप उनके माँ-बाप हैं या उनके शत्रु हैं। वीर्य उनके शरीर में पुष्ट होने दीजिए; विद्या कुछ पढ़ लेने दीजिए; नोन, तेल लकड़ी की फिक्र करने की सीख लेने दीजिए; तब उनका पैर काठ में डालिए। कुलीन-प्रथा, बहु-विवाह आदि को दूर कीजिए। लड़कियों को भी पढ़ाइए नाना प्रकार के मत के लोग आपस का वैर छोड़ दें, यह समय इन झगड़ों का नहीं। हिंदू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए। जाति में कोई चाहे ऊँचा हो चाहे नीचा हो, सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसे वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों का तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।

अपने लड़कों को अच्छी से अच्छी तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोड़ो। लड़कों को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मिहनत करने की आदत दिलाओ। बंगाली, मरठ्टा (मराठा), पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्रह्मों (ब्राह्मण), मुसलमान सब एक का हाथ पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारे यहाँ बढ़ें, तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहै वह करो। देखो, जैसे हजार धारा होकर गंगा समुद्र में मिली हैं, वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इंग्लैंड, फरांसीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती हैं। दियासलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है। जरा अपने ही को देखो। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बनी है। जिस लंकिलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंग्लैंड का है। फरांसीस की बनी कंधी से तुम सिर झारते हो और जर्मनी की बनी चरबी की बत्ती तुम्हारे सामने बल रही है। यह तो वही मसल हुई एकबे फिकरे मँगनी का कपड़ा पहिनकर किसी महफिल में गए। कपड़े को पहिचान कर एक ने कहा, 'अजी यह अंगा तो फलाने का हैं।' दूसरा बोला, 'अजी टोपी भी फलाने की है।' तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि 'घर की तो मूँछें ही मूँछें हैं।' हाय अफसोस, तुम ऐसे हो गए कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

#### 1. 'भारतेंदु युग' के प्रवर्तक हैं—

(क) भारतेंदु हरिश्चंद्र

(ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी

(ग) जयशंकर प्रसाद

(घ) रामचंद्र शुक्ल

2. भारतेन्दु हरिश्चंद्र का जन्म कब हुआ था ?  
(क) 1845 ई० (ख) 1850 ई० (ग) 1855 ई० (घ) 1885 ई०
3. 'भारतेन्दु युग' की समय-सीमा है—  
(क) 1868-1900 ई० (ख) 1900-1922 ई० (ग) 1922-1938 ई० (घ) 1938-1947 ई०
4. निम्न में से कौन-सी रचना 'भारतेन्दु' की नहीं है ?  
(क) होली (ख) भारत दुर्दशा (ग) बकरी विलाप (घ) पृथ्वीपुत्र
5. हरिश्चंद्र को 'भारतेन्दु' की उपाधि ..... में प्राप्त हुई।  
(क) 1870 ई० (ख) 1880 ई० (ग) 1890 ई० (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
6. "भारत वर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?" ..... के मेले में दिया गया भाषण है।  
(क) बलिया (ददरी) (ख) प्रयाग (कुंभ) (ग) नासिक (घ) उज्जैन
7. 'मर्दुमशुमारी' शब्द का अर्थ ..... है।  
(क) जनगणना (ख) मतगणना (ग) बालगणना (घ) पशुगणना

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने भारतवर्ष की उन्नति में किन-किन बातों को बाधक माना है ?
2. "यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी है।" भारतेन्दु के इस कथन का क्या अभिप्राय है ?
3. देश की आत्मनिर्भरता के लिए भारतेन्दु ने क्या उपाय बताए हैं ?
4. भारतेन्दु हरिश्चंद्र का जीवन-परिचय बताते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए।
5. भारतेन्दु हरिश्चंद्र का जीवन -परिचय बताते हुए उनके साहित्यिक पक्ष का उल्लेख कीजिए।
6. पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि "इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाए वही बहुत कुछ है", क्यों कहा गया है ?
7. 'अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो' से लेखक का क्या तात्पर्य है ? वर्तमान संदर्भों में इसकी प्रासंगिता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
8. आपके विचार से देश की उन्नति किस प्रकार संभव है ? कोई दो उदाहरण तर्क सहित दीजिए।
9. देश की सब प्रकार से उन्नति हो, इसके लिए लेखक ने जो उपाय बताए हैं, उनमें से किन्हीं तीन का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।

### III. दिए गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

- (क) हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन ये सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिंदुस्तानी लोगों को कोई चलाने वाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे।
- उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
  - रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
  - लेखक ने 'हिंदुस्तानियों' को किसके सदृश बताया है ?
  - 'का चुप साधि रहा बलवाना' इस कथन से लेखक का क्या आशय है ?
  - लेखक ने हनुमान जी को किसका प्रतीक बताया है ?
- (ख) हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि उनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नलियों से जो तारा ग्रह आदि वेध करके उनकी गति लिखी है, वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीनें बनी हैं उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंग्रेजी विद्या की ओर जगत की उन्नति की कृपा से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं। तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंग्रेज फ्रांसीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमीं पहले छू लें। उस समय हिंदू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं।
- उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
  - रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
  - लेखक के अनुसार प्रतिस्पर्द्धा में भारतवासियों की असफलता का क्या कारण है ?
  - प्राचीन काल में साधन के अभाव में भारतीयों ने किसकी खोज की ?
  - आधुनिक समय में अपनी उन्नति के लिए कौन प्रयासरत है ?
- (ग) सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंग्रेजों की धर्मनीति, राजनीति परस्पर मिली है इससे उनकी दिन-दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो और तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति, समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है ? जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग साल में एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक-दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं, यहाँ से ले जाएँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है ? जिसमें महीने

में दो-एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाए। गंगा जी नहाने जाते हो तो पहले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है ? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाए। होली इसी हेतु है कि बसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि बलने से स्वच्छ हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी है।

(i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक ने अंग्रजों की उन्नति का क्या कारण बताया है ?

(iv) लेखक ने सभी उन्नतियों का मूल किसे बताया है ?

(v) 'यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है' इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

(घ) हाय अफसोस, तुम ऐसे हो गए कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक ने किस बात पर अफसोस प्रकट किया है ?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने किसका भरोसा न करने को कहा है ?

(v) लेखक ने अपने देशवासियों से किसकी उन्नति पर बल देने को कहा है ?

#### IV. भाषा के रंग :

1. विपरीतार्थक शब्द लिखिए— वृद्ध, गरीब, प्राचीन

2. दिए गए शब्दों के अर्थ लिखिए— मर्दुमशुमारी, म्युनिसिपालिटी, आयुष्य

#### V. अनुभूति एवं अभिव्यक्ति :

आप अपने देश की उन्नति के लिए क्या करना चाहते हैं ? अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

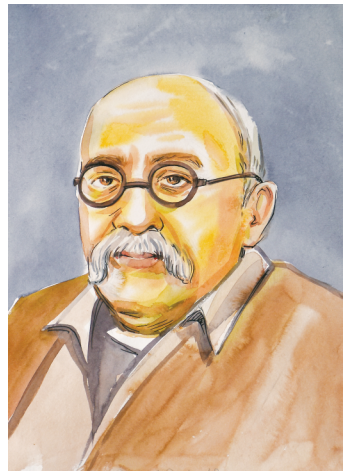
### शब्दार्थ

महसूल—कर, टैक्स। प्रतिदिन—प्रत्येक दिवस। चुपसाधि—सुस्त या निष्क्रिय होकर। उपकारी—हितैषी। मसल—कहावत। कतवार—कूड़ा। ताजी—अरबी घोड़ा। मर्दुमशुमारी—जनगणना। तिहवार—त्योहार, पर्व। फलानी—फलां, अमुक, निर्दिष्ट व्यक्ति या वस्तु। आयुष्य—आयु। लंकिलाट—एक महीन सूती कपड़ा। अंगा—अंगरखा, कुर्ता। म्युनिसिपालिटी—नगरपालिका। विलायत—विदेश।



# महावीरप्रसाद द्विवेदी

द्विवेदी युग (सन् 1900-1918 ई०) के प्रवर्तक महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1864 ई० में रायबरेली (उ० प्र०) के दौलतपुर ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम रामसहाय द्विवेदी था। वे महावीर के उपासक थे, इसीलिए उन्होंने अपने पुत्र का नाम महावीर सहाय रखा। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव के पाठशाला में ही हुई। प्रधानाध्यापक ने भूल से उनका नाम महावीरप्रसाद लिख दिया था, जो हिंदी साहित्य में स्थायी बन गया। वे बहुभाषीय थे और स्वाध्याय से उन्होंने अंग्रेजी, संस्कृत, गुजराती, मराठी, बँगला, आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण स्कूली शिक्षा पूरी कर उन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। कुछ समय बाद उस नौकरी से इस्तीफा देकर सन् 1903 ई० में प्रसिद्ध हिंदी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' के संपादक बने और सन् 1920 ई० तक उसके संपादन से जुड़े रहे। सन् 1938 ई० में रायबरेली में उनका देहावसान हो गया।



(सन् 1864—1938 ई.)

महावीरप्रसाद द्विवेदी केवल एक व्यक्ति नहीं थे वरन् वे एक संस्था थे जिससे परिचित होना हिंदी साहित्य के गौरवशाली अध्याय से परिचित होना है। उन्होंने हिंदी के प्रत्येक क्षेत्र में लेखनी चलाई। वे हिंदी के पहले व्यवस्थित संपादक, भाषा वैज्ञानिक, इतिहासकार, समालोचक और अनुवादक थे। उनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं — 'देवी स्तुति-शतक', 'काव्य मंजूषा', 'सुमन', 'द्विवेदी काव्य-माला', 'कविता कलाप' आदि। इसके अतिरिक्त गद्य साहित्य से संबंधित प्रमुख रचनाएँ निम्न हैं — 'नैषधचरित चर्चा', 'हिंदी कालिदास की समालोचना', 'वैज्ञानिक कोश', 'हिंदी भाषा की उत्पत्ति', 'संपत्तिशास्त्र', 'कालिदास की निरंकुशता', 'रसज्ञ रंजन', 'अतीत स्मृति', 'साहित्य संदर्भ', 'अद्भुत आलाप', 'महिलामोद', 'विचार-विमर्श' आदि। 'संपत्तिशास्त्र' उनकी अर्थशास्त्र से संबंधित पुस्तक है। 'महिलामोद' महिला उपयोगी पुस्तक है। उनका संपूर्ण साहित्य 'महावीरप्रसाद द्विवेदी रचनावली' के पंद्रह खंडों में प्रकाशित है।

महावीरप्रसाद द्विवेदी के महत्त्वपूर्ण कार्य हैं— हिंदी गद्य भाषा का संस्कार एवं परिष्कार करना और लेखकों की सुविधा के लिए व्याकरण एवं वर्तनी के नियम को स्थिर करना। उन्होंने हिंदी गद्य और पद्य की भाषा को एक करने के लिए ब्रजभाषा के बदले खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार हेतु आंदोलन



चलाया। उनकी प्रेरणा से द्विवेदी युग के कवियों ने खड़ी बोली में काव्य लेखन आरंभ किया। उनकी रचनाओं की भाषा में विविधता दिखाई देती है। कहीं उन्होंने बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है तो कहीं शुद्ध साहित्यिक और क्लिष्ट संस्कृत का। संस्कृत की सूक्तियाँ, लोकोक्तियाँ तथा मुहावरों का प्रयोग कर उन्होंने अपनी भाषा में सौंदर्य प्रदान किया। शैली की दृष्टि से उनकी रचनाओं में गवेषणात्मक शैली, भावात्मक शैली, विचारात्मक शैली, वर्णनात्मक शैली, उपदेशात्मक शैली तथा व्यंग्यात्मक शैली की छटा दिखाई देती है। इस प्रकार वे हिंदी साहित्य के एक सशक्त संपादक, आलोचक, निबंधकार, अनुवादक तथा भाषा वैज्ञानिक थे।

प्रस्तुत पाठ **‘महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन’** निबंध में संस्कृत के महाकवि माघ के प्रभात-वर्णन संबंधी हृदयस्पर्शी स्थलों को निबंधकार ने हमारे सामने रखा है। इन्होंने बहुत ही कलात्मक ढंग से यह दिखलाया है कि सूर्य और चंद्रमा, नक्षत्र एवं दिग्वधुएँ अपनी-अपनी क्रीड़ाओं में तल्लीन हैं। सूर्य की रश्मियाँ अंधकार को नष्ट कर जीवन और जगत् को प्रकाश से परिपूर्ण कर देती हैं। रसिक चंद्रमा अपनी शीतल किरणों से रजनीगंधा को प्रमुदित कर देता है। सूर्य और चंद्रमा दिग्वधुओं के कारण एक दूसरे से प्रतिद्वंद्विता के भाव से भर उठते हैं। प्रवासी सूर्य का स्थान चंद्रमा लेकर दिग्वधुओं से हास-परिहास करते हुए सूर्य के कोप का भाजन बन उसके द्वारा परास्त किया जाता है। यहाँ पर प्रकृति का मानवीकरण किया गया है। इन सबका बड़ा मनोहारी चित्रण इस निबंध में किया गया है।



## महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

रात अब बहुत ही थोड़ी रह गई है। सुबह होने में कुछ ही कसर है। जरा सप्तर्षि नाम के तारों को तो देखिए। वे आसमान में लंबे पड़े हुए हैं। उनका पिछला भाग तो नीचे को झुका-सा है और अगला ऊपर को। वहीं, उनके अधोभाग में, छोटा-सा ध्रुवतारा कुछ-कुछ चमक रहा है। सप्तर्षियों का आकार गाड़ी के सदृश है—ऐसी गाड़ी के सदृश जिसका जुवाँ ऊपर को उठ गया हो; इसी से उनके और ध्रुवतारा के दृश्य को देखकर श्रीकृष्ण के बालपन की एक घटना याद आ जाती है। शिशु श्रीकृष्ण को मारने के लिए एक बार गाड़ी का रूप बनाकर शकटासुर नाम का एक दानव उनके पास आया। श्रीकृष्ण ने पालने में पड़े-ही-पड़े, खेलते-खेलते, उसे एक लात मार दी। उसके आघात से उसका अग्रभाग ऊपर को उठ गया और पश्चाद्भाग खड़ा ही रह गया। श्रीकृष्ण उसके तले आ गए। वही दृश्य इस समय सप्तर्षियों की अवस्थिति का है। वे तो कुछ उठे हुए—से लंबे पड़े हैं, छोटा-सा ध्रुव उनके नीचे चमक रहा है।

पूर्व-दिशारूपिणी स्त्री की प्रभा इस समय बहुत ही भली मालूम होती है। वह हँस-सी रही है। वह यह सोचती-सी है कि इस चंद्रमा ने जब तक मेरा साथ दिया—जब तक यह मेरी संगति में रहा—तब तक उदित ही नहीं रहा, इसकी दीप्ति भी खूब बढ़ी। परंतु, देखो, वही अब पश्चिम-दिशारूपिणी स्त्री की तरफ जाते ही हीन-दीप्ति होकर पतित हो रहा है। इसी से पूर्व दिशा चंद्रमा को देख-देख प्रभा के बहाने, ईर्ष्या से मुसका-सी रही है। परंतु चंद्रमा को उसके हँसी-मजाक की कुछ भी परवाह नहीं। वह अपने ही रंग में मस्त मालूम होता है। अस्त समय होने के कारण उसका बिंब तो लाल है, पर किरणें उसकी पुराने कमल की नाल के कटे हुए टुकड़ों के समान सफेद हैं। स्वयं सफेद होकर भी, बिंब की अरुणता के कारण, वे कुछ-कुछ लाल भी हैं। कुंकुम-मिश्रित सफेद चंदन के सदृश उन्हीं लालिमा मिली हुई सफेद किरणों से चंद्रमा पश्चिम दिग्बधू का शृंगार-सा कर रहा है—उसे प्रसन्न करने के लिए उसके मुख पर चंदन का लेप-सा समा रहा है। पूर्व दिग्बधू के द्वारा किए गए उपहास की तरफ उसका ध्यान ही नहीं।

जब कमल शोभित होते हैं, तब कुमुद नहीं और जब कुमुद शोभित होते हैं तब कमल नहीं। दोनों की दशा बहुधा एक-सी नहीं रहती। परंतु, इस समय, प्रातःकाल, दोनों में तुल्यता देखी जाती है। कुमुद बंद होने को हैं; पर अभी पूरे बंद नहीं हुए। उधर कमल खिलने को हैं; पर अभी पूरे खिले नहीं। एक की शोभा आधी ही रह गई है और दूसरे को आधी ही प्राप्त हुई है। रहे भ्रमर, सो अभी दोनों ही पर मँडरा रहे हैं और गुंजा-रव के बहाने दोनों ही के प्रशंसा के गीत-से गा रहे हैं। इसी से, इस समय, कुमुद और कमल, दोनों ही समता को प्राप्त हो रहे हैं।

सायंकाल जिस समय चंद्रमा का उदय हुआ था, उस समय वह बहुत ही लावण्यमय था। क्रम-क्रम से उसकी दीप्ति, उसकी सुंदरता—और भी बढ़ गयी। वह ठहरा रसिक। उसने सोचा, यह इतनी बड़ी रात यों ही कैसे कटेगी; लाओ खिली हुई नवीन कुमुदिनियों (कोकाबेलियों) के साथ हँसी-मजाक ही करें। अतएव वह उनकी शोभा के साथ हास-परिहास करके उनका विकास करने लगा। इस तरह खेलते-कूदते सारी रात बीत गयी। वह थक भी गया; शरीर पीला पड़ गया, कर (किरण-जाल) अस्त अर्थात् शिथिल हो गए। इससे वह दूसरी दिगंगना (पश्चिम दिशा) की गोद में जा गिरा। यह शायद उसने इसलिए किया कि रात भर के जगे हैं, लाओ, अब उसकी गोद में आराम से सो जायँ।

अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखाई भी नहीं दिए। तथापि उसके सारथी अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न देकर वे खुद ही उसके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अंधकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गई। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली। रह गई दिन और रात की संधि अर्थात् प्रातःकालीन संध्या। सो अरुण कमलों ही को आप इस अल्पवयस्क सुता-सदृश संध्या के लाल-लाल और अतिशय कोमल हाथ-पैर समझिए। मधुप-मालाओं से छाए हुए नील कमलों ही को काजल लगी हुई उसकी आँखें जानिए। पक्षियों के कल-कल शब्द ही को उसकी तोतली बोली अनुमान कीजिए। ऐसे संध्या ने जब देखा कि रात इस लोक से जा रही है, तब पक्षियों के कोलाहल के बहाने यह कहती हुई कि 'अम्मा, मैं भी आती हूँ', वह भी उसी के पीछे दौड़ गई।

अंधकार गया, रात गई, प्रातःकालीन संध्या भी गई। विपक्षी दल के एकदम ही पैर उखड़ गए। तब, रास्ता साफ देख, वासर-विधाता भगवान् भास्कर ने निकल आने की तैयारी की। कुलिश-पाणि इन्द्र की पूर्व दिशा में, नए सोने के समान, उनकी पीली-पीली किरणों का समूह छा गया। उनके इस प्रकार आविर्भाव से एक अजीब ही दृश्य दिखाई दिया। आपने बड़वानल का नाम सुना ही होगा। वह एक प्रकार की आग है, जो समुद्र के जल को जलाया करती है। सूर्य के उस लाल-पीले किरण समूह को देखकर ऐसा मालूम होने लगा जैसे वही बड़वाग्नि समुद्र की जल-राशि को जलाकर, त्रिभुवन को भस्म कर डालने के इरादे से, समुद्र के ऊपर उठ आई हो। धीरे-धीरे दिननाथ का बिंब क्षितिज के ऊपर आ गया। तब एक और ही प्रकार के दृश्य के दर्शन हुए। ऐसा मालूम हुआ, जैसे सूर्य का वह बिंब एक बहुत बड़ा घड़ा है और दिग्बधुएँ जोर लगाकर समुद्र के भीतर से उसे खींच रही हैं। सूर्य की किरणों ही को आप लंबी-लंबी मोटी रस्सियाँ समझिए। उन्हीं से उन्होंने बिंब को बाँध-सा दिया है और खींचते वक्त, पक्षियों के कलरव के बहाने, वे यह कह-कहकर शोर मचा रही हैं कि खींच लिया है; कुछ ही बाकी है, ऊपर आना ही चाहता है; जरा और जोर लगाना।

दिगंगनाओं के द्वारा खींच-खाँच कर किसी तरह सागर की सलिल-राशि से बाहर निकाले जाने पर सूर्य—बिंब चमचमाता हुआ लाल-लाल दिखाई दिया। अच्छा, बताइए तो सही, यह इस तरह का

क्यों है ? हमारी समझ में तो यह आता है कि सारी रात पयोनिधि के पानी के भीतर जब यह पड़ा था, तब बड़वाग्नि की ज्वाला ने इसे तपाकर खूब दहकाया होगा। तभी तो खैर (खदिर) के जले हुए कुंदे के अंगार के सदृश लालिमा लिए हुए यह इतना शुभ्र दिखाई दे रहा है। अन्यथा, आप ही कहिए, इसके इतने अंगार गौर होने का और क्या कारण हो सकता है ?

सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गई। पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं। देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नए किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं प्रत्युत् सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों अपने मस्तकों पर, दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुंदर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी—आ जा, आ जा; आ बेटा; आ फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणों) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर में वह आकाश में आ गया।

आकाश में सूर्य के दिखाई देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकार रूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो। उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो। कहिए, यह सूझ कैसी है ? बहुत दूर की तो नहीं।

तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना—हटाना ही—चाहिए। परंतु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बंदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों का भी विनाश करना पड़ा—उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बंदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है—शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

सूर्योदय होते ही अंधकार भयभीत होकर भाग। भागकर वह कहीं गुहाओं के भीतर और कहीं घरों के कोनों और कोठरियों के भीतर जा छिपा। मगर वहाँ भी उसका गुजारा न हुआ। सूर्य यद्यपि बहुत दूर आकाश में था, तथापि उसके प्रबल तेज-प्रताप ने छिपे हुए अंधकार को उन जगहों से भी निकाल बाहर किया। निकाला ही नहीं, अपितु उसका सर्वथा नाश भी कर दिया। बात यह है कि तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर-स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा, ये दोनों ही आकाश की दो आँखों के समान हैं। उनमें से सहस्रकिरणात्मक-मूर्तिधारी सूर्य ने ऊपर उठ-उठकर जब अशेष लोकों का अंधकार दूर कर दिया, तब वह खूब ही चमक उठा। उधर बेचारा चन्द्रमा किरणहीन हो जाने से बहुत ही धूमिल हो गया। इस तरह आकाश की एक आँख तो खूब तेजस्क और दूसरी तेजोहीन हो गई। अतएव ऐसा मालूम हुआ, जैसे एक आँख, प्रकाशवती और दूसरी अंधी वाला आकाश काना हो गया हो।

कुमुदिनियों का समूह शोभाहीन हो गया और सरोरुहों का समूह शोभा-संपन्न। उलूकों को तो शोक ने आ घेरा और चक्रवाकों को अत्यानंद ने। इसी तरह सूर्य तो उदय हो गया और चंद्रमा अस्त। कैसा आश्चर्यजनक विरोधी दृश्य है ? दुष्ट दैव की चेष्टाओं का परिपाक कहते नहीं बनता। वह बड़ा ही विचित्र है। किसी को ता वह हँसाता है, किसी को रुलाता है।

सूर्य को आप दिग्बधुओं का पति समझ लीजिए और यह भी समझ लीजिए कि पिछली रात वह कहीं और किसी जगह अर्थात् विदेश, चला गया था। मौका पाकर इसी बीच, उसकी जगह पर चंद्रमा आ विराजा। पर ज्योंही सूर्य अपना प्रवास समाप्त करके सबेरे, पूर्व दिशा में फिर आ धमका, त्योंही उसे देख चंद्रमा के होश उड़ गये। अब क्या हो ? और कोई उपाय न देख, अपने किरण-समूह को कपड़े-लत्ते के सदृश छोड़ उपपति के समान गर्दन झुकाकर वह पश्चिम-दिशारूपी खिड़की के रास्ते निकल भागा।

महामहिम भगवान् मधुसूदन जिस समय कल्पांत में समस्त लोकों का प्रलय, बात की बात में कर देते हैं, उस समय अपनी समधिक अनुरागवती श्री (लक्ष्मी) को धारण करके—उन्हें साथ लेकर—क्षीर-सागर में अकेले ही जा विराजते हैं। दिन चढ़ आने पर महिमामय भगवान् भास्कर भी, उसी तरह एक क्षण में, सारे तारा-लोक का संहार करके, अपनी अतिशायिनी श्री (शोभा) के सहित, क्षीर-सागर ही के समान आकाश में देखिए, अब यह अकेले ही मौज कर रहे हैं।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'द्विवेदी युग' के प्रवर्तक कौन हैं ?

(क) महावीरप्रसाद द्विवेदी

(ख) हजारी प्रसाद द्विवेदी

(ग) माखनलाल चतुर्वेदी

(घ) सोहनलाल द्विवेदी

2. 'द्विवेदी युग' की समय-सीमा है—  
(क) 1900-1918 ई० (ख) 1800-1836 ई० (ग) 1868-1900 ई० (घ) 1918-1938 ई०
3. महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म कब हुआ था ?  
(क) 1846 ई० (ख) 1868 ई० (ग) 1864 ई० (घ) 1865 ई०
4. महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म स्थान है—  
(क) बरेली (ख) रायबरेली (ग) बस्ती (घ) बहराइच
5. महावीरप्रसाद द्विवेदी का देहावसान कब हुआ था ?  
(क) 1938 ई० (ख) 1983 ई० (ग) 1940 ई० (घ) 1948 ई०
6. निम्न में से कौन-सी रचना महावीरप्रसाद द्विवेदी की नहीं हैं ?  
(क) साहित्य संदर्भ (ख) संपत्तिशास्त्र (ग) महिलामोद (घ) साहित्य-सहचर
7. 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' ..... विधा की रचना है।  
(क) निबंध (ख) नाटक (ग) कहानी (घ) उपन्यास

## II. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए—

1. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सूर्योदय का किन-किन रूपों में वर्णन किया है ?
2. प्रस्तुत निबंध में लेखक ने प्रकृति का मानवीकरण किस प्रकार किया है।
3. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
4. महावीरप्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
5. प्रकृति के मानवीकरण की दृष्टि से 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबंध पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
6. 'स्वामी को श्रम न देकर वह खुद ही उसके विपक्षियों का उच्छेद कर डालते हैं।' का आशय स्पष्ट कीजिए।
7. सूर्यदेव की 'उदारता एवं न्यायशीलता' से आप क्या समझते हैं।

## III. दिए गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

- (क) अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखाई भी नहीं दिए। तथापि उसके सारथी अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न देकर वे खुद ही उसके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अंधकार का तिरोभाव होते ही बेचारी पर आफत आ गई। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
  - (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या लिखिए।
  - (iii) भगवान सूर्यदेव का सारथि कौन है ?
  - (iv) अंधकार का शत्रु किसे बताया गया है ?
  - (v) अंधकार का समूल नाश किसने कर दिया ?

(ख) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गई—पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नए किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं प्रयुक्त सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों-पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक लिखिए।

(ii) सूर्यदेव के स्वभाव के विषय में लेखक के क्या विचार हैं ?

(iii) पर्वतों के शिखरों पर पड़ती प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के विषय में क्या कहा गया है?

(iv) उपर्युक्त गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(v) उपर्युक्त गद्यांश में सूर्यदेव की उदारता के आधार पर किसके संदर्भ में और क्या कहा गया है ?

(ग) उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुंदर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष-देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी—आ जा, आ जा; आ बेटा आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणों) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर वह आकाश में आ गया।

(i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं शीर्षक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) सूर्योदय के समय कमल और कमलनियों पर क्या प्रभाव पड़ा ?

(iv) उदित होते समय सूर्य किस प्रकार दिखाई पड़ता है ?

(v) किसे देखकर कमलनियाँ आनंदित हुई ?

(घ) आकाश में सूर्य के दिखाई देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकार रूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो। उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) उपर्युक्त गद्यांश में अंधकार की तुलना किससे की गई है ?

(iv) सूर्य की किरण-बाण ने किसे नष्ट किया ?

(v) प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के पड़ने पर नदियों का जल कैसा प्रतीत होता है ?

(ङ) तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना-हटाना ही-चाहिए। परंतु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों का भी विनाश करना पड़ा—उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है—शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

- (i) सूर्योदय का प्रमुख प्रयोजन क्या होता है ?
- (ii) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
- (iii) तारों का समूह देखने में कैसा प्रतीत होता है ?
- (iv) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (v) गद्यांश के अनुसार राजनीति क्या कहती है ?

#### IV. भाषा के रंग :

##### 1. निम्नलिखित शब्दों का समास-विग्रह कीजिए —

सुता—सदृश, मधुप—मालाओं, जानुपाणि, किरण—हीन।

##### 2. निम्नलिखित शब्दों का पर्यायवाची शब्द लिखिए—

सूर्य, चंद्रमा, कमल, आकाश, अंधकार, स्त्री।

##### 3. निम्नलिखित शब्दों में संधि कीजिए—

सप्त + ऋषि, दिक् + वधू, तथा + अपि, निः + उद्देश्य, उदय + अचल, सूर्य + उदय।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

सूर्योदय को देखकर आपके मन में किस तरह के भाव उत्पन्न होते हैं ? अपने शब्दों में लिखिए।

### शब्दार्थ

**सप्तर्षि**—सात ऋषियों (गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप और अत्रि) के नाम पर सात तारों का मंडल। **अंशुमाली**—सूर्य। **अवतीर्ण**—उतरना। **तिमिर**—अंधकार। **पराभव**—पराजित। **अधोभाग**—नीचे का हिस्सा। **जुवाँ**—बैलगाड़ी का वह भाग, जो बैलों के कंधों पर रखा जाता है। **दानव**—राक्षस। **आघात**—प्रहार, चोट। **प्रभा**—व्यक्ति। **दीप्ति**—प्रकाश। **दिग्वधू**—दिशा रूपी वधू। **तुल्यता**—समानता। **लावण्यमय**—सुंदरता-युक्त। **पयोनिधि**—समुद्र। **सुता**—पुत्री। **अल्पवयस्क**—छोटी आयु, किशोर। **मिस**—बहाने। **समधिक**—अत्यधिक। **उच्छेद**—नाश। **दिननाथ**—सूर्य। **आप्यायित**—प्रसन्न। **श्री**—लक्ष्मी, शोभा। **भास्कर**—सूर्य।



# श्यामसुंदर दास



(सन् 1875–1945 ई.)

हिंदी के अनन्य साधक, विद्वान, आलोचक और महान् शिक्षाविद् बाबू श्यामसुंदर दास का जन्म सन् 1875 ई० में काशी में हुआ। उन्होंने 1897 ई० में काशी से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। पढ़ाई पूरी करने के बाद वह 'हिंदू स्कूल' में अध्यापक बनें और बाद में लखनऊ के कालीचरण स्कूल में हेडमास्टर नियुक्त हुए। उन्होंने अपने विद्यार्थी काल में ही अपने दो सहयोगियों 'रामनारायण मिश्र—और ठाकुर शिवकुमार सिंह' के सहयोग से सन् 1893 ई० में काशी में 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की और उसके संवर्धन में निरंतर अपना सहयोग देते रहे। उन्होंने 'सरस्वती' के आरंभिक तीन वर्षों (1900 से 1902 तक) और 'नागरी प्रचारिणी' पत्रिका के कुछ अंशों का संपादन भी किया। उन्होंने विश्वविद्यालय में हिंदी को स्थान दिलाने का अथक प्रयत्न किया और स्वयं जीवनपर्यंत 'काशी हिंदू विश्वविद्यालय' में हिंदी विभाग के अध्यक्ष रहे। हिंदी सेवाओं से प्रसन्न होकर उनको 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' ने 'साहित्यवाचस्पति' और काशी हिंदू विश्वविद्यालय ने 'डी. लिट्' की सम्मानोपाधि प्रदान की। निरंतर कार्य करते रहने के कारण उनका स्वास्थ्य गिर गया और सन् 1945 ई. में देहांत हो गया।

बाबू श्यामसुंदर दास जी अपने जीवन के पचास वर्षों में अनवरत रूप से हिंदी की सेवा करते हुए हिंदी कोश, इतिहास, काव्यशास्त्र, भाषा-विज्ञान, शोधकार्य, पाठ्य-पुस्तक और विभिन्न संपादित ग्रंथों से समृद्ध किया, उसके महत्त्व की प्रतिष्ठा की, उसकी आवाज को जन-जन तक पहुँचाया। उनके अथक प्रयासों के कारण ही हिंदी विश्वविद्यालय में अन्य भाषाओं के समकक्ष आ खड़ी हुई। श्यामसुंदर दास की प्रमुख मौलिक कृतियाँ हैं — 'नागरी वर्णमाला', 'हिन्दी कोविद रत्नमाला' (भाग 1, 2), 'साहित्यालोचन', 'भाषा विज्ञान', 'हिंदी भाषा का विकास', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र', 'हिंदी भाषा और साहित्य', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'रूपक रहस्य', 'भाषा रहस्य' (भाग-1), 'मेरी आत्मकहानी'। उनके द्वारा संपादित ग्रंथों में प्रमुख हैं — 'छत्रप्रकाश', 'हिंदी वैज्ञानिक कोश', 'वनिता-विनोद', 'कबीर-ग्रंथावली', 'सतसई सप्तक', 'त्रिधारा' इत्यादि।

**संकलित ग्रंथ—**'मानस सूक्तावली', संक्षिप्त रामायण' उनके द्वारा रचित संकलित ग्रंथ है। बाबू श्यामसुंदर दास की भाषा सिद्धांत निरूपित सरल, ठोस एवं भावुकता-विहीन है। विषय-प्रतिपादन की

दृष्टि से वे संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं, परन्तु जहाँ तक सम्भव हुआ है विदेशी शब्दों के प्रयोग से बचते रहे हैं। फिर भी उनकी भाषा कहीं-कहीं दुरुह और अस्पष्ट हो जाती है। वास्तव में उनकी भाषा महत्त्व एवं उपयोगिता की दृष्टि से एक विशिष्ट प्रकार की साहित्यिक गुरुता लिये हुए है।

श्यामसुंदरदास ने अत्यंत गंभीर विषयों को बोधगम्य शैली में प्रस्तुत किया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ तद्भव शब्दों का भी उन्होंने यथेष्ट प्रयोग किया है। हिंदी भाषा को सर्वजन सुलभ, वैज्ञानिक और समृद्ध बनाने में उनका योगदान अप्रतिम है। उन्होंने विचारात्मक, गवेषणात्मक तथा व्याख्यात्मक शैलियों का व्यवहार किया है। आलोचना, भाषा-विज्ञान, भाषा का इतिहास, लिपि का विकास आदि विषयों पर अपने वैज्ञानिक एवं सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत कर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है।

श्यामसुंदर दास द्वारा लिखित निबंध **‘भारतीय साहित्य की विशेषताएँ’** के अंतर्गत भारतीय साहित्य की अनेक विशेषताओं का वर्णन किया गया है। जिसमें पहली विशेषता समन्वय की बताई गयी है, जो भारतीय दर्शन में परमात्मा तथा जीवात्मा में कोई अंतर स्वीकार नहीं करता है। लेखक के अनुसार इसी दार्शनिक मान्यता के आधार पर कला व साहित्य में समन्वय का आदर्श प्रमुख बना। दूसरी विशेषता धार्मिक भावों की प्रचुरता से है। इन दो मुख्य विशेषताओं के अतिरिक्त इनके अनुसार देश काल, वातावरण और भौगोलिक स्थिति का भी साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। जातिगत तथा देशगत विशेषताओं की ओर लेखक ने ध्यान आकृष्ट करते हुए उनका प्रभाव साहित्य के भावपक्ष एवं कलापक्ष पर स्पष्ट किया है।



# भारतीय साहित्य की विशेषताएँ

समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकती है और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकती है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में सामाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनंद में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखाई देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाए गए हैं, पर सबका अवसान आनंद में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना संबंध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है। हमारे यहाँ यूरोपीय प्रणाली के दुखांत नाटक इसीलिए नहीं दीख पड़ते। यदि आजकल दो-चार नाटक ऐसे दीख भी पड़ने लगे हैं, तो वे भारतीय आदर्श से दूर और यूरोपीय आदर्श के अनुकरण-मात्र हैं। कविता के क्षेत्र में ही देखिए, यद्यपि विदेशी शासन से पीड़ित तथा उनके क्लेशों से संतप्त देश निराशा की चरम सीमा तक पहुँच चुका था और उसके सभी अवलंबों की इतिश्री हो चुकी थी, फिर भी भारतीयता के सच्चे प्रतिनिधि तत्कालीन महाकवि गोस्वामी तुलसीदास अपने विकार-रहित हृदय से समस्त जाति को आश्वासन देते हैं —

“भरे भाग अनुराग लोग कहैं राम अवध चितवन चितई है  
विनती सुनि सानंद हेरि हँसि करुना-वारि भूमि भिजई है।  
राम राज भयो काज सुगुन सुभ राजाराम जगत-विजई है।  
समरथ बड़ो सुजान सुसाहब सुकृत-सेन हारत जितई है।।”

आनंद की कितनी महान् भावना है। चित्त किसी अनुभूत आनंद की कल्पना में मानो नाच उठता है। हिंदी साहित्य के विकास का समस्त युग विदेशीय तथा विजातीय शासन का युग था; परंतु फिर भी साहित्यिक समन्वय का कभी निरादर नहीं हुआ। आधुनिक युग के हिंदी कवियों में यद्यपि पश्चात्य आदर्शों की छाप पड़ने लगी है और लक्षणों को देखते हुए इस छाप के अधिकाधिक गहरी हो जाने की संभावना हो रही है, परंतु जातीय साहित्य की धारा अक्षुण्ण रखनेवाले कुछ कवि अब भी विद्यमान हैं।

यदि हम थोड़ा-सा विचार करें तो उपर्युक्त साहित्यिक समन्वयवाद का रहस्य हमारी समझ में आ सकता है। जब हम थोड़ी देर के लिए साहित्य को छोड़कर भारतीय कलाओं का विश्लेषण करते हैं तब उनमें भी साहित्य की भाँति समन्वय की छाप दिखाई देती है। सारनाथ की बुद्ध भगवान् की मूर्ति में ही समन्वय की यह भावना निहित है। वह की यह मूर्ति उस समय की है, जब वे छह महीने की कठिन साधना के उपरांत अस्थिपंजर-मात्र ही रहे होंगे, पर मूर्ति में कहीं कृशता का पता नहीं; उसके चारों ओर एक स्वर्गीय आभा नृत्य कर रही है।

इस प्रकार साहित्य तथा कला में भी इस प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और भी प्रबल हो जाती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा जीवात्मा में कुछ भी अंतर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनंदस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान है, भेद उत्पन्न करने वाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनंदमय परमात्मा में लीन हो जाता है। आनंद में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वयवाद पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के ऐकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत तथा व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-संबंधी गहन तथा गंभीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिंदी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं। 'सामवेद' की मनोहारिणी तथा मृदु गंभीर ऋचाओं से लेकर सूर तथा मीरा आदि की सरल रचनाओं तक में सर्वत्र परोक्ष भावों की अधिकता तथा लौकिक विचारों की न्यूनता देखने में आती है।

उपर्युक्त मनोवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि साहित्य में उच्च विचार तथा पूत भावनाएँ तो प्रचुरता से भरी गई, परंतु उनमें लौकिक जीवन की अनेकरूपता का प्रदर्शन न हो सका। हमारी कल्पना अध्यात्म-पक्ष में तो निस्सीम तक पहुँच गई; परंतु ऐहिक जीवन का चित्र उपस्थित करने में वह कुछ कुंठित-सी हो गई है। हिंदी की चरम उन्नति का काल भक्ति-काव्य का काल है, जिसमें उसके साहित्य के साथ हमारे जातीय साहित्य के लक्षणों का सामंजस्य स्थापित हो जाता है।

धार्मिकता के भाव से प्रेरित होकर जिस सरल तथा सुंदर साहित्य का सृजन हुआ, वह वास्तव में हमारे गौरव की वस्तु है; परंतु समाज में जिस प्रकार धर्म के नाम पर अनेक दोग रचे तथा गुरुडम की प्रथा चल पड़ती है, उसी प्रकार साहित्य में भी धर्म के नाम पर पर्याप्त अनर्थ होता है, हिंदी साहित्य के क्षेत्र में हम यह अनर्थ दो मुख्य रूपों में देखते हैं— एक तो सांप्रदायिक कविता तथा नीरस उपदेशों के रूप में और दूसरा कृष्ण का आधार लेकर की गई हिंदी की शृंगारी कविताओं के रूप में। हिंदी में सांप्रदायिक कविता का एक युग ही हो गया है और 'नीति के दोहों' की तो अब तक भरमार है। अन्य दृष्टियों से नहीं तो कम-से-कम शुद्ध साहित्यिक समीक्षा की दृष्टि से ही सही, सांप्रदायिक तथा उपदेशात्मक साहित्य का अत्यन्त निम्न स्थान है; क्योंकि नीरस पदावली के कोरे उपदेशों में कवित्व की मात्रा बहुत थोड़ी होती है। राधाकृष्ण को लेकर हमारे शृंगारी कवियों ने अपने कलुषित तथा वासनामय उद्गारों को व्यक्त करने का जो ढंग निकाला वह समाज के लिए हितकर नहीं हुआ। यद्यपि आदर्श की कल्पना करनेवाले कुछ साहित्य समीक्षक इस शृंगारी कविता में भी उच्च आदर्शों की उद्भावना कर लेते हैं, पर फिर भी हम वस्तुस्थिति की किसी प्रकार अवहेलना नहीं कर सकते। सब प्रकार की शृंगारिक कविता ऐसी नहीं है कि उसमें शुद्ध प्रेम का अभाव तथा कलुषित वासनाओं का ही अस्तित्व हो, पर यह स्पष्ट है कि पवित्र भक्ति का उच्च आदर्श, समय पाकर लौकिक शरीर-जन्य तथा वासना-मूलक प्रेम में परिणत हो गया।

भारतीय साहित्य की इन दो प्रधान विशेषताओं का उपर्युक्त विवेचन करके अब हम उसकी दो-एक देशगत विशेषताओं का वर्णन करेंगे। प्रत्येक देश की जलवायु अथवा भौगोलिक स्थिति का प्रभाव उस देश के साहित्य पर अवश्य पड़ता है और यह प्रभाव बहुत कुछ स्थाई भी होता है। संसार के सब देश एक ही प्रकार के नहीं होते जलवायु तथा गर्मी-सर्दी के साधारण विभेदों के अतिरिक्त उनके प्राकृतिक दृश्यों तथा उर्वरता आदि में सभी अंतर होता है। यदि पृथ्वी पर अरब तथा सहारा जैसी दीर्घकाय मरुभूमियाँ हैं तो साइबेरिया तथा रूस के विस्तृत मैदान भी हैं। यदि यहाँ इंग्लैंड तथा आयरलैंड जैसे जलावृत द्वीप हैं तो चीन जैसा विस्तृत भूखंड भी है। इन विभिन्न भौगोलिक स्थितियों का उन देशों के साहित्यों से जो संबंध होता है, उसी को इस साहित्य की देशगत विशेषताएँ कहते हैं।

भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परंतु उसकी सुंदरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही सौंदर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुंदरता की कल्पना कर लेते हैं; परंतु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी हैं; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसंतश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं, उन्हें अरब की उपर्युक्त

वस्तुओं में सौंदर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुंदर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-भरे उपवनों में तथा सुंदर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं। यही कारण है कि भारतीय कवि प्रकृति के संश्लिष्ट तथा सजीव चित्र जितनी मार्मिकता, उत्तमता तथा अधिकता से अंकित कर सकते हैं तथा उपमा-उत्प्रेक्षाओं के लिए जैसी सुंदर वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं; वैसा रुखे-सूखे देश के निवासी कवि नहीं कर सकते। यह भारत-भूमि की ही विशेषता है कि यहाँ के कवियों का प्रकृति-वर्णन तथा तत्संभव सौंदर्य-ज्ञान उच्चकोटि का होता है।

प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं। यह अखंड भूमंडल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं : इनकी सृष्टि-संचालन आदि के संबंध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किंतु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-संबंधी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं के उद्रेक की क्षमता होती है, परंतु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती। यद्यपि इस देश की उत्तरकालीन विचारधारा के कारण हिंदी में बहुत थोड़े रहस्यवादी कवि हुए हैं, परंतु कुछ प्रेम-प्रधान कवियों ने भारतीय मनोहर दृश्यों की सहायता से अपनी रहस्यमयी उक्तियों को अत्यधिक सरस तथा हृदयग्राही बना दिया है। यह भी हमारे साहित्य की एक देशगत विशेषता है।

ये जातिगत तथा देशगत विशेषताएँ तो हमारे साहित्य के भावपक्ष की हैं। इनके अतिरिक्त उसके कला-पक्ष में भी कुछ स्थायी जातीय मनोवृत्तियों का प्रतिबिंब अवश्य दिखायी देता है। कलापक्ष से हमारा अभिप्राय केवल शब्द संगठन अथवा छंद-रचना तथा विविध आलंकारिक प्रयोगों से नहीं है, प्रत्युत उसमें भावों को व्यक्त करने की शैली भी सम्मिलित है। यद्यपि प्रत्येक कविता के मूल में कवि का व्यक्तित्व अंतर्निहित रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उस कविता के विश्लेषण द्वारा हम कवि के आदर्शों तथा उसके व्यक्तित्व से परिचित हो सकते हैं। परंतु साधारणतः हम देखते हैं कि कुछ कवियों में प्रथम पुरुष एकवचन के प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक होती है तथा कुछ कवि अन्य पुरुष में अपने भाव प्रकट करते हैं।

अंग्रेजी में इस विभिन्नता के आधार पर कविता के व्यक्तिगत तथा अव्यक्तिगत नामक भेद हुए हैं, परंतु ये विभेद वास्तव में कविता के नहीं हैं, उसकी शैली के हैं। दोनों प्रकार की कविताओं में कवि के आदर्शों का अभिव्यंजन होता है, केवल इस अभिव्यंजन के ढंग में अंतर रहता है। एक में वे आदर्श आत्मकथन अथवा आत्मनिवेदन के रूप में व्यक्त किए जाते हैं, दूसरी में उन्हें व्यंजित करने के लिए वर्णनात्मक प्रणाली का आधार ग्रहण किया जाता है। भारतीय कवियों में दूसरी (वर्णनात्मक) शैली की

अधिकता तथा पहली की कमी पाई जाती है। यही कारण है कि यहाँ वर्णनात्मक काव्य अधिक है तथा कुछ भक्त कवियों की रचनाओं के अतिरिक्त उस प्रकार की कविता का अभाव है जिसे गीति-काव्य कहते हैं और जो विशेषकर पदों के रूप में लिखी जाती है।

साहित्य के कला पक्ष की अन्य महत्वपूर्ण जातीय विशेषताओं से परिचित होने के लिए हमें उसके शब्द-समुदाय पर ध्यान देना पड़ेगा, साथ ही भारतीय संगीत-शास्त्र की कुछ साधारण बातें भी जान लेनी होंगी। वाक्य रचना के विविध भेदों, शब्दगत तथा अर्थगत अलंकारों और अक्षर-मात्रिक अथवा लघु गुरु-मात्रिक आदि छंद-समुदायों का विवेचन भी उपयोगी हो सकता है। परंतु एक तो ये विषय इतने विस्तृत हैं कि इन पर यहाँ विचार करना संभव नहीं और दूसरे इनका संबंध साहित्य के इतिहास से उतना पृथक नहीं है जितना व्याकरण, अलंकार और पिंगल से है। तीसरी बात यह भी है कि इनमें जातीय विशेषताओं की कोई स्पष्ट छाप भी नहीं दीख पड़ती, क्योंकि ये सब बातें थोड़े बहुत अंतर से प्रत्येक देश के साहित्य में पाई जाती हैं।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'नागरीप्रचारिणी सभा' की स्थापना कब हुई थी ?  
(क) 1893 ई० (ख) 1839 ई० (ग) 1890 ई० (घ) 1845 ई०
2. श्यामसुंदर दास का जन्म कहाँ हुआ था ?  
(क) प्रयाग (ख) काशी (ग) कानपुर (घ) गाजीपुर
3. श्यामसुंदर दास का जन्म कब हुआ था ?  
(क) 1857 ई० (ख) 1800 ई० (ग) 1875 ई० (घ) 1880 ई०
4. 'मेरी आत्म कहानी' के लेखक कौन हैं ?  
(क) श्यामसुंदर दास (ख) कबीरदास (ग) नरोत्तमदास (घ) केशवदास
5. निम्न में से कौन-सी रचना बाबू श्यामसुंदर दास की है :  
(क) तिलोत्तमा (ख) रूपक रहस्य (ग) अनघ (घ) नहुष

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है ?
2. भारतीय साहित्य की दो प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
3. "भारतीय साहित्य में धार्मिक भावनाओं की प्रचुरता है।" इसका आशय स्पष्ट कीजिए।
4. भारतीय साहित्य की वह कौन-सी विशेषता है जो उसे अन्य देशों के साहित्य से भिन्न करती है?
5. श्यामसुंदर दास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों पर प्रकाश डालिए।
6. 'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
7. श्यामसुंदर दास के हिंदी भाषा के प्रमुख उन्नायकों में क्यों गिना जाता है ? तर्कसंगत उत्तर दीजिए।
8. श्यामसुन्दर दास का साहित्यिक-परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।



### III. दिए गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकती है और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकती है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में सामाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनंद में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखाई देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाए गए हैं, पर सबका अवसान आनंद में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना संबंध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) भारतीय साहित्य की मुख्य विशेषता क्या है ?
- (iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iv) साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है ?
- (v) सभी भारतीय नाटक सुखांत क्यों होते हैं ?

(ख) इस प्रकार साहित्य तथा कला में भी इस प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और भी प्रबल हो जाती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा जीवात्मा में कुछ भी अंतर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनंदस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान है, भेद उत्पन्न करने वाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनंदमय परमात्मा में लीन हो जाता है। आनंद में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वयवाद पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) जीवात्मा और परमात्मा में क्या भेद है ?
- (iii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iv) मानव-जीवन का परम उद्देश्य क्या है ?
- (v) हमारे दर्शन-शास्त्र किसका समाधान करते हैं ?



(ग) भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के एकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत तथा व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-संबंधी गहन तथा गंभीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिंदी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) लेखक ने भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता क्या बताया है ?
- (iv) हमारे साहित्य में धर्म की अतिशयता का क्या प्रभाव पड़ा ?
- (v) राजनीति तथा आचार-विचार में धर्म का नियंत्रण क्यों स्वीकार किया गया है ?

(घ) भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परंतु उसकी सुंदरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही सौंदर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुंदरता की कल्पना कर लेते हैं, परंतु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी है; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसंतश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं, उन्हें अरब की उपर्युक्त वस्तुओं में सौंदर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुंदर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-भरे उपवनों में तथा सुंदर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक और शीर्षक का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) विशेष प्रकार की मानव वृत्तियाँ कहाँ रमती हैं ?
- (iv) उपर्युक्त गद्यांश के अनुसार प्रकृति की सुंदर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य किन्हें प्राप्त है ?
- (v) अरब देश के कवि किसको देखकर सुंदरता का अनुभव कर लेते हैं ?

(ङ) प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं। यह अखंड भूमंडल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं, इनकी सृष्टि-संचालन आदि के संबंध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किंतु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-संबंधी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं के उद्रेक की क्षमता होती है, परंतु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक और लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक के अनुसार रहस्यवाद क्या है ?

(iv) कविगण किसमें भावमग्न होते हैं?

(v) प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति है, उसका उपयोग कविगण किसमें करते हैं ?

#### IV. भाषा के रंग :

(क) निम्नलिखित शब्दों से मूलशब्द, उपसर्ग और प्रत्यय पृथक् कीजिए—  
सम्मिलित, उपदेशात्मक, बहुदेववाद, नीरसता, सार्थकता

(ख) 'अर्थ' शब्द के दो अर्थ होते हैं— अभिप्राय और धन। 'उसके कहने का क्या अर्थ है' वाक्य में 'अर्थ' का तात्पर्य 'अभिप्राय' से है तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में 'अर्थ' का तात्पर्य 'धन' से है इसी प्रकार निम्नलिखित शब्दों से विभिन्न रूप बताइए—  
पक्ष, कोटि, वर्ण, मित्र।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

'साहित्य समाज का दर्पण है' शीर्षक पर निबन्ध लिखिए।

#### शब्दार्थ

**आश्रय चतुष्टय**—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास। **अन्यान्य कलाओं**—और कलाएँ जैसे वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत, काव्य आदि। **भिजई**—भिगोई। **आदर्शात्मक साम्य**—आदर्शों में समता, लक्ष्यगत समानता। **एकेश्वरवाद**—ईश्वर एक है इस सिद्धांत को माननेवाला, दार्शनिकवाद। **ब्रह्मवाद**—ब्रह्म की सत्ता स्वीकार करने का सिद्धांत अर्थात् यह मानना कि ब्रह्म के अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है। **ऋचाओं**—ऋग्वेद के मंत्र। **परोक्ष**—अलौकिक या अप्रत्यक्ष। **ऐहिक**—लौकिक, सांसारिक। **गुरुडम**—खोखला आचार्यत्व (इसका प्रयोग अच्छे अर्थ में नहीं होता)। **वसंतश्री**—वसंत की शोभा। **संश्लिष्ट**—मिला-जुला। **उद्रेक**—अभिव्यक्ति, जागृति करना। **पिंगल**—छंद शास्त्र। **मार्मिक**—हृदयस्पर्शी। **सार्थकता**—महत्त्व। **अवलंब**—सहारा। **साम्य**—समता। **बिजई**—विजयी। **मायाजन्य**—माया से उत्पन्न। **तत्संभव**—उससे उत्पन्न।

# सरदार पूर्णसिंह

द्विवेदी-युग के श्रेष्ठ निबंधकार सरदारपूर्ण सिंह का जन्म सलहट गाँव, जिला (वर्तमान पाकिस्तान) एबटाबाद में सन् 1881 ई० में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा रावलपिंडी में हुई थी। हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे लाहौर चले गए और वहाँ के एक कालेज से उन्होंने एफ० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1900 ई० में रसायनशास्त्र के विशेष अध्ययन के लिए जापान गए और वहाँ इंपीरियल यूनिवर्सिटी में अध्ययन करने लगे। जहाँ पर उनकी मुलाकात स्वामी रामतीर्थ से हुई जो वहाँ 'विश्व धर्म सभा' में भाग लेने के लिए गए थे। स्वामी रामतीर्थ से प्रभावित होकर उनकी रुचि अध्यात्म की ओर हो गई और स्वामी जी के साथ भारत लौट आए। भारत आने पर देहरादून में वन-विभाग में उनकी नियुक्ति हुई पर कुछ परिस्थितियों के कारण उन्हें नौकरी छोड़नी पड़ी और जीवन के अंतिम समय धनाभाव में बिताने पड़े। सन् 1931 ई० में उनका देहावसान हो गया।



(सन् 1881—1931 ई.)

सरदारपूर्ण सिंह सच्चे आस्तिक, मानवता-प्रेमी तथा उदार व्यक्ति थे उनकी अधिकांश रचनाएँ अंग्रेजी तथा पंजाबी में हैं। सरदार पूर्णसिंह के हिंदी में कुल छह निबंध उपलब्ध हैं— 'सच्ची वीरता', 'कन्यादान', 'पवित्रता', 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम' तथा 'अमेरिका का मस्तयोगी वाल्ट ह्विटमैन'। इन्हीं निबंधों के बल पर उन्होंने हिंदी गद्य-साहित्य के क्षेत्र में अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। उन्होंने निबंध रचना के लिए नैतिक विषयों को ही मुख्य रूप से चुना।

उनके निबंध विचारात्मक होते हुए भी भावात्मक कोटि में आते हैं। उद्धरण-बहुलता और शीर्षक की प्रासंगिकता ही उनकी निबंध-शैली की प्रमुख विशेषता है। उनकी भाषा शुद्ध खड़ी बोली है, किंतु उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ फारसी और अंग्रेजी के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। उनकी निबंध-शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं— भावात्मकता, विचारात्मकता, वर्णनात्मकता, सूत्रात्मकता, व्यंग्यात्मकता, आदि। विचारों और भावनाओं के क्षेत्र में ये किसी संप्रदाय से बँधकर नहीं चलते। इसी प्रकार निबंधों के शब्द-चयन में भी ये अपने स्वच्छंद स्वभाव को प्रकट करते हैं। सच्चे मानव की खोज और

सच्चे हृदय की भाषा की तलाश ही उनके साहित्य का लक्ष्य है। उनके निबंधों में भावना का वह आवेग एवं कल्पना की वैसी उड़ान मिलती है, जिसने आगे चलकर छायावाद को विकसित किया।

प्रस्तुत निबंध **‘आचारण की सभ्यता’** में लेखक ने आचारण की श्रेष्ठता को प्रतिपादित किया है। लेखक की नज़र में लंबी-चौड़ी बातें करना, बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखना और दूसरों को उपदेश देना तो आसान है, किंतु ऊँचे आदर्शों को आचरण में उतारना अत्यंत कठिन है। जिस प्रकार हिमालय की सुंदर चोटियों के निर्माण में प्रकृति को लाखों वर्ष लग गए उसी प्रकार समाज में सभ्य आचरण को विकसित करने में मनुष्य को लाखों वर्षों तक साधना करनी पड़ी है। जनसाधारण पर सबसे अधिक प्रभाव सभ्य आचरण का ही पड़ता है।

इसलिए यदि हमें पूर्ण मनुष्य बनना है तो अपने आचारण को श्रेष्ठ और सुंदर बनाना होगा। आचारण न तो बड़े-बड़े ग्रंथों से सीखा जा सकता है और न ही मंदिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों से। उसका खुला खजाना तो हमें अपने समाज और अपनी संस्कृति के विराट प्रांगण में ही मिलता है।



# आचरण की सभ्यता

विद्या, कला, कविता, साहित्य, धन और राजस्व से भी आचरण की सभ्यता अधिक ज्योतिष्मती है। आचरण की सभ्यता को प्राप्त करके एक कंगाल आदमी राजाओं के दिलों पर भी अपना प्रभुत्व जमा सकता है। इस सभ्यता के दर्शन से कला, साहित्य और संगीत को अद्भुत सिद्धि प्राप्त होती है। राग अधिक मृदु हो जाता है; विद्या का तीसरा शिव-नेत्र खुल जाता है, चित्र-कला का मौन राग अलापने लग जाता है; वक्ता चुप हो जाता है; लेखक की लेखनी थम जाती है; मूर्ति बनानेवाले के सामने नए कपोल, नए नयन और नई छवि का दृश्य उपस्थित हो जाता है।

आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघंटु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ भी व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

न काला, न नीला, न पीला, न सफेद, न पूर्वी, न पश्चिमी, न उत्तरी, न दक्षिणी, बे-नाम, बे-निशान, बे-मकान—विशाल आत्मा के आचरण से मौन रूपिणी सुगंधि सदा प्रसारित हुआ करती है। इसके मौन से प्रसूत प्रेम और पवित्रता-धर्म सारे जगत का कल्याण करके विस्तृत होते हैं। इसकी उपस्थिति से मन और हृदय की ऋतु बदल जाते हैं। तीक्ष्ण गरमी से जले-भुने व्यक्ति आचरण के काले बादलों की बूँदाबूँदी से शीतल हो जाते हैं। मानसोत्पन्न शरद् ऋतु में क्लेशातुर हुए पुरुष इनकी सुगंधमय अटल वसंत ऋतु के आनंद का पान करते हैं। आचरण के नेत्र के एक अश्रु से जगत भर के नेत्र भीग जाते हैं। आचरण के आनंद-नृत्य से उन्मदिष्णु होकर वृक्षों और पर्वतों तक के हृदय नृत्य करने लगते हैं। आचरण के मौन व्याख्यान से मनुष्य को एक नया जीवन प्राप्त होता है। नए-नए विचार स्वयं ही प्रकट होने लगते हैं। सूखे काष्ठ सचमुच ही हरे हो जाते हैं। सूखे कूपों में जल भर आता है। नए नेत्र मिलते हैं। कुल पदार्थों के साथ एक नया मैत्री-भाव फूट पड़ता है। सूर्य, जल, वायु, पुष्प, पत्थर, घास, पात, नर-नारी और बालक तक में एक अश्रुतपूर्व सुंदर मूर्ति के दर्शन होने लगते हैं।

मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभाववती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुंदरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को—मन के लक्ष्य को—ही न बदल दिया। चंद्रमा की मंद-मंद हँसी का

तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचन्द्र सेन और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे हैं। सच्चा आचरण—प्रभाव, शील, अचल-स्थित संयुक्त आचरण— न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गढ़ा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

बर्फ का दुपट्टा बाँधे हुए हिमालय इस समय तो अति सुंदर, अति ऊँचा और अति गौरवान्वित मालूम होता है, परंतु प्रकृति ने अगणित शताब्दियों के परिश्रम से रेत का एक-एक परमाणु समुद्र के जल में डुबो-डुबोकर और उनको अपने विचित्र हथौड़े से सुडौल करके इस हिमालय के दर्शन कराये हैं। आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलश वाला मंदिर है। यह वह आम पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनन्त काल लगा है। पृथ्वी बन गई, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परन्तु अभी तक आचरण के सुंदर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसकी अत्यल्प छटा अवश्य दिखाई देती है।

पुस्तकों में लिखे हुए नुसखों से तो और भी अधिक बदहजमी हो जाती है। सारे वेद और शास्त्र भी यदि घोलकर पी लिए जायँ तो भी आदर्श आचरण की प्राप्ति नहीं होती। आचरण की प्राप्ति की इच्छा रखनेवाले को तर्क-वितर्क से कुछ भी सहायता नहीं मिलती। शब्द और वाणी तो साधारण जीवन के चोचले हैं। ये आचरण की गुप्त गुहा में नहीं प्रवेश कर सकते। वहाँ इनका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वेद इस देश के रहनेवालों की विश्वासानुसार ब्रह्म-वाणी है, परंतु इतना काल व्यतीत हो जाने पर भी आज तक वे समस्त जगत् की भिन्न-भिन्न जातियों को संस्कृत भाषा न बुला सके—न समझा सके— न सिखा सके। यह बात हो कैसे ? ईश्वर तो सदा मौन है। ईश्वरीय मौन शब्द और भाषा का विषय नहीं। वह केवल आचरण के कान में गुरु-मंत्र फूँक सकता है। वह केवल ऋषि के दिल में वेद का ज्ञानोदय कर सकता है।

किसी का आचरण वायु के झोंके से हिल जाय तो हिल जाय परन्तु साहित्य और शब्द की गोलंदाजी और आँधी से उसके सिर के एक बाल तक का बाँका न होना एक साधारण बात है। पुष्प की कोमल पंखुड़ी के स्पर्श से किसी को रोमांच हो जाय; जल की शीतलता से क्रोध और विषय-वासना शांत हो जायँ; बर्फ के दर्शन से पवित्रता आ जाय; सूर्य की ज्योति से नेत्र खुल जायँ—परंतु अंगरेजी भाषा का व्याख्यान—चाहे वह कारलायल ही का लिखा हुआ क्यों न हो—बनारस में पंडितों के लिए रामलीला ही है। इसी तरह न्याय और व्याकरण की बारीकियों के विषय में पंडितों के द्वारा की गई चर्चाएँ और शास्त्रार्थ संस्कृत ज्ञान-हीन पुरुषों के लिए स्टीम इंजन के फप्-फप् शब्द से अधिक अर्थ

नहीं रखते। यदि आप कहें व्याख्यानों के द्वारा, उपदेशों के द्वारा, धर्मचर्चा द्वारा कितने ही पुरुषों और नारियों के हृदय पर जीवन-व्यापी प्रभाव पड़ा है, तो उत्तर यह है कि प्रभाव शब्द का नहीं पड़ता—प्रभाव तो सदा सदाचरण का पड़ता है। साधारण उपदेश तो हर गिरजे हर मंदिर और हर मस्जिद में होते हैं, परंतु उनका प्रभाव तभी हम पर पड़ता है जब गिरजे का पादरी स्वयं ईसा होता है—मंदिर का पुजारी स्वयं ब्रह्मर्षि होता है—मस्जिद का मुल्ला स्वयं पैगंबर और रसूल होता है।

यदि एक ब्राह्मण किसी डूबती कन्या की रक्षा के लिए—चाहे वह कन्या जिस किसी जाति की हो, जिस किसी मनुष्य की हो, जिस किसी देश की हो—अपने-आपको गंगा में फेंक दे—चाहे उसके प्राण यह काम करने में रहें चाहे जायँ—तो इस कार्य में प्रेरक आचरण की मौनमयी भाषा किस देश में, किस जाति में और किस काल में, कौन नहीं समझ सकता ? प्रेम का आचरण, दया का आचरण—क्या पशु क्या मनुष्य—जगत् के सभी चराचर आप-ही-आप समझ लेते हैं। जगत् भर के बच्चों की भाषा इस भाष्यहीन भाषा का चिह्न है। बालकों के इस शुद्ध मौन का नाद और हास्य भी सब देशों में एक ही-सा पाया जाता है।

मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र और पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अंतरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिंब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, क्या पाता है किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं। जिनको हम धर्मात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन अधर्मों को करके वे धर्म-ज्ञान पा सके हैं। जिनको हम सभ्य कहते हैं और जो अपने जीवन में पवित्रता को ही सब-कुछ समझते हैं, क्या पता है, वे कुछ काल पूर्व बुरी और अधर्म पवित्रता में लिप्त रहे हों ? अपने जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों से भरी हुई अंधकारमय कोठरी से निकलकर ज्योति और स्वच्छ वायु से परिपूर्ण खुले हुए देश में जब तक अपना आचरण अपने नेत्र न खोल चुका हो तब तक धर्म के गूढ़ तत्त्व कैसे समझ में आ सकते हैं। नेत्र-रहित को सूर्य से क्या लाभ ? कविता, साहित्य, पीर, पैगंबर, गुरु, आचार्य, ऋषि आदि के उपदेशों से लाभ उठाने का यदि आत्मा में बल नहीं तो उनसे क्या लाभ ? जब तक यह जीवन का बीज पृथ्वी के मल-मूत्र के ढेर में पड़ा है अथवा जब तक वह खाद की गरमी से अंकुरित नहीं हुआ और प्रस्फुटित होकर उससे दो नए पत्ते ऊपर नहीं निकल आए, तब तक ज्योति और वायु किस काम के ?

वह आचरण जो धर्म-संप्रदायों के अनुच्चारित शब्दों को सुनाता है, हम में कहाँ ? जब वही नहीं तब फिर क्यों न ये संप्रदाय हमारे मानसिक महाभारतों के कुरुक्षेत्र बनें ? क्यों न अप्रेम, अपवित्र, हत्या और अत्याचार इन संप्रदायों के नाम से हमारा खून करें। कोई भी संप्रदाय आचरण-रहित पुरुषों के लिए कल्याणकारक नहीं हो सकता और आचरणवाले पुरुषों के लिए सभी धर्म-संप्रदाय कल्याणकारक हैं। सच्चा साधु धर्म को गौरव देता है, धर्म किसी को गौरवान्वित नहीं करता।



आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के संबंध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्त्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आचरणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनाई हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनाई थी। इसी से उसके बनाए हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

यदि मुझे ईश्वर का ज्ञान नहीं तो ऐसे ज्ञान ही से क्या प्रयोजन ? जब तक मैं अपना हथौड़ा ठीक-ठीक चलाता हूँ और रूपहीन लोहे को तलवार के रूप में गढ़ देता हूँ तब तक मुझे यदि ईश्वर का ज्ञान नहीं तो नहीं होने दो। उस ज्ञान से मुझे प्रयोजन ही क्या ? जब तक मैं अपना उद्धार ठीक और शुद्ध रीति से किए जाता हूँ तब तक यदि मुझे आध्यात्मिक पवित्रता का ज्ञान नहीं होता तो न होने दो। उससे सिद्धि ही क्या हो सकती है ? जब तक किसी जहाज के कप्तान के हृदय में इतनी वीरता भरी हुई है कि वह महाभयानक समय में अपने जहाज को नहीं छोड़ता तब तक यदि वह मेरी और तेरी दृष्टि में शराबी और स्त्रैण है तो उसे वैसा ही होने दो। उसकी बुरी बातों से हमें प्रयोजन ही क्या ? आँधी हो—बरफ हो—बिजली की कड़क हो—समुद्र का तूफान हो—वह दिन रात आँख खोले अपने जहाज की रक्षा के लिए जहाज के पुल पर घूमता हुआ अपने धर्म का पालन करता है। वह अपने जहाज के साथ समुद्र में डूब जाता है, परंतु अपना जीवन बचाने के लिए कोई उपाय नहीं करता। क्या उसके आचरण का यह अंश मेरे-तेरे बिस्तर और आसन पर बैठे-बिठाए कहे हुए निरर्थक शब्दों के भाव से कम महत्त्व का है ?

न मैं किसी गिरजे में जाता हूँ और न किसी मंदिर में, न मैं नमाज पढ़ता हूँ और न रोजा ही रखता हूँ, न संध्या ही करता हूँ और न कोई देव-पूजा ही करता हूँ, न किसी आचार्य के नाम का मुझे पता है और न किसी के आगे मैंने सिर ही झुकाया है। तो इससे प्रयोजन ही क्या और इससे हानि भी क्या ? मैं तो अपनी खेती करता हूँ, अपने हल और बैलों को प्रातःकाल उठकर प्रणाम करता हूँ मेरा जीवन जंगल के पेड़ों और पत्तियों की संगति में गुजरता है, आकाश के बादलों को देखते मेरा दिन निकल जाता है। मैं किसी को धोखा नहीं देता; हाँ यदि मुझे कोई धोखा दे तो उससे मेरी कोई हानि नहीं। मेरे खेत में अन्न उग रहा है, मेरा घर अन्न से भरा है, बिस्तर के लिए मुझे एक कमली काफी है, कमर के लिए लँगोटी और सिर के लिए एक टोपी बस है। हाथ-पाँव मेरे बलवान हैं, शरीर मेरा अरोग्य है, भूख खूब लगती है, बाजरा और मकई, छाछ और दही, दूध और मक्खन मुझे और मेरे बच्चों को खाने के लिए मिल जाता है। क्या इस किसान की सादगी और सच्चाई में वह मिठास नहीं



जिसकी प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न धर्म संप्रदाय लंबी-चौड़ी और चिकनी-चुपड़ी बातों द्वारा दीक्षा दिया करते हैं ?

जब साहित्य, संगीत और कला की अति ने रोम को घोड़े से उतारकर मखमल के गद्दों पर लिटा दिया— जब आलस्य और विषय-विकार की लंपटता ने जंगल और पहाड़ की साफ हवा के असभ्य और उद्वण्ड जीवन से रोमवालों का मुख मोड़ दिया तब रोम नरम तकियों और बिस्तरों पर ऐसा सोया कि अब तक न आप जागा और न कोई उसे जगा सका। ऐंग्लो-सैक्सन जाति ने जो उच्च पद प्राप्त किया बस उसने अपने समुद्र, जंगल और पर्वत से संबंध रखनेवाले जीवन से ही प्राप्त किया। जाति की उन्नति लड़ने-भिड़ने, मरने-मारने, लूटने और लूटे जाने, शिकार करने और शिकार होनेवाले जीवन का ही परिणाम है। लोग कहते हैं, केवल धर्म ही जाति की उन्नति करता है। यह ठीक है, परंतु यह धर्माकुर जो जाति को उन्नति करता है, इस असभ्य, कमीने पापमय जीवन की गंदी राख के ढेर के ऊपर नहीं उगता है। मंदिरों और गिरजों की मंद-मंद, टिमटिममाती हुई मोमबत्तियों की रोशनी से यूरप इस उच्चावस्था को नहीं पहुँचा। वह कठोर जीवन जिसको देश-देशांतरों को ढूँढ़ते-फिरते रहने के बिना शांति नहीं मिलती; जिसकी अंतर्ज्वाला दूसरी जातियों को जीतने, लूटने, मारने और उन राज करने के बिना मंद नहीं पड़ती—केवल वही विशाल जीवन समुद्र की छाती पर मूँग दल कर और पहाड़ों को फाँद कर उनको उस महानता की ओर ले गया और ले जा रहा है। रॉबिनहुड की प्रशंसा में जो कवि अपनी सारी शक्ति खर्च कर देते हैं उन्हें तत्त्वदर्शी कहना चाहिए, क्योंकि रॉबिनहुड जैसे भौतिक पदार्थों से ही नेलसन और बेलिंगटन जैसे अंगरेज वीरों की हड्डियाँ तैयार हुई थीं। लड़ाई के आजकल के सामान—गोला, बारूद, जंगी जहाज और तिजारती बेड़ों आदि को देखकर कहना पड़ता है कि इनसे वर्तमान सभ्यता से भी कहीं अधिक उच्च सभ्यता का जन्म होगा।

धर्म और आध्यात्मिक विद्या के पौधे को ऐसी आरोग्य-वर्धक भूमि देने के लिए, जिसमें वह प्रकाश और वायु में सदा खिलता रहे, सदा फूलता रहे, सदा फलता रहे, यह आवश्यक है कि बहुत-से हाथ एक अनंत प्रकृति के ढेर को एकत्र करते रहें। धर्म की रक्षा के लिए क्षत्रियों को सदा ही कमर बाँधे हुए सिपाही बने रहने का भी तो यही अर्थ है। यदि कुल समुद्र का जल उड़ा दो तो रेडियम धातु का एक कण कहीं हाथ लगेगा। आचरण का रेडियम—क्या एक पुरुष का और क्या एक जाति का और क्या एक जगत् का—सारी प्रकृति को खाद बनाए बिना, सारी प्रकृति को हवा में उड़ाए बिना भला कब मिलने का है ? प्रकृति को मिथ्या करके नहीं उड़ाना; उसे उड़ाकर मिथ्या करना है ? समुद्रों में डोरा डालकर अमृत निकालना है। सो भी कितना ? जरा-सा! संसार की खाक छानकर आचरण का स्वर्ण हाथ आता है। क्या बैठे बिठाए भी वह मिल सकता है ?

हिंदुओं का संबंध यदि किसी प्राचीन असभ्य जाति के साथ रहा होता तो उनके वर्तमान वंश में अधिक बलवान् श्रेणी के मनुष्य होते—उनमें भी ऋषि, पराक्रमी, जनरल और धीर-वीर पुरुष उत्पन्न होते। आजकल तो वे उपनिषदों के ऋषियों के पवित्रतामय प्रेम के जीवन को देख-देखकर अहंकार में मग्न हो रहे हैं और दिन-पर-दिन अधोगति की ओर जा रहे हैं। यदि वे किसी जंगली जाति की संतान होते तो उनमें भी ऋषि और बलवान् योद्धा होते। ऋषियों को पैदा करने के योग्य असभ्य पृथ्वी

का बन जाना तो आसान है, परंतु ऋषियों को अपनी उन्नति के लिए राख और पृथ्वी बनाना कठिन है, क्योंकि ऋषि तो केवल अनंत प्रकृति पर सजते हैं, हमारी जैसी पुष्प-शय्या पर मुरझा जाते हैं। माना कि प्राचीन काल में, यूरोप में सभी असभ्य थे, परंतु आजकल तो हम असभ्य हैं। उनकी असभ्यता के ऊपर ऋषि-जीवन की उच्च सभ्यता फूल रही है और हमारे ऋषियों के जीवन के फूल की शय्या पर आजकल असभ्यता का रंग चढ़ा हुआ है। सदा ऋषि पैदा करते रहना अर्थात् अपनी ऊँची चोटी के ऊपर इन फूलों को सदा धारण करते रहना ही जीवन के नियमों का पालन करना है।

धर्म के आचरण की प्राप्ति यदि ऊपरी आडंबरों से होती तो आजकल भारत-निवासी सूर्य के समान शुद्ध आचरणवाले हो जाते। भाई! माला से तो जप नहीं होता। गंगा नहाने से तो तप नहीं होता। पहाड़ों पर चढ़ने से प्राणायाम हुआ करता है, समुद्र में तैरने से नेती धुलती है; आँधी, पानी और साधारण जीवन के ऊँच-नीच, गरमी-सरदी, गरीबी-अमीरी को झेलने से तप हुआ करता है। आध्यात्मिक धर्म के स्वप्नों की शोभा तभी भली लगती है जब आदमी अपने जीवन का धर्म पालन करे। खुले समुद्र में अपने जहाज पर बैठकर ही समुद्र की आध्यात्मिक शोभा का विचार होता है। भूखे को तो चंद्र और सूर्य भी केवल आटे की बड़ी-बड़ी दो रोटियाँ-से प्रतीत होते हैं। कुटियों में ही बैठकर धूप, आँधी और बर्फ की दिव्य शोभा का आनंद आ सकता है। प्राकृतिक सभ्यता के आने पर ही मानसिक सभ्यता आती है और तभी वह स्थिर भी रह सकती है। मानसिक सभ्यता के होने पर ही आचरण-सभ्यता संभव है, और तभी वह स्थिर भी हो सकता है। जब तक निर्धन पुरुष पाप से अपना पेट भरता है तब तक धनवान् पुरुष के शुद्धाचरण की पूरी परीक्षा नहीं। इसी प्रकार जब तक अज्ञानी का आचरण अशुद्ध है, जब तक ज्ञानवान् के आचरण की पूरी परीक्षा नहीं—तब तक जगत् में आचरण की सभ्यता का राज्य नहीं।

आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनाई देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रह्लाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारंभ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीटक (त्रिपिटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं। आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।



## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. निम्न में से कौन द्विवेदी-युग का निबंधकार है ?  
(क) सरदार पूर्णसिंह (ख) प्रतापनारायण मिश्र (ग) बालकृष्ण भट्ट (घ) भारतेन्दु
2. सरदार पूर्णसिंह का जन्म कहाँ हुआ था ?  
(क) अहमदाबाद (ख) एबटाबाद (ग) इस्लामाबाद (घ) गाजियाबाद
3. सरदार पूर्णसिंह का जन्म कब हुआ था ?  
(क) 1871 ई० (ख) 1875 ई० (ग) 1881 ई० (घ) 1884 ई०
4. 'विश्व धर्मसभा' में पूर्णसिंह किससे प्रभावित हुए ?  
(क) स्वामी रामतीर्थ (ख) स्वामी विवेकानंद (ग) स्वामी परमहंस (घ) स्वामी प्रणवानंद
5. 'आचरण की सभ्यता' किस विधा की रचना है ?  
(क) नाटक (ख) कहानी (ग) निबंध (घ) उपन्यास
6. 'सच्ची वीरता' के रचनाकार कौन हैं ?  
(क) भारतेन्दु (ख) सरदार पूर्णसिंह (ग) हरिऔध (घ) दिनकर
7. निम्न में से कौन-सी रचना सरदार पूर्णसिंह की है ?  
(क) मजदूरी और प्रेम (ख) रसज्ञरंजन (ग) नीरजा (घ) रंग में भंग
8. 'त्रिपिटक' में कौन-सा भाग नहीं आता है ?  
(क) विनय (ख) सुत्त (ग) अभिधम्म (घ) दिव्या
9. निम्न में से कौन-सी रचना सरदार पूर्णसिंह की नहीं है ?  
(क) रस-मीमांसा (ख) कन्यादान (ग) पवित्रता (घ) सच्ची वीरता
10. सरदार पूर्णसिंह के हिंदी में कुल कितने निबंध उपलब्ध हैं ?  
(क) 5 (ख) 6 (ग) 7 (घ) 8

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. सरदार पूर्णसिंह का जीवन परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. सरदार पूर्णसिंह का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. हिंदी निबंध के इतिहास में सरदार पूर्णसिंह का महत्त्व प्रतिपादित कीजिए।
4. 'आचरण की सभ्यता' के लेखक ने आचरण के विकास के लिए किन बातों पर बल दिया है ?
5. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
6. "आचरण का विकास जीवन का परम उद्देश्य है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
7. 'आचरण की सभ्यता' में आत्म-व्यंजना का क्या महत्त्व है ? संक्षेप में लिखिए।
8. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का मुख्य संदेश क्या है ?
9. 'आचरण की सभ्यता' से लेखक का क्या तात्पर्य है ?

### III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघंटु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आचरण की कौन-सी भाषा सदा मौन रहती है ?

(iv) सभ्याचरण की मुख्य विशेषता बताइए।

(v) सभ्याचरण की व्याख्या के मौन आख्यान क्या हैं ?

(ख) मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभाववती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुंदरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को—मन के लक्ष्य को—ही न बदल दिया। चंद्रमा की मंद-मंद हँसी का तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचंद्र सेन और महर्षि देवेंद्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

(i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं शीर्षक का नाम बताइए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आचरण की कौन-सी भाषा ईश्वरीय है ?

(iv) मौनरूपी व्याख्यान का क्या महत्त्व है ?

(v) उपर्युक्त गद्यांश में लेखक का निहित भाव क्या है ?

(ग) प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे हैं। सच्चा आचरण—प्रभाव, शील, अचल-स्थित संयुक्त आचरण— न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गढ़ा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष के हृदय पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) प्रेम की भाषा कैसी है ?
- (iv) उपर्युक्त गद्यांश के अनुसार आचरण का रूप कैसा होता है ?
- (v) प्रेम की भाषा के द्वारा हमारे हृदय के भावों को किस प्रकार प्रकट किया जाता है ?
- (घ) आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मंदिर है। यह वह आम पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनंत काल लगा है। पृथ्वी बन गई, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परंतु अभी तक आचरण के सुंदर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसी अत्यल्प छटा अवश्य दिखाई देती है।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) उपर्युक्त गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।
- (iv) उपर्युक्त अवतरण में मदारी के क्रिया-कलाप का वर्णन किस प्रसंग में हुआ है ?
- (v) आचरण दिव्य और महिमामय कैसे होती है ?
- (ङ) मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अंतरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिंब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) आचरण का विकास किसका परम उद्देश्य है ?
- (iv) आचरण के विकास के लिए हमें क्या करना चाहिए ?
- (v) उपर्युक्त अवतरण में लेखक का निहित भाव क्या है ?
- (च) आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के संबंध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की

सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आचरणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनाई हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनाई थी। इसी से उसके बनाए हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आचरण का विकास किसका परमोद्देश्य है ?

(iv) आचरण के विकास के लिए हमें क्या करना चाहिए ?

(v) उपर्युक्त अवतरण में लेखक का निहित भाव क्या है ?

(छ) आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनाई देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रह्लाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारंभ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीटिक (त्रिपीटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं। आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) किसकी सभ्यता का देश निराला है ?

(iv) उपर्युक्त गद्यांश में आलस्य को क्या बताया गया है ?

(v) लेख किसके सदृश होते हैं ?

#### IV. भाषा के रंग :

1. पाठ में आए किन्हीं चार उपसर्ग एवं चार प्रत्यय युक्त शब्द लिखिए।
2. निम्नलिखित मुहावरों के अर्थ लिखकर उनका वाक्य प्रयोग कीजिए—  
तीसरा शिव—नेत्र खुलना, वेद—शास्त्र घोलकर पीना, सिर झुकाना।

### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

किसी ऐसे व्यक्ति के आचरण के बारे में लिखिए जिससे आप प्रभावित हुए हों।

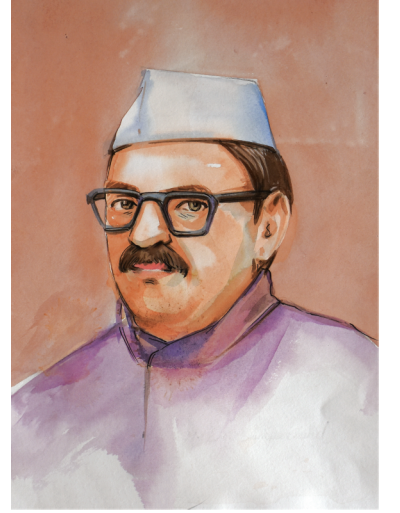
### शब्दार्थ

ज्योतिष्मती—ज्योतिर्मयी, प्रकाशयुक्त। निघंटु—वैदिक-शब्द-कोष। मानसोत्पन्न—मन से उत्पन्न। क्लेशातुर—दुख से व्याकुल। उन्मदिष्णु—उन्मादयुक्त, मतवाला। अश्रुतपूर्व—जो पहले न सुना गया हो। इंजील—ईसाइयों का धर्मग्रंथ। रामरोला—व्यर्थ का शोरगुल। रसूल—ईश्वर का दूत। संभूत—उत्पन्न। रेडियम—एक प्रकाशमय धातु। नेति—हठयोग की एक क्रिया। त्रिपीठक (त्रिपिटक)—बौद्धों का मूल ग्रंथ जो विनय, सुत्त और अभिधम्म तीन पिटकों (भागों) में विभक्त है। राजत्व—राज—पद जैसी गरिमा। कंगाल—निर्धन। मृदु—मीठा। अंत—अनाज। दीक्षा—उपनयन संस्कार, यज्ञ करना, शिष्यत्व। अलापना—शास्त्रीय विधि के अनुसार गीत गुंजन।



## डॉ० संपूर्णानंद

कुशल राजनीतिज्ञ एवं मर्मज्ञ साहित्यकार डॉ० संपूर्णानंद का जन्म सन् 1890 ई० में वाराणसी (उ० प्र०) में हुआ था। उन्होंने वाराणसी से बी० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद प्रयागराज के ट्रेनिंग कॉलेज से एल० टी० किया। वे सबसे पहले प्रेम महाविद्यालय, वृंदावन में अध्यापक के रूप में नियुक्त हुए। इसके बाद उनकी नियुक्ति डूंगर कालेज, बीकानेर में प्रधानाध्यापक के पद पर हुई। सन् 1921 ई० में महात्मा गाँधी के राष्ट्रीय आंदोलन से प्रेरित होकर काशी लौट आए और 'ज्ञानमंडल' में काम करने लगे। उन्हीं दिनों 'मर्यादा' (मासिक) और 'टुडे' (अंग्रेजी दैनिक) का संपादन भी किया। डॉ० संपूर्णानंद ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रथम पंक्ति के सेनानी के रूप में कार्य किया और सन् 1936 ई० में प्रथम बार कांग्रेस के टिकट पर विधानसभा के सदस्य चुने गए। सन् 1937 ई० में कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित होने पर उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री और सन् 1954 ई० में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। सन् 1962 ई० में राजस्थान के राज्यपाल नियुक्त हुए। जहाँ से सन् 1967 ई० में अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् मृत्युपर्यंत काशी विद्यापीठ के कुलपति बने रहे। सन् 1969 ई० में वाराणसी में ही उनका देहावसान हो गया।



(सन् 1890–1969 ई.)

संपूर्णानंद का बाल्यकाल से ही साहित्य के प्रति प्रेम झलकता था। उन्होंने संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी और बंगला साहित्य का अध्ययन भी किया। विज्ञान के छात्र होते हुए भी आरंभ से ही उनकी लेखन और अध्ययन में गहरी दिलचस्पी रही। राजनीतिक कार्यों में उलझे रहने पर भी उनका अध्ययन क्रम बराबर बना रहा। वे सन् 1940 ई० में 'अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन' के सभापति निर्वाचित हुए, तथा कुछ समय तक 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के भी अध्यक्ष और संरक्षक रहे। उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री और मुख्यमंत्री के रूप में उन्होंने शिक्षा, कला और साहित्य की उन्नति के लिए अनेक उपयोगी कार्य किए। वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय उन्हीं के प्रयासों की ही देन है। उनकी पुस्तक 'समाजवाद' को 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' द्वारा 'मंगला प्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया गया तथा उनको सम्मेलन की सर्वोच्च उपाधि 'साहित्य वाचस्पति' भी प्राप्त हुई थी।



उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं — 'कर्मवीर गांधी', 'महाराज छत्रसाल', 'भौतिक विज्ञान', 'ज्योति विनोद', 'भारतीय सृष्टि क्रम विचार', 'भारत के देशी राष्ट्र', 'चेतसिंह और काशी का विद्रोह', 'सम्राट हर्षवर्धन', 'चीन की राज्यक्रांति', 'मिस्र की स्वाधीनता', 'सम्राट अशोक', 'व्यक्ति और राज', 'आर्यों का आदि देश', 'दर्शन और जीवन', 'चिद्विलास', 'गणेश', 'भाषा की शक्ति', 'पृथ्वी से सप्तर्षि मंडल', 'अंतरिक्ष यात्रा' आदि।

उनकी भाषा शैली शुद्ध, परिष्कृत एवं साहित्यिक है। उन्होंने विषयों का विवेचन तर्कपूर्ण शैली में किया है। विचारात्मक, व्याख्यात्मक और ओजपूर्ण विषय प्रतिपादन की दृष्टि से उनकी शैली के तीन रूप लक्षित होते हैं। उनकी भाषा सरल, सजीव, साहित्यिक, एवं प्रौढ़ है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किया गया है। शब्दों का चुनाव भावों और विचारों के अनुरूप किया गया है।

प्रस्तुत निबंध '**शिक्षा का उद्देश्य**' निबंध संपूर्णानंद जी के '**भाषा की शक्ति**' नामक संग्रह से लिया गया है। इस पाठ में लेखक ने 'शिक्षा के उद्देश्य' पर मौलिक ढंग से अपने विचार व्यक्त किए हैं और प्राचीन आदर्शों को ही सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया। लेखक ने इस पाठ में अध्यापकों को उनका कर्तव्य बताते हुए स्पष्ट किया है कि अध्यापक का सर्वप्रथम कर्तव्य विद्यार्थियों में चरित्र का विकास करना और उनमें लोक-कल्याण की भावना जाग्रत करना है।



# शिक्षा का उद्देश्य

अध्यापक और समाज के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है— शिक्षा किस लिए दी जाय ? शिक्षा का जैसा उद्देश्य होगा, तदनुसार ही पाठ्य विषयों का चुनाव होगा। पर शिक्षा का उद्देश्य स्वतंत्र नहीं है। वह इस बात पर निर्भर है कि मनुष्य-जीवन का उद्देश्य—मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ क्या है— मनुष्य को उस पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है।

पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ संबंध है। यह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुंबिक व्यवस्था का व्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकराएँगे। जो बात एक क्षेत्र में ठीक जँचेगी वही दूसरे क्षेत्र में अनुचित कहलाएगी और मनुष्य के लिए अपना कर्तव्य स्थिर करना कठिन हो जाएगा। इसका तमाशा आज दीख पड़ रहा है। चोरी करना बुरा है पर पराए देश का शोषण करना बुरा नहीं। झूठ बोलना बुरा है पर राजनीतिक क्षेत्र में सच बोलने पर अड़े रहना मूर्खता है। घरवालों के साथ, देशवासियों के साथ और परदेशियों के साथ बर्ताव करने के लिए अलग-अलग आचारावलियाँ बन गई हैं। इससे विवेकशील मनुष्य को कष्ट होता है, वह पग-पग पर धर्म-संकट में पड़ जाता है कि क्या करूँ। कल्याण इसी में है कि खूब सोच-विचारकर एक व्यापक दार्शनिक मत अंगीकार किया जाय और फिर सारे व्यवहार की नींव बनाया जाय। यह असंभव प्रयत्न नहीं है। प्राचीन भारत ने वर्णाश्रम धर्म इसी प्रकार स्थापित किया था। वर्तमान काल में रूस ने मार्क्सवाद को अपने राष्ट्रीय जीवन की सभी चेष्टाओं का केन्द्र बनाया है। ऐसा करने से सभी उद्योग एकसूत्र में बँध जाते हैं और आदर्शों और कर्तव्यों के टकराने की संभावना बहुत ही कम हो जाती है।

इस निबंध में दार्शनिक शास्त्रार्थ के लिए स्थान नहीं है। मैं यहाँ इतना कह सकता हूँ कि मेरी समझ में भारतीय संस्कृति ने पुराने काल में अपने लिए आधार ढूँढ़ निकाला था, वह अब भी वैसा ही श्रेयस्कर है क्योंकि उसका संश्रय शाश्वत है।

आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनंत ज्ञान, शक्ति और आनंद का भंडार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनंद भी होता है। परंतु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है। भीतर से ऐसा प्रतीत होता है जैसे कुछ खोया हुआ है; परंतु यह नहीं समझ में आता कि क्या खो गया है। उसे खोयी हुई वस्तु, अपने स्वरूप की निरंतर खोज रहती है। आत्मा अनजान में

भटका करता है; कभी इस विषय की ओर दौड़ता है, कभी उसकी ओर; परंतु किसी की प्राप्ति से तृप्ति नहीं होती, क्योंकि अपना स्वरूप इन विषयों में नहीं है। जब तक आत्मसाक्षात्कार न होगा, तब तक अपूर्णता की अनुभूति बनी रहेगी और आनंद की खोज जारी रहेगी। इस खोज में सफलता, आनंद की प्राप्ति, अपने परम ज्ञानमय स्वरूप में स्थिति—यही मनुष्य का पुरुषार्थ, उसके जीवन का चरम लक्ष्य है और उसको इस पुरुषार्थ-साधन के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। वही राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था सबसे अच्छी है जिससे पुरुषार्थ-सिद्धि में सहायता मिल सके; कम-से-कम बाधाएँ तो न्यूनतम हों।

आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परंतु इतना किया जा सकता है—और यही समाज और अध्यापक का कर्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।

यहाँ पाठ्य-विषयों की चर्चा करना अनावश्यक है; वह ब्योरे की बात है। परंतु चरित्र का विकास ब्योरे की बात नहीं है। उसका महत्त्व सर्वोपरि है। चरित्र शब्द का भी व्यापक अर्थ लेना होगा। पुरुषार्थ को सामने रखकर ही चरित्र सँवारा जा सकता है। प्रत्येक छात्र की आत्मा अपने को ढूँढ़ रही है, पर उसे इसका पता नहीं। अज्ञानवशात् वह उस आनंद को, जो उसका अपना स्वरूप है, बाहरी चीजों में ढूँढ़ती है। जब कोई अभिलषित वस्तु मिल जाती है तो थोड़ी देर के लिए सुख का अनुभव होता है; परंतु थोड़ी ही देर के बाद चित्त किसी और वस्तु की ओर जा दौड़ता है; क्योंकि जिसकी खोज है वह कहीं मिलता नहीं। सब इसी खोज में हैं। ऐसी दशा में आपस में संघर्ष होना स्वाभाविक है। यदि दस आदमी अँधेरी कोठरी में टटोलते फिरेंगे तो बिना टकराए रह नहीं सकते। एक ही वस्तु की अभिलाषा जब दो या अधिक मनुष्य करेंगे तो उनमें अवश्य मुठभेड़ होगी। चीज का उपयोग तो कोई एक ही कर सकेगा। इस प्रकार ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध बढ़ते रहते हैं। ज्ञान और शक्ति की कमी से सफलता कम ही मिलती है। इससे अपने ऊपर ग्लानि होती है, दृश्यमान के नीचे एक मूक वेदना टीसती रहती है।

यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःख देखकर दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है। निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है। ये बातें हँसी-खेल नहीं हैं; परंतु चित्त को उधर फेरना तो होगा ही, सफलता चाहे बहुत धीरे ही प्राप्त हो। इस प्रकार का प्रयास भी मनुष्य को ऊपर उठाता है।

निष्कामिता की कुंजी यह है कि अपना खयाल कम और दूसरों का अधिक किया जाय। आरंभ से ही परार्थ साधन, लोक-संग्रह और जीव-सेवा के भाव उत्पन्न किये जायँ। जब कभी मनुष्य से थोड़ी देर के लिए सच्ची सेवा बन पड़ती है तो उसे बड़ा आनंद मिलता है : भूखे को अन्न देते समय, जलते

या डूबते को बचाते समय, रोगी की शुश्रूषा करते समय कुछ देर के लिए उसके साथ तन्मयता हो जाती है। 'मैं'— 'पर' का भाव तिरोहित हो जाता है। उस समय अपने 'स्व' की एक झलक मिल जाती है। 'मैं'—'तू' के कृत्रिम भेदों के परे जो अपना सर्वात्मक, शुद्ध स्वरूप है, उसका साक्षात्कार हो जाता है। जो जितने ही बड़े क्षेत्र के साथ तन्मयता प्राप्त कर सकेगा, उसको आनंद और स्वरूप-दर्शन की उतनी ही उपलब्धि होगी। हमारी सुविधा और चरित्र-निर्माण के लिए यह तो नहीं हो सकता कि लोग आए दिन डूबा और जला करें या भूख-प्यास से तड़पा करें, परंतु सेवा के अवसरों की कमी भी नहीं होती। सेवा करने में भाव यह न होना चाहिए कि मैं इसका उपकार कर रहा हूँ, वरन् यह कि इसकी बड़ी कृपा है जो मेरी तुच्छ सेवा स्वीकार कर रहा है। यह भी याद रहे कि सेवा केवल मनुष्य की नहीं, जीव मात्र की करनी है। पशु-पक्षी, कीट-पतंग के भी स्वत्व होते हैं, उनका भी आदर करना है।

चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इंद्रियों के बंधन ढीले पड़ गये होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कामोद्दीपन के लिए किया जाता है, परंतु वह शांत रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक को कर्तव्य है कि छात्र में सौंदर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौंदर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से उपयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौंदर्य की अनुभूति नहीं होती। सौंदर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

कहने का तात्पर्य यह है कि छात्र के चरित्र को इस प्रकार विकास देना है कि वह 'मैं' 'तू' के ऊपर उठ सके। जहाँ तक उपयोग का भाव रहेगा, वहाँ तक साम्य की आकांक्षा होगी। वह वस्तु मेरी होकर रहे—इसी में संघर्ष और कलह होता है। परंतु सेवा और सुकृत में संघर्ष नहीं हो सकता। हम, तुम, सौ आदमी सच बोलें—धर्माचरण करें, उपासना करें, लोगों के दुःख निवारण करें, इसमें कोई झगड़ा नहीं है। परंतु इस वस्तु को मैं लूँ या तुम, यह झगड़े का विषय हो सकता है, क्योंकि एक वस्तु का उपयोग एक समय में प्रायः एक ही मनुष्य कर सकता है। गाना हो रहा हो, आकाश में तारे खिले हों, फूलों के सुवास से लदी समीर बह रही हो, इनके सुख को युगपत् हजारों व्यक्ति ले सकते हैं। काव्यपाठ से मुझको, जो आनंद होता है वह आपके आनंद को कम नहीं करता। इसलिए प्राचीन आचार्यों ने धर्म की दीक्षा दी थी। आज भी अध्यापक को, चाहे उसका विषय गणित हो या भूगोल, इतिहास हो या तर्कशास्त्र, अपने शिष्यों में धर्म की प्रवृत्ति उत्पन्न करनी चाहिए। धर्म का तात्पर्य पूजा-पाठ नहीं है। धर्म उन सब कामों की समष्टि का नाम है जो कल्याणकारी है। अपना कल्याण समाज के कल्याण से पृथक् नहीं हो सकता। मनुष्य के बहुत से ऐसे गुण हैं जिनका विकास समाज में ही रहकर होता है और बहुत से ऐसे भोग और सुख हैं जो समाज में ही प्राप्त हो सकते हैं। इसलिए समाज को ध्यान में रखकर ही धर्म का आदेश होता है, परंतु हमारे समाज में केवल मनुष्य नहीं हैं। हम जिस समाज के अंग हैं उसमें देव भी हैं, पशु भी हैं, मनुष्य भी। इन सबका हम पर प्रभाव पड़ता है, सबका हमारे ऊपर ऋण है, इसलिए सबके प्रति हमारा कर्तव्य है। हमको इस प्रकार रहना है कि

हमारे पूर्वज संस्कृति का जो प्रकाश हमारे लिए छोड़ गए हैं उनका लोप न होने पाए — हमारे पीछे आनेवालों तक वह पहुँच जाय। इसलिए हमारे कर्तव्यों की डोर पितरों से लेकर वंशजों तक पहुँचती है। इसी विस्तृत कर्तव्य-राशि को धर्म कहते हैं। आज सब अपने-अपने अधिकारों के लिए लड़ते हैं। इस झगड़े का अंत नहीं हो सकता। यदि धर्मबुद्धि जगायी जाय और सब अपने-अपने कर्तव्यों में तत्पर हो जायें तो विवाद की जड़ ही कट जाय और सबको अपने उचित अधिकार स्वतः प्राप्त हो जायें, और लोग हमारे साथ कैसा व्यवहार करते हैं — इसकी ओर कम और हम खुद औरों के साथ कैसा आचरण करें — इसकी ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

परंतु इस बुद्धि की जड़ तभी दृढ़ हो सकती है, जब चित्त में सत्य के लिए निर्बाध प्रेम हो। सभी शास्त्र इस प्रेम को उत्पन्न कर सकते हैं, पर शर्त यह है कि ज्ञान औषध की घूँट की भाँति ऊपर से न पिला दिया गया हो। सत्य को धारण करने के लिए अनुसंधान और आलोचना की बुद्धि का उद्बोधन होना चाहिए। यह बुद्धि निर्भयता के वातावरण में ही पनप सकती है। अध्यापक को यथाशक्य यह वातावरण उत्पन्न करना है।

इससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि अध्यापक को अपने छात्र में कैसा चरित्र विकसित करने का प्रयत्न करना चाहिए। अच्छे उपाध्याय के निकट पढ़ा हुआ स्नातक सत्य का प्रेमी और खोजी होगा। उसके चित्त में जिज्ञासा-ज्ञान का आदर होगा और हृदय में नम्रता अनसूया प्राणिमात्र के लिए सौहार्द। वह तपस्वी, संयमी और परिश्रमी होगा, सौंदर्य का उपासक होगा और हर प्रकार के अन्याय, अत्याचार, और कदाचित्त का निर्मम विरोधी होगा। धर्म और त्याग उसके जीवन की प्रबल प्रेरक शक्तियाँ होंगी। उसका सदैव यह प्रयत्न होगा कि यह पृथ्वी अधिक सभ्य और संस्कृत हो, समाज अधिक उन्नत हो। इसका तात्पर्य यह नहीं कि सब संन्यासी होंगे। गृहस्थ पर धर्म का भार संन्यासी से कम नहीं होता। व्यापार, शासन, कुटुंब के क्षेत्रों में भी धर्म का स्थान है। यह भी दावा नहीं किया जा सकता कि इन लोगों में राग-द्वेष का नितांत अभाव हो जाएगा, कोई दुराचारी होगा ही नहीं। अध्यापक और समाज प्रयत्न-मात्र कर सकते हैं। इस प्रयत्न का इतना परिणाम तो निःसंदेह होगा कि बहुत से लोग ठीक राह पर लग जाएँगे और पुरुषार्थ को पहचानने लगेंगे। पथभ्रष्ट भी होंगे, गिरेंगे भी, पर अपनी भूलों पर आप ही पश्चात्ताप करेंगे और इन गलतियों की सीढ़ी बनाकर आत्मोन्नति करेंगे। भूल करना बुरा नहीं है, भूल को भूल न समझना ही बड़ा दुर्भाग्य है।

यह मानी हुई बात है कि अकेला अध्यापक ऐसा मनोभाव नहीं उत्पन्न कर सकता। उसको सफलता तभी मिल सकती है जब समाज उसकी सहायता करे। जिस प्रदेश में कलह मचा रहता हो, जिस समाज में गरीब-अमीर, ऊँच-नीच की विषमता पुकार-पुकार कर द्वंद्व और प्रतियोगिता को प्रोत्साहन दे रही हो, जिस राष्ट्र की नीति परस्वत्वापहरण और शोषण पर खड़ी हो उसमें अध्यापक अकेले भला क्या करें? जिन घरों में दाल-रोटी का ठिकाना न हो, पिता मद्यप और माता स्वैरिणी हो, माँ-बाप में मार - पीट, गाली - गलौज मची रहती हो, उसके बच्चों को तो पालने ही में मानस-विष दे दिया जाता है। तंग गलियों और गंदे घरों में रहनेवाले जो छोटे वय से अश्लीलता और अभद्रता में ही पले हैं, सौंदर्य को जल्दी नहीं समझ पाते। ऐसी दशा में अध्यापक को दोष देना अन्याय है। फिर

भी अध्यापक परिस्थितियों को दोष देकर बैठा नहीं रह सकता। उसको तो अपना कर्तव्य-पालन करना ही है, सफलता कम हो या अधिक।

साधारणतः शिक्षक योगी नहीं होता, पर उसका भाव वही होना चाहिए जो किसी योगी का अपने शिष्य के प्रति होता है— “अनेक शरीरों में भ्रमते हुए आज इसने नर देह पाई है और मेरे पास छात्र रूप में आया है। यदि मैं इसको ठीक मार्ग पर लगा सका, इसके चरित्र के यथोचित विकास प्राप्त करने में बल जुटा सका, तो समाज का भला होगा और इसका न केवल ऐहिक वरन् आमुष्मिक कल्याण होगा। यदि इसे आगे शरीर धारण करना भी पड़ा तो वह जन्म इस जन्म से ऊँचे होंगे। इस समय वह बात-बात में परिस्थितियों से अभिभूत हो जाता है। इसकी स्वतंत्र आत्मा प्रतिक्षण अपने बंधनों को तोड़ना चाहती है, पर ऐसा कर नहीं पाती। यदि इसकी बुद्धि को शुद्ध किया जाय और क्षुद्र वासनाओं से ऊपर उठाया जाय, तो आत्मा परिस्थितियों पर विजय पाने में समर्थ होने लगेगी और इसको अपने ज्ञान-शक्ति आनंदमय स्वरूप का आभास मिलने लगेगा। इस प्रकार वह अपने परम पुरुषार्थ को सिद्ध करने का अधिकारी बन सकेगा।” इस भावना से जो अध्यापक प्रेरित होगा वह अपने शिष्य के कामों को उसी दृष्टि से देखेगा जिससे बड़ा भाई अपने घुटने के बल चलनेवाले छोटे भाई की चेष्टाओं को देखता है। उसकी भूलों को तो ठीक करना ही होगा, परन्तु सहानुभूति और प्रेम के साथ।

यह आदर्श बहुत ऊँचा है, पर अध्यापक का पद भी कम ऊँचा नहीं है। जो वेतन का लोलुप है और वेतन की मात्रा के अनुसार ही काम करना चाहता है उसके लिए इसमें जगह नहीं है। अध्यापक का जो कर्तव्य है उसका मूल्य रुपयों में नहीं आँका जा सकता। किसी समय जो शिक्षक होता था, वही धर्म-गुरु और पुरोहित भी होता था और जो बड़ा विद्वान् और तपस्वी होता था, वही इस भार को उठाया करता था। शिष्य को ब्रह्म-विद्या का पात्र और यजमान को दिव्यलोकों का अधिकारी बनाना सबका काम नहीं है। आज न वह धर्म-गुरु रहे न वह पुरोहित। पर क्या हम शिक्षक भी इसीलिए कर्तव्यच्युत हो जाएँ ? हमको तो अपने सामने वही आदर्श रखना चाहिए और अपने को उस दायित्व का बोझ उठाने योग्य बनाने का निरंतर अथक प्रयत्न करना चाहिए।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

- डॉ० संपूर्णानंद का जन्म कब हुआ था ?  
(क) 1870 ई० (ख) 1880 ई० (ग) 1890 ई० (घ) 1809 ई०
- डॉ० संपूर्णानंद का जन्म स्थान कहाँ है ?  
(क) वाराणसी (ख) प्रयाग (ग) कानुपर (घ) लखनऊ
- ‘मर्यादा’ और ‘टुडे’ पत्रिका का संपादन किसने किया है ?  
(क) भारतेन्दु (ख) संपूर्णानंद (ग) सरदारपूर्ण सिंह (घ) जयशंकर प्रसाद

4. डॉ० संपूर्णानंद उ० प्र० के मुख्यमंत्री कब बने ?  
(क) 1950 ई० (ख) 1954 ई० (ग) 1960 ई० (घ) 1963 ई०
5. डॉ० संपूर्णानंद का देहावसान कब हुआ था ?  
(क) 1969 ई० (ख) 1959 ई० (ग) 1949 ई० (घ) 1939 ई०
6. 'शिक्षा का उद्देश्य' निबंध डॉ० संपूर्णानंद के किस कृति से लिया गया है ?  
(क) चिद्विलास (ख) समाजवाद (ग) भाषा की शक्ति (घ) भारत के देशी-राष्ट्र

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. लेखक के विचार से मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ क्या है ?
2. शिक्षा किस प्रकार चरित्र-निर्माण में सहायक होती है ? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।
3. पठित निबंध के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
4. 'धर्म' की व्यापकता को लेखक ने किस प्रकार स्पष्ट किया है ?
5. डॉ० संपूर्णानंद का जीवन परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
6. डॉ० संपूर्णानंद का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
7. 'शिक्षा का उद्देश्य' पाठ का सारांश लिखिए।
8. "मनुष्य को पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है," इस कथन से आप कहाँ तक सहमत और असहमत हैं ?

## III. दिये गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ संबंध है। यह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुंबिक व्यवस्था का ब्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकराएँगे।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पुरुषार्थ किस प्रकार का विषय है ?

(iv) दर्शन और पुरुषार्थ का संबंध किससे है ?

(v) दार्शनिक मत प्रत्येक समाज को क्यों स्वीकार करना चाहिए ?

(ख) आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनंत ज्ञान, शक्ति और आनंद का भंडार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनंद भी होता है। परंतु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है।



- (i) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (ii) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
- (iii) उपर्युक्त गद्यांश में किसका वर्णन किया गया है ?
- (iv) उपर्युक्त गद्यांश में आनंद की कुंजी किसे बताया गया है ?
- (v) आत्मा को क्या माना गया है ?
- (ग) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परंतु इतना किया जा सकता है—और यही समाज और अध्यापक का कर्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) योगाभ्यास किसका मुख्य साधन है ?
- (iv) अध्यापक और समाज का क्या कर्तव्य है ?
- (v) योगाभ्यास सिखाने का दायित्व किसका है ?
- (घ) यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है। निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) अध्यापक का प्रमुख कर्तव्य क्या है ?
- (iv) एकाग्रता किसकी कुंजी है ?
- (v) उपर्युक्त गद्यांश के अनुसार करुणा क्या है ?
- (ङ) चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इंद्रियों के बंधन ढीले पड़ गए होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कमाद्दीपन के लिए किया जाता है, परंतु वह शांत रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक का कर्तव्य है कि छात्र में सौंदर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न



करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौंदर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से प्रयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौंदर्य की अनुभूति नहीं होती। सौंदर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) उपर्युक्त गद्यांश में किसके महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है ?
- (iv) उपर्युक्त अवतरण में कला क्या है ?
- (v) छात्र में सौंदर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करना किसका कर्तव्य है ?

#### IV. भाषा के रंग :

- (क) निम्नलिखित पदों का समास-विग्रह कीजिए और समास का नाम लिखिए —  
पथभ्रष्ट, पाठशाला, अभीष्ट, यथोचित, प्रत्येक
- (ख) निम्नलिखित शब्दों का विलोम लिखिए—  
बुरा, मूर्ख, शाश्वत, सफलता, अपूर्णता, न्यूनतम
- (ग) निम्नलिखित शब्दों में संधि विच्छेद करते हुए संधि का नाम बताइए—  
योगाभ्यास, प्रत्यक्ष, यथोचित, सर्वोपरि, कामोद्दीपन।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

आज के परिप्रेक्ष्य में अध्यापक और विद्यार्थी के संबंधों पर टिप्पणी लिखिए।

### शब्दार्थ

**पुरुषार्थ**—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। **प्रतीयमान**—जिससे प्रतीत हो रही हो, जान पड़ता हुआ। **मार्क्सवाद**—काल मार्क्स के समाज दर्शन पर आधारित सिद्धांत। **संश्रय**—आधार, आश्रय। **अविद्यावशात्**—अज्ञान के कारण। **आत्मसाक्षात्कार**—खुद को जानना समझना। **दृश्यमान**—जो देखा जा रहा हो, दिखाई देने वाला। **मुदिता**—हर्ष, आनंद। **निष्कामिता**—सब प्रकार की कामना या वासना से रहित, जो बिना किसी कामना से किया जाए। **परार्थ साधन**—परोपकार। **लोकसंग्रह**—लोक कल्याण या जनता की सेवा। **विरत करना**—हटाना। **युगपत्**—साथ-साथ। **समष्टि**—संप्रभुता, संपूर्णता। **अनसूया**—दूसरे के गुणों में दोष ढूँढ़ने की वृत्ति का न होना या ईर्ष्या का अभाव। **स्वैरिणी**—स्वेच्छाचारिणी। **ऐहिक**—इस लोक से संबंधित। **आमुष्मिक**—दूसरे लोक से संबंध रखने वाला। **अभिभूत**—वश में किया हुआ, आक्रांत। **घनिष्ठ**—गहरा। **कौटुंबिक**—पारिवारिक। **आचारावलि**—आचारों का समूह। **श्रेयस्कर**—उचित। **अभिलषित**—इच्छित, वांछित। **कर्मोद्दीपन**—काम को बढ़ाना।

# राय कृष्णदास

प्रेमचंद के समकालीन कहानीकार गद्यगीत लेखक राय कृष्णदास का जन्म सन् 1892 ई० में वाराणसी में हुआ था। उनके पिता का नाम राय प्रह्लाददास था। उनका उपनाम 'नेही' था। उनकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई, तदनंतर स्कूलों में उन्होंने शिक्षा पाई। उनकी काव्य में रुचि बचपन से ही थी। साथ ही चित्रकला, मूर्तिकला एवं पुरातत्व में भी उनकी विशेष रुचि थी। वे ललित कला अकादमी के सदस्य भी रहे हैं। वे प्रसाद जी के घनिष्ठ मित्रों में से एक थे। वे भारती भंडार (साहित्य प्रकाशन संस्थान) और 'भारतीय कला भवन' के संस्थापक भी रहे। उन्हें सन् 1980 ई० में भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से सम्मानित किया गया और सन् 1985 ई० में इनका देहावसान हो गया था।



(सन् 1892—1985 ई.)

गद्य-गीतों में भावुकता उनकी शैली की एक सजीव विशेषता है। छायावादी रागात्मकता इनके गद्य-गीतों की जान है। मानवीय भावनाओं का भावुक एवं कोमल पक्ष उनकी रचनाओं में विशेष रूप से चित्रित हुआ है।

इन साहित्यिक रुचियों के अतिरिक्त शोधपरक कार्यों के लिए मूल रचनाओं की प्रामाणिक हस्त प्रतियाँ प्राप्त करना, नए लेखकों की मूल पांडुलिपियों का संग्रह करना, प्राचीन चित्र और मूर्तियों को संचित करना आदि में भी उनकी विशेष रुचि दिखती है। 'भारत की चित्रकला' और 'भारतीय मूर्तिकला' उनके कला-विषयक मौलिक ग्रंथ हैं। उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में 'साधना', 'छाया पथ', 'संलाप और प्रवाल' मुख्य गद्य-काव्य हैं। 'भावुक' और 'ब्रजरज' उनके काव्य-ग्रंथ हैं तथा अनाख्या सुधांशु गल्प हैं।

राय कृष्णदास भारतीय कला के पारखी और साहित्य के प्रमुख साधक थे। भारतीय साहित्य में उन्हें हिंदी के प्रतिनिधि कहानीकार के रूप में भी गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। उनकी कहानियों में भारतीय जीवन के सामाजिक व्यंग एवं सरसता दोनों समान रूप से विद्यमान हैं। भावुक लेखक होने के कारण उनके शिल्प में कथ्य और कलात्मक रचना की अपेक्षा आदर्श और यथार्थ के संघर्ष की अच्छी झाँकियाँ विद्यमान हैं।

उनके साहित्यिक विचार बहुत सरल और सात्विक हैं। वे उक्ति-वैचित्य के भी प्रेमी थे। कोमल भावनाओं को सजीव शब्दों में प्रकट करना उनकी गद्य-शैली की प्रमुख विशेषता है। उनकी गद्य-शैली

भावात्मक, सांकेतिक और कवित्वपूर्ण है। न तो उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का आग्रह है और न ही बोलचाल के सामान्य शब्दों की उपेक्षा। इसी प्रकार उनके वाक्य-विन्यास में भी कोई जटिलता नहीं है। उन्होंने संस्कृत शब्दों के साथ-साथ उर्दू के व्यावहारिक शब्दों का भी प्रयोग किया है। मीरा के गीतों के समान भावुक हृदय की सहज अनुभूतियाँ उनके गीतों में प्रकट हुई हैं। इस प्रकार वे हिंदी साहित्य के उत्कृष्ट गद्य लेखक के साथ एक काव्य-सर्जक के रूप में भी प्रसिद्ध रहे।

प्रस्तुत पाठ 'आनंद की खोज', 'पागल पथिक', राय कृष्णदास द्वारा रचित 'साधना' गद्य-गीत से लिया गया है। इसमें लेखक ने बताया है कि आनंद का स्रोत अपने अंदर ही विद्यमान है। प्रायः लोग आनंद की खोज वस्तु जगत् में करते हैं। उनकी यह खोज न जाने कितने समय से चल रही है लेकिन एक पल के लिए भी मनुष्य अपने अंदर देख ले तो निश्चित रूप से उसे आनंद के अक्षय स्रोत का पता लग जाएगा। मनुष्य अशेष सृष्टि के साथ ज्यों ही आत्मीय संबंध स्थापित कर लेता है त्यों ही उसे अपने सही स्वरूप का बोध हो जाता है। इस संसार का प्रत्येक व्यक्ति एक भ्रांत पथिक है। वह अशेष सुख और आनंद की तलाश में है। उसकी तलाश निरंतर जारी है। लेकिन वह पूर्ण सुख और आनंद की खोज के लिए जिस कल्पना लोक के स्वप्न रचता है, उस रचना का मुख्याधार यही वस्तु जगत् है। हम वस्तुजगत् के आधार पर ही कल्पना करते हैं। हमारी कल्पना समाज एवं बाह्य परिवेश से निरपेक्ष नहीं होती। अतः दूसरे लोक की कल्पना करते समय इस जगत् से कट जाना भ्रांति है। सच्चाई तो यह है कि इस जागृति के भीतर ही हमें पूर्ण सुख और आनंद की प्राप्ति हो सकती है, लेकिन इसके लिए हमें अपने सही स्वरूप को पहचानने की आवश्यकता है।



# आनंद की खोज, पागल पथिक

## आनंद की खोज

आनंद की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा ? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चंद्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।

मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ ?

मुझे यह सोचकर अचरज होता कि आनंद-कंद-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनंद का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनंद के बदले में रुदन और शोच को परिपोषित कर रहा था।

अन्त को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा—आनंद, आनंद, कहाँ है आनंद! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किंतु मेरा आंतरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्मांड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा—क्या कभी अपने-आप में भी देखा था ? मैं अवाक् था।

सच तो यह है। जब मैंने—उसी विश्व के एक अंश—अपने-आप तक में न खोजा था तब मैंने यह कैसे कहा कि समस्त सृष्टि छान डाली ? जो वस्तु मैं ही अपने-आपको न दे सका वह भला दूसरे मुझे क्यों देने लगे ?

परंतु, यहाँ तो जो वस्तु में अपने-आपको न दे सका था वह मुझे अखिल ब्रह्मांड से मिली, जो मुझे अखिल ब्रह्मांड से न मिली थी वह अपने-आप में मिली।

## पागल पथिक

‘पथिक’—मैंने पूछा—“तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो ? तुम्हारी यात्रा तो लंबी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त के आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है ?”

उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया—“बंधु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौंदर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किंतु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गई है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।”

मैंने सखेद कहा, “हाय! तुम भारी भूल में पड़े हो। भला इस विश्व-मंडल के बाहर तुम जा कैसे सकते हो ? तुम जहाँ से चलोगे फिर वहीं पहुँच जाओगे। यह तो घटाकार न है। फिर, तुम उस स्थान की कल्पना तो इसी आदर्श पर करते हो और जब तुम्हें इस मूल ही में सुख नहीं मिलता तब अनुकरण में उसे कैसे पाओगे ? मित्र, यहाँ तो सुख के साथ दुःख लगा है और उससे सुख को अलग कर लेने के उद्योग में भी एक सुख है। जब उसे ही नहीं पा सकते तब वहाँ का निरंतर सुख तो तुम्हें एक अपरिवर्तनशील बोझ, नहीं यातना हो जाएगी। अरे, बिना नव्यता के सुख कहाँ ? तुम्हारी यह कल्पना और संकल्प नितांत मिथ्या और निस्सार है, और इसे छोड़ने ही में तुम्हें इतना सुख मिलेगा कि तुम छक जाओगे।”

परंतु उसने मेरी एक न सुनी और अपनी राम-पोटरिया उठाकर चलता बना।

## अभ्यास

### I. निम्नांकित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. राय कृष्णदास का जन्म कब हुआ था—  
(क) 1829 ई० (ख) 1872 ई० (ग) 1892 ई० (घ) 1896 ई०
2. राय कृष्णदास को पद्य-विभूषण की उपाधि किस सन् में प्राप्त हुई थी—  
(क) 1880 ई० (ख) 1885 ई० (ग) 1890 ई० (घ) 1895 ई०
3. भारतीय कला भवन के संस्थापक के रूप में किसे जाना जाता है—  
(क) जयशंकर प्रसाद (ख) हरिवंशराय बच्चन (ग) राय कृष्णदास (घ) भगवानदास
4. ‘भारत की चित्रकला’ एवं ‘भारतीय मूर्तिकला’ के लेखक कौन हैं ?  
(क) रामधारी सिंह ‘दिनकर’ (ख) रायकृष्णदास (ग) मुक्तिबोध (घ) केशवदास
5. ‘भावुक’ और ‘ब्रजराज’ किसके काव्य-ग्रंथ हैं ?  
(क) राम कृष्णदास (ख) धूमिल (ग) केशवदास (घ) नागार्जुन

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. रायकृष्णदास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. रायकृष्णदास का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
3. ‘आनंद की खोज, पागल पथिक’ पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
4. गद्य-गीत से आप क्या समझते हैं ? एक श्रेष्ठ गद्य-गीत की विशेषताओं को ढूँढ़कर लिखिए।
5. पागल पथिक का गंतव्य क्या था ?
6. आनंद की अनुभूति लेखक को किस स्थिति में हुई ?
7. गद्य-गीत और कविता में मुख्य अंतर क्या है ?

### III. दिए गए पद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) आनंद की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा ? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चंद्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।

मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ ?

मुझे यह सोचकर अचरज होता कि आनंद-कंद-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनंद का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनंद के बदले में रुदन और शोच को परिपोषित कर रहा था।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पथिक ने अपनी तुलना किससे की है ?

(iv) पथिक ने आनंद की खोज में कहाँ-कहाँ भ्रमण किया ?

(v) पथिक को आनंद के बदले क्या प्राप्त हुआ ?

(ख) अंत को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा—आनंद, आनंद, कहाँ है आनंद! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किंतु मेरी आंतरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्मांड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा—क्या कभी अपने-आप में भी देखा था ? मैं अवाक् था।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) लेखक किस बात से अवाक् था ?

(iii) आनंद का स्रोत कहाँ है ? लेखक को इस बात का पता कैसे चला ?

(iv) पथिक ने किसकी खोज में अपना जीवन व्यर्थ गंवाया ?

(v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(ग) 'पथिक'—मैंने पूछा—“तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो ? तुम्हारी यात्रा तो लंबी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त से आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है ?”

(i) उपर्युक्त गद्यांश का लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) पथिक किसका प्रतीक है ?

(iii) पथिक का शरीर सूखकर क्यों काँटा हो रहा है ?

(iv) पथिक की यात्रा का गंतव्य क्या है ?

(v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(घ) उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया—“बन्धु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौंदर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किंतु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गई है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।”

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) पथिक कौन-सा मार्ग भूल गया है ?
- (iv) घूम-फिरकर बार-बार पथिक कहाँ आ जाता है ?
- (v) वह कौन-सा स्थान है जहाँ दुःख का नामोनिशान नहीं है ?

#### IV. भाषा के रंग :

(क) निम्नलिखित शब्दों का अर्थ लिखकर वाक्य बनाइए—

विदीर्ण, स्तब्ध, अचरज, अणु, अतीव, दैन्य, बंधु

(ख) पाठ में आये हुए तद्भव एवं तत्सम शब्दों को लिखिए।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

अपने पुस्तकालय से किसी अन्य गद्यगीत को लिखकर कक्षा में वाचन कीजिए।

### शब्दार्थ

कलपते हुए—विलाप करते हुए। आनंद-कंद-मूलक—आनंद के भंडार को देनेवाली। विश्ववल्लरी—संसाररूपी लता। स्तब्ध—गतिहीन। ब्रह्मांड—संपूर्ण विश्व। अवाक्—वाणी रहित, मूक, आश्चर्य से चुप। विदीर्ण हृदय—टूटा, शोकग्रस्त। साख भर रहा है—गवाही दे रहा है। सखेद—दुख अथवा विवशता के साथ। घटाकार—घड़े के आकार का। नव्यता—नवीनता। नितांत—सर्वथा, पूर्णतः। सिर पर हाथ रखनेवाला—ढाढ़स बँधाने वाला, सहायता करने वाला।

# राहुल सांकृत्यायन

राहुल सांकृत्यायन का जन्म सन् 1893 ई० में उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ के पंदहा नामक गाँव (ननिहाल) में हुआ। उनका पैतृक गाँव कनैला था। उनका मूल नाम कैदारनाथ पांडे था। उनकी माता का नाम कुलवती और पिता का नाम गोवर्धन पांडे था। उनकी शिक्षा आगरा और लाहौर में हुई। सन् 1930 ई० में उन्होंने श्रीलंका जाकर बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया तब से उनका नाम राहुल सांकृत्यायन हो गया। बौद्ध होने के पूर्व वे 'दामोदर स्वामी' के नाम से भी पुकारे जाते थे। राहुल नाम के आगे सांकृत्यायन इसलिए लगा कि उनका पितृकुल सांकृत्य गोत्रीय है। राहुल जी पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, तिब्बती, चीनी, जापानी, रूसी सहित अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे। उन्हें 'महापंडित' भी कहा जाता है। सन् 1963 ई० में उनका देहांत हो गया।



(सन् 1893–1963 ई.)

राहुल सांकृत्यायन ने उपन्यास, कहानी, आत्मकथा, यात्रावृत्त, जीवनी, आलोचना, शोध आदि अनेक विधाओं में साहित्य-सृजन किया। इतना ही नहीं उन्होंने अनेक ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद भी किया। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं—'सतमी के बच्चे', 'सिंह सेनापति', 'जययौधेय', 'वोल्गा से गंगा', 'मधुर स्वप्न', 'किन्नर देश में', 'मेरी यूरोप यात्रा', 'मेरी तिब्बत यात्रा', 'घुमकड़शास्त्र', 'दिमागी-गुलामी', 'भागो नहीं बदलो', 'बौद्ध संस्कृति', 'मेरी जीवन यात्रा' (आत्मकथा—दो भाग-1944) आदि। साहित्य के अतिरिक्त दर्शन, राजनीति, धर्म, इतिहास, विज्ञान आदि विभिन्न विषयों पर राहुल जी द्वारा लिखित पुस्तकों की संख्या लगभग 150 है। उन्होंने बहुत सी लुप्तप्राय सामग्री का उद्धार करने का अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

यात्रावृत्त लेखन में उनका स्थान अन्यतम है। उन्होंने घुमकड़ का शास्त्र रचा और उससे होने वाले लाभों का विस्तार से वर्णन करते हुए मंजिल के स्थान पर यात्रा को ही घुमकड़ का उद्देश्य बताया। घुमकड़ से मनोरंजन, ज्ञानवर्धन एवं अज्ञात स्थलों की जानकारी के साथ-साथ भाषा एवं संस्कृति का भी आदान-प्रदान होता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में विभिन्न स्थानों के भौगोलिक वर्णन के अतिरिक्त वहाँ के जन-जीवन की सुंदर झाँकी प्रस्तुत की है।



राहुल जी ने सामान्यतः संस्कृतनिष्ठ, सरल और परिष्कृत भाषा को ही अपनाया है। उनकी भाषा-शैली में कोई बनावटीपन नहीं है। संस्कृत के प्रकांड विद्वान होते हुए भी जनसाधारण की भाषा में लिखने के पक्षपाती थे। उनकी शैली का रूप, विषय और परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। उनकी शैली में वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक, उद्बोधन एवं उद्धरण आदि रूप देखने को मिलते हैं।

प्रस्तुत यात्रावृत्त 'अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा' राहुल की पुस्तक 'घुमक्कड़शास्त्र' से लिया गया है। इसमें इन्होंने घुमक्कड़ी की सीमा किसी शास्त्र से कम नहीं मानी हैं और उसका गौरव शास्त्र के समान ही स्थापित किया है। वैसे तो पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदार के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौंदर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है। संसार में घुमक्कड़ी संकुचित संप्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान और समुद्र की तरह विशाल है। घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चित है। बड़े चिंतक, दार्शनिक और महत्त्वपूर्ण विभूतियों ने घुमक्कड़ी के बल पर ही जनता से संवाद और संबंध स्थापित किए।



## अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा

संस्कृत से ग्रंथ को शुरू करने के लिए पाठकों को रोष नहीं होना चाहिए। आखिर हम शास्त्र लिखने जा रहे हैं, फिर शास्त्र की परिपाटी को तो मानना ही पड़ेगा। शास्त्रों में जिज्ञासा ऐसी चीज के लिए होनी बतलाई गयी है, जो कि श्रेष्ठ तथा व्यक्ति और समाज के लिए परम हितकारी हो। व्यास ने अपने शास्त्र में ब्रह्म को सर्वश्रेष्ठ मानकर उसे जिज्ञासा का विषय बनाया। व्यास-शिष्य जैमिनी ने धर्म को श्रेष्ठ माना। पुराने ऋषियों से मतभेद रखना हमारे लिए पाप की वस्तु नहीं है, आखिर छह शास्त्रों के रचयिता छह आस्तिक ऋषियों में भी आधों ने ब्रह्म को धता बता दिया है। मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ से बढ़कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता। कहा जाता है, ब्रह्मा ने सृष्टि को पैदा, धारण और नाश करने का जिम्मा अपने ऊपर लिया है। पैदा करना और नाश करना दूर की बातें हैं उसकी यथार्थता सिद्ध करने के लिए न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हाँ, दुनिया के धारण की बात तो निश्चय ही न ब्रह्म के ऊपर है, न विष्णु और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया दुःख में हो चाहे सुख में, सभी समय यदि सहारा पाती है तो घुमक्कड़ों की ही ओर से। प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बागवानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथ्वी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

आधुनिक काल में घुमक्कड़ों के काम की बात कहने की आवश्यकता है, क्योंकि लोगों ने घुमक्कड़ों की कृतियों को चुराके उन्हें गला-फाड़कर अपने नाम से प्रकाशित किया, जिससे दुनिया जानने लगी कि वस्तुतः तेली के कोल्हू के बैल ही दुनिया में सब-कुछ करते हैं। आधुनिक विज्ञान में चार्ल्स डारविन का स्थान बहुत ऊँचा है। उसने प्राणियों की उत्पत्ति और मानव-वंश के विकास पर ही अद्वितीय खोज नहीं की, बल्कि सारे विज्ञानों को उससे सहायता मिली। कहना चाहिए कि सभी विज्ञानों को डारविन के प्रकाश में दिशा बदलनी पड़ी। लेकिन, क्या डारविन अपने महान् आविष्कारों को कर सकता था, यदि उसने घुमक्कड़ी का व्रत न लिया होता ?

मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौंदर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती, जोकि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है। अधिक-से-अधिक यात्रा-पाठकों के लिए यही कहा जा सकता है कि दूसरे धंधों की अपेक्षा उन्हें थोड़ा आलोक मिल जाता है और साथ ही ऐसी प्रेरणा भी मिल सकती है, जो स्थायी नहीं तो कुछ दिनों के लिए तो उन्हें घुमक्कड़ बना ही सकती है। घुमक्कड़ क्यों दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है ? इसीलिए कि उसी ने आज की दुनिया को बनाया है। यदि

आदिम-पुरुष एक जगह नदी या तालाब के किनारे गर्म मुल्क में पड़े रहते, तो वह दुनिया को आगे नहीं ले जा सकते थे। आदमी की घुमक्कड़ी ने बहुत बार खून की नदियाँ बहाई हैं, इसमें संदेह नहीं, और घुमक्कड़ों से हम हर्गिज नहीं चाहेंगे कि वे खून के रास्ते को पकड़ें, किंतु अगर घुमक्कड़ों के काफिले न आते-जाते, तो सुस्त मानव-जातियाँ सो जातीं और पशु से ऊपर नहीं उठ पातीं। आदिम घुमक्कड़ों में से आर्यों, शकों, हूणों ने क्या-क्या किया, अपने खूनी पंजों द्वारा मानवता के पथ को किस तरह प्रशस्त किया इसे इतिहास में हम उतना स्पष्ट वर्णित नहीं पाते, किंतु मंगोल-घुमक्कड़ों की करामातों को तो हम अच्छी तरह जानते हैं। बारूद, तोप, कागज, छापाखाना, दिग्दर्शक, चश्मा यही चीजें थीं, जिन्होंने पश्चिम में विज्ञान युग का आरंभ कराया और इन चीजों को वहाँ ले जानेवाले मंगोल घुमक्कड़ थे।

कोलंबस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गई, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आई कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बंद है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गए ? इसलिए कि घुमक्कड़-धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

हाँ, मैं इसे भूलना ही कहूँगा, क्योंकि किसी समय भारत और चीन ने बड़े-बड़े नामी घुमक्कड़ पैदा किए। वे भारतीय घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने दक्षिण पूरब में लंका, बर्मा, मलाया, यवनद्वीप, स्याम, कंबोज, चंपा, बोर्नियों और सेलीबीज ही नहीं, फिलीपाईन तक धावा मारा था और एक समय तो जान पड़ा कि न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया भी बृहत्तर भारत के अंग बननेवाले हैं। लेकिन कूप-मंडूकता तेरा सत्यानाश हो। इस देश के बुद्धों ने उपदेश करना शुरू किया कि समुंदर के खारे पानी और हिंदू धर्म में बड़ा बैर है, उसे छूने मात्र से वह नमक की पुतली की तरह गल जाएगा। इतना बतला देने पर क्या कहने की आवश्यकता है कि समाज के कल्याण के लिए घुमक्कड़ धर्म कितनी आवश्यक चीज है ? जिस जाति या देश ने इस धर्म को अपनाया, वह चारों फलों का भागी हुआ और जिसने उसे दुराया, उसको नरक में भी ठिकाना नहीं। आखिर घुमक्कड़ धर्म को भूलने के कारण ही हम सात शताब्दियों तक धक्का खाते रहे, ऐरे-गैरे जो भी आए, हमें चार लात लगाते गए।

शायद किसी को संदेह हो मैंने इस शास्त्र में जो युक्तियाँ दी हैं, वे सभी तो लौकिक तथा शास्त्र-अग्राह्य हैं। अच्छा तो धर्म से प्रमाण लीजिए। दुनिया के अधिकांश धर्मनायक घुमक्कड़ रहे। धर्माचार्यों में आचार-विचार, बुद्धि और तर्क तथा सहृदयता में सर्वश्रेष्ठ बुद्ध घुमक्कड़-राज थे। यद्यपि वह भारत से बाहर नहीं गए लेकिन वर्ष के तीन मासों को छोड़कर एक जगह रहना वह पाप समझते थे। वह अपने-आप ही घुमक्कड़ नहीं थे, बल्कि आरम्भ में ही अपने शिष्यों से उन्होंने कहा था—‘चरथ भिक्खवे,

‘चरथ’ जिसका अर्थ है—‘भिक्षुओं! घुमक्कड़ी करो।’ बुद्ध के भिक्षुओं ने अपने गुरु की शिक्षा को कितना माना, क्या इसे बताने की आवश्यकता है ? क्या उन्होंने पश्चिम में मकदूनिया तथा मिस्र से पूरब में जापान तक, उत्तर में मंगोलिया से लेकर दक्षिण में बाली और बांका के द्वीपों तक रौंदकर रख नहीं दिया ? जिस बृहत्तर भारत के लिए हरेक भारतीय को उचित अभिमान है, क्या उसका निर्माण इन्हीं घुमक्कड़ों की चरण-धूलि ने नहीं किया ? केवल बुद्ध ने ही अपनी घुमक्कड़ी से प्रेरणा नहीं दी, बल्कि घुमक्कड़ों का इतना जोर बुद्ध से एक-दो शताब्दियों पूर्व भी था, जिसके कारण ही बुद्ध जैसे घुमक्कड़-राज इस देश में पैदा हो सके। उस वक्त पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ तक जम्बू-वृक्ष की शाखा ले, अपनी प्रखर प्रतिभा का जौहर दिखातीं, बाद में कूप-मंडूको को पराजित करती सारे भारत में मुक्त होकर विचरण करती थीं।

कई-कई महिलाएँ पूछती हैं—क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती हैं, क्या उनको भी इस महाव्रत की दीक्षा लेनी चाहिए ? इसके बारे में तो अलग अध्याय ही लिखा जानेवाला है, किंतु यहाँ इतना कह देना है कि घुमक्कड़-धर्म ब्राह्मण-धर्म जैसा संकुचित धर्म नहीं है जिसमें स्त्रियों के लिए स्थान न हो। स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं, जितना पुरुष। यदि वे जन्म सफल करके व्यक्ति और समाज के लिए कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथों इस धर्म को स्वीकार करना चाहिए। घुमक्कड़ी धर्म छुड़ाने के लिए ही पुरुष ने बहुत से बंधन नारी के रास्ते लगाए हैं। बुद्ध ने सिर्फ पुरुषों के लिए घुमक्कड़ी करने का आदेश नहीं दिया, बल्कि स्त्रियों के लिए भी उनका यही उपदेश था।

भारत के प्राचीन धर्मों में जैन धर्म भी है। जैन धर्म के प्रतिष्ठापक श्रमण महावीर कौन थे ? वह भी घुमक्कड़-राज थे। घुमक्कड़-धर्म के आचरण में छोटी-से-बड़ी तक सभी बाधाओं और व्याधियों को उन्होंने त्याग दिया था—घर-द्वार और नारी-संतान ही नहीं, वस्त्र का भी वर्जन कर दिया था। ‘करतलभिक्षा तरुतल वास’ तथा दिग्-अम्बर को उन्होंने इसलिए अपनाया था कि निर्द्वन्द्व विचरण में कोई बाधा न रहे। श्वेताम्बर-बंधु दिगंबर कहने के लिए नाराज न हों। वस्तुतः हमारे वैषालिक महान् घुमक्कड़ कुछ बातों में दिगंबरों की कल्पना के अनुसार थे और कुछ बातों में श्वेतांबरों के उल्लेख के अनुसार। लेकिन इसमें तो दोनों संप्रदायों और बाहर के मर्मज्ञ भी सहमत हैं कि भगवान् महावीर दूसरी, तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ थे। वह आजीवन घूमते ही रहे। वैशाली में जन्म लेकर विचरण करते ही पावा में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दंभी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बँधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलो से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

बुद्ध और महावीर जैसे महापुरुषों की घुमक्कड़ी की बात से यह नहीं मान लेना होगा कि दूसरे लोग ईश्वर के भरोसे गुफा या कोठरी में बैठकर सारी सिद्धियाँ पा गए या पा जाते हैं, यदि ऐसा होता तो शंकराचार्य, जो साक्षात् ब्रह्मस्वरूप थे, क्यों भारत के चारों कोनों की खाक छानते फिरे ? शंकर को

शंकर किसी ब्रह्मा ने नहीं बनाया उन्हें बड़ा बनानेवाला था यही घुमक्कड़ी धर्म। शंकर बराबर घूमते रहे—आज केरल देश में थे तो कुछ ही महीनों बाद मिथिला में और अगले साल काश्मीर या हिमालय के किसी दूसरे भाग में। शंकर तरुणाई में ही शिवलोक सिधार गए, किंतु थोड़े से जीवन में उन्होंने सिर्फ तीन भाष्य ही नहीं लिखे बल्कि अपने आचरण से अनुयायियों को वह घुमक्कड़ी का पाठ पढ़ा गए कि आज भी उनके पालन करनेवाले सैकड़ों मिलते हैं। वास्कोडिगामा के भारत पहुँचने से बहुत पहिले शंकर के शिष्य मास्को और यूरोप तक पहुँचे थे। उनके साहसी शिष्य सिर्फ भारत के चारों ६ ामों से ही संतुष्ट नहीं थे बल्कि उनमें से कितनों ने जाकर वाकू (रूस) में धूनी रमायी। एक ने पर्यटन करते हुए वोल्गा तट पर निज्जीनोवोग्राद के महामेले को देखा। फिर क्या था, कुछ समय के लिए वहीं डट गया और उसने ईसाइयों के भीतर कितने ही अनुयायी पैदा कर लिए जिनकी संख्या अंदर—ही—अंदर बढ़ती इस षताब्दी के आरंभ में कुछ लाख तक पहुँच गई थी।

रामानुज, मध्वाचार्य और दूसरे वैष्णवाचार्यों के अनुयायी मुझे क्षमा करें, यदि मैं कहूँ कि उन्होंने भारत में कूप-मंडूकता के प्रचार में बड़ी सरगमी दिखाई। भला हो, रामानंद और चैतन्य का, जिन्होंने कि पंक के पंकज बनकर आदिकाल से चले आते महान् घुमक्कड़ धर्म की फिर से प्रतिष्ठापना की, जिसके फलस्वरूप प्रथम श्रेणी के तो नहीं, किंतु द्वितीय श्रेणी के बहुत से घुमक्कड़ उनमें पैदा हुए। ये बेचारे वाकू की बड़ी ज्वालामई तक कैसे जाते, उनके लिए तो मानसरोवर तक पहुँचना भी मुश्किल था। अपने हाथ से खाना बनाना, मांस अंडे से छू जाने पर भी धर्म का चला जाना, हाड़-तोड़ सर्दी के कारण हर लघुशंका के बाद बर्फीले पानी से हाथ धोना और हर महाशंका के बाद स्नान करना तो यमराज को निमंत्रण देना होता, इसीलिए बेचारे फूँक-फूँककर ही घुमक्कड़ी कर सकते थे। इसमें किसे उज्र हो सकता है कि शैव हो या वैष्णव, वेदांती हो या सैद्धांती, सभी को आगे बढ़ाया केवल घुमक्कड़-धर्म ने।

महान् घुमक्कड़-धर्म बौद्ध धर्म का भारत से लुप्त होना क्या था कि तब कूप-मंडूकता का हमारे देश में बोलबाला हो गया। सात शताब्दियाँ बीत गई और इन सातों शताब्दियों में दासता और परतंत्रता हमारे देश में पैर तोड़कर बैठ गई यह कोई आकस्मिक बात नहीं थी। लेकिन समाज के अगुओं ने चाहे कितना ही कूप-मंडूक बनाना चाहा, लेकिन इस देश में ऐसे माई के लाल जब तब पैदा होते रहे, जिन्होंने कर्म-पथ की ओर संकेत किया। हमारे इतिहास में गुरु नानक का समय दूर का नहीं है, लेकिन अपने समय के वह महान् घुमक्कड़ थे। उन्होंने भारत भ्रमण को ही पर्याप्त नहीं समझा, ईरान और अरब तक का धावा मारा। घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धिदायिनी नहीं है और निर्भीक तो वह एक नंबर का बना देती है। घुमक्कड़ नानक मक्के की ओर जाके काबा की ओर पैर फैलाकर सो गए, मुल्लो में इतनी सहिष्णुता होती तो आदमी होते। उन्होंने एतराज किया और पैर पकड़कर दूसरी ओर करना चाहा। उनको यह देखकर बड़ा अचरज हुआ कि जिस तरह घुमक्कड़ नानक का पैर घूम रहा है, काबा भी उसी ओर चला जा रहा है। यह है चमत्कार! आज के सर्वशक्तिमान किंतु कोठरी में बंद महात्माओं में है कोई ऐसा, जो नानक की तरह हिम्मत और चमत्कार दिख लाए?

दूसरी शताब्दियों की बात छोड़िए, अभी शताब्दी भी नहीं बीती, इस देश से स्वामी दयानंद को बिदा हुए। स्वामी दयानंद को ऋषि दयानंद किसने बनाया ? घुमक्कड़ी धर्म ने। उन्होंने भारत के अधिकांश भागों का भ्रमण किया, पुस्तक लिखते, शास्त्रार्थ करते वह बराबर भ्रमण करते रहे। शास्त्रों को पढ़कर काशी के बड़े-बड़े पंडित महा-महा-मंडूक बनने में ही सफल होते रहे, इसलिए दयानंद को मुक्त-बुद्धि और तर्क-प्रधान बनाने का कारण शास्त्रों से अलग कहीं ढूँढ़ना होगा। और वह है उनका निरंतर घुमक्कड़ी धर्म का सेवन। उन्होंने समुद्र-यात्रा करने, द्वीप-द्वीपांतरों में जाने के विरुद्ध जितनी थोथी दलीलें दी जाती थीं सबको चिंदी-चिंदी करके उड़ा दिया और बताया कि मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं है, वह जंगम प्राणी है। चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं।

बीसवीं शताब्दी के भारतीय घुमक्कड़ों की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। इतना लिखने से मालूम हो गया होगा कि संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित संप्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, वह केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया। यहूदी पैगंबरों ने घुमक्कड़ी धर्म को भुला दिया, जिसका फल शताब्दियों तक उन्हें भोगना पड़ा। उन्होंने अपनी जान चूल्हे से सिर निकालना नहीं चाहा। घुमक्कड़-धर्म की ऐसी भारी अवहेलना करने वाले की जैसी गति होनी चाहिए, वैसी गति उनकी हुई। चूल्हा हाथ से छूट गया और सारी दुनिया में घुमक्कड़ी करने को मजबूर हुए, जिसने आगे उन्हें मारवाड़ी सेठ बनाया, या यों कहिए कि घुमक्कड़ी धर्म की छींट पड़ जाने से मारवाड़ी सेठ भारत के यहूदी बन गए। जिसने इस धर्म की अवहेलना की उसे रक्त के आंसू बहाने पड़े। अभी इन बेचारों ने बड़ी कुर्बानी के बाद और दो हजार वर्ष की घुमक्कड़ी के तजुर्बे के बल पर फिर अपना स्थान प्राप्त किया। आषा है स्थान प्राप्त करने से वह चुल्हे में सिर रखकर बैठने वाले नहीं बनेंगे। अस्तु! सनातन धर्म से पतित यहूदी जाति को महान पाप का प्रायश्चित और दंड घुमक्कड़ी के रूप भोगना पड़ा, और अब इन्हें पैर रखने का स्थान मिला। आज भारत तना हुआ है। जब बड़े-बड़े स्वीकार कर चुके हैं, तो कितने दिनों तक यह हठधर्मी चलेगी? लेकिन विषयांतर में न जाकर हमें यह कहना था कि यह घुमक्कड़ी धर्म है, जिसने यहूदियों को केवल व्यापार-कुशल, उद्योग-निष्णात ही नहीं बनाया, बल्कि विज्ञान, दर्शन, साहित्य, संगीत सभी क्षेत्रों में चमकने का मौका दिया। समझा जाता था कि व्यापारी तथा घुमक्कड़ युद्ध-विद्या में कच्चे निकलेगे, लेकिन उन्होंने पाँच-पाँच अरबी साम्राज्यों की सारी शेखी को धूल में मिलाकर चारो खाने चित्त कर दिया और सबने नाक रगड़कर उनसे शांति की भिक्षा माँगी।

इतना कहने के बाद कोई संदेह नहीं रह गया कि घुमक्कड़ धर्म से बढ़कर दुनिया में धर्म नहीं है। धर्म भी छोटी बात है, उसे घुमक्कड़ के साथ लगाना 'महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस' वाली बात होगी। घुमक्कड़ होना आदमी के लिए परम सौभाग्य की बात है। यह पंथ अपने अनुयायी को मरने के बाद किसी काल्पनिक स्वर्ग का प्रलोभन नहीं देता, इसके लिए तो कह सकते हैं "क्या खूब सौदा नकद है इस हाथ ले उस हाथ दे।" घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चित है। किन

साधनों से संपन्न होकर आदमी घुमक्कड़ बनने का अधिकारी हो सकता है, यह आगे बतलाया जाएगा, किंतु घुमक्कड़ी के लिए चिंताहीन होना आवश्यक है, और चिंताहीन होने के लिए घुमक्कड़ी भी आवश्यक है। दोनों का अन्योन्याश्रय होना दूषण नहीं भूषण है। घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है? आखिर चिंता-हीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगाएगा ? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं—उसी तरह जैसे काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है। जाति का भविष्य घुमक्कड़ी पर निर्भर करता है। इसलिए मैं कहूँगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़ी व्रत ग्रहण करना चाहिए, इसके विरुद्ध दिए जाने वाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ का समझना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं तो समझना चाहिए कि वह भी प्रह्लाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हितू-बांधव बाधा उपस्थित करते हैं तो समझना चाहिए कि वे दिवांध हैं। यदि धर्माचार्य कुछ उलटा-सीधा तर्क देते हैं तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगों और ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी नेता अपनी कानूनी रुकावटें डालते हैं तो हजारों बार की तजुर्बा की हुई बात है कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ की गति को रोकनेवाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरेवाली राज्य सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आँख में धूल-झोंककर पार कर लिया। मैंने स्वयं एक से अधिक बार किया है। पहली तिब्बत यात्रा में अंग्रेजों, नेपाल राज्य और तिब्बत के सीमा-रक्षकों की आँख में धूल झोंककर जाना पड़ा था।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि यदि कोई तरुण-तरुणी घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा लेता है—यह मैं अवश्य कहूँगा कि यह दीक्षा वही ले सकता है जिसमें बहुत भारी मात्रा में हर तरह का साहस है—तो उसे किसी की बात नहीं सुननी चाहिए, न माता के आँसू बहने की परवाह करनी चाहिए, न पिता के भय और उदास होने की, न भूल से विवाह लायी अपनी पत्नी के रोने-धोने की फ्रिक करनी चाहिए और न किसी तरुणी को अभागे पति के कलपने की। बस, शंकराचार्य के शब्दों में यही समझना चाहिए—“निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः” और मेरे गुरु कपोतराज के वचन को अपना पथ प्रदर्शक बनाना चाहिए—

**“सैर कर दुनिया की गाफिल, जिंदगानी फिर कहाँ?**

**जिंदगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?”**

दुनिया में मनुष्य जन्म एक ही बार होता है और जवानी भी केवल एक ही बार आती है। साहसी और मनस्वी तरुण-तरुणियों को इस अवसर से हाथ नहीं धोना चाहिए। कमर बाँध लो भावी घुमक्कड़ो! संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है।





## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. घुमक्कड़शास्त्र के लेखक का नाम बताइए—  
(क) अज्ञेय (ख) राहुल सांकृत्यायन (ग) रामवृक्ष बेनीपुरी (घ) यशपाल
2. राहुल सांकृत्यायन का जन्म हुआ था—  
(क) 1893 ई० (ख) 1892 ई० (ग) 1891 ई० (घ) 1890 ई०
3. राहुल सांकृत्यायन का मूल नाम क्या था—  
(क) केदारनाथ सिंह (ख) केदारनाथ पांडे  
(ग) केदानाथ अग्रवाल (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
4. 'सतमी के बच्चे' के रचनाकार कौन हैं—  
(क) धर्मवीर भारती (ख) हरिशंकर परसाई (ग) राहुल सांकृत्यायन (घ) धूमिल
5. निम्न में से कौन-सी रचना राहुल सांकृत्यायन की नहीं है—  
(क) सिंह सेनापति (ख) जय यौधेय (ग) वोल्गा से गंगा (घ) चिता के फूल
6. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' लेख राहुल जी की किस रचना से लिया गया है—  
(क) मेरी जीवनयात्रा (ख) मेरी यूरोप यात्रा (ग) घुमक्कड़शास्त्र (घ) बौद्ध संस्कृति
7. जैमिनी किसके शिष्य थे—  
(क) व्यास (ख) रामानंद (ग) शंकराचार्य (घ) रामानुजाचार्य
8. 'आँखों में धूल झाँकना' मुहावरे का अर्थ है—  
(क) प्रेम करना (ख) धोखा देना (ग) क्रोधित होना (घ) भाग जाना
9. 'करतल भिक्षा तरुतल वास' में तरुतल का क्या अर्थ है—  
(क) पेड़ के नीचे (ख) पेड़ के ऊपर (ग) पेड़ की डाली पर (घ) इनमें से कोई नहीं

### II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. राहुल सांकृत्यायन के जीवन परिचय एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. राहुल सांकृत्यायन का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' पाठ का सारांश लिखिए।
4. यात्रा-वृत्तांत गद्य साहित्य की एक विधा है। आपकी इस पाठ्यपुस्तक में कौन-कौन सी विधाएँ हैं ? प्रस्तुत विधा उनसे किन मायनों में अलग है ?
5. लेखक ने घुमक्कड़ी को 'शास्त्र' मानने के लिए क्या तर्क दिए हैं ?
6. लेखक ने घुमक्कड़ को दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति क्यों कहा है ?



7. लेखक ने घुमक्कड़ों में किन गुणों का होना आवश्यक माना है ?
8. घुमक्कड़ी के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता होती है ? संक्षेप में लिखिए।

### III. दिये गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौंदर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
- (ii) यात्रा संबंधी साहित्य के बारे में लेखक के क्या विचार हैं ?
- (iii) उपर्युक्त गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।
- (iv) उपर्युक्त अवतरण में राहुल जी ने क्या सिद्ध करने का प्रयास किया है ?
- (v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(ख) कोलंबस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गई, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आई कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बंद है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गए ? इसलिए कि घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

- (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
- (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
- (iii) पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता किसने खोला ?
- (iv) चीन और भारत अपना झंडा गाड़ने में कहाँ असफल रहे ?
- (v) चीन और भारत किस धर्म से विमुख थे ?

(ग) बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दंभी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बँधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं

तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) 'तेल के बैल' बनने से क्या आशय है ?

(iii) लेखक ने किस बात को अहंकार का सूचक माना है ?

(iv) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(v) आजकल के साधुओं के संबंध में लेखक के क्या विचार हैं ?

(घ) संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित संप्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, वह केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।

(i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) कुछ धर्मों ने यश और महिमा किस कारण से प्राप्त की ?

(iv) घुमक्कड़ धर्म को किस धर्म की संज्ञा दी गई है ?

(v) प्रभु ईसा मसीह एवं उनके अनुयायियों के संदर्भ में लेखक के क्या विचार हैं ?

(ङ) घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है, आखिर चिंताहीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगाएगा ? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं—उसी तरह जैसे काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

(i) उपर्युक्त गद्यांश के शीर्षक एवं लेखक का नाम बताइए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) घुमक्कड़ी में किस तरह का कष्ट होता है ?

(iv) लेखक के अनुसार संसार का सबसे बड़ा सुख क्या है ?

(v) सुख का सबसे बड़ा रूप क्या है ?

#### IV. भाषा के रंग :

1. निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थी शब्द लिखिए —

पाप, आस्तिक, जड़, प्राकृतिक, आदि, वृहत्तर।

2. प्रस्तुत पाठ में उल्लिखित अंग्रेजी और उर्दू के पाँच-पाँच शब्दों को ढूँढ़ कर लिखिए।

### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

आपने भी किसी स्थान की यात्रा अवश्य की होगी। यात्रा के दौरान हुए अनुभवों को लिखकर प्रस्तुत कीजिए।

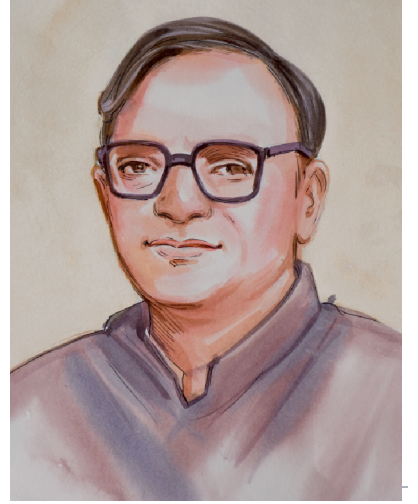
### शब्दार्थ

**परिपाटी**—पद्धति, **जिज्ञासा**—जानने की इच्छा, **छह शास्त्रों (दर्शन में)**—मीमांसा, वेदांत, न्याय, वैशेषिक सांख्य और योग, **छह आस्तिक ऋषि**—छः दर्शनों के रचयिता (जैमिनी, बादरायण, गौतम, कणाद, कपिल और पतंजलि), **करतल शिक्षा**—हाथ में शिक्षा, **मुक्तबुद्धि**—शास्त्रों से स्वतंत्र रहकर सोचने वाला, **स्थावर**—स्थिर, न चलने वाला, **जंगम**—चलने-फिरने वाला, **अन्योन्याश्रय**—एक दूसरे पर निर्भर, **नवीन संस्करण**—आधुनिक रूप, **दिवांध**—दिन में भी अंधे, **रोष**—क्रोध, गुस्सा, **तरुतल**—वृक्ष के नीचे, **वास**—रहना, सोना। **दिगंबर**—दिशाएँ ही जिनके वस्त्र हैं। **काफिले**—समूह, **दिग्दर्शक**—दिशा का बोध कराने वाला। **श्वेतांबर**—सफेद वस्त्रों वाला।



# रामवृक्ष बेनीपुरी

रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के बेनीपुर गाँव में सन् 1902 ई० में हुआ था। माता-पिता का निधन बचपन में ही हो जाने के कारण उनके जीवन के आरंभिक वर्ष कठिनाइयों और संघर्षों में बीते। दसवीं तक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे सन् 1920 ई० में राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़ गए। वे साहित्य सेवा के क्षेत्र में पत्रकारिता के माध्यम से आए। उन्होंने अपने संगठनात्मक तथा प्रचारात्मक कार्यों द्वारा हिंदी की सेवा की। उनका नाम 'बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन' के संस्थापकों में लिया जाता है। वे सन् 1946 ई० से 1950 ई० तक उसके प्रधानमंत्री तथा 1951 ई० में सभापति रहे हैं। 1929 ई० में उन्होंने अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रचारमंत्री का भी कार्य किया और सन् 1930 से 1942 ई० तक उनका जीवन जेल में बीता। उनकी मृत्यु सन् 1968 ई० में हुई।



(सन् 1902—1968 ई.)


पंद्रह वर्ष की अवस्था में ही उनकी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगीं। वे बेहद प्रतिभाशाली पत्रकार थे। उन्होंने अनेक दैनिक, साप्ताहिक एवं मासिक पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया। जिनमें 'तरुण भारत', 'किसान मित्र', 'योगी' एवं 'जनता' साप्ताहिक-पत्र तथा 'बालक', 'युवक', 'हिमालय', 'नई धारा' आदि मासिक-पत्र उल्लेखनीय हैं।

गद्य की विविध विधाओं में उनके लेखन को व्यापक प्रतिष्ठा मिली। उनका पूरा साहित्य बेनीपुरी रचनावली के आठ खंडों में प्रकाशित है। उनकी रचना-यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव हैं — 'पतितों के देश में' (उपन्यास); 'चिता के फूल' (कहानी); 'अंबपाली' (नाटक); 'माटी की मूरतें' (रेखाचित्र); 'जंजीरें और दीवारें' (संस्मरण); 'पैरों में पंख बाँधकर' (यात्रावृत्तांत) आदि। उनकी रचनाओं में स्वाधीनता की चेतना, मनुष्यता की चिंता और इतिहास की युगानुरूप व्याख्या है। विशिष्ट शैलीकार होने के कारण उन्हें 'कलम का जादूगर' कहा जाता है। निबंधों और रेखाचित्रों के लिए उनकी ख्याति सर्वाधिक है।

उनकी भाषा में संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू के प्रचलित शब्दों का प्रयोग हुआ है। भाषा को सजीव, सरल और प्रवाहमयी बनाने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया है। उनकी रचनाओं में विषय के अनुरूप विविध शैलियों के दर्शन होते हैं। कहीं चित्रोपम शैली, कहीं डायरी शैली, कहीं

नाटकीय शैली किंतु सर्वत्र भाषा में प्रवाह एवं ओज विद्यमान है। वाक्य छोटे होते हैं किंतु पाठकों को भाव-विभोर कर देते हैं।

प्रस्तुत निबन्ध 'गेहूँ बनाम गुलाब' नामक ग्रंथ से संकलित किया गया है। इसमें लेखक ने गेहूँ को आर्थिक और राजनीतिक प्रगति का द्योतक माना है तथा गुलाब को सांस्कृतिक प्रगति का। इसमें इन्होंने लिखा है कि राजनीतिक एवं आर्थिक प्रगति सदा एकांगी रहेगी और इसे पूर्ण बनाने के लिए सांस्कृतिक प्रगति की आवश्यकता होगी। मानव संस्कृति के विकास के लिए साहित्यकारों एवं कलाकारों की भूमिका गुलाब की भूमिका है और इसका अपना स्थान है। गेहूँ और गुलाब में प्राचीन काल में समन्वय था, किंतु आज आवश्यकता इस बात की है कि गेहूँ पर विजय प्राप्त की जाए।



# गेहूँ बनाम गुलाब

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते हैं। एक से शरीर की पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मानस तृप्त होता है। गेहूँ बड़ा या गुलाब ? हम क्या चाहते हैं—पुष्ट शरीर या तृप्त मानस ? या पुष्ट शरीर पर तृप्त मानस। जब मानव पृथ्वी पर आया, भूख लेकर। क्षुधा, क्षुधा; पिपासा—पिपासा। क्या खाए क्या पिए ? माँ के स्तनों को निचोड़ा, वृक्षों को झकझोरा, कीट-पतंग, पशु-पक्षी—कुछ न छूट पाए उससे!

गेहूँ— उसकी भूख का काफला आज गेहूँ पर टूट पड़ा है। गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ !

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग उजाड़े जा रहे हैं—गेहूँ के लिए !

बेचारा गुलाब—भरी जवानी में सिसकियाँ ले रहा है। शरीर की आवश्यकता ने मानसिक वृत्तियों को कहीं कोने में डाल रखा है, दबा रखा है।

X X X X

किंतु: चाहे कच्चा चरें, या पकाकर खाएँ—गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अंतर ? मानव को मानव बनाया गुलाब ने! मानव, मानव तब बना, जब उसने शरीर की आवश्यकताओं पर मानसिक वृत्तियों को तरजीह दी।

यही नहीं, जब उसके पेट में भूख खाँव-खाँव कर रही थी, तब भी उसकी आँखें गुलाब पर टँगी थीं, टँकी थीं।

उसका प्रथम संगीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँ को ऊखल और चक्की में कूट-पीस रही थीं। पशुओं को मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ, उनकी खाल का बनाया ढोल और उनकी सींग की बनाई तुरही। मछली मारने के लिए जब वह अपनी नाव में पतवार का पंख लगाकर जल पर उड़ा जा रहा था, तब उसके छप-छप में उसने ताल पाया, तराने छोड़े! बाँस से उसने लाठी ही नहीं बनाई, वंशी भी बजाई।

रात का काला घुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह उच्छ्वसित हुआ सिर्फ इसलिए नहीं कि अब पेट-पूजा की समिधा जुटाने में उसे सहूलियत मिलेगी; बल्कि वह आनंद-विभोर हुआ ऊषा की लालिमा से, उगते सूरज की शनैः-शनैः प्रस्फुटित होनवाली सुनहरी किरणों से, पृथ्वी पर चमचम करते लक्ष-लक्ष ओस-कणों से! आसमान में जब बादल उमड़े, तब उसमें अपनी कृषि का आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ; उसके सौंदर्य-बोध ने उसके मनमोर को नाच उठने के लिए लाचार किया—इंद्रधनुष ने उसके हृदय को भी इंद्रधनुषी रंगों में रंग दिया।

मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानांतर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किंतु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।

X                      X                      X                      X

जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानंद रहा।

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था। उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

उसका साँवला दिन में गायें चराता था, रास रचाता था।

पृथ्वी पर चलता हुआ वह आकाश को नहीं भूला था और जब आकाश पर उसकी नजरें गड़ी थीं, उसे याद था कि उसके पैर मिट्टी पर हैं।

किंतु धीरे-धीरे यह संतुलन टूटा।

अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड़डी तोड़नेवाले, थकानेवाले, उबालनेवाले, नारकीय यंत्रणाएँ देनेवाले श्रम का—उस श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शांत न कर सके।

और, गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का—भ्रष्टाचार का, गंदगी और गलीज का! वह विलासिता—जो शरीर का नष्ट करती है और मानस को भी!

अब उसके साँवले ने हाथ में शंख और चक्र लिए। नतीजा—महाभारत और यदुवंशियों का सर्वनाश।

वह परंपरा चली आ रही है! आज चारों ओर महाभारत है, गृह-युद्ध है—सर्वनाश है, महानाश है!

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में — दोनों अपने-अपने पालनकत्ताओं के भाग्य पर, दुर्भाग्य पर—!

X                      X                      X                      X

चलो, पीछे मुड़ो! गेहूँ और गुलाब में हम फिर एक बार संतुलन स्थापित करें।

किंतु मानव क्या पीछे मुड़ा है; मुड़ सकता है ?

यह महायात्रा! आगे चलता रहा है, चलता रहेगा!

और क्या नवीन संतुलन चिर-स्थायी हो सकेगा ? क्या इतिहास फिर दुहराकर नहीं रहेगा ? नहीं, मानव को पीछे मोड़ने की चेष्टा न करो।

अब गुलाब और गेहूँ में फिर संतुलन लाने की चेष्टा में सिर खपाने की आवश्यकता नहीं।

अब गुलाब गेहूँ पर विजय प्राप्त करे।

गेहूँ पर गुलाब की विजय-चिर-विजय! अब नए मानव की यह नई आकांक्षा हो!

क्या यह संभव है ?

बिलकुल सोलह आने संभव है।

विज्ञान ने बता दिया है—यह गेहूँ क्या है ? और उसने यह भी जता दिया है कि मानव में यह चिर-बुभुक्षा क्यों है ?

गेहूँ का गेहूँत्व क्या है, हम जान गए हैं। यह गेहूँत्व उसमें आता कहाँ से है, हम से यह भी छिपा नहीं है।

पृथ्वी और आकाश के कुछ तत्त्व एक विशेष प्रक्रिया से पौधों की बालियों में संगृहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं। उन्हीं तत्त्वों की कमी हमारे शरीर में भूख नाम पाती है!

क्यों पृथ्वी की जुताई, कुड़ाई, गुड़ाई! क्यों आकाश की दुहाई! हम पृथ्वी और आकाश से उन तत्त्वों को सीधे क्यों नहीं ग्रहण करें ?

यह तो अनहोनी बात—यूटोपिया, यूटोपिया!

हाँ, यह अनहोनी बात, यूटोपिया तब तक बनी रहेगी जब तक विज्ञान संहार-कांड के लिए ही आकाश-पाताल एक करता रहेगा। ज्यों ही उसने जीवन की समस्याओं पर ध्यान दिया, यह हस्तामलकवत् सिद्ध होकर रहेगी!

और, विज्ञान को इस ओर आना है, नहीं तो मानव का क्या, सारे ब्रह्माण्ड का संहार निश्चित है!

विज्ञान धीरे-धीरे इस ओर कदम बढ़ा भी रहा है!

कम से कम इतना तो वह तुरंत कर ही देगा कि गेहूँ इतना पैदा हो कि जीवन की अन्य परमावश्यक वस्तुएँ—हवा, पानी की तरह—इफरात हो जायँ। बीज, खाद, सिंचाई-जुताई के ऐसे तरीके और किस्म आदि तो निकलते ही जा रहे हैं, जो गेहूँ की समस्या को हल कर दें।

प्रचुरता—शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले साधनों की प्रचुरता—की ओर आज का मानव प्रभावित हो रहा है।

X X X X

प्रचुरता ?—एक प्रश्न चिह्न ?

क्या प्रचुरता मानव को सुख और शांति दे सकती है ?

‘हमारा सोने का हिंदुस्तान’—यह गीत गाइए; किंतु यह न भूलिए कि यहाँ एक सोने की नगरी थी, जिसमें राक्षसता वास करती थी!

राक्षसता—जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी, जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे, जो छह महीने सोती थी; जिसे दूसरे की बहू-बेटियों को उड़ा ले जाने में तनिक भी झिझक नहीं थी।

गेहूँ बड़ा प्रबल है—वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शांत कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।



जो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय ?

अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है—इंद्रियों के संयमन की और वृत्तियों के उन्नयन की।

संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आए हैं। किंतु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आए हैं—बड़े-बड़े तपस्वियों की लंबी-लंबी तपस्याएँ एक रंभा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्खलित हो गईं।

आज भी देखिए, गांधीजी के तीस वर्ष के उपदेशों और आदेशों पर चलनेवाले हम तपस्वी किस तरह दिन-दिन नीचे गिरते जा रहे हैं।

इसलिए उपाय एकमात्र है—वृत्तियों को उर्ध्वगामी करना।

कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठाकर सूक्ष्म भावनाओं की ओर प्रवृत्त कीजिए।

शरीर पर मानस की पूर्ण प्रभुता स्थापित हो—गेहूँ पर गुलाब की!

गेहूँ के बाद गुलाब—बीच में कोई दूसरा टिकाव नहीं, ठहराव नहीं।

X X X X

गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है। जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया—मानस का संसार—सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसे वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसाएँगे।

जब गेहूँ से हमारा पिंड छूट जाएगा और हम गुलाब की दुनिया में स्वच्छंद विहार करेंगे।

गुलाब की दुनिया—रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया!

भौरे नाच रहे, गूँज रहे; फलसुँघनी फुदक रही, चहक रही!

नृत्य, गीत—आनंद, उछाह!

कहीं गंदगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं! आँगन में गुलाब; खेतों में गुलाब! गालों पर गुलाब खिल रहे; आँखों से गुलाब झाँक रहा!

जब सारा मानव-जीवन रंगमय, सुगंधमय, नृत्यमय, गीतमय बन जाएगा ? वह दिन कब आएगा ?

वह आ रहा है—क्या आप देख नहीं रहे ? कैसे आँखें हैं आपकी! शायद उन पर गेहूँ का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे को हटाइए और देखिए वह अलौकिक, स्वर्गिक दृश्य इसी लोक में, अपनी इस मिट्टी की पृथ्वी पर ही!

‘शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर।’

—रामवृक्ष बेनीपुरी

## अभ्यास

## I. निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म कब हुआ था—  
(क) 1899 ई० (ख) 1902 ई० (ग) 1920 ई० (घ) 1925 ई०
2. 'पतितों के देश में' किस विधा की रचना है—  
(क) निबंध (ख) नाटक (ग) उपन्यास (घ) कहानी
3. निम्न में से कौन-सी रचना निबंध विधा की है—  
(क) चिता के फूल (ख) अंबपाली (ग) माटी की मूरतें (घ) जंजीरें और दीवारें
4. 'कलम का जादूगर' किस रचनाकार को कहते हैं—  
(क) रामवृक्ष बेनीपुरी (ख) राहुल सांकृत्यायन (ग) अज्ञेय (घ) प्रेमचंद
5. निम्न में से कौन-सी मासिक पत्रिका नहीं है—  
(क) हिमालय (ख) बालक (ग) युवक (घ) योगी
6. रामवृक्ष बेनीपुरी की मृत्यु हुई—  
(क) सन् 1968 ई० (ख) 1986 ई० (ग) 1983 ई० (घ) 1984 ई०
7. 'गेहूँ बनाम गुलाब' निबंध के लेखक कौन हैं—  
(क) प्रसाद (ख) निराला (ग) रामवृक्ष बेनीपुरी (घ) राहुल सांकृत्यायन
8. 'गेहूँ बनाम गुलाब' पाठ में आर्थिक और राजनीतिक प्रगति का द्योतक किसे माना गया है—  
(क) धान (ख) गेहूँ (ग) जौ (घ) मक्का
9. 'गेहूँ बनाम गुलाब' निबंध में गुलाब किसका प्रतीक माना गया है—  
(क) आर्थिक प्रगति (ख) राजनीतिक प्रगति  
(ग) सांस्कृतिक प्रगति (घ) इनमें से कोई नहीं
10. निम्न में से कौन-सी रचना रामवृक्ष बेनीपुरी की है—  
(क) पौधों में पंख बाँधकर (ख) पगडंडियों का जमाना  
(ग) चिद्विलास (घ) सच्ची वीरता

## II. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. 'गेहूँ बनाम गुलाब' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. रामवृक्ष बेनीपुरी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
3. रामवृक्ष बेनीपुरी का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. गुलाब की दुनिया का वर्णन लेखक ने किस प्रकार किया है ? स्पष्ट कीजिए।
5. 'गेहूँ बनाम गुलाब' नामक निबंध में गेहूँ व गुलाब किसके प्रतीक हैं ?
6. गुलाब को किस प्रकार की भावना का द्योतक बताया गया है ?

7. 'गेहूँ बनाम गुलाब' पाठ का मुख्य संदेश क्या है ?
8. 'गेहूँ और गुलाब' में संतुलन टूटने पर क्या होता है ?

### III. दिये गए गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

- (क) मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानांतर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
  - (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
  - (iii) मानव शरीर और पशु शरीर में क्या अंतर है ?
  - (iv) मानव शरीर के प्रमुख तीन अंग कौन से हैं ?
  - (v) उपर्युक्त गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।
- (ख) गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किंतु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
  - (ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
  - (iii) मनुष्य को गेहूँ की आवश्यकता क्यों पड़ती है ?
  - (iv) लेखक का उपवास, व्रत एवं तपस्या के विषय में क्या मत है ?
  - (v) लेखक के अनुसार मानव के लिए क्या आवश्यक है ?
- (ग) गेहूँ बड़ा प्रबल है—वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शांत कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।
- जो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय ? अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है—इंद्रियों के संयमन की और वृत्तियों के उन्नयन की। संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आए हैं। किंतु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आए हैं—बड़े-बड़े तपस्वियों की लंबी-लंबी तपस्याएँ एक रंभा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्थलित हो गईं।
- (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
  - (ii) गेहूँ को प्रबल क्यों कहा गया है ?
  - (iii) प्रस्तुत गद्यांश के अनुसार संयमन के कौन से दोष परिलक्षित होते हैं ?
  - (iv) अपनी वृत्ति को वश में करने के लिए मनोविज्ञान ने कौन से उपाय बताए हैं ?
  - (v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(घ) गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है। जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया—मानस का संसार—सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसे वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसाएँगे।

(i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक ने गेहूँ और गुलाब को किसका प्रतीक माना है ?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश के अनुसार अब कौन-सा युग आने वाला है ? इस युग का संसार कैसा होगा?

(v) किसकी दुनिया खत्म होने जा रही है ?

#### IV. भाषा के रंग :

1. निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थी शब्द लिखिए —

स्थूल, सूक्ष्म, स्वच्छंद, गुलाम।

2. प्रस्तुत पाठ में उल्लिखित पाँच विदेशी शब्दों को ढूँढ कर लिखिए।

#### V. अनुभूति और अभिव्यक्ति :

गेहूँ और गुलाब की तुलना का क्या आशय है? अपने शब्दों में लिखिए।

### शब्दार्थ

तृप्त—संतुष्ट, संतोष। मानस—मन, हृदय। क्षुधा—भूख, अतृप्ति। पिपासा—प्यास, तृष्णा, इच्छा। कोने में डालना—उपेक्षा करना। तुरही—फूँक कर बजाने का एक पतले मुँह का बाजा जो दूसरे सिरे की ओर बराबर चौड़ा होता जाता है। उच्छ्वसित—प्रफुल्ल, पूरा खिला हुआ। समिधा—यज्ञ की लकड़ी। चिर बुभुक्षा—सदा रहनेवाली भूख। यूटोपिया—आदर्श का सिद्धांत जो पूर्णता का प्रतीक हो पर हो काल्पनिक। हस्तामलकवत्—हाथ पर रखे आँवले की तरह, बिल्कुल स्पष्ट। स्खलित हो गई—भंग होकर नीचे गिर गई। शौक—ए—दीदार है; तो नज़र पैदा कर—यदि दर्शन करने का शौक है, तो अनुकूल दृष्टि उत्पन्न कीजिए। शनैः शनैः—धीरे-धीरे। यंत्रणाएँ—यातनाएँ, दुख। सोलह आने—पूरी तरह। मेनका—एक अप्सरा, जिसने विश्वामित्र का तप भंग कर दिया था; शकुंतला की माता। उर्वशी—पुरुषवा की पत्नी; इंद्रलोक की अप्सरा।

# सड़क सुरक्षा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के वर्ष 2008 के आँकड़ों के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण सड़क दुर्घटना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2011 में विश्व में सबसे अधिक 1,36,834 सड़क दुर्घटनाएँ भारत में हुईं, जिसमें दुपहिया वाहन 22 प्रतिशत, ट्रक 19 प्रतिशत, कार 10 प्रतिशत, टैम्पो/वैन 06 प्रतिशत, बस 09 प्रतिशत, पैदल चलने वाले 09 प्रतिशत तथा अन्य 10 प्रतिशत हैं।

सड़क दुर्घटनाओं को रोकने और सड़क सुरक्षा उपायों के प्रति आम नागरिकों को और अधिक जागरूक किए जाने की आवश्यकता है। विकसित देश न केवल सड़क सुरक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करते हैं वरन् वाहन सुरक्षा और सड़कों की आधारभूत संरचना पर भी ध्यान देते हैं।

वर्तमान में सड़क दुर्घटना से होने वाली चोट और मृत्यु बहुत सामान्य बात हो गई है। सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के वर्ष 2001 के आँकड़ों के अनुसार सड़क दुर्घटना में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 24 प्रतिशत हो गई है। वर्ष 2001 में प्रति 100 व्यक्तियों पर मरने वालों की संख्या 19.6 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर प्रति 100 व्यक्तियों पर 28.6 हो गई है।

सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली वृद्धि का प्रमुख कारण सड़क सुरक्षा के नियमों की अनदेखी है। गलत दिशा में चलना, तीव्र गति से अथवा नशे का सेवन कर गाड़ी चलाने से होने वाली दुर्घटनाओं के समाचार प्रत्येक दिन सुने जा सकते हैं। सरकार द्वारा सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के यातायात नियम बनाए गए हैं। यातायात के नियमों के पालन करने जैसे सही गति से वाहन चलाना, सुरक्षा उपायों यथा हेलमेट और सीट बेल्ट का प्रयोग करना एवं सड़कों पर बने यातायात संकेतों के पालन से दुर्घटनाओं में कमी आ सकती है।

वर्तमान में दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाते समय मोबाइल अथवा दूसरे इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के प्रयोग करने पर चालक का ध्यान भंग होने से होने वाली घटनाएँ बढ़ी हैं। यातायात के नियमों के पालन करने से यातायात अर्थदंड एवं ड्राइविंग लाइसेंस के निरस्तीकरण से बचा जा सकता है।

वाहन चालन के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को किसी मान्यता प्राप्त चालन स्कूल के प्रशिक्षित प्रशिक्षक से चालन कोर्स करना चाहिए। सार्वजनिक स्थलों पर बिना ड्राइविंग लाइसेंस के वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है और मोटरयान अधिनियम-1988 की धारा 181 के तहत इसके लिए ₹ 500 का अर्थदंड निर्धारित है। वाहन स्वामियों को अपने वाहनों की समय-समय पर जाँच कराते रहना चाहिए ताकि होने वाली दुर्घटना से बचा जा सके।

किसी भी यात्रा पर जाने के पूर्व वाहन स्वामी को प्राथमिक चिकित्सा बाक्स, टूल बाक्स एवं गैसोलीन आदि की जाँच करा लेनी चाहिए।

**वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कुछ सुरक्षा नियम निम्नवत् दिए गए हैं—**

1. वाहन चालक सड़क पर अपने बाएँ से चलें और खासकर दूसरी तरफ से आ रहे वाहन को जाने दें।

2. वाहन चालक को गाड़ी मोड़ते समय वाहन गति धीमी रखनी चाहिए।
3. दो पहिया वाहन चालकों को अच्छी गुणवत्ता वाले हेलमेट पहनने चाहिए तथा चार पहिया वाहन चालकों एवं आगे तथा पीछे की सीट पर बैठने वाले व्यक्तियों को सीट बेल्ट अवश्य लगाना चाहिए।
4. वाहन की गति निर्धारित सीमा तक ही रखी जानी चाहिए, विशेष रूप से स्कूल, अस्पताल एवं कॉलोनी आदि क्षेत्रों में।
5. सभी वाहनों को दूसरे वाहनों से एक निश्चित दूरी बनाकर चलना चाहिए।
6. पैदल यात्रियों को भी सड़क पर चलने के नियम से परिचित होकर चलना चाहिए। जैसे क्रासवाक एवं जेब्रा क्रासिंग का उपयोग।
7. वाहन चालन द्वारा यातायात नियमों का उल्लंघन करने जैसे—क्रासिंग पर लाल/पीली बत्ती पार करना एवं बिना संकेत दिए गली बदलना अथवा तीन सवारी के साथ दो पहिया वाहन चलाना धारा 199 के साथ मोटर यान अधिनियम-1988 की धारा 177 के तहत दंडनीय अपराध है। प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 100 एवं दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दंड स्वरूप ₹ 300 की धनराशि निर्धारित है।
8. सार्वजनिक स्थान पर सड़क-सुरक्षा, ध्वनि नियंत्रण और वायु प्रदूषण के विहित मानकों का उल्लंघन करने पर मोटरयान अधिनियम-1988 की धारा 190(2) के तहत प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 1000 तथा दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दंड स्वरूप ₹ 2,000 की धनराशि निर्धारित है।

अवयस्क व्यक्ति द्वारा दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है, साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को अपने वाहन का बीमा निर्धारित अवधि के अंतर्गत अवश्य करा लेना चाहिए। बिना बीमा के वाहन चलाना मोटर अधिनियम-1988 की धारा 146 के साथ-साथ धारा 196 के तहत दंडनीय अपराध है, जिसके लिए दंड स्वरूप ₹ 1,000 की जुर्माने की राशि निर्धारित है।

सड़क पर चलने वाले पैदल यात्रियों के साथ-साथ दो पहिया एवं चार पहिया वाहन चलाने वाले चालकों द्वारा यातायात के नियमों का सही ढंग से पालन करने एवं सुरक्षा उपायों को अपनाने पर वाहन से होने वाली दुर्घटनाओं पर काफी हद तक अंकुश लगाया जा सकता है।

**नोट—इस पाठ से संदर्भ आधारित प्रश्न नहीं पूछे जायेंगे।**

## अभ्यास

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—**

1. सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए।
2. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण क्या है ?
3. सड़क दुर्घटनाओं को रोकने का प्रमुख उपाय क्या है ?
4. सड़क दुर्घटनाओं में मरने वाले लोगों पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।
5. वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कोई पाँच सुरक्षा नियम बताइए।
6. यातायात के नियमों का पालन करने से क्या लाभ है ?



# गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण

वस्तुतः मानव सभ्यता को फलीभूत होने का मुख्य आधारबिंदु प्राकृतिक संसाधन पर ही निर्भर है। परंतु 'जल' एक ऐसा प्रकृति प्रदत्त उपहार है जिसका मानव सभ्यता के पास दूसरा विकल्प नहीं है। जीवन में जल का महत्त्व इसी से समझा जा सकता है कि बड़ी-बड़ी मानव-सभ्यता (वैदिक सभ्यता, सिंधु सभ्यता, मेसोपोटामिया, मिस्र सभ्यता आदि) नदियों के किनारे ही फली-फूली और विकसित हुई हैं। जल की अन्यतम स्रोत नदियों की उपयोगिता और रख-रखाव को उपेक्षित नहीं किया जा सकता है। हमारी सभ्यता और संस्कृति की अतुलनीय निधि, भारत भूमि की अन्यतम पहचान, पवित्र और अमृत पयस्विनी माँ गंगा के महत्त्व को तो विशेष रूप से विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

पुराणों में उल्लिखित गंगा नदी को भगीरथ के कठोर तप से स्वर्ग से धरती पर अवतरित कराना बताया गया है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तराखंड के उत्तरकाशी जिले के सतोपथ हिमानी से निकली अलकनंदा और गंगोत्री गोमुख हिमानी ग्लेशियर से निकली भागीरथी नदी जब देवप्रयाग में आकर मिलती हैं तब संयुक्त रूप से गंगा के नाम से जानी जाती हैं। यह भारत की सबसे लंबी नदी है। इसकी कुल लंबाई 2525 किमी है जिसमें से 454 किमी इनका प्रवाह क्षेत्र बांग्लादेश में विस्तारित है। गंगा नदी का प्रवाह तंत्र अपनी प्रमुख सहायक नदियों—यमुना, रामगंगा, घाघरा, गोमती, सोन आदि के साथ भारत के पाँच राज्यों उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और झारखंड होते हुए बांग्लादेश से बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। उत्तराखंड राज्य में यह हरिद्वार जिले से मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती हुई बिजनौर जिले से उत्तर प्रदेश में प्रवेश करती हैं। अपने प्रवाह क्षेत्र में सबसे अधिक भू-भाग उत्तर प्रदेश का ही आबाद करती है। उत्तर प्रदेश के 28 जिले से होकर जिसमें से प्रमुखतः कन्नौज, कानपुर, इलाहाबाद (प्रयागराज), वाराणसी से बहती हुई भारतीय सभ्यता और संस्कृति को समृद्ध करने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। परंतु माँ गंगा से पोषित एक अमूल्य संस्कृति और सभ्यता को प्राप्त करने के बावजूद मानव-सभ्यता इनके रख-रखाव एवं स्वच्छता के प्रति उदासीन बनी रही है।

'औद्योगिक क्रांति के बाद बढ़ते हुए औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं शहरीकरण के कारण औद्योगिक एवं घरेलू अपशिष्टों के साथ-साथ सीवरों की जल निकासी भी नदियों से जोड़ दी गई है, जिससे माँ गंगा की अविरल धारा दिन-ब-दिन (दिन-प्रतिदिन) प्रदूषित होती जा रही है।

संयुक्त राष्ट्र के आह्वान पर जल संरक्षण, पर्यावरण स्वच्छता एवं नदियों की सुरक्षा पर वैश्विक स्तर पर कई कार्यक्रम शुरू किए गए जिससे प्रभावित होकर भारत सरकार ने भी नदियों के संरक्षण के लिए उत्कृष्ट कार्यक्रम प्रारंभ किया और विशेष रूप से गंगा नदी में व्याप्त प्रदूषण के उपशमन और जल गुणवत्ता में सुधार करने के उद्देश्य से 1985 ई० में 'केंद्रीय गंगा प्राधिकरण' और 'गंगा परियोजना निदेशालय' का गठन किया गया है जिसके माध्यम से 14 जनवरी, 1986 को 'गंगा कार्य योजना'

(GAP) का शुभारंभ किया गया, दो चरणों में लागू की गई 'गंगा कार्य योजना' पर हजारों करोड़ रुपए व्यय करने के बाद भी बेहतर परिणाम प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल पाई। पूर्व योजनाओं की समीक्षा के बाद और प्राप्त आंकड़ों के आधार पर केंद्र सरकार द्वारा 31 दिसंबर, 2009 को 'मिशन क्लीन गंगा' प्रारंभ करने की घोषणा की गई। इसी संदर्भ में व्यापक पैमाने पर कार्य करने के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण' का गठन भी किया गया। इस योजना से भी आशाजनक परिणाम प्राप्त नहीं होने पर केंद्र सरकार ने 'नमामि गंगे एकीकृत गंगा संरक्षण मिशन' लागू किया और इस योजना में घोषित प्रमुख बिंदुओं को धरातलीय स्तर पर प्राप्त करने के लिए लगातार प्रयास किया जा रहा है।

13 मई, 2015 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी की अध्यक्षता में संपन्न केंद्रीय मंत्रि-मंडल की बैठक में केंद्र सरकार के महत्वाकांक्षी प्लैगशिप कार्यक्रम 'नमामि गंगे' की स्वीकृति प्रदान की गई जिसका मुख्य उद्देश्य गंगा नदी को स्वच्छ और संरक्षित करने संबंधी प्रयासों को व्यापक रूप से समेकित करना है। यह कार्यक्रम 'राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण' (NGRBA) के अंतर्गत ही क्रियान्वित हो रहा है। 'नमामि गंगे' कार्यक्रम के प्रथम चरण में 05 वर्षों हेतु 20 हजार करोड़ रुपए का बजट आवंटित किया गया जो पिछले 30 वर्षों में हुए कुल व्यय से चार गुना अधिक था, बजट 2019-20 में 'नमामि गंगे' मिशन के लिए आवंटित धनराशि में 750 करोड़ रुपए आवंटित किया गया है जबकि 2018-19 में यह धनराशि 2250 करोड़ रुपए रही है।

गंगा नदी संरक्षण के लिए इस बृहद् योजना में पूर्व योजनाओं की तुलना में क्रियान्वयन के प्रारूप में एक बड़ा परिवर्तन किया गया है जिसके अंतर्गत उत्कृष्ट और सतत् परिणाम प्राप्त करने के लिए गंगा नदी के तट पर रहने वाली जन-आबादी को भी इस परियोजना में शामिल करने के लिए विशेष प्रयास किया गया है। इसके साथ ही इस कार्यक्रम में राज्यों के साथ-साथ जमीनी स्तर के संस्थानों यथा-शहरी स्थानीय निकायों और पंचायती राज संस्थानों को भी क्रियान्वित करने के स्तर पर शामिल किए जाने का प्रयास किया गया है जिसे 'स्वच्छ गंगा हेतु राष्ट्रीय मिशन' (NMCG) तथा इसके अनुषंगी राज्य संगठनों अर्थात् 'राज्य कार्यक्रम प्रबंध समूह' (SPMG) द्वारा क्रियान्वित किया जाएगा।

'नमामि गंगे' कार्यक्रम के क्रियान्वयन को बेहतर बनाने के लिए परियोजना पर्यवेक्षण हेतु त्रिस्तरीय प्रणाली प्रस्तावित है— राष्ट्रीय स्तर पर कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में उच्च स्तरीय कार्यबल, राज्य स्तर पर मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य स्तरीय समिति, जनपद स्तर पर जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में जिला स्तरीय समिति का गठन किया जाना है जिसकी सहायता 'राज्य कार्यक्रम प्रबंध समूह' (SPMG) के द्वारा की जाएगी।

केंद्र सरकार ने घोषित किया है कि त्रिस्तरीय कार्यप्रणाली का संपूर्ण वित्तीय-प्रबंधन वह स्वयं करेगी जिससे कार्यक्रम की प्रगति, त्वरित कार्यान्वयन और उत्कृष्ट परिणाम को प्राप्त करने में गतिशीलता आ सके। पिछली गंगा कार्ययोजनाओं के असफल परिणामों को संज्ञान में लेते हुए केंद्र-सरकार द्वारा न्यूनतम 10 वर्षों की अवधि तक इस कार्यक्रम के परिचालन और परिसंपत्तियों के प्रबंधन की व्यवस्था स्वयं करने का निर्णय लिया है। इसके अतिरिक्त गंगा नदी के अति प्रदूषित स्थलों के



लिए 'सार्वजनिक निजी भागीदारी' (PPP) और 'विशेष प्रयोजन वाहन व्यवस्था' को अपनाया जाना भी प्रस्तावित है। गंगा को प्रदूषित होने से अतिरिक्त बचाव के लिए केंद्र सरकार द्वारा 'प्रादेशिक सैन्य इकाई' की तर्ज पर 'गंगा ईको टास्क फोर्स' की चार बटालियन को भी स्थापित करने की योजना है और साथ ही प्रदूषण पर पूर्ण नियंत्रण और नदी के संरक्षण पर कानून बनाने के लिए भी अलग से विचार किया जा रहा है।

केंद्र सरकार द्वारा की गई प्रशासनिक एवं वित्तीय प्रबंधन जैसे तथ्यों को देखते हुए कहा जा सकता है कि उसके द्वारा लागू की गई परियोजनाओं और एकीकृत संरक्षण के प्रयासों से माँ गंगा की पवित्र-पावन, अविरल जल धारा विलुप्त हो रहे वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करने में अवश्य सफल होंगी किंतु इसको सफल बनाने के लिए जन सहभागिता की भी अति आवश्यकता है। एक जिम्मेदार नागरिक होने के कारण यह हम सबका उत्तरदायित्व होता है कि अनुच्छेद-51 'क' में उल्लिखित मौलिक कर्तव्यों के अनुपालन में स्वयं भी माँ गंगा की स्वच्छता के प्रति सदैव सजग रहें। जैसे कि मुख्य पर्वों पर गंगा में मूर्ति-विसर्जन, शव-विसर्जन, पूजा सामग्री का विसर्जन, गंगा पर्यटन के समय खाद्य एवं अपशिष्ट पदार्थ और पॉलीथीन आदि को फेंकना, घरेलू और औद्योगिक अपशिष्टों को गंगा नदी में फेंकना जैसे इत्यादि ऐसे कार्य हैं जिस पर हम स्वयं ही नियंत्रण करके माँ गंगा की स्वच्छता जैसे महान कार्य में अपना सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

**नोट—इस पाठ से संदर्भ आधारित प्रश्न नहीं पूछे जायेंगे।**

## अभ्यास

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—**

1. 'गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण' शीर्षक पर एक निबंध लिखिए।
2. गंगा के प्रवाह क्षेत्र को संक्षेप में वर्णित कीजिए।
3. गंगा नदी को किस प्रकार प्रदूषण से मुक्त किया जा सकता है ? व्याख्या कीजिए।
4. गंगा को स्वच्छ रखने के लिए कौन-कौन से कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं ?
5. 'नमामि गंगे' कार्यक्रम पर एक लेख लिखिए।
6. गंगा जी को धरती पर किसने अवतरित किया ?
7. गंगा नदी का उद्गम स्थल कहाँ है ?
8. गंगा नदी उत्तर प्रदेश के कितने शहरों से गुजरती है ? उनके नाम लिखिए।
9. गंगा की सहायक नदियों के नाम लिखिए।
10. गंगा नदी की कुल लंबाई कितनी है ?
11. गंगा नदी के प्रदूषित होने का मुख्य कारण क्या है ?
12. गंगा कार्य योजना का शुभारंभ कब किया गया ?
13. 'केंद्रीय गंगा प्राधिकरण' का गठन कब किया गया ?
14. 'नमामि गंगे' का प्रमुख उद्देश्य क्या है ?
15. 'मिशन क्लीन गंगा' प्रारंभ करने की घोषणा कब हुई ?

कथा-साहित्य



# कहानी का उद्भव एवं विकास

संस्कृत साहित्य में 'कहानी' का एक पर्याय 'कथा' है, जो समय तथा अर्थांतरों के साथ आख्यान, उपाख्यान, आख्यायिका, वृत्त, गाथा, पुराण, वार्ता, चरित आदि रूप में प्रचलित है। 'कथा' शब्द ही अपभ्रंश में 'कहा' का रूप ग्रहण कर अवधी, भोजपुरी आदि भाषाओं में 'कहानी' में बदल गई।

कहानी का आरंभ तो वैदिक युग में ही हो गया था। ऋग्वेद के यम-यमी, पुरुरवा-उर्वशी आदि के संवाद, उपनिषदों के व्याख्यान, ऋषि मुनियों की कथाएँ भारतीय कहानी का प्राचीनतम रूप हैं। लौकिक संस्कृत में उपदेश तथा नीतिप्रधान कथाओं का प्राचुर्य मिलता है। बृहत्कथामंजरी, कथासरित्सागर, पंचतंत्र, हितोपदेश आदि ग्रंथ तथा मुंज, भोज, विक्रमादित्य आदि के शौर्य और प्रणय गाथाओं से लेकर लिखी गई अनेक रचनाएँ कहानी के ही प्राचीन रूप हैं। संस्कृत के पश्चात—पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं में बौद्ध तथा जैन संबंधी अनेक कथाएँ लिखी गईं। इनका आरंभिक रूप काव्यमय था।

कथा साहित्य की दूसरी परंपरा सूफियों द्वारा रचित प्रेमाख्यानक काव्य जैसे-**मृगावती, मधुमालती, पद्मावत, चित्रावली, ज्ञानदीप, इंद्रावती** आदि में मिलते हैं।

हिंदी कहानी का तीसरा प्राचीन रूप किस्सा, वृत्तांत आदि के रूप में मिलता है। भारतेंदु युगीन कहानी लेखकों ने देश-प्रेम व सामाजिक सुधार की कहानियों को पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशित किया। इस युग में कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन, हरिश्चंद्र चंद्रिका, हिंदी प्रदीप, ब्राह्मण आदि पत्र-पत्रिकाओं में छोटी बड़ी गद्य रचनाओं और संपादकीय लेखों की इस वैचारिकी के संघर्ष को देखा जा सकता है। भारतेंदु युगीन पत्र पत्रिकाओं में इस प्रकार की अनेक कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। सिंहासन बत्तीसी, 'बैताल पचीसी', 'माधवानल-कामकंदला', राजा भोज का सपना, 'रानी केतकी की कहानी', 'देवरानी-जेठानी' आदि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं। इस प्रकार संस्कृत भाषा में कथा-साहित्य की जो पद्धति प्रारंभ हुई, वह कुछ परिवर्तन के साथ हिंदी में भारतेंदु युग तक चली आई। ये कहानियाँ या कथाएँ गद्य-पद्य दोनों माध्यमों में लिखी जाती थी। इनमें अप्राकृतिक तथा अतिप्राकृतिक तत्वों का प्राधान्य रहता था। भूत-प्रेत, पशु-पक्षी आदि कथा के विकास में सहायक होते थे। घटनाएँ नितांत अविश्वसनीय तथा आश्चर्य जनक रहती थीं। इनमें स्वाभाविकता का अभाव था।

आधुनिक 'कहानी' परंपरा और स्वरूप की दृष्टि से प्राचीन कहानी से भिन्न है। यूरोपीय कहानी का प्रभाव आधुनिक हिंदी कहानी पर आरम्भ में बांग्ला-कहानी के माध्यम से पड़ा और आधुनिक कहानी का जन्म 19वीं शताब्दी के प्रथम चरण में हुआ था।

हिंदी कहानी के आविर्भाव की दृष्टि से सन् 1900 ई० में प्रकाशित 'सरस्वती' पत्रिका की भूमिका विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इस वर्ष इसमें किशोरी लाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' प्रकाशित हुई।

इसके पश्चात् माधवराव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' (1901), लाला भगवानदीन की 'प्लेग की चुड़ैल' (1902), पं० गिरिजादत्त वाजपेयी की 'पंडित और पंडितानी', आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903), लाल पार्वती नंदन की 'बिजली' (1904 ई०) 'मेरी चंपा' (1905 ई०) तथा बंग महिला राजेंद्र बाला घोष की 'दुलाई वाली' (1907 ई०) आदि कहानियाँ लिखी गईं। हिंदी कहानी में किसे प्रथम मौलिक कहानी माना जाए, इस पर विद्वानों का मतैक्य नहीं है। द्विवेदी-युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार की कहानियाँ लिखी गईं। एक ओर तो संस्कृत, बँगला तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं से अनुवाद हुए, दूसरी ओर जीवन की आदर्शवादी और यथार्थवादी मौलिक कहानियों की भी रचना हुई। इस युग के प्रमुख कहानीकारों में किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजाकुमार घोष, गोपालराम गहमरी, विश्वभरनाथ शर्मा 'कौशिक' जयशंकर प्रसाद और प्रेमचंद का नाम उल्लेखनीय है। इस काल में घटना प्रधान, चरित्र प्रधान, वातावरण प्रधान तथा भाव प्रधान कहानियों की अधिकता रही है। गदाधरसिंह ने 'कादंबरी' का, जगन्नाथप्रसाद त्रिपाठी ने 'हर्षचरित' और 'रत्नावली' का तथा सूर्यनारायण दीक्षित ने 'जैमिनीकुमार' का अनुवाद किया। बँगला की कहानियों का अनुवाद पार्वतीनंदन, बंग महिला आदि ने प्रस्तुत किया। किशोरी लाल गोस्वामी ने सामाजिक कहानियाँ लिखी। इनके कहानी-संग्रह 'चंद्रिका', 'इंदुमती' और 'गुलबहार' पर जासूसी उपन्यासों का प्रभाव दिखाई देता है।

महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित कहानी 'स्वर्ण की झलक सरस्वती' में प्रकाशित हुई। इस समय के कहानी लेखकों में गोपालराम गहमरी जासूसी कहानियों में अग्रगण्य हैं। इनकी प्रमुख कहानियाँ 'त्रिवेणी', तीन तहकीकात, तथा गल्पपंचक हैं। पं० चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' की 'उसने कहा था' नामक कहानी 'सरस्वती' पत्रिका के 1915 ई० जून के अंक में प्रकाशित हुई। संवेदना और शिल्प की दृष्टि से यह कहानी बेजोड़ थी। सन् 1916 ई० में प्रेमचंद की कहानी 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई। इस कहानी को अभूतपूर्व लोकप्रियता मिली। इस कहानी में कोई शिल्पगत चमत्कार नहीं, इसमें ग्रामीण जीवन, किसानों की सहृदयता, उनके आदर्श की स्थापना है। यह आदर्श गांधीवाद से जुड़ा था। पूरी कहानी में हमारे आसपास के जीवन की आत्मीयता स्थापित है। प्रेमचंद की कहानियाँ बहुत सहज ढंग से शुरू होती हैं।

प्रेमचंद की कहानियों का संसार बहुत व्यापक एवं विविधतापूर्ण है। वह अपने काल के उत्तर भारत का शब्द-रूप है। कहानियों में प्रेमचंद की दृष्टि प्रगतिशील है और भाषा जनमानस की चेतना और समझ के अनुरूप है। इनकी प्रारंभिक कहानियों पर लोकवार्ताओं का प्रभाव है, जैसे — 'रानी सारंधा', 'सदावृक्ष', 'आत्माराम', 'दामुल का कैदी' आदि। 'दामुल का कैदी' में तो कथानक गढ़ने में पुनर्जन्म का भी सहारा लिया गया है।

प्रेमचंद की कहानियाँ स्वाधीनता संग्राम के आदर्श से ओत-प्रोत हैं। कहानी के पात्रों और घटनाओं पर उस युग की समग्र चेतना का प्रभाव है। प्रेमचंद की अधिकांश कहानियों में आदर्शवाद पाया जाता

है। इनका कथानक बोध के आधार पर विकसित होता है। आदर्शवाद उस युग के व्यवहार में भी दिखाई पड़ता है। अतः हृदयपरिवर्तन उस युग के व्यवहार में यथार्थ बन गया था। इसकी झलक 'नमक का दरोगा', 'इस्तीफा', 'मैकू', 'परीक्षा' आदि कहानियों में मिलती है। प्रेमचंद की संवेदना व्यापक और गंभीर थी। व्यापकता का लक्ष्य यह है कि उन्होंने समाज की सभी श्रेणियों के पात्र अपनी कहानी के लिए चुने। गंभीरता से तात्पर्य है कि उन्हें कभी कहानी के अंत पर पहुँचने के लिए अधीरता नहीं थी। प्रेमचंद की कहानी में नारी विविध रूपों में आती है। स्त्री-दृष्टि से बूढ़ी काकी—एक अनुपम कहानी है। प्रेमचंद की कहानियों में बच्चों की जिज्ञासा, समझ और भावनाशीलता लक्षित की जा सकती है। 'दो बैलों की कथा', 'ईदगाह' और 'रामलीला' कहानियाँ बाल-मनोविज्ञान पर ही आधारित हैं।

प्रेमचंद असंगत स्थितियों को सहज तौर पर एक दूसरे के सामने रख देते हैं और व्यंग्य उत्पन्न हो जाता है। डा० रामविलास शर्मा ने उन्हें 'कबीर के बाद हिंदी का सबसे बड़ा व्यंग्यकार माना है।' इन्होंने कुछ कहानियों में व्यंग्यपूर्ण रेखाचित्र भी खींचे हैं जो व्यंग्य के उत्कृष्ट उदाहरण तो नहीं हैं, लेकिन चोट भरपूर करते हैं, जैसे, मोटेराम शास्त्री। प्रेमचंद की अंतिम कहानियों में 'कफन' ऐसी कहानी है जो यथार्थ बोध का आधार नहीं छोड़ती। उसमें स्थितियों की संघटना करने में निर्भयता बरती गई है। भूख और मानवीय संबंध के द्वंद्व को यह कहानी अत्यंत मार्मिकता के साथ उद्घाटित करती है।

प्रेमचंद के समकालीन प्रसिद्ध छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने रोमानी, सामाजिक और चरित्र प्रधान कहानियाँ लिखी हैं। ये कहानियाँ पाँच संग्रहों — छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी और इंद्रजाल में संकलित हैं। प्रसाद की कहानियों की पृष्ठभूमि सांस्कृतिक है, जिसमें भावुकता, कल्पना और प्रेम का समन्वय है। इनकी कहानियों में प्रेम के विविध पक्ष तथा नारी चरित्र के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। 'आकाशदीप' तथा 'पुरस्कार' कहानी नाटकीय संवादों और अभिनयात्मक पद्धति पर लिखी गई है। इनकी कहानियों की भाषा संस्कृतनिष्ठ तथा काव्यात्मक है। 'आकाशदीप' रोमानी ऐतिहासिक कहानी है। 'पुरस्कार' जैसी कहानियाँ चंद्रधरशर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' की संवेदना के निकट मालूम पड़ती है।

प्रेमचंद के समकालीन कहानीकारों में विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' और सुदर्शन सामाजिक एवं पारिवारिक विषयों पर कहानियाँ लिखते थे। विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' की कहानी 'ताई' और 'सुदर्शन' की 'हार की जीत' बहुत प्रसिद्ध हुई।

प्रेमचंद के बाद प्रगतिशील कहानीकारों जिनमें यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, उपेन्द्रनाथ अशक, अमृतराय आदि ने प्रेमचंद की आदर्शोन्मुखी याथार्थवादी कहानी परंपरा को आगे बढ़ाया। यशपाल प्रेमचंदोत्तर हिंदी कहानीकारों में प्रमुख हैं। उनकी पहली कहानी 'मक्रील' जो 1934 में छपी, 'पिंजरे की उड़ान' कहानी संग्रह 1939 ई० में प्रकाशित हुई। यशपाल मूलतः मार्क्सवादी कथाकार हैं।

राहुल सांकृत्यायन ने 'सतमी के बच्चे' (1935 ई०) के अतिरिक्त 'बोल्गा से गंगा' (1942 ई०) लिखी, जो इतिहास के विभिन्न युगों को चित्रित करने वाली कहानियों का संग्रह है। डा० भगवतशरण

उपाध्याय का कहानी संग्रह भी इसी प्रकार का है। 'अश्क' उर्दू से हिंदी में आए। उनका पहला कहानी-संग्रह 'जुदाई की शाम का गीत' 1933 ई० में छपा था, 'डाची' 1937 ई० में। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' समाज के उपेक्षित तथा प्रायः निम्न वर्ग के पात्रों का चित्रण करते हैं। उग्र व्यंग्य के माध्यम से सामाजिक भ्रष्टाचार के अनेक रूपों को उभारते हैं।

जैनेंद्र, अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी कहानी की उस धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं जो सामाजिक यथार्थ का चित्रण करने वाली धारा के समानांतर बह रही थी। इन पर फ्रायड के मनोविश्लेषण और चेतन-अचेतन सिद्धांत का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

जैनेंद्र का पहला कहानी संग्रह 'फाँसी' 1929 ई० में प्रकाशित हुआ। जैनेंद्र किसी स्थिति को सहज तौर पर नहीं प्रस्तुत करते। उसमें दार्शनिकता का सहज समावेश कराते हैं। अज्ञेय की कहानियों का संग्रह 'विपथगा' 1937 ई० में प्रकाशित हुआ था। इलाचंद्र जोशी की प्रारंभिक कहानियों में सामाजिक यथार्थ को प्रकट करने का आग्रह मिलता है। किंतु सन् 1935 - 36 ई० तक उन पर फ्रायड के मनोविश्लेषण का गहरा असर पड़ा।

सन् 1955 ई० के आसपास 'नई कहानी' आंदोलन की शुरुआत हुई। इस कहानी आंदोलन को परिवर्तित और प्रतिष्ठित करने में 'नई कहानी' पत्रिका के संपादक भैरव प्रसाद गुप्त की महत्वपूर्ण भूमिका थी। नई कहानी के माध्यम से उन्होंने हिंदी को अनेक प्रतिभाशाली कहानीकार दिए।

'नई कहानी' आंदोलन ने स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों के दबाव से पैदा होने वाली मानसिकता की जटिलता को अपनी संवेदना में समेट लिया। इसलिए 'नई कहानी' की कथावस्तु और संवेदना के अनेक पक्ष हैं। उन सभी को सामूहिक तौर पर 'नई कहानी' की वस्तुगत विशेषताओं में गिना जाता है। आंचलिकता, नए पारिवारिक संबंध, भ्रष्टाचार, व्यंग्य, विडंबना, ऊब, कुंठा निराशा आदि नई कहानी की संवेदनागत विशेषता हैं।

आंचलिक कहानियों से तात्पर्य उन कहानियों से है जिनमें किसी क्षेत्र के वातावरण और आंचलिक परिवेश की संवेदना को ही रेखांकित करना कहानीकार का उद्देश्य होता है। बदलते हुए पारिवारिक वातावरण के संदर्भ में बुजुर्गों की स्थिति को हिंदी कहानी में 'चीफ की दावत' के माध्यम से भीष्म साहनी ने और 'वापसी' के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने दिखाया। स्वाधीन भारत में गुजरती हुई पीढ़ी की वास्तविक वेदना तीव्रतम रूप में अमरकांत की कहानी 'डिप्टी कलक्टरी' में व्यंजित हुई। इनकी कहानियाँ हमारे सामाजिक जीवन की अमानवीय स्थितियों को एक यातनागार की तरह प्रस्तुत करती हैं। निर्मल वर्मा मन की गहरी पतों को उघाड़ने वाले कहानीकार हैं। आलोचक नामवर सिंह ने निर्मल वर्मा की कहानी 'परिदे' को पहली 'नई कहानी' माना है। 'नई कहानी' में कथातत्त्व का हास हुआ है। इसकी क्षतिपूर्ति प्रधानतः नाटकीयता, सादृश्य विधान, प्रतीकात्मकता एवं बिंब-विधान में हुई है। 'नई कहानी' में पूर्व-दीप्ति, चेतना प्रवाह आदि शैलीगत प्रयोग उचित मात्रा में मिलते हैं। 'नई कहानी' से अलग रहकर जिन कहानीकारों ने अपनी पहचान बनाई, उसमें जैनेंद्र, यशपाल, विष्णु प्रभाकर, अज्ञेय, भगवतीचरण वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं।

अज्ञेय ने भारत-विभाजन के कारण उत्पन्न शरणार्थी समस्या और उनकी स्थिति पर अनेक कहानियाँ लिखी। नई कहानी आंदोलन से अलग रहने वाले लोकप्रिय और यशस्वी कहानीकार विष्णुप्रभाकर ने 'धरती अब भी घूम रही है' जैसी भावना प्रवण अनेक कहानियाँ लिखीं।

नई कहानी के पश्चात् 'सचेत कहानी' के प्रवक्ता महीप सिंह ने जब सचेतन कहानी की अवधारणा को आंदोलन के रूप में प्रस्तुत किया तो उनका मुख्य बल 'नई कहानी' में सक्रिय आत्मपरकता का विरोध ही था और अमृत राय ने जब 'सहज कहानी' आंदोलन चलाया तो उनका उद्देश्य कहानी में सहज कथा रस को बरकरार रखना था। कहानी के विकास की दृष्टि से अकहानी, समानांतर कहानी, सचेतन कहानी का विशिष्ट महत्त्व है। समकालीन विमर्शों, जैसे— स्त्री विमर्श, दलित विमर्श और आदिवासी विमर्श। ट्रांसजेंडर विमर्श को दृष्टि में रखकर लिखी गई कहानियाँ वर्तमान में बहस और चर्चा के केंद्र में हैं।

नई कहानी में वैचारिकता के क्षरण तथा राजनीति के निषेध की दृष्टि से 'अ-कहानी' में गंगा प्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी और राजकमल चौधरी आदि सक्रिय रूप से दिखाई देते हैं। इसके पश्चात् कमलेश्वर ने 'सारिका' के अपने संपादन काल में 'समानांतर कहानी' के आंदोलन की शुरुआत की। सन् 1953 में प्रकाशचंद्र गुप्त ने अपनी प्रकाशित पुस्तक 'हिंदी साहित्य में जनवादी परंपरा' में भक्तिकालीन कवि कबीर के साहित्य से जन अनुभूतियों और अभिव्यक्ति-तत्त्व की मौजूदगी को आरंभ कर प्रेमचंद तक जनवादी परंपरा की खोज की थी। जनवादी कहानी में वर्ग-संघर्ष और शोषण के विरुद्ध सक्रिय प्रतिरोध की चेतना को दर्शाया गया था।

हिंदी कहानी की यात्रा को समृद्ध करने में ज्ञानरंजन, रवींद्र कालिया, ममता कालिया, काशीनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, ओम प्रकाश वाल्मीकि, पंकज मित्र, अखिलेश आदि का योगदान महत्त्वपूर्ण है।

## कहानी की परिभाषा एवं विशेषताएँ

गद्य-साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है। आरंभ में कहानी मनोरंजन एवं आत्म-सुख के लिए कही सुनी जाती थी। बाद में अपने अनुभवों को प्रकट करने के लिए नीति तथा उपदेश, सामाजिक सुधार, बाह्य एवं आंतरिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए भी कहानी को माध्यम बनाया गया।

कहानी केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं बल्कि अपने विचारों, अनुभवों और संदेशों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार "सादे ढंग से केवल कुछ अत्यंत व्यंजक घटनाएँ और थोड़ी बातचीत सामने लाकर क्षिप्र गति से किसी एक गंभीर संवेदना या मनोभाव में पर्यवसित होने वाली गद्य कहानी है।"

प्रेमचंद के अनुसार—कहानी ऐसा उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल और बेलबूटे सजे हुए हों, बल्कि वह एक गमला है, जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"



नामवर सिंह के अनुसार—“कहानी छोटे मुँह से बड़ी बात करती है।”

परिभाषाओं के आधार पर कहानी की निम्नलिखित विशेषताएँ निर्धारित की जा सकती हैं—

1. कहानी के वस्तुतत्त्व (घटनाएँ, कथानक) का आकार लघु होता है।
2. कहानी का एक ही विषय तथा एक निश्चित उद्देश्य होता है।
3. कहानी में संवेदनाओं, अनुभूतियों एवं तथ्यों की रोचक व्यंजना होती है।
4. कहानी में संवेदनात्मक अन्विति होती है।
5. मनोरंजन के साथ-साथ जीवन की शाश्वत समस्याओं का प्रकाशन भी कहानी का लक्ष्य है।

## कहानी के तत्त्व

कहानी-कला के प्रमुख तत्त्व छह होते हैं—कथानक, चरित्र-चित्रण, संवाद या कथोपकथन, भाषा, वातावरण या देशकाल और उद्देश्य। यद्यपि नई कहानी (सन् 1950 के बाद) एवं साठोत्तरी कहानी में इन सभी तत्त्वों की उपस्थिति होगी, यह आवश्यक नहीं है। नई कहानी अथवा आज की कहानी किसी घटना या किसी दृष्टान्त या किसी एक चरित्र को लेकर भी लिखी जाती रही है।

कहानी-कला के प्रमुख तत्त्वों को हम इस प्रकार समझ सकते हैं—

**कथानक** : कथानक का अर्थ है कहानी में प्रयोग की गई कथावस्तु या वह वस्तु जो कथा में विषय के रूप में चुनी गई हो। कहानी में वस्तुविन्यास अथवा कथानक का निबंधन सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। घटना-प्रधान कहानियों में तो कथानक का ही विशेष महत्त्व है, परंतु अन्य प्रकार की कहानियों में भी इसका महत्त्व कम नहीं है। वस्तुतः कथानक के बिना कहानी का कोई अस्तित्व ही नहीं है।

आज की कहानी में मनःस्थितियों पर पड़ने वाले प्रभाव को महत्त्व दिया जाने लगा है, कथानक का निषेध तो नहीं हो सका, पर उसका हास अवश्य परिलक्षित होता है। इस प्रकार कथानक का आधार आज की कहानी से क्षीण होता जा रहा है। यद्यपि कथानक के सूत्र किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रहते हैं। परंतु ऐसी कहानियाँ बहुत प्रभावोत्पादक नहीं होती हैं।

कहानी का कथानक प्रभावोत्पादक, विचारोत्तेजक एवं जीवन के यथार्थ से संबद्ध होना चाहिए। कहानी का स्वरूप निश्चित करते समय कहानीकार को युग-बोध और भाव-बोध दोनों दृष्टियों से विचार करना चाहिए। कुछ ऐसी कहानियाँ मिलती हैं, जिसमें दुहरे कथानक होते हैं। नई कहानियों में यह प्रकृति विशेष रूप से मिलेगी। ऐसी कहानियों में प्रभाव खंडित नहीं होता, कहानी के मूल भाव के अनुसार ही संचरना की जाती है।

कथावस्तु में क्रमबद्धता के साथ-साथ जिज्ञासा एवं चमत्कार का भी विशेष महत्त्व है। तिलस्म, जासूसी आदि कहानियों में चमत्कारपूर्ण योजना ही प्रधान हुआ करती है। कथानक में द्वंद्व और संघर्ष का स्थान भी महत्वपूर्ण है। कभी-कभी द्वंद्व चित्रण ही कहानी का मुख्य आधार होता है। यह द्वंद्व भौतिक भी हो सकता है और मानसिक भी। द्वंद्व से कथानक में नाटकीयता और रोचकता उत्पन्न होती है।

कथानक में कल्पना संभाव्य और असंभाव्य दोनों रूपों में दिखाई पड़ती है। लेखक कहानी के कथानक को ऐसे प्रस्तुत करता है जिससे कारण, कार्य और परिणाम के द्वारा कहानी को प्रभावोत्पादक बनाकर यथार्थ धरातल पर प्रस्तुत कर सके। इसके लिए वह पूरे कथानक को कई परिच्छेदों में विभाजित करता है।

कथानक में आदि, मध्य और अंत—तीन महत्वपूर्ण स्थल हैं। आदि से अंत तक कहानी की एकोन्मुखता बनी रहती है। आदि में वह पीठिका तैयार करनी पड़ती है, जिस पर कहानी का अंत प्रतिष्ठित होता है। कहानी का मध्य-बिंदु वह स्थल है, जहाँ कहानी अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर पाठक की उत्सुकता को तीव्र एवं संवेदनशील बनाती है। कहानी को वास्तविक आकार मध्य में ही मिलता है। कभी-कभी कहानी में मध्य बिंदु का पता नहीं लगता और कथानक की चरम सीमा अंत में व्यक्त होती है। इस प्रकार कथानक का समापन स्थल अत्यंत महत्वपूर्ण है। कहानी का अंत लघु, सांकेतिक और स्पष्ट होना आवश्यक है। लेखक को यह ध्यान देना होता है कि कहानी के अंत में उद्देश्य परिलक्षित हो रहा हो।

**पात्र एवं चरित्र चित्रण—** प्रत्येक कहानी में पात्र कथानक का संचालन सजीव ढंग से करते हैं। कहानी में पात्रों की संख्या सीमित होती है। कई बार तो सिर्फ एक-दो पात्रों पर ही सारा कथानक घूमता रहता है। विशेषतः चरित्रप्रधान कहानियों में एक ही चरित्र को केंद्र में रखकर कथानक लिखा जाता है।

कहानी के मूल भाव के अनुसार ही पात्रों के व्यक्तित्व, चरित्र एवं प्रवृत्तियों का निर्धारण होता है।

कहानी के पात्र तथा कथावस्तु एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। दोनों मिलकर ही कहानी के मूलभाव को व्यक्त करते हैं। कुछ पात्र सामान्य होते हैं, कुछ प्रतीकात्मक। सामान्य पात्रों के भी दो वर्ग होते हैं—कुछ वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और कुछ व्यक्ति का। कहानी लघु प्रसार वाली होती है। इसमें नायक के चरित्र को अधिक उभार कर प्रस्तुत किया जाता है। दूसरे पात्रों के चरित्र की प्रमुखता होने पर कहानी का मूल भाव खो जाता है। कहानी में उपन्यास की भाँति चित्रांकन में विविधता नहीं होती है। इसमें जीवन के अथवा चरित्र के किसी एक पक्ष की झलक दिखाई पड़ती है। किसी एक विशेष परिस्थिति में रखकर नायक की किसी एक प्रवृत्ति का उद्घाटन करना ही कहानीकार का मुख्य उद्देश्य होता है। पात्र के चरित्र के चित्रांकन की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि चरित्र यथार्थ और गतिशील हो। वर्तमान समय में पाठक की इच्छा होती है कि वह चरित्र के मनोलोक में प्रवेश कर उसके अंतर्जगत की झाँकी प्राप्त कर सके।

**कथोपकथन अथवा संवाद—** कहानी के पारस्परिक वार्तालाप को कथोपकथन या संवाद की संज्ञा दी जाती है। कथोपकथन के जरिए कथाप्रवाह को बनाए रखते हुए कहानी के पात्रों की विशेषताएँ भी उद्घाटित होती हैं। कथोपकथन संक्षिप्त, पूर्ण नियंत्रित, चमत्कारपूर्ण होना चाहिए। कहानी के आरंभ में जिज्ञासा और कुतूहल को जगाने के लिए बहुधा नाटकीय संवादों की योजना करनी पड़ती है।

परिस्थिति एवं पात्रों को जोड़ने के लिए और आंतरिक भावों एवं मनोवृत्तियों के उद्घाटन के लिए संवाद की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। संवाद छोटे-छोटे तथा आवश्यकतानुसार ही होने चाहिए। क्योंकि आवश्यकता से अधिक लंबे संवाद नीरसता पैदा करते हैं।

चरित्र प्रधान कहानियों में व्यक्तित्व और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय देने के लिए कथोपकथन महत्वपूर्ण है। पात्र के चरित्र की विशेषताएँ वार्तालाप के द्वारा ही प्रकट होती हैं। संवाद की भाषा स्थितियों और पात्रों के अनुकूल होनी चाहिए। व्यावहारिक तथा भावनात्मक स्थलों के अनुसार ही वाक्य-रचना होनी चाहिए। मुहावरों का सामाजिक एवं प्रसंगानुकूल प्रयोग भी कहानीकार के लिए आवश्यक है। जहाँ लेखक का उद्देश्य पात्र के मानसिक अंतर्द्वंद्व को दिखाना हो तो ऐसी कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए मनोवैज्ञानिक पद्धति का सहारा लेना होगा। इस तरह की कहानियों को हम मनोवैज्ञानिक कहानी कहते हैं। जैनेंद्र, अज्ञेय, तथा इलाचंद जोशी ने ऐसी ही मनोवैज्ञानिक कहानियाँ लिखी हैं।

**वातावरण या देशकाल**—वातावरण या देशकाल से तात्पर्य है- कहानी में वर्णित घटनाओं का संबंध किस काल (समय) से है, कहाँ घटित हो रही है उस समय का समाज तथा वातावरण (परिवेश) कैसा है। कहानी में सजीवता व स्वाभाविकता लाने के लिए आवश्यक है कि कहानी में वर्णित घटनाओं को उसके वास्तविक परिवेश में प्रस्तुत करें। प्रकृति, ऋतु, दृश्य आदि का अत्यंत संक्षिप्त एवं सांकेतिक रूप में वर्णन से घटना को सजीव एवं यथार्थ बनाया जाता है। उदाहरण के लिए यदि कहानी का परिवेश ऐतिहासिक है तो उसमें कोई ऐसी चीज वर्णित नहीं होनी चाहिए जो उस काल विशेष में अस्वाभाविक लगे। कहानी का परिवेश जितना स्वाभाविक और वास्तविकता के नजदीक होगा, कहानी में उतनी ही विश्वसनीयता और यथार्थपरकता नजर आएगी। प्रेमचंद की 'बलिदान' तथा जयशंकर प्रसाद की 'आकाशदीप' कहानी में देशकाल तथा वातावरण अनुकूल होने से कहानी प्रभावोत्पादक है। श्रेष्ठ रचनाकार कहानी की रचना करते समय परिवेश के चित्रण पर विशेष ध्यान देते हैं। जैसे प्रेमचंद की कहानियों में गाँव का चित्रण।

वातावरण के प्रस्तुतीकरण की दो पद्धतियाँ हैं। पहले प्रकार में विषयारंभ प्रकृति-चित्रण से किया जाता है। इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण में कहानी का प्रतिपाद्य संपूर्णतः ध्वनित हो जाता है। प्रकृति के खंड-चित्रों के विधान के द्वारा कथानक के अर्थ की विवृति होती है और प्रतीक पद्धति से कथानक का धरातल रसात्मक हो जाता है। प्रकृति का आधार पात्रों की स्थिति को प्राणमय बना देता है।

दूसरे प्रकार की पृष्ठभूमि में देशकाल और परिस्थिति का आंचलिक और स्थानीय रंग उपस्थित किया जाता है। वातावरण कहानी को प्रभावी बनाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। करुणा, आश्चर्य, प्रेम, क्रोध, तथा वात्सल्य आदि की सरसता वातावरण के प्रभाव से ही मुखरित होती है। वातावरण प्रधान कहानियाँ बहुत ही सजीव एवं कल्पनाशील लगती हैं।

**भाषा शैली**—कहानीकार की रचना की सारी विशेषताएँ भाषा के माध्यम से ही हमारे सामने आती हैं। भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। काल और पात्र की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए भाषा में स्वाभाविकता अपरिहार्य है। भाषा जितनी सरल व स्पष्ट होगी कहानी उतनी ही प्रभावी होगी।

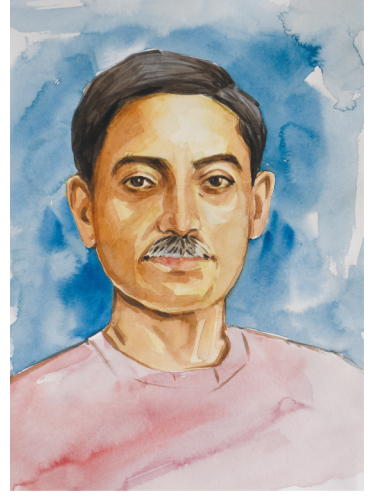
कहानी को प्रभावी बनाने के लिए शब्दों के चयन, चित्रात्मकता, प्रवाहमयता, उपयुक्तता पर विशेष ध्यान देना होगा। रचनाकार की कलात्मक संवेदना पर ही शब्दों का चयन निर्भर करता है। कहानी का आकार लघु होता है, इसलिए संदर्भों को स्पष्ट करते समय सांकेतिक भाषा का प्रयोग आवश्यक हो जाता है।

**उद्देश्य**—प्रत्येक कहानी के मूल में कोई न कोई केंद्रीय भाव अवश्य छिपा रहता है, जो कहानी का आधार बनता है। एक ही घटना पर कई कहानियाँ लिखी जा सकती हैं, परंतु प्रत्येक कहानी का दृष्टिकोण, कथावस्तु तथा उद्देश्य अलग हो जाता है। कहानी का केंद्रीय भाव ही कहानी का मुख्य उद्देश्य होता है, जिसके लिए कहानी की रचना की जाती है। उदाहरण के लिए प्रेमचंद युग में आदर्श की स्थापना और शाश्वत सत्य का उद्घाटन कहानी का मुख्य उद्देश्य बन गया था।



# प्रेमचंद

प्रेमचंद का हिंदी कथा साहित्य में शीर्ष स्थान है। उनका जन्म वाराणसी जिले के 'लमही' नामक ग्राम में सन् 1880 ई० में हुआ था। उनका वास्तविक नाम धनपत राय था। प्रेमचंद का बचपन कठिनाइयों में बीता। इंटर की परीक्षा में सफलता प्राप्त करने से पूर्व उन्होंने एक स्कूल में अध्यापन किया। उनका विवाह शिवरानी देवी से हुआ था। सन् 1919 ई० में उन्होंने बी० ए० की परीक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण किया। उन्होंने अध्यापक और उप-निरीक्षक के रूप में भी कार्य किया। प्रेमचंद उर्दू में 'नवाबराय' के नाम से लिखते थे। उन्हें 'प्रेमचंद' नाम 'जमाना' पत्रिका के संपादक दयानारायन निगम ने दिया था। उनका निधन सन् 1936 ई० में हो गया।



(सन् 1880—1936 ई.)

प्रेमचंद उपन्यासकार, कहानीकार, संपादक, अनुवादक, नाटककार, निबंधकार आदि के रूप में प्रतिष्ठित हुए। प्रेमचंद की कहानियों का संसार बहुत व्यापक एवं विविधता पूर्ण है। उन्होंने रवींद्रनाथ टैगोर की कई कहानियों के उर्दू अनुवाद प्रकाशित कराए तथा कई मौलिक कहानियाँ भी उर्दू में लिखी। प्रेमचंद ने लगभग 300 कहानियाँ लिखी हैं, उनके कुल नौ कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं— 'सप्त सरोज', 'नवनिधि', 'प्रेमपूर्णिमा', 'प्रेम पचीसी', 'प्रेम प्रतिमा', 'प्रेमद्वादशी', 'कफन', 'समर यात्रा', 'मानसरोवर' (भाग 1-8)। उनके प्रमुख उपन्यास हैं— 'सेवासदन', 'प्रेमाश्रम', 'निर्मला', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान', 'मंगलसूत्र' (अपूर्ण)। उन्होंने 'संग्राम', 'कर्बला', 'प्रेम की वेदी' जैसे नाटक भी लिखे।

संपादन, जीवनी, निबंध, अनुवाद तथा बालोपयोगी साहित्य में भी उनका योगदान महत्वपूर्ण है।

प्रेमचंद का कथा साहित्य मानव-प्रकृति, मानव इतिहास तथा मानवीयता, यथार्थ, हृदयस्पर्शी एवं कलापूर्ण चित्रों से पूरिपूर्ण है। उनकी कथावस्तु धरातल तथा यथार्थ से जुड़ी, भावनाओं, चिंतन-मनन तथा जीवन संघर्षों पर आधारित है। प्रेमचंद के यहाँ जो यथार्थ आता है वह आदर्शोन्मुखी है, इसीलिए प्रेमचंद के साहित्य को 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' कहा जाता है।

प्रेमचंद की भाषा स्वाभाविक जन भाषा है। उनकी भाषा में व्यावहारिकता एवं साहित्यिकता का अद्भुत समन्वय है तथा शैली सरल, रोचक, प्रवाह एवं प्रभावपूर्ण है। कहानी का कथानक पाठक के हृदय में अनुकूल वातावरण एवं परिस्थितियों के कलात्मक चित्र की अमिट छाप छोड़ते हैं।

## बलिदान

(1)

मनुष्य की आर्थिक अवस्था का सबसे ज्यादा असर उसके नाम पर पड़ता है। मौजे बेला के मँगरू ठाकुर जब से कान्सटेबल हो गए हैं, उनका नाम मंगलसिंह हो गया है, अब उन्हें कोई मँगरू कहने का साहस नहीं कर सकता। कल्लू अहीर ने जबसे हलके के थानेदार साहब से मित्रता कर ली है और गाँव का मुखिया हो गया है, उसका नाम कालिकादीन हो गया है। अब उसे कोई कल्लू कहें तो आँखें लाल-पीली करता है। इसी प्रकार हरखचंद्र कुरमी अब हरखू हो गया है। आज से बीस साल पहले उसके यहाँ शक्कर बनती थी, कई हल की खेती होती थी और कारोबार खूब फैला हुआ था। लेकिन विदेशी शक्कर की आमदनी ने उसे मटियामेट कर दिया। धीरे-धीरे कारखाना टूट गया, जमीन टूट गई, ग्राहक टूट गए और वह भी टूट गया। सत्तर वर्ष का बूढ़ा जो एक तकिएदार माचे पर बैठा हुआ नारियल पिया करता, अब सिर पर टोकरी लिए खाद फेंकने जाता है। परंतु उसके मुख पर अब भी एक प्रकार की गंभीरता, बातचीत में अब भी एक प्रकार की अकड़, चाल-ढाल में अब भी एक प्रकार का स्वाभिमान भरा हुआ है। इस पर काल की गति का प्रभाव नहीं पड़ा। रस्सी जल गई, पर बल नहीं टूटा। भले दिन मनुष्य के चरित्र पर, सदैव के लिए अपना चिह्न छोड़ जाते हैं। हरखू के पास अब केवल पाँच बीघा जमीन है केवल दो बैल हैं। एक ही हल की खेती होती है।

लेकिन पंचायतों में, आपस की कलह में, उसकी सम्मति अब भी सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। वह जो बात कहता है, बेलाग कहता है और गाँव के अनपढ़े उसके सामने मुँह नहीं खोल सकते।

हरखू ने अपने जीवन में कभी दवा नहीं खाई थी। वह बीमार जरूर पड़ता, कुआर मास में मलेरिया से कभी न बचता था। लेकिन दस-पाँच दिन में वह बिना दवा खाए ही चंगा हो जाता था। इस वर्ष भी कार्तिक में बीमार पड़ा और यह समझकर कि अच्छा तो हो ही जाऊँगा, उसने कुछ परवाह न की। परंतु अबकी ज्वर मौत का परवाना लेकर चला था। एक सप्ताह बीता, दूसरा सप्ताह बीता, पूरा महीना बीत गया; पर हरखू चारपाई से न उठा। अब उसे दवा की जरूरत मालूम हुई। उसका लड़का गिरधारी कभी नीम की सींके पिलाता, कभी गुर्च का सत, कभी गदा पूरना की जड़। पर इन औषधियों से कोई फायदा न होता था। हरखू को विश्वास हो गया कि अब संसार से चलने के दिन आ गए।

एक दिन मंगल सिंह उसे देखने गए, बेचारा टूटी खाट पर पड़ा राम-नाम जप रहा था। मंगल सिंह ने कहा—“बाबा, बिना दवा खाए अच्छा न होंगे; कुनैन क्यों नहीं खाते?” हरखू ने उदासीन भाव से कहा—तो लेते आना।

दूसरे दिन कालिकादीन ने आकर कहा— बाबा, दो-चार दिन कोई दवा खा लो। अब तुम्हारी जवानी की देह थोड़े है कि बिना दवा-दर्पण के अच्छे हो जाओगे ?

हरखू ने उसी मंद भाव से कहा— “तो लेते आना।” लेकिन रोगी को देख आना एक बात है, दवा लाकर उसे देना दूसरी बात है। पहली बात शिष्टाचार से होती है, दूसरी सच्ची संवेदना से। न

मंगलसिंह ने खबर ली, न कालिकादीन ने, न किसी तीसरे ही ने। हरखू दालान में खाट पर पड़ा रहता। मंगलसिंह कभी नजर आ जाते तो कहता—भैया, वह दवा नहीं लाए ? मंगलसिंह कतराकर निकल जाते। कालिकादीन दिखाई देते तो उनसे भी यही प्रश्न करता। लेकिन वह भी नजर बचा जाते। या तो उसे यह सूझता ही नहीं था कि दवा पैसों के बिना नहीं आती, या वह पैसों को जान से भी प्रिय समझता था, अथवा वह जीवन से निराश हो गया था। उसने कभी दवा के दाम की बात नहीं की। दवा न आई। उसकी दशा दिनों-दिन बिगड़ती गई। यहाँ तक कि पाँच महीने कष्ट भोगने के बाद उसने ठीक होली के दिन शरीर त्याग दिया। गिरधारी ने उसका शव बड़ी धूमधाम से निकाला। क्रिया-कर्म बड़े हौसले से किया। कई गाँव के ब्राह्मणों को निमंत्रित किया।

बेला में होली न मनायी गई, न अबीर और न गुलाल उड़ी, न डफली बजी, न भंग की नालियाँ बहीं। कुछ लोग मन में हरखू को कोसते जरूर थे कि इस बुढ़े को आज ही मरना था, दो-चार दिन बाद मरता।

लेकिन इतना निर्लज्ज कोई न था कि शोक में आनंद मनाता। वह शहर नहीं था, जहाँ कोई किसी के काम में शरीक नहीं होता, जहाँ पड़ोसी के रोने-पीटने की आवाज हमारे कानों तक नहीं पहुँचती।

## (2)

हरखू के खेत गाँव वालों की नजर पर चढ़े हुए थे। पाँच बीघा जमीन कुएँ के निकट, खाद-पाँस से लदी हुई मेड़-बाँध से ठीक थी। उनमें तीन-तीन फसलें पैदा होती थीं। हरखू के मरते ही उन पर चारों ओर से धावे होने लगे। गिरधारी तो क्रिया-कर्म में फँसा हुआ था। उधर गाँव के मनचले किसान लाला ओंकारनाथ को चैन न लेने देते थे, नजराने की बड़ी-बड़ी रकमें पेश हो रही थीं। कोई साल भर का लगान पेशगी देने को तैयार था, कोई नजराने की दूनी रकम का दस्तावेज लिखने को तुला हुआ था। लेकिन ओंकारनाथ सबको टालते रहते थे। उनका विचार था कि गिरधारी के बाप ने इन खेतों को बीस वर्ष तक जोता है, इसलिए गिरधारी का हक सबसे ज्यादा है। वह अगर दूसरों से कम भी नजराना दे तो खेत उसी को देने चाहिए। अस्तु, जब गिरधारी क्रिया-कर्म से निवृत्त हो गया और चैत का महीना भी समाप्त होने आया, तब जमींदार साहिब ने गिरधारी को बुलाया और उससे पूछा—खेतों के बारे में क्या कहते हो ? गिरधारी ने रोकर कहा—सरकार, इन्हीं खेतों का ही तो आसरा है, जोतूँगा नहीं तो क्या करूँगा ?

ओंकारनाथ—नहीं, जरूर जोता, खेत तुम्हारे हैं। मैं तुमसे छोड़ने को नहीं कहता हूँ। हरखू ने उसे बीस साल तक जोता। उन पर तुम्हारा हक है। लेकिन तुम देखते हो अब जमीन की दर कितनी बढ़ गई है। तुम आठ रुपए बीघे पर जोतते थे, मुझे 10 रु० मिल रहे हैं और नजराने के रुपए सौ अलग। तुम्हारे साथ रियायत करके लगान वही रखता हूँ; पर नजराने के रुपए तुम्हें देने पड़ेंगे।

गिरधारी—सरकार, मेरे घर में तो इस समय रोटियों का भी ठिकाना नहीं है। इतने रुपये कहाँ से लाऊँगा ? जो कुछ जमा-जथा थी, दादा के काम में उठ गई। अनाज खलिहान में है। लेकिन दादा के बीमार हो जाने से उपज भी अच्छी नहीं हुई। रुपये कहाँ से लाऊँ ?



ओंकारनाथ—यह सच है लेकिन मैं इससे ज्यादा रियायत नहीं कर सकता।

गिरधारी—नहीं सरकार, ऐसा न कहिए। नहीं तो हम बिना मारे मर जाएँगे। आप बड़े होकर कहते हैं तो बैल-बछिया बेचकर पचास रुपया ला सकता हूँ। इससे बेसी की हिम्मत नहीं पड़ती।

ओंकारनाथ चिढ़कर बोले—तुम समझते होगे कि हम ये रुपए लेकर घर में रख लेते हैं और चैन की बंशी बजाते हैं। लेकिन हमारे ऊपर जो कुछ गुजरती है, हम ही जानते हैं। कहीं यह चंदा, कहीं वह चंदा। कहीं यह नजर, कहीं वह नजर, कहीं यह इनाम, कहीं वह इनाम। इनके मारे कचूमर निकल जाता है। बड़े दिन में सैकड़ों रुपए डालियों में उड़ जाते हैं। जिसे डाली न दो, वही मुँह फुलाता है। जिन चीजों के लिए लड़के तरस कर रह जाते हैं, उन्हें बाहर से मँगवाकर डालियों में सजाता हूँ। उस पर कभी कानूनगो आ गए, कभी तहसीलदार, कभी डिप्टी साहब का लश्कर आ गया। सब मेरे मेहमान होते हैं। अगर न करूँ तो नक्कू बनूँ और सबकी आँखों में काँटा बन जाऊँ। साल में हजार-बारह सौ मोदी को इसी रसद खुराक के मद में देने पड़ते हैं। यह सब कहाँ से आवे ? बस, यही जी चाहता है कि छोड़कर निकल जाऊँ। लेकिन हमें तो परमात्मा ने इसीलिए बनाया है कि एक से रुपया सता कर लें और दूसरे को रो-रोकर दें, यही हमारा काम है। तुम्हारे साथ इतनी रियायत कर रहा हूँ। लेकिन तुम इतनी रियायत पर भी खुश नहीं होते तो हरि इच्छा। नजराने में एक पैसे की भी रियायत न होगी। अगर एक हफ्ते के अंदर रुपए दाखिल करोगे तो खेत जोतने पाओगे नहीं तो नहीं; मैं कोई दूसरा प्रबंध कर दूँगा।

### (3)

गिरधारी उदास होकर घर आया। 100 रु० का प्रबंध करना उसके काबू के बाहर था। सोचने लगा, अगर दोनों बैल बेच दूँ तो खेत ही लेकर क्या करूँगा। घर बेचूँ तो यहाँ लेने वाला ही कौन है ? और फिर बाप-दादों का नाम डूबता है। चार-पाँच पेड़ हैं लेकिन उन्हें बेच कर 25 रु० या 30 रु० से अधिक न मिलेंगे। उधार लूँ तो देता कौन है ? अभी बनिये के 50 रु० सिर पर चढ़े हैं। वह एक पैसा भी न देगा। घर में गहने भी तो नहीं हैं। नहीं उन्हीं को बेचता। ले-देकर एक हँसली बनवाई थी, वह भी बनिये के घर पड़ी हुई है। साल भर हो गया, छुड़ाने की नौबत न आई। गिरधारी और उसकी स्त्री सुभागी दोनों ही इसी चिंता में पड़े रहते, लेकिन कोई उपाय न सूझता था। गिरधारी को खाना-पीना अच्छा न लगता, रात को नींद न आती। खेतों के निकलने का ध्यान आते ही उनके हृदय में हूक-सी उठने लगती। हाय! वह भूमि जिसे हमने वर्षों जोता, जिसे खाद से पाटा, जिसमें मेड़ें रखीं, जिसकी मेड़ें बनाई उसका मजा अब दूसरा उठाएगा?

ये खेत गिरधारी के जीवन के अंश हो गए थे। उनकी एक-एक अंगुल भूमि उसके रक्त से रँगी हुई थी। उनका एक-एक परमाणु उसके पसीने से तर हो रहा था।

उनके नाम उसकी जिहवा पर उसी तरह आते थे जिस तरह अपने तीनों बच्चों के। कोई चौबीसों था, कोई बाइसों था, कोई नाले वाला, कोई तलैया वाला। इन नामों के स्मरण होते ही खेतों का चित्र उसकी आँखों के सामने खिंच जाता था। वह इन खेतों की चर्चा इस तरह करता मानों वे सजीव हैं।



मानों उसके भले-बुरे के साथी हैं। उसके जीवन की सारी आशाएँ, सारी इच्छाएँ, सारे मनसूबे, सारी मन की मिठाइयाँ, सारे हवाई किले इन्हीं खेतों पर अवलंबित थे। इनके बिना वह जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता था और वे ही अब हाथ से निकले जाते हैं, वह घबराकर घर से निकल जाता और घंटों उन्हीं खेतों की मेंड़ों पर बैठा हुआ रोता, मानों उनसे विदा हो रहा हो। इस तरह एक सप्ताह बीत गया और गिरधारी रुपए का कोई बंदोबस्त न कर सका। आठवें दिन उसे मालूम हुआ कि कालिकादीन ने 100 रुपए नजराने देकर 10 रु० बीघे पर खेत ले लिए। गिरधारी ने एक ठंडी साँस ली। एक क्षण के बाद वह दादा का नाम लेकर बिलख-बिलखकर रोने लगा। उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला। ऐसा मालूम होता था मानों हरखू आज ही मरा।

#### (4)

लेकिन सुभागी यों चुपचाप बैठने वाली स्त्री न थी। वह क्रोध से भरी हुई कालिकादीन के घर गई और उसकी स्त्री को खूब लथेड़ा-कल का बानी आज का सेठ, खेत जोतने चले हैं देखें, कौन मेरे खेत में हल ले जाता है ? अपना और उसका लोहू एक कर दूँ। पड़ोसियों ने उसका पक्ष लिया, सब तो हैं, आपस में यह चढ़ा-ऊपरी नहीं चाहिए। नारायण ने धन दिया है, तो क्या गरीबों को कुचलते फिरेंगे ? सुभागी ने समझा, मैंने मैदान मार लिया। उसका चित्त बहुत शांत हो गया। किंतु वही वायु जो पानी में लहरें पैदा करती हैं, वृक्षों को जड़ से उखाड़ डालती हैं। सुभागी तो पड़ोसियों की पंचायत में अपने दुखड़े रोती और कालिकादीन की स्त्री से छेड़-छेड़ लड़ती। इधर गिरधारी अपने द्वार पर बैठा हुआ सोचता, अब मेरा क्या हाल होगा ? अब वह जीवन कैसे कटेगा ? ये लड़के किसके द्वार पर जाएँगे ? मजदूरी का विचार करते ही उसका हृदय व्याकुल हो जात। इतने दिनों तक स्वाधीनता और सम्मान का सुख भोगने के बाद अधम चाकरी की शरण लेने के बदले वह मर जाना अच्छा समझता था। वह अब तक गृहस्थ था, उसकी गणना गाँव के भले आदमियों में थी, उसे गाँव के मामले में बोलने का अधिकार था। उसके घर में धन न था, पर मान था। नाई, बढ़ई, कुम्हार, पुरोहित, भाट, चौकीदार, ये सब उसका मुँह ताकते थे। अब यह मर्यादा कहाँ ! अब कौन उसकी बात पूछेगा ? कौन उसके द्वारा पर आवेगा ? अब उसे किसी के बराबर बैठने का, किसी के बीच में बोलने का हक नहीं रहा। अब उसे पेट के लिए दूसरों की गुलामी करनी पड़ेगी। अब पहर रात रहे कौन बैलों को नाँद में लगावेगा ? वह दिन अब कहाँ, जब गीत गा-गाकर हल चलाता था। चोटी का पसीना एड़ी तक आता था, पर जरा भी थकावट न आती थी। अपने लहलहाते हुए खेतों को देखकर फूला न समाता था। खलिहान में अनाज का ढेर सामने रखे हुए अपने को राजा समझता था। अब अनाज के टोकरे भर-भर कर कौन लावेगा ?

अब खेती कहाँ ? बखार कहाँ ? यही सोचते-सोचते गिरधारी की आँखों से आँसू की झड़ी लग जाती थी। गाँव के दो-चार सज्जन, जो कालिकादीन से जलते थे, कभी-कभी गिरधारी को तसल्ली देने आया करते थे, पर वह उनसे भी खुलकर न बोलता। उसे मालूम होता था कि मैं सबकी नजर में गिर गया हूँ।

अगर कोई समझाता कि तुमने क्रिया-कर्म में व्यर्थ इतने रुपए उड़ा दिए, तो उसे बहुत दुःख होता। वह अपने उस काम पर जरा भी न पछताता। मेरे भाग्य में जो कुछ लिखा है वह होगा, पर दादा के ऋण से तो उऋण हो गया। उन्होंने अपनी जिंदगी में चार को खिलाकर खाया। क्या मरने के पीछे उन्हें पिंडे-पानी को तरसाता?

इस प्रकार तीन मास बीत गए और आषाढ़ आ पहुँचा। आकाश में घटाएँ आई, पानी गिरा, किसान हल-जुए ठीक करने लगे। बढ़ई हलों की मरम्मत करने लगा। गिरधारी पागल की तरह कभी घर के भीतर जाता, कभी बाहर आता, अपने हलों को निकाल देखता; इसकी मुठिया टूट गई है, इसकी फाल ढीली हो गई है, जुए में सैला नहीं है। यह देखते-देखते वह एक क्षण अपने को भूल गया। दौड़ा हुआ, बढ़ई के यहाँ गया और बोला – ‘रज्जू’ मेरे हल भी बिगड़े हुए हैं, चलो बना दो। रज्जू ने उसकी ओर करुणभाव से देखा और अपना काम करने लगा। गिरधारी को होश आ गया; नींद से चौंक पड़ा, ग्लानि से उसका सिर झुक गया, आँखें भर आई। चुपचाप घर चला आया।

गाँव में चारों ओर हलचल मची हुई थी। कोई सन के बीज खोजता फिरता था, कोई जमींदार के चौपाल के धान के बीज लिए आता था, कहीं सलाह होती थी, किस खेत में क्या बोना चाहिए, कहीं चर्चा होती थी कि पानी बहुत बरस गया, दो-चार दिन ठहर कर बोना चाहिए। गिरधारी ये बातें सुनता और जलहीन मछली की तरह तड़पता था।

### (5)

एक दिन संध्या समय गिरधारी खड़ा अपने बैलों को खुजला रहा था कि मंगल सिंह आए और इधर-उधर की बातें करके बोले—गोई को बाँधकर कब तक खिलाओगे ? निकाल क्यों नहीं देते ? गिरधारी ने मलिन-भाव से कहा—हाँ, कोई गाहक आवे तो निकाल दूँ।

मंगलसिंह—एक गाहक तो हमी हैं, हमी को दे दो।

गिरधारी अभी कुछ उत्तर न देने पाया था कि तुलसी बनिया और गरजकर बोला—गिरधर, तुम्हें रुपए देने हैं कि नहीं, वैसा कहो। तीन महीने से हीला-हवाली करते चले आते हो। अब कौन खेती करते हो कि तुम्हारी फसल को अगोरे बैठे रहें।

गिरधारी ने दीनता से कहा—साह, जैसे इतने दिनों माने हो आज और मान जाओ। कल तुम्हारी एक-एक कौड़ी चुका दूँगा।

मंगल सिंह और तुलसी ने इशारे से बातें कीं और तुलसी भुनभुनाता हुआ चला गया। तब गिरधारी मंगलसिंह से बोला—तुम इन्हें ले लो तो घर के घर में ही रह जायँ। कभी-कभी आँख से देख तो लिया करूँगा।

मंगल सिंह—मुझे अभी तो ऐसा कोई काम नहीं, लेकिन घर पर सलाह करूँगा।

गिरधारी—मुझे तुलसी के रुपए देने हैं, नहीं तो खिलाने को तो भूसा है।

मंगल सिंह- यह बड़ा बदमाश है, कहीं नालिष न कर दे।

सरल हृदय गिरधारी धमकी में आ गया। कार्य-कुशल मंगलसिंह को सस्ता सौदा करने का यह अच्छा सुअवसर मिला। 80 रु० की जोड़ी 60 रु० में ठीक कर ली।

गिरधारी ने अबतक बैलों को न जाने किस आशा से बाँध कर खिलाया था। आज आशा का वह कल्पित सूत्र भी टूट गया। मंगलसिंह गिरधारी की खाट पर बैठे रुपए गिन रहे थे और गिरधारी बैलों के पास विषादमय नेत्रों से उनके मुँह की ओर ताक रहा था। आह ! यह मेरे खेतों के कमाने वाले, मेरे जीवन के आधार, मेरे अन्नदाता, मेरी मान-मर्यादा की रक्षा करने वाले, जिनके लिए पहर रात से उठकर छाटी काटता था, जिनके खली-दाने की चिंता अपने खाने से ज्यादा रहती थी, जिनके लिए सारा घर दिनभर हरियाली उखाड़ा करता था। ये मेरी आशा की दो आँखें, मेरे इरादे के दो तारे, मेरे अच्छे दिनों के दो चिह्न, मेरे दो हाथ, अब मुझसे विदा हो रहे हैं।

जब मंगल सिंह ने रुपए गिनकर रख दिए और बैलों को ले चले तब गिरधारी उनके कंधों पर सिर रखकर खूब फूट-फूट कर रोया। जैसे कन्या मायके से विदा होते समय माँ-बाप के पैरों को नहीं छोड़ती, उसी तरह गिरधारी इन बैलों को न छोड़ता था। सुभागी भी दालान में खड़ी रो रही थी और छोटा लड़का मंगलसिंह को एक बाँस की छड़ी से मार रहा था।

रात को गिरधारी ने कुछ नहीं खाया। चारपाई पर पड़ा रहा ! प्रातःकाल सुभागी चिलम भरकर ले गई तो वह चारपाई पर न था। उसने समझा कहीं गए होंगे। लेकिन जब दो-तीन घड़ी दिन चढ़ आया और वह न लौटा तो उसने रोना-धोना शुरू किया। गाँव के लोग जमा हो गए, चारों ओर खोज होने लगी, पर गिरधारी का पता न चला।

### (6)

संध्या हो गई। अँधेरा छा रहा था। सुभागी ने दिया जलाकर गिरधारी के सिरहाने रख दिया और बैठी द्वार की ओर ताक रही थी कि सहसा उसे पैरों की आहट मालूम हुई। सुभागी का हृदय धड़क उठा। वह दौड़कर बाहर आई और इधर-उधर ताकने लगी। उसने देखा कि गिरधारी बैलों की नाँद के पास सिर झुकाए खड़ा है।

सुभागी बोल उठी-घर जाओ, वहाँ खड़े क्या कर रहे हो, आज सारे दिन कहाँ रहे ? यह कहते हुए वह गिरधारी की ओर चली। गिरधारी ने कुछ उत्तर न दिया। वह पीछे हटने लगा और थोड़ी दूर जाकर गायब हो गया। सुभागी चिल्लायी और मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

दूसरे दिन कालिकादीन हल लेकर अपने नए खेत पर पहुँचे, अभी कुछ अँधेरा था। वह बैलों को हल में लगा रहे थे कि यकायक उन्होंने देखा कि गिरधारी खेत की मेड़ पर खड़ा है, वही मिर्जई, वही पगड़ी, वही सोंटा।

कालिकादीन ने कहा-अरे गिरधारी ! मरदे आदमी, तुम यहाँ खड़े हो और बेचारी सुभागी हैरान हो रही है। कहाँ से आ रहे हो ? यह कहते हुए बैलों को छोड़कर गिरधारी की ओर चले, गिरधारी

पीछे हटने लगा और पीछे वाले कुएँ में कूद पड़ा। कालिकादीन ने चीख मारी और हल-बैल वहीं छोड़ कर भागा। सारे गाँव में शोर मच गया और लोग नाना प्रकार की कल्पनाएँ करने लगे। कालिकादीन को गिरधारीवाले खेतों में जाने की हिम्मत न पड़ी।

गिरधारी को गायब हुए 6 महीने बीत चुके हैं। उसका बड़ा लड़का अब एक ईंट के भट्ठे पर काम करता है और 20 रु० महीने घर आता है। अब वह कमीज और अंग्रेजी जूता पहनता है; घर में दोनों जून तरकारी पकती है और जौ के बदले गेहूँ खाया जाता है; लेकिन गाँव में उसका कुछ भी आदर नहीं। यह अब मजूर है। सुभागी अब पराएँ गाँव में आए हुए कुत्ते की भाँति दुबकती फिरती है। वह अब पंचायत में नहीं बैठती। वह अब मजूर की माँ है। कालिकादीन ने गिरधारी के खेतों से इस्तीफा दे दिया है, क्योंकि गिरधारी अभी तक अपने खेतों के चारों तरफ मँडराया करता है। अँधेरा होते ही वह पेड़ पर आकर बैठ जाता है और कभी-कभी रात को उधर से उसके रोने की आवाज सुनाई देती है। वह किसी से बोलता नहीं, किसी को छेड़ता नहीं। उसे केवल अपने खेतों को देख कर संतोष होता है। दिया जलने के बाद उधर का रास्ता बंद हो जाता है।

लाला ओंकारनाथ बहुत चाहते हैं कि ये खेत उठ जायँ, लेकिन गाँव के लोग अब उन खेतों का नाम लेते डरते हैं।

## अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. प्रेमचंद एक सफल कहानीकार क्यों हैं ? स्पष्ट कीजिए।
2. प्रेमचंद द्वारा लिखित किसी अन्य कहानियों का संक्षिप्त परिचय लिखिए।
3. 'बलिदान' कहानी का सारांश लिखिए।
4. कहानी कला की दृष्टि से 'बलिदान' कहानी की समीक्षा लिखिए।
5. 'बलिदान' कहानी के प्रमुख-पात्रों का चरित्र-चित्रण लिखिए।
6. 'बलिदान' कहानी का उद्देश्य लिखिए।
7. 'बलिदान' कहानी के आधार पर प्रेमचंद की भाषा-शैली पर लेख लिखिए।
8. 'बलिदान' कहानी के शीर्षक की सार्थकता बताइए।



# जयशंकर प्रसाद

जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 ई. में वाराणसी में हुआ था। उनके पिता का नाम देवीप्रसाद साहु था। वे काशी के प्रसिद्ध क्वींस कालेज में पढ़ने गए, परंतु स्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण आठवीं से आगे नहीं पढ़ पाए। बाद में स्वाध्याय से उन्होंने संस्कृत, हिंदी, फारसी का अध्ययन किया। अपने पैतृक कार्य को करते हुए भी उन्होंने अपने भीतर काव्य प्रेरणा को जीवित रखा। उनका जीवन बहुत सरल था। अत्यधिक श्रम करने तथा जीवन के अंतिम दिनों में यक्ष्मा से पीड़ित रहने के कारण सन् 1937 ई. में उनका निधन हो गया।



(सन् 1889–1937 ई.)

प्रसाद अत्यंत सौम्य, शांत एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे और परनिंदा एवं आत्मस्तुति दोनों से सदा दूर रहते थे। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। मूलतः वे कवि थे, लेकिन उन्होंने नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि अनेक साहित्यिक विधाओं में उच्चकोटि की रचनाओं का सृजन किया। उनकी प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं – ‘चित्राधार’, ‘कानन-कुसुम’, ‘झरना’, ‘आँसू’, ‘लहर’ और ‘कामायनी’। आधुनिक हिंदी की श्रेष्ठतम काव्य-कृति मानी जाने वाली ‘कामायनी’ पर उन्हें हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा ‘मंगलाप्रसाद पारितोषिक’ दिया गया। वे कवि के साथ-साथ सफल नाटककार और कहानीकार थे। ‘आकाशदीप’, ‘आँधी’, ‘इंद्रजाल’, ‘छाया’ और ‘प्रतिध्वनि’ उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं। ‘अजातशत्रु’, ‘चंद्रगुप्त’, ‘स्कंदगुप्त’ और ‘ध्रुवस्वामिनी’ आदि नाटक तथा ‘कंकाल’, ‘तितली’ और ‘इरावती’ (अपूर्ण) उनके उपन्यास हैं।

उनका साहित्य माधुर्य, शक्ति और ओजपूर्ण है। छायावादी कविता की अतिशय काल्पनिकता, सौंदर्य का सूक्ष्म चित्रण, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम और शैली की लाक्षणिकता उनकी कविता की प्रमुख विशेषताएँ उनकी गद्य रचनाओं में भी दिखती हैं। उनकी भाषा पूर्णतः साहित्यिक, परिमार्जित, परिष्कृत, संस्कृतनिष्ठ तत्सम प्रधान है। भाषा प्रवाहयुक्त होते हुए भी शैली सामासिक है। अपने सूक्ष्म भावों को व्यक्त करने के लिए उन्होंने लक्षणा एवं व्यंजना का आश्रय लिया है। इतिहास और दर्शन में उनकी गहरी रुचि थी जो उनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देती है।

# आकाशदीप

(एक)

“बंदी!”

“क्या है ? सोने दो।”

“मुक्त होना चाहते हो ?”

“अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।”

“फिर अवसर न मिलेगा।”

“बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।”

“आँधी आने की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शिथिल हैं।”

“तो क्या तुम भी बंदी हो ?”

“हाँ, धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।”

“शस्त्र मिलेगा ?”

“मिल जाएगा। पोत से संबद्ध रज्जु काट सकोगे ?”

“हाँ।”

समुद्र में हिलोरें उठने लगीं। दोनों बंदी आपस में टकराने लगे। पहले बंदी ने अपने को स्वतंत्र कर लिया। दूसरे का बंधन खोलने का प्रयत्न करने लगा। लहरों के धक्के एक-दूसरे को स्पर्श से पुलकित कर रहे थे। मुक्ति की आशा-स्नेह का असंभावित आलिंगन। दोनों ही अंधकार में मुक्त हो गए। दूसरे बंदी ने हर्षातिरेक से दूसरे का गले से लगा लिया। सहसा उस बंदी ने कहा— “यह क्या? तुम स्त्री हो ?”

“क्या स्त्री होना कोई पाप है ?”— अपने को अलग करते हुए स्त्री ने कहा।

“शस्त्र कहाँ है—तुम्हारा नाम ?”

“चंपा।”

तारक-खचित नील अंबर और नील समुद्र के अवकाश में पवन ऊधम मचा रहा था। अंधकार से मिलकर पवन दुष्ट हो रहा था। समुद्र में आंदोलन था। नौका लहरों में विकल थी। स्त्री सतर्कता से लुढ़कने लगी। एक मतवाले नाविक के शरीर से टकराती हुई सावधानी से उसका कृपाण निकालकर, फिर लुढ़कते हुए, बंदी के समीप पहुँच गई। सहसा पोत से पथ-प्रदर्शन ने चिल्लाकर कहा—“आँधी!”

आपत्तिसूचक तूर्य बजने लगा। सब सावधान होने लगे। बंदी युवक उसी तरह पड़ा रहा। किसी ने रस्सी पकड़ी, कोई पाल खोल रहा था। पर युवक बंदी लुढ़ककर उस रज्जुके पास पहुँचा, जो पोत से संलग्न थी। तारे ढँक गए। तरंगें उद्वेलित हुई, समुद्र गरजने लगा। भीषण आँधी पिशाचिनी के समान नाव को अपने हाथों में लेकर कंदुक-क्रीड़ा और अट्टहास करने लगी।

एक झटके के साथ ही नाव स्वतंत्र थी। उस संकट में भी दोनों बंदी खिलखिलाकर हँस पड़े। आँधी के हाहाकार में उसे कोई न सुन सका।

### (दो)

अनंत जलनिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा। सुनहरी किरणों और लहरों की कोमल सृष्टि मुस्कराने लगी। सागर शांत था। नाविकों ने देखा, पोत का पता नहीं। बंदी मुक्त हैं।

नायक ने कहा—“बुद्धगुप्त! तुमको मुक्त किसने किया ?”

कृपाण दिखाकर बुद्धगुप्त ने कहा—“इसने।”

नायक ने कहा—“तो तुम्हें फिर बंदी बनाऊँगा।”

“किसके लिए ? पोताध्यक्ष मणिभद्र अतल, जल में होगा—नायक! अब इस नौका का स्वामी मैं हूँ।”

“तुम ? जलदस्यु बुद्धगुप्त ? कदापि नहीं।”—चौंककर नायक ने कहा और वह अपना कृपाण टटोलने लगा। चंपा ने इसके पहले उस पर अधिकार कर लिया था। वह क्रोध से उछल पड़ा।

“तो तुम द्वंद्वयुद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाओ; जो विजयी होगा, वह स्वामी होगा।”—इतना कहकर बुद्धगुप्त ने कृपाण देने का संकेत दिया। चंपा ने कृपाण नायक के हाथ में दे दिया।

भीषण घात-प्रतिघात आरंभ हुआ। दोनों कुशल, दोनों त्वरित गतिवाले थे। बड़ी निपुणता से बुद्धगुप्त ने अपना कृपाल दाँतों से पकड़कर अपने दोनों हाथ स्वतंत्र कर लिए। चंपा भय और विस्मय से देखने लगी। नाविक प्रसन्न हो गये परंतु बुद्धगुप्त ने लाघव से नायक का कृपाण वाला हाथ पकड़ लिया और विकट हुँकार से दूसरा हाथ कटि में डाल, उसे गिरा दिया। दूसरे ही क्षण प्रभात की किरणों में बुद्धगुप्त का विजयी कृपाण उसके हाथों में चमक उठा। नायक की कातर आँखें प्राण-भिक्षा माँगने लगीं। बुद्धगुप्त ने कहा—“बोलो, अब स्वीकार है कि नहीं ?”

“मैं अनुचर हूँ, वरुणदेव की शपथ। मैं विश्वासघात नहीं करूँगा।” बुद्धगुप्त ने उसे छोड़ दिया।

चंपा ने युवक जलदस्यु के समीप आकर उसके क्षतों को अपनी स्निग्ध दृष्टि और कोमल करों से वेदना-विहीन कर दिया। बुद्धगुप्त के सुगठित शरीर पर रक्त-बिंदु विजय-तिलक कर रहे थे।

विश्राम लेकर बुद्धगुप्त ने पूछा—“हम लोग कहाँ होंगे ?”

“बालीद्वीप से बहुत दूर, संभवतः एक नवीन द्वीप के पास, जिसमें अभी हम लोगों का बहुत कम आना-जाना होता है। सिंहल के वणिकों का वहाँ प्राधान्य है।”

“कितने दिनों में हम लोग वहाँ पहुँचेंगे ?”

“अनुकूल पवन मिलने पर दो दिन में। तब तक के लिए खाद्य का अभाव न होगा।”

सहसा नायक ने नाविकों को डाँड़ लगाने की आज्ञा दी और स्वयं पतवार पकड़कर बैठ गया। बुद्धगुप्त के पूछने पर उसने कहा—“यहाँ एक जलमग्न शैल-खंड है। सावधान न रहने से नाव के टकराने का भय है।”

### (तीन)

“तुम्हें इन लोगों ने बंदी क्यों बनाया ?”

“वणिक मणिभद्र की पाप-वासना ने।”

“तुम्हारा घर कहाँ है ?”

“जाहवी के तट पर। चंपा-नगरी की एक क्षत्रिय बालिका हूँ। पिता इसी मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। माता का देहावसान हो जाने पर मैं भी पिता के साथ नाव पर ही रहने लगी। आठ बरस से समुद्र ही मेरा घर है। तुम्हारे आक्रमण के समय मेरे पिता ने ही सात दस्युओं को मारकर जल-समाधि ली। एक मास हुआ, मैं इस नील नभ के नीचे नील जलनिधि के ऊपर, एक भयानक अनंतता में निस्सहाय हूँ—अनाथ हूँ। मणिभद्र ने मुझसे एक दिन घृणित प्रस्ताव किया। मैंने उसे गालियाँ सुनाईं। उसी दिन से बंदी बना दी गई।”—चंपा रोष से जल रही थी।

“मैं भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय हूँ, चंपा ! परंतु दुर्भाग्य से जलदस्यु बनकर जीवन बिताता हूँ। अब तुम क्या करोगी ?”

“मैं अपने अदृष्ट को अनिर्दिष्ट ही रहने दूँगी। वह जहाँ ले जाय।”—चंपा की आँखें निस्सीम प्रदेश में निरुद्देश्य थीं। किसी आकांक्षा के लाल डोरे न थे। धवल अपांग में बालकों के सदृश विश्वास था। हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके मन में संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगाने लगी। समुद्र-वक्ष पर बिबमयी राग-रंजित संध्या थिरकने लगी। चंपा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे। दुर्दांत दस्यु ने देखा, अपनी महिमा में अलौकिक एक तरुण बालिका ! वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नई वस्तु का पता चला। वह थी कोमलता।

उसी समय नायक ने कहा —“हम लोग द्वीप के पास पहुँच गए।”

बेला से नाव टकराई। चंपा निर्भीकता से कूद पड़ी। माँझी भी उतरे। बुद्धगुप्त ने कहा — “जब इसका कोई नाम नहीं है, तो हम लोग से चंपा-द्वीप कहेंगे।”

चंपा हँस पड़ी।

### (चार)

पाँच बरस बाद .....

शरद के धवल नक्षत्र नील गगन में झिलमिला रहे थे। चंद्र की उज्ज्वल विजय पर अंतरिक्ष में शरदलक्ष्मी ने आशीर्वाद के फूलों और खीलों को बिखेर दिया।



चंपा के एक उच्चसौध पर बैठी हुई तरुणी चंपा दीपक जला रही थी। बड़े यत्न से अन्नक की मंजूषा में दीप धरकर उसने अपनी सुकुमार उँगलियों से डोरी खींची। वह दीपाधार ऊपर चढ़ने लगा। भोली-भोली आँखें उसे ऊपर चढ़ते बड़े हर्ष से देख रही थीं। डोरी धीरे-धीरे खींची गई। चंपा की कामना थी कि उसका आकाश-दीप नक्षत्रों से हिलमिल जाय, किंतु वैसा होना असंभव था। उसने आशा-भरी आँखें फेर लीं।

सामने जल-राशि का रजत शृंगार था। वरुण बालिकाओं के लिए लहरों से हीरे और नीलम की क्रीड़ा शैल-मालाएँ बना रही थीं और वे मायाविनी छलनाएँ, अपनी हँसी का कलनाद छोड़कर छिप जाती थीं। दूर-दूर से धीवरों की वंशी-झनकार उनके संगीत-सा मुखरित होता था। चंपा ने देखा कि तरल संकुल जल-राशि में उसके कंडील का प्रतिबिंब अस्त-व्यस्त था। वह अपनी पूर्णता के लिए सैकड़ों चक्कर काटता था। वह अनमनी होकर उठ खड़ी हुई। किसी को पास न देखकर पुकारा – “जया !”

एक श्यामा युवती सामने आकर खड़ी हुई। वह जंगली थी। नील नभ-मंडल से मुख में शुद्ध नक्षत्रों की पंक्ति के समान उसके दाँत हँसते ही रहते। वह चंपा को रानी कहती, बुद्धगुप्त की आज्ञा थी।

“महानाविक कब तक आवेंगे, बाहर पूछो तो।” चंपा ने कहा। जया चली गई।

दूरागत पवन चंपा के अंचल में विश्राम लेना चाहता था। उसके हृदय में गुदगुदी हो रही थी। आज न जाने क्यों वह बेसुध थी। एक दीर्घकाय दृढ़ पुरुष ने उसकी पीठ पर हाथ रख चमत्कृत कर दिया। उसने फिरकर कहा – “बुद्धगुप्त !”

“बावली हो क्या ? यहाँ बैठी हुई अभी तक दीप जला रही हो, तुम्हें यह काम करना है ?”

“क्षीर निधिशायी अनंत की प्रसन्नता के लिए क्या दासियों से आकाशदीप जलवाऊँ ?”

“हँसी आती है। तुम किसको दीप जलाकर पथ दिखलाना चाहती हो ? उसको, जिसको तुमने भगवान् मान लिया है ?”

“हाँ, वह थी कभी भटकते हैं, भूलते हैं, नहीं तो, बुद्धगुप्त को इतना ऐश्वर्य क्यों देते ?”

“तो बुरा क्या हुआ, इस द्वीप की अधीश्वरी चंपारानी।”

“मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो। अब तो बाली, जावा और सुमात्रा का वाणिज्य केवल तुम्हारे ही अधिकार में है महानाविक ! परंतु मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चंपा के उपकूल में पण्य लादकर हम लोग सुखी जीवन विताते थे – इस जल में अगणिक बार हम लोगों की तरी आलोकमय प्रभात में तारिकाओं की मधुर ज्योति में थिरकती थी। बुद्धगुप्त ! उस विजन अनंत में जब माँझी सो जाते थे, दीपक बुझ जाते थे, हम-तुम परिश्रम से थक कर पालों में शरीर लपेटकर एक-दूसरे का मुँह क्यों देखते थे ? वह नक्षत्रों की मधुर छाया –”

“तो चंपा ! अब उससे भी अच्छे ढंग से हम लोग विचार सकते हैं। तुम मेरी प्राण-दात्री हो, मेरी सर्वस्व हो।”

नहीं-नहीं, तुमने दस्युवृत्ति छोड़ दी परंतु हृदय वैसा ही अकरुण, सतृष्ण और ज्वलनशील है। तुम भगवान् के नाम पर हँसी उड़ाते हो। मेरे आकाश-दीप पर व्यंग्य कर रहे हो। नाविक ! उस प्रचंड आँधी में प्रकाश की एक-एक किरण के लिए हम लोग कितने व्याकुल थे। मुझे स्मरण है, जब मैं छोटी थी, मेरे पिता नौकरी पर समुद्र में जाते थे – मेरी माता, मिट्टी का दीपक बाँस की पिटारी में भागीरथी के तट पर बाँस के साथ ऊँचे टाँग देती थी। उस समय वह प्रार्थना करती – ‘भगवान् ! मेरे पथ-भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पथ पर ले चलना।’ और जब मेरे पिता बरसों पर लौटते तो कहते – ‘साध्वी ! तेरी प्रार्थना से भगवान् ने भयानक संकटों से मेरी रक्षा की है।’ वह गदगद हो जाती। मेरी माँ ? आह नाविक ! यह उसी की पुण्यस्मृति है। मेरे पिता, वीर पिता की मृत्यु के निष्ठुर कारण, जल-दस्यु ! हट जाओ।’ – सहसा चंपा का मुख क्रोध से भीषण होकर रंग बदलने लगा। महानाविक ने कभी यह रूप न देखा था। वह ठठाकर हँस पड़ा।

“यह क्या, चंपा ? तुम अस्वस्थ हो जाओगी, सो रहो।” – कहता हुआ चला गया। चंपा मुट्ठी बाँधे उन्मादिनी-सी घूमती रही।

### (पाँच)

निर्जन समुद्र के उपकूल में बेला से टकराकर लहरें बिखर जाती थीं। पश्चिम का पथिक थक गया था। उसका मुख पीला पड़ गया। अपनी शांत-गंभीर हलचल में जलनिधि विचार में निमग्न था। वह जैसे प्रकाश की उन्मलित किरणों से विरक्त था।

चंपा और जया धीरे-धीरे उस तट पर आकर खड़ी हो गईं। तरंग से उठते हुए पवन ने उनके वसन को अस्त-व्यस्त कर दिया। जया के संकेत से एक छोटी-सी नौका आई। दोनों के उस पर बैठते ही नाविक उतर गया। जया नाव खेने लगी। चंपा मुग्ध-सी समुद्र के उदास वातावरण में अपने को मिश्रित कर देना चाहती थी।

“इतना जल ! इतनी शीतलता ! हृदय की प्यास न बुझी। पी सकूँगी ? नहीं ! तो जैसे बेला में चोट खाकर सिंधु चिल्ला उठता है, उसी के समान रोदन करूँ ? या जलते हुए स्वर्ण-गोलक सदृश अनंत जल में डूबकर बुझ जाऊँ ?” – चंपा के देखते-देखते पीड़ा और ज्वलन से आरक्त बिंब धीरे-धीरे सिंधु में चौथाई-आधा, फिर संपूर्ण विलीन हो गया। एक दीर्घ निःश्वास लेकर चंपा ने मुँह फेर लिया। देखा तो महानाविक का बजरा उसके पास है। बुद्धगुप्त ने झुक कर हाथ बढ़ाया। चंपा उसके सहारे बजरे पर चढ़ गई। दोनों पास-पास बैठ गए।

“इतनी छोटी नाव पर इधर धूमना ठीक नहीं। पास ही वह जलमग्न शैलखंड है। कहीं नाव टकरा जाती या ऊपर चढ़ जाती चंपा, तो ?”

“अच्छा होता, बुद्धगुप्त ! जल में बंदी होना कठोर प्राचीरों से तो अच्छा है।”

“आह चंपा, तुम कितनी निर्दय हो ! बुद्धगुप्त को आज्ञा देकर देखो तो, वह क्या नहीं कर सकता। जो तुम्हारे लिए नए-नए द्वीप की सृष्टि कर सकता है, नई प्रजा खोज सकता है, नए राज्य बना सकता है, उसकी परीक्षा लेकर देखो तो .....। कहो, चंपा ! वह कृपाण से अपना हृदय-पिंड

निकाल अपने हाथों अतल जल में विसर्जन कर दे।” महानाविक जिसके नाम से बाली, जावा और चंपा का आकश गूँजता था, पवन थर्राता था, घुटनों के बल चंपा के सामने छलछलाई आँखों से बैठा था।

सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में विस्तृत जल-देश में, नील पिंगल संध्या, प्रकृति की सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्नलोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण नीलजाल का कुहक स्फुट हो उठा। जैसे मदिरा से सारा अंतरिक्ष सिक्त हो गया। सृष्टि नील कमलों में भर उठी। उस सौरभ से पागल चंपा ने बुद्धगुप्त के दोनों हाथ पकड़ लिए। वहाँ एक आलिंगन हुआ, जैसे क्षितिज में आकाश और सिंधु का, किंतु उस परिरंभ में सहसा चैतन्य होकर चंपा ने अपनी कंचुकी से एक कृपाण निकाल लिया।

“बुद्धगुप्त ! आज मैं अपने प्रतिशोध का कृपाण अतल जल में डुबा देती हूँ। हृदय ने छल किया, बार-बार धोखा दिया।” – चमक कर वह कृपाण समुद्र का हृदय बेधता हुआ विलीन हो गया।

“तो आज से मैं विश्वास करूँ, क्षमा कर दिया गया ?” – आश्चर्य कंपित कंठ से महानाविक ने पूछा।

“विश्वास ? कदापि नहीं, बुद्धगुप्त ! जब मैं अपने हृदय पर विश्वास नहीं कर सकी, उसी ने धोखा दिया, तब मैं कैसे कहूँ ? मैं तुम्हें घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिए मर सकती हूँ। अँधेर है जलदस्यु ! तुम्हें प्यार करती हूँ।” – चंपा रो पड़ी।

वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तम से अपनी आँखें बंद करने लगी थी। दीर्घ निःश्वास लेकर महानाविक ने कहा – “इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति में एक प्रकाश-गृह बनाऊँगा, चंपा ! यहीं उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुँधली संध्या उससे आलोकपूर्ण हो जाय।”

### (छह)

चंपा के दूसरे भाग में एक मनोरम शैलमाला थी। वह बहुत दूर तक सिंधु-जल में निमग्न थी। सागर का चंचल जल उस पर उछलता हुआ उसे छिपाए था। आज उसी शैलमाला पर चंपा के अदि-निवासियों का समारोह था। उन सबों ने चंपा को वनदेवी-सा सजाया था। ताम्रलिप्ति के बहुत से सैनिक और नाविकों की श्रेणी में वन-कुसुम-विभूषिता चंपा शिविका रूढ़ होकर जा रही थी।

शैल के एक ऊँचे शिखर पर चंपा के नाविकों को सावधान करने के लिए सुदृढ़ दीप-स्तंभ बनवाया गया था। आज उसी का महोत्सव है। बुद्धगुप्त स्तंभ के द्वार पर खड़ा था। शिविका से सहायता देकर चंपा को उसने उतारा। दोनों ने भीतर पदार्पण किया था कि बाँसुरी और ढोल बजने लगे। पंक्तियों में कुसुम-भूषण से सजी वन-बालाएँ फूल उछालती हुई नाचने लगीं।

दीप-स्तंभ की ऊपरी खिड़की से यह देखती हुई चंपा ने जया से पूछा – “यह क्या है जया ? इतनी बालिकाएँ कहा से बटोर लाई ?”

“आज राजकुमारी का ब्याह है न ?” – कहकर जया ने हँस दिया।

बुद्धगुप्त विस्तृत जलनिधि की ओर देख रहा था। उसे झकझोर कर चंपा ने पूछा – “क्या यह सच है ?”

“यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो यह सच भी हो सकता है, चंपा ! कितने वर्षों से मैं ज्वालामुखी को अपनी छाती में दबाए हूँ।”

“चुप रहो, महानाविक ! क्या मुझे निस्सहाय और कंगाल जानकर तुमने आज सब प्रतिशोध लेना चाहा?”

“मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ, चंपा ! वह एक-दूसरे दस्यु के शस्त्र से मरे !”

“यदि मैं इसका विश्वास कर सकती ! बुद्धगुप्त, वह दिन कितना सुंदर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय! आह ! तुम इस निष्ठुरता में भी कितने महान् होते।”

जया नीचे चली गई थी। स्तंभ के संकीर्ण प्रकोष्ठ में बुद्धगुप्त और चंपा एकांत में एक-दूसरे के सामने बैठे थे। बुद्धगुप्त ने चंपा के पैर पकड़ लिए। उच्छ्वसित शब्दों में वह कहने लगा—“चंपा, हम लोग जन्मभूमि-भारतवर्ष से कितनी दूर इन निरीह प्राणियों में इंद्र और शची के समान पूजित हैं। पर न जाने कौन—सा अभिशाप हम लोगों को अभी तक अलग किए है। स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश! वह महिमा की प्रतिमा! मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है; परंतु मैं क्यों नहीं जाता ? जानती हो, इतना महत्त्व प्राप्त करने पर भी मैं कंगाल हूँ! मेरा पत्थर-सा हृदय एक दिन सहसा तुम्हारे स्पर्श से चंद्रकांतमणि की तरह द्रवित हुआ।”

“चंपा! मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं पाप को नहीं मानता, मैं दया को नहीं समझ सकता, मैं उस लोक में विश्वास नहीं करता। पर मुझे अपने हृदय के एक दुर्बल अंश पर श्रद्धा हो चली है। तुम न जाने कैसे एक बहकी हुई तारिका के समान मेरे शून्य में उदित हो गई हो। आलोक की एक कोमल रेखा इस निविड़तम में मुस्कराने लगी। पशु-बल और धन के उपासक के मन में किसी शांत और एकांत कामना की हँसी खिलखिलाने लगी; पर मैं न हँस सका।”

“चलोगी चंपा ? पोतवाहिनी पर असंख्य धनराशि लादकर राजरानी-सी जन्मभूमि अंक में ? आज हमारा परिणय हो, कल ही हम लोग भारत के लिए प्रस्थान करें। महानाविक बुद्धगुप्त की आज्ञा सिंधु लहरें मानती हैं। वे स्वयं उस पोत-पुंज को दक्षिण पवन के समान भारत में पहुँचा देगी। आह चंपा! चलो।”

चंपा ने उसके हाथ पकड़ लिए। किसी आकस्मिक झटके ने एक पल भर के लिए दोनों के अर्धों को मिला दिया सहसा चैतन्य होकर चंपा ने कहा—“बुद्धगुप्त! मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है; सब जल तरल है; सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक! तुम स्वदेश लौट जाओ, विभावों का सुख भोगने के लिए, और मुझे, छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुःख की सहानुभूति और सेवा के लिए।”

“तब मैं अवश्य चला जाऊँगा, चंपा! यहाँ रहकर मैं अपने हृदय पर अधिकार रख सकूँ-इसमें संदेह है। आह! इन लहरों में मेरा विनाश हो जाय।” महानाविक के उच्छ्वास में विकलता थी। फिर उसने पूछा—“तुम अकेली यहाँ क्या करोगी ?”

“पहले विचार था कि कभी-कभी इस दीप-स्तंभ पर से आलोक जलाकर अपने पिता की समाधि का इस जल में अन्वेषण करूँगी। किंतु देखती हूँ, मुझे भी इसी में जलना होगा, जैसे आकाश-दीप।”

### (सात)

एक दिन स्वर्ण-रहस्य के प्रभात में चंपा ने अपने दीप-स्तंभ पर से देखा—सामुद्रिक नावों की एक श्रेणी चंपा का उपकूल छोड़कर पश्चिम-उत्तर की ओर महा जल-व्याल के समान संतरण कर रही है। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। चंपा आजीवन उस दीप-स्तंभ में आलोक जलाती रही। किंतु उसके बाद भी बहुत दिन, दीप-निवासी, उस माया-ममता और स्नेह-सेवा की देवी की समाधि-सदृश पूजा करते थे। एक दिन काल के कठोर हाथों ने उसे भी अपनी चंचलता से गिरा दिया।

### अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. 'आकाशदीप' कहानी का सारांश लिखिए।
2. कहानी-कला की दृष्टि से 'आकाशदीप' कहानी की समीक्षा कीजिए।
3. 'आकाशदीप' कहानी का उद्देश्य लिखिए।
4. 'आकाशदीप' कहानी के शीर्षक की सार्थकता बताइए।
5. 'आकाशदीप' कहानी के नायक का चरित्र-चित्रण कीजिए।
6. जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित कहानी 'आकाशदीप' के आधार पर चंपा का चरित्र-चित्रण लिखिए।
7. आकाशदीप कहानी का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।
8. जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित कहानियों का उल्लेख कीजिए।



# भगवतीचरण वर्मा

भगवतीचरण वर्मा का जन्म सन् 1903 ई० में उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में हुआ था। उन्होंने प्रयाग से बी० ए० तथा एल०एल०बी० की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने लेखक तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में ही प्रमुख रूप से कार्य किया। बीच-बीच में फिल्म तथा आकाशवाणी से भी संबद्ध रहे, बाद में स्वतन्त्र लेखन की वृत्ति अपनाकर लखनऊ में बस गए। उनकी कविताएँ 'प्रताप' में सन् 1917 ई० से प्रकाशित होने लगी थी। भगवतीचरण वर्मा एक सफल उपन्यासकार के साथ-साथ उच्च-कोटि के व्यंग्यात्मक कहानीकार के रूप में भी प्रतिष्ठित हुए। सन् 1981 ई० में उनका निधन हो गया।



(सन् 1903–1981 ई.)

भगवतीचरण वर्मा का पहला काव्य-संग्रह 'मधुकण' के नाम से सन् 1932 ई० में प्रकाशित हुआ। इसके बाद दो और काव्य संग्रह 'प्रेम-संगीत' तथा 'मानव' प्रकाशित हुए। उनके प्रमुख उपन्यासों में 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'पतन', 'सामर्थ्य और सीमा रेखा', 'सीधी-सच्ची बातें', 'सबहिं नचावत राम गुसांई', 'प्रश्न और मरीचिका' आदि हैं।

उनकी प्रमुख कहानियों में 'दो बाँके', 'मुगलों ने सल्तनत बख्शा दी', 'प्रायश्चित', 'काश मैं कह सकता', 'विक्टोरिया क्रॉस', 'कायरता', 'वसीयत' आदि हैं। उनका प्रमुख कहानी संग्रह 'इन्स्टालमेंट', 'राख और चिनगारी' है। इसके अतिरिक्त 'रुपया तुम्हें खा गया' नाटक तथा वासवदत्ता सिनारियो हैं।

भगवतीचरण वर्मा उन कहानीकारों में से हैं जो कहानी में कला की सजीवता से पाठक को मुग्ध कर देते हैं। सरलता, सहजता, स्पष्टता एवं व्यंग्यात्मक अभिव्यंजना उनकी रचनाओं की मुख्य विशेषता है। उन्होंने सामान्य घटनाओं का भी मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में अधिकतर सामाजिक परिवेशों तथा पारिवारिक प्रसंगों की अधिकता है। भगवतीचरण वर्मा ने अपनी रचनाओं में समाज की विषमताओं से पराजित तथा संघर्ष से विरत एकाकी व्यक्ति की अनुभूतियों को व्यक्त किया है। उनकी भाषा शैली में व्यंग्य के साथ-साथ प्रवाह है, जो रचनाओं को और भी रोचक एवं प्रभावशाली बना देती है। उनकी रचनाओं में छायावादी शैली की भाँति तत्सम शब्दों की प्रधानता, सूक्ष्मता या वक्रता के दर्शन नहीं होते।

## प्रायश्चित

अगर कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू से और अगर रामू की बहू घर भर में किसी से घृणा करती थी, तो कबरी बिल्ली से। रामू की बहू, दो महीने हुए मायके से प्रथम बार ससुराल आई थी, पति की प्यारी और सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भंडार-घर की चाभी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुक्म चलने लगा, और रामू की बहू घर में सब कुछ, सासजी ने माला लिया और पूजा-पाठ में मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका, कभी भंडार-घर खुला है, तो कभी भंडार-घर में बैठे-बैठे सो गई। कबरी बिल्ली को मौका मिला, धी-दूध पर अब वह जुट गई। रामू की बहू की जान आफत में और कबरी बिल्ली के छक्के-पंजे। रामू की बहू हाँडी में घी रखते-रखते ऊँघ गई और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढँककर मिसरानी को जिन्स देने गई और दूध नदारद। अगर यह बात यहीं तक रह जाती, तो भी बुरा न था, कबरी रामू की बहू से कुछ ऐसा परच गई थी कि रामू की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आए तब कटोरी साफ चटी हुई। बाजार से मलाई आई और जब तक रामू की बहू ने पान लगाया मलाई गायब।

रामू की बहू ने तै कर लिया कि या तो वही घर में रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोरचाबंदी हो गई और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसाने का कठघरा आया, उसमें दूध, मलाई, चूहे और भी बिल्ली को स्वादिष्ट लगने वाले तरह-तरह के व्यंजन रखे गए, लेकिन बिल्ली ने उधर निगाह तक न डाली। इधर कबरी ने सरगर्मी दिखलाई। अभी तक तो वह रामू की बहू से डरती थी; पर अब वह साथ लग गई, लेकिन इतने फासिले पर कि रामू की बहू उस पर हाथ न लगा सके।

कबरी के हौसले बढ़ जाने से रामू की बहू को घर में रहना मुश्किल हो गया। उसे मिलती थी सास की मीठी झिड़कियाँ और पतिदेव को मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनाई। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह-तरह के मेवे दूध में औंटे गए, सोने का बर्क चिपकाया गया और खीर से भरकर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊँचे ताक पर रखा गया, जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गई।

उधर बिल्ली कमरे में आई, ताक के नीचे खड़े होकर उसने ऊपर कटोरे की ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताक की ऊँचाई अंदाजी और रामू की बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामू की बहू सास जी को पान देने चली गई और कबरी ने छल्लांग मारी, पंजा कटोरे में लगा और कटोरा झनझनाहट की आवाज के साथ फर्श पर।

आवाज रामू की बहू के कान में पहुँची, सास के सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूल का कटोरा टुकड़े-टुकड़े, खीर फर्श पर और बिल्ली डटकर खीर उड़ा रही है। रामू की बहू को देखते ही कबरी चंपत।

रामू की बहू पर खून सवार हो गया, न रहे बाँस न बजे बाँसुरी, रामू की बहू ने कबरी की हत्या पर कमर कस ली। रात भर उसे नींद न आई, किस दाँव से कबरी पर वार किया जाय कि फिर जिंदा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुई और वह देखती है कि कबरी देहरी पर बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है।

रामू की बहू ने कुछ सोचा, इसके बाद मुस्कराती हुई वह उठी, कबरी रामू की बहू के उठते ही खिसक गई। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाजे की देहरी पर रखकर चली गई। हाथ में पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूध पर जुटी हुई है। मौका हाथ में आ गया, सारा बल लगाकर पाटा उसने बिल्ली पर पटक दिया। कबरी न हिली न डुली, न चीखी न चिल्लाई, बस एकदम उलट गई।

आवाज जो हुई तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोई छोड़कर और सास पूजा छोड़कर घटनास्थल पर उपस्थित हो गई। रामू की बहू सिर झुकाए हुए अपराधिनी की भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली—“अरे राम! बिल्ली तो मर गई, माँ जी, बिल्ली की हत्या बहू से हो गई, यह तो बुरा हुआ।”

मिसरानी बोली—“माँ जी, बिल्ली की हत्या और आदमी की हत्या बराबर है, हम तो रसोई न बनावेगी, जब तक बहू के सिर हत्या रहेगी।”

सास जी बोलीं—“हाँ ठीक तो कहती हो, अब जब तक बहू के सिर से हत्या न उतर जाय, तब तक न कोई पानी पी सकता है न खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला?”

महरी ने फिर कहा—“फिर क्या हो, कहो तो पंडित जी को बुलाय लाई।”

सास की जान में जान आयी—“अरे हाँ, जल्दी दौड़ के पण्डित जी को बुला ला।”

बिल्ली की हत्या की खबर बिजली की तरह पड़ोस में फैल गई—पड़ोस की औरतों का रामू के घर में ताँता बँध गया। चारों तरफ से प्रश्नों की बौछार और रामू की बहू सिर झुकाए बैठी।

पंडित परमसुख को जब यह खबर मिली, उस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही वे उठ पड़े—पंडिताइन से मुस्कराते हुए बोले—“भोजन न बनाना, लाला घासीराम की पतोहू ने बिल्ली मार डाली, प्रायश्चित्त होगा, पकवानों पर हाथ लगेगा।”

पंडित परमसुख चौबे छोटे-से, मोटे-से आदमी थे। लंबाई चार फीट दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल-मटोल, मूँछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुई।

कहा जाता है कि मथुरा में जब पंसेरी खुराक वाले पंडितों को ढूँढ़ा जाता था, तो पंडित परमसुख जी को उस लिस्ट में प्रथम स्थान दिया जाता था।



पंडित परमसुख पहुँचे और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी—सास जी, मिसरानी, किसनू की माँ, छन्नू की दादी और पंडित परमसुख! बाकी स्त्रियाँ बहू से सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनू की माँ ने कहा—“पंडित जी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है ?”

पंडित परमसुख न पत्रा देखते हुए कहा, “बिल्ली की हत्या अकेले से तो नरक का नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महरत भी जब मालूम हो, जब बिल्ली की हत्या हुई, तब नरक का पता लग सकता है।”

“यही कोई सात बजे सुबह”—मिसरानी जी ने कहा।

पंडित परमसुख ने पन्ने के पन्ने उलटे, अक्षरों पर उँगलियाँ चलाई, मथे पर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरे पर धुँधलापन आया, माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया—‘हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल’ ब्राह्ममुहूर्त में बिल्ली की हत्या! घोर कुंभीपाक नरक का विधान है! रामू की माँ, यह तो बड़ा बुरा हुआ।’

रामू की माँ की आँखों में आँसू आ गए—“तो फिर पंडितजी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएँ!”

पंडित परमसुख मुस्कराए—“रामू की माँ, चिंता की कौन-सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए हैं ? शास्त्रों में प्रायश्चित का विधान है, सो प्रायश्चित से सबकुछ ठीक हो जाएगा।”

रामू की माँ ने कहा—“पंडित जी, उसी लिए तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाय!”

“किया क्या जाय, यही एक सोने की बिल्ली बनवाकर बहू से दान करवा दी जाय। जब तक बिल्ली ने दे दी जाएगी, तब तक तो घर अपवित्र रहेगा। बिल्ली दान देने के बाद इक्कीस दिन का पाठ हो जाय।”

छन्नू की दादी — हाँ और क्या, पंडितजी तो ठीक कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाए और पाठ फिर हो जाए ?

रामू की माँ ने कहा— “तो पंडितजी, कितने तोले की बिल्ली बनवाई जाए ?”

पंडित परमसुख मुस्कराए, अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा— “बिल्ली कितने तोले की बनवाई जाए ? अरे रामू की माँ, शास्त्रों में तो लिखा है कि बिल्ली के वजन भर सोने की बिल्ली बनवाई जाए लेकिन अब कलयुग आ गया है, धर्म-कर्म का नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामू की माँ, बिल्ली की तौल भर की बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस-इक्कीस सेर से कम की क्या होगी। हाँ, कम से कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा के दान करवा दो, और आगे तो अपनी-अपनी श्रद्धा।

रामू की माँ ने आँखें फाड़कर पंडित परमसुख को देखा—“अरे बाप रे, इक्कीस तोला सोना! पंडितजी यह तो बहुत है, तोला-भर की बिल्ली से काम न निकलेगा ?”

पंडित परमसुख हँस पड़े—“रामू की माँ! एक तोला सोने की बिल्ली! अरे रुपए का लोभ बहू से बढ़ गया ? बहू के सिर बड़ा पाप है, इसमें इतना लोभ ठीक नहीं!”

मोल-तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोले की बिल्ली पर ठीक हो गया। इसके बाद पूजा-पाठ की बात आई। पंडित परमसुख ने कहा—“उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिए हैं, रामू की माँ, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।”

“पूजा का कितना सामान लगेगा ?”

“अरे, कम-से-कम सामान में हम पूजा कर देंगे, दान के लिए करीब दस मन गेहूँ, एक मन चावल, एक मन दाल, मनभर तिल, पाँच मन जौ पाँच मन चना, चार पसेरी थी और मन भर नमक भी लगेगा।” बस, इतने से काम चल जाएगा।”

“अरे बाप रे, इतना सामान! पंडित जी इसमें तो सौ-डेढ़ सौ रुपया खर्च हो जाएगा”— रामू की माँ ने रुआई—सी होकर कहा।

“फिर इससे कम में तो काम न चलेगा। बिल्ली की हत्या कितना बड़ा पाप है, रामू की माँ! खर्च को देखते वक्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित है, कोई हँसी-खेल थोड़े ही है और जैसी जिसकी मरजादा (मर्यादा) प्रायश्चित में उसे वैसा खर्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ-डेढ़ सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।”

पंडित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की माँ ने कहा—“पंडित जी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो है नहीं। दान पुन्न में किफायत ठीक नहीं।”

छन्नू की दादी ने कहा—“और नहीं तो क्या, दान-पुन्न से ही पाप कटते हैं—दान-पुन्न में किफायत ठीक नहीं।”

मिसरानी ने कहा—“और फिर माँ जी आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना खर्च क्यों आप लोगों को अखरेगा।”

रामू की माँ ने अपने चारों ओर देखा—सभी पंच पंडित जी के साथ। पंडित परमसुख मुस्करा रहे थे। उन्होंने कहा—“रामू की माँ! एक तरफ तो बहू के लिए कुंभीपाक नरक है और दूसरी तरफ तुम्हारे जिम्मे थोड़ा-सा खर्चा है। सो उससे मुँह न मोड़ो।”

एक ठंडी साँस लेते हुए रामू की माँ ने कहा—“अब तो जो नाच नचाओगे नाचना ही पड़ेगा।”

पंडित परमसुख जरा कुछ बिगड़कर बोले—“रामू की माँ! यह तो खुशी की बात है—अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो, मैं चला”—इतना कहकर पंडित जी ने पोथी-पत्रा बटोरा।

“अरे पंडितजी— रामू की माँ को कुछ नहीं अखरता—बेचारी को कितना दुःख है—बिगड़ो न!” मिसरानी, छन्नू की दादी और किसनू का माँ ने एक स्वर में कहा।

रामू की माँ ने पंडितजी के पैर पकड़े—और पंडितजी ने अब जमकर आसन जमाया।

“और क्या हो ?”

“इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों बखत पाँच-पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।” कुछ रुककर पंडित परमसुख ने कहा—“सो इसकी चिंता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।”

“यह तो पंडितजी ठीक कहते हैं, पंडितजी की तोंद तो देखो!” मिसरानी ने मुसकराते हुए पंडितजी पर व्यंग्य किया।

“अच्छा तो फिर प्रायश्चित का प्रबंध करवाओ रामू की माँ, ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊँ—दो घंटे में मैं बनवाकर लौटूँगा, तब तक सब पूजा का प्रबंध कर रखो—और देखो पूजा के लिए....”

पंडितजी की बात खतम भी न हुई थी कि महरी हाँफती हुई कमरे में घुस आई और सब लोग चौंक उठे। रामू की माँ ने घबराकर कहा—“अरी क्या हुआ री ?”

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा—“माँ जी, बिल्ली तो उठकर भाग गई।”

## अभ्यास

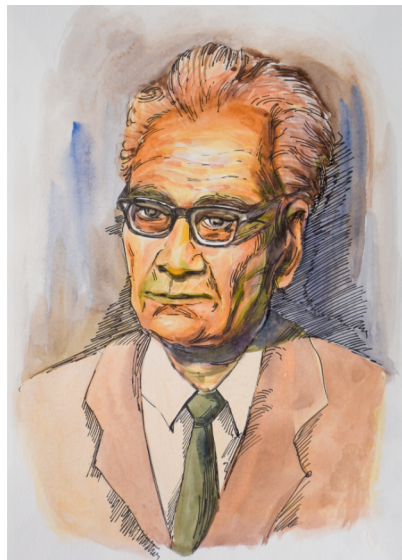
निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. भगवतीचरण वर्मा द्वारा लिखित कहानी ‘प्रायश्चित’ का कहानी-तत्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।
2. ‘प्रायश्चित’ कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
3. ‘प्रायश्चित’ कहानी में लेखक ने समाज के किस घातक मनोवृत्ति पर व्यंग्य किया है ?
4. ‘प्रायश्चित’ कहानी के मुख्य पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
5. ‘प्रायश्चित’ कहानी का उद्देश्य लिखिए।
6. ‘प्रायश्चित’ कहानी में पंडित परमसुख का चरित्र-चित्रण कीजिए।
7. ‘प्रायश्चित’ कहानी की भाषा तथा शैली पर प्रकाश डालिए।
8. ‘प्रायश्चित’ कहानी की विशेषताएँ लिखिए।
9. ‘भगवतीचरण वर्मा को मानव समाज की गहरी परख है’ इस कथन की व्याख्या ‘प्रायश्चित’ के पात्रों के आधार पर कीजिए।
10. सिद्ध कीजिए कि कहानी की सफलता उसमें निहित घटनाओं पर आधारित है।



# यशपाल

हिंदी के यशस्वी कथाकार तथा निबंधकार यशपाल का जन्म सन् 1903 ई० में पंजाब के फिरोजपुर छावनी में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय में हुई। गुरुकुल के राष्ट्रीय वातावरण में बालक यशपाल के मन में विदेशी शासन के प्रति विरोध की भावना भर गई। लाहौर के नेशनल कॉलेज में भर्ती हो जाने पर उनका परिचय भगतसिंह और सुखदेव से हो गया। फलस्वरूप वे क्रांतिकारी आंदोलन की ओर आकृष्ट हो गए। अन्य सशस्त्र-क्रांतिकारी आंदोलनों में भी उनकी सक्रियता रही। राजद्रोह के अभियोग में उन्हें कारावास का दंड मिला। यशपाल ने जेल से मुक्त होने पर 'विप्लव' मासिक पत्र निकाला। जेल-जीवन के दौरान उन्होंने स्वाध्याय तथा लेखन कार्य भी किया। उनकी मृत्यु सन् 1976 ई० में हो गई।



(सन् 1903—1976 ई.)

यशपाल मुख्यतः मध्यमवर्गीय जीवन के कथाकार हैं। यशपाल को उनकी साहित्य सेवा तथा प्रतिभा से प्रभावित होकर रीवां सरकार ने 'देव पुरस्कार', सोवियतलैंड सूचना विभाग ने 'सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार' हिंदी साहित्य सम्मेलन ने 'मंगला प्रसाद पारितोषिक' तथा भारत सरकार ने 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया है।

उनकी प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं—

**कहानी-संग्रह**—'ज्ञानदान', 'अभिषिप्त', 'तर्क का तूफान', 'भस्मावृत चिनगारी', 'वो दुनिया', 'फूलो का कुर्ता', 'धर्मयुद्ध', 'उत्तराधिकारी', 'चित्र का शीर्षक', 'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुंदर हूँ'।

**उपन्यास**— 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'पार्टी कामरेड', 'दिव्या', 'मनुष्य के रूप', 'अमिता', 'झूठा-सच'।

**निबंध**— 'न्याय का संघर्ष', 'चक्कर क्लब', 'बात बात में बात', 'देखा सोचा समझा' (तीन भाग), 'गाँधीवाद की शव परीक्षा'।

**आत्मकथा**— 'सिंहावलोकन' उनकी आत्मकथा है।

प्रगतिशील कहानीकारों में यशपाल का अपना विशिष्ट स्थान है। उनकी कहानियों में संघर्षरत मानव जीवन का स्वर मुखरित हो उठा है। उन पर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव है। उन्होंने समस्या प्रधान कहानियों की रचना की है।

उनकी कहानियों की भाषा सरल एवं स्पष्ट है तथा मध्यमवर्गीय परिवार के सामाजिक जीवन के विविध पक्षों, जीवन संघर्षों, विद्रोह एवं उत्साह के सजीव चित्र प्रस्तुत किए हैं। कहानियों में चरित्र चित्रण मनोवैज्ञानिक हैं।

यशपाल की कहानियों की भाषा—शैली व्यावहारिक एवं सरल है। साधारण बोलचाल में प्रचलित भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों के साथ तीखे व्यंग्य प्रस्तुत किए हैं। यशपाल की कहानियाँ समाज की जीवंत समस्याओं पर केंद्रित हैं।



## समय

पापा की अवचेतना में रिटायर हो जाने के डेढ़-दो वर्ष पूर्व से ही चिंता सिर उठाने लगी थी—रिटायर हो जाने पर अवकाश का बोझ कैसे सँभलेगा ? अपनी इस चिंता का निराकरण करने के लिए प्रायः ही कहने लगते—“लोग-बाग रिटायर होकर निरुत्साह क्यों हो जाते हैं ? सोचिए, नौकरी करते समय अवकाश के दिन कितने प्यारे लगते हैं। गिन-गिनकर अवकाश के दिनों की प्रतीक्षा की जाती है। जब दीर्घ श्रम के पुरस्कार में पूर्ण अवकाश का अवसर आ जाए तो निरुत्साह होने का क्या कारण ? इसे तो अपने श्रम का अर्जित फल मानकर, उससे पूरा लाभ उठाना और संतोष पाना चाहिए। अभाव होगा या मुक्ति मिलेगी केवल मजबूरी से, ड्यूटी की मजबूरी से। आराम और अपनी इच्छा से श्रम करने में तो कोई बाधा नहीं डालेगा। अध्ययन का मनचाहा अवसर होगा और पर-आदेश से मुक्ति। इससे बड़ा संतोष दूसरा क्या चाहिए ?”

पापा के मन में बुढ़ापे और बुजुर्गी से या कहिए बूढ़े और बुजुर्ग समझे जाने से सदा विरक्ति रही है। रिटायर होने पर मितव्ययिता के विचार से गर्मियों में पहाड़ जाना छोड़ दिया है। सर्विस के समय गर्मियों में महीने-दो-महीने हिल स्टेशनों पर रह लेने का बहुत शौक था। प्रतिवर्ष नहीं तो दूसरे वर्ष अवश्य पहाड़ जाते थे। पहाड़ जाते तो चढ़ाइयों पर सुविधा से चल सकने के लिए एक-दो छड़ियाँ जरूर खरीद लेते और हर बार नई छड़ियाँ खरीदते। परंतु लखनऊ लौटने पर बाजार या सैर के लिए जाते समय छड़ी उनके हाथ में न रहती। कभी स्वास्थ्य का विचार आ जाता या शरीर पर मांस अधिक चढ़ने की आशंका होने लगती तो सुबह-शाम तेज चाल से सैर आरंभ कर देते। प्रातः मुँह-अँधेरे सैर के लिए जाते समय अम्मी के सुझाने पर कुत्तों या ढोर-डंगरों से सावधानी के लिए छड़ी हाथ में होने पर भी उसे टेककर न चलते थे। छड़ी को पुलिस या सैनिक अफसर की तरह वेटन के ढंग से हाथ में लिए रहते। छड़ी टेककर चलना उनके विचार में बुढ़ापे या बुजुर्गी का चिह्न था।

पापा का कायदा था कि संध्या समय टहलने अथवा शापिंग के लिए भी जाते तो केवल अम्मी को साथ ले जाते थे। बच्चों को साथ ले जाना उन्हें कम पसंद था। अन्य बच्चों की तरह हम लोगों को भी अम्मी-पापा के साथ बाजार जाने की उत्सुकता बनी रहती थी। बाजार में हम बच्चे कोई भी चीज माँग लेते तो तनिक टुनकने से ही मनचाही चीज मिल जाती थी। बाजार में पापा हम लोगों को डाँटते-धमकाते नहीं थे। उन्हें बाजार में तमाशा बनना पसंद नहीं था। इसलिए अम्मी और पापा बाजार जाने के लिए तैयार होने लगते तो हम लोगों को नौकर या आया के साथ इधर-उधर टहला दिया जाता। बच्चों को बाजार ले चलने की अनिच्छा में सम्भवतः पापा की बुजुर्ग न जान पड़ने की भावना भी अवचेतना में रहती होगी।

पापा ने अवकाश प्राप्त हो जाने पर अवकाश के बोझ से बचने के लिए अच्छी खासी दिनचर्या बना ली है। अवकाश-प्राप्ति से कुछ महीने पूर्व ही उन्होंने योजना बना ली थी कि शासन-कार्य के छत्तीस वर्षों के अनुभव और चिंतन के आधार पर 'एथक्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' (शासन का नैतिक पक्ष) पर एक पुस्तक लिखेंगे। दोपहर से पूर्व और अपराह्न में कम-से-कम दो-दो घंटे इस विषय में अध्ययन करते रहते हैं अथवा नोट्स लिखते रहते हैं। पहले उन्हें काम के दबाव के कारण कम अवसर मिलता था परंतु अब सप्ताह में एक-दो दिन निकट संबंधियों और इष्ट-मित्रों की खोज-खबर लेने भी चले जाते हैं। अब किसी हद तक वे शापिंग भी करने लगे हैं। रसद और साग-सब्जी की खरीद उनके बस की नहीं। वह काम पहले अम्मी करती थीं और अब भी रिक्शा पर बैठकर स्वयं ही करती हैं। अलबत्ता हल्की-फुल्की चीजें, टूथब्रश, ब्लेड, सिगार-सिगरेट, मोजे-रुमाल और दवा-दारू की खरीद के लिए पापा संध्या के समय स्वयं हजरतगंज पैदल जाते हैं। कारण वास्तव में कुछ चलने-फिलने का बहाना।

पापा के स्वभाव और व्यवहार में कुछ और भी परिवर्तन आए हैं। पहले उन्हें अपनी पोशाक चुस्त रखने और व्यक्तिगत उपयोग की बढ़िया चीजों का शौक रहता था। पोशाक के मामले में वे बिलकुल बेपरवाह नहीं हो गए हैं। परंतु गत तीन वर्षों में जाड़े के आरंभ में अम्मी हर बार उनसे एक नया ऊनी सूट बनवा लेने का अनुरोध कर रही हैं। पापा पुराने कपड़ों को काफी बताकर टाल जाते हैं। यही बात जूतों के मामले में भी है। अम्मी खीझकर कहती हैं—अपने लिए उन्हें जाने क्या कंजूसी हो गई है! बच्चों को पहाड़ पर या सैर के लिए बाहर भेज देंगे। उनके लिए कपड़ों की जरूरत भी दिखायी दे जाती है; अपने लिये कुछ नहीं!.....लगता है पापा अब अपने शौक और रुचियों को बच्चों द्वारा पूरा होते देखकर संतोष पाते हैं; मानो उन्होंने अपने व्यक्तित्व का न्यास बच्चों में कर लिया है।

पापा के बच्चों को बाजार साथ न ले जाने के रवैये में भी परिवर्तन हो गया है। उनके रवैये में परिवर्तन का एक या प्रकट कारण यह हो सकता है कि अम्मी अब अपने स्वास्थ्य के कारण पैदल चलने से कतराती हैं और हम लोग उँगली पकड़कर साथ चलने वाले बच्चे नहीं रह गए हैं। कभी पापा या अम्मी के साथ चलना होता है तो हमारे कंधे उनके बराबर या कुछ ऊँचे ही रहते हैं। पापा को आशंका नहीं है कि बच्चे बाजार में गुब्बारेवाले या आइसक्रीम वाले को देखकर हाथ फैलाकर टुकने लगेंगे। अब शायद अपने जवान, स्वस्थ, सुडौल बच्चों की संगति में उन्हें कुछ गर्व भी अनुभव होता होगा। इसलिए संध्या समय हजरतगंज या बाजार जाते समय कभी मुझे, कभी मन्दू बहन को, कभी गोगी को, कभी कजिन पुष्पा को ही साथ चलने का संकेत कर देते हैं। उनके साथ हजरतगंज जाने पर हम लोगों को चाकलेट-टॉफी या आइसक्रीम के लिए कहना नहीं पड़ता। पापा हजरतगंज का चक्कर पूरा करके स्वयं ही प्रस्ताव कर देते हैं—“कहो, क्या पसंद करोगे ? कॉफी या आइसक्रीम ?”

हमारे समवयस्क साथी हम लोगों को बाजार, पार्क या रेस्तरां में पापा के साथ देखकर कभी-कभी आँख दबाकर या किसी संकेत से हमारी स्थिति के प्रति विद्रूप या करुणा प्रकट कर देते हैं। निस्संदेह पापा की उपस्थिति में सभी प्रकार की हरकतें या बातें नहीं की जा सकतीं परंतु उनकी संगति बोर या उबा देने वाली भी नहीं होती। वे अन्य अवकाश-प्राप्त लोगों की सामान्य प्रवृत्ति के अनुसार

केवल अपनी नौकरी के अनुभवों, ऐडवेंचर्स, नवयुवक लड़के-लड़कियों के लिए उपयुक्त विवाह-संबंधों अथवा पुराने जमाने की सस्ती और आज की मँहगाई की ही चर्चा नहीं करते। उनके मानसिक संपर्क और चिंताएँ वैयक्तिक और पारिवारिक क्षेत्र में सिमट जाने के बजाय पढ़ने और सोचने का अधिक अवसर पाकर कुछ फैल ही गए हैं। उनकी बातचीत में चुस्ती और हाजिर-जवाबी कम नहीं हुई बल्कि अपने को तटस्थ और अनासक्त समझ लेने से उसका तीखापन कुछ बढ़ गया। परंतु हम लोग उनकी संगति के लिए बचपन के दिनों की तरह लालायित नहीं रह सकते। कारण यह है कि अठारह-बीस पार कर लेने पर हम लोग भी अपना व्यक्तित्व अनुभव करने लगे हैं। हम लोगों की अपनी वैयक्तिक रुझाने, अपने काम और अपने क्षेत्र भी हो गए हैं और उनके आकर्षण और आवश्यकताएँ भी रहती हैं। कभी-कभी पापा की आवश्यकता और हमारी संगति के लिए उनकी इच्छा और हमारी अपनी आवश्यकताओं और आकर्षणों में द्वंद्व की स्थिति आ जाना अस्वाभाविक नहीं है।

संध्या समय हम लोगों में से किसी-न-किसी को साथ ले जाने की इच्छा में पापा के दो प्रयोजन हो सकते हैं। एक प्रयोजन तो वे स्वीकार करते हैं। उन्हें बूढ़ों या बुजुर्गों की अपेक्षा नवयुवकों की संगति अधिक पसंद है। दूसरा कारण पापा प्रकट नहीं करना चाहते। लगभग एक वर्ष से उनकी नजर पर आयु का प्रभाव अनुभव हो रहा है। अधिक देर तक पढ़ने-लिखने से धुँधलापन अनुभव होने लगता है। विशेषकर सूर्यास्त के पश्चात् यदि सड़क पर प्रकाश कम हो तो ठोकर खा जाते हैं और प्रकाश अधिक होने पर चकाचौंध से परेशानी अनुभव करते हैं। इसलिए संध्या समय बाहर जाते हैं तो हम लोगों में से किसी को साथ ले जाना चाहते हैं।

पिछले जाड़ों की बात है। उस दिन डाक में आई पत्रिका में एक बहुत रोचक लेख पढ़ रहा था। पापा के कमरे से अम्मी को संबोधन करती आवाज सुनाई दी—“एक जग गरम पानी भिजवा देना।” यह संकेत था कि दिन ढल गया है, पापा बाहर जाने की तैयारी आरंभ कर रहे हैं। तब ध्यान आया, सूर्यास्त का समय हो जाने से कमरे में प्रकाश कम हो गया था। बिजली का बटन दबाकर प्रकाश कर लेना चाहिए था परंतु वह यात्रा-वर्णन समाप्त किए बिना पत्रिका हाथ से छूट न रही थी।

पापा की बाहर जाने की तैयारी अनेक घोषणाओं के और पुकारों के साथ होती है ताकि सब जान जाएँ—वे बाहर जा रहे हैं और कोई उनके साथ हो ले। मैंने सुना तो, परंतु मन जापान के उस यात्रा-वर्णन में गहरा रमा हुआ था। पढ़ते-पढ़ते भी पापा की बाहर जाने की तैयारी की आहटें कान में पड़ रही थीं।

आहट से अनुमान हो रहा था कि पापा बाहर जाने के लिए जूते पहन चुके होंगे, टाई बाँध ली होगी। उनके कमरे से पुकार आई—“कोई है हजरतगंज की सवारी।”

पापा की पुकार के स्वर से अनुमान हुआ कि उन्होंने ऊपर के कमरों की ओर मुँह करके पुकारा था। मेरे कमरे से अपनी तैयारी की कोई प्रतिक्रिया न सुन कर उन्होंने लड़कियों को पुकार लिया था। ऊपर से भी कोई उत्तर न आने पर पापा ने फिर पुकारा—“है कोई चलने वाला!”



पापा की इस पुकार की प्रक्रिया में ऊपर पुष्पा दीदी के कमरे से सुनाई दिया—“मन्दू, जाओ न, पापा के साथ धूम आओ।”

मन्दू ने अपने कमरे से पुष्पा दीदी को उत्तर दिया—“तुम भी क्या दीदी.....बोर....बुढ़ों के साथ कौन बोर हो!”

मन्दू ने अपने विचार में स्वर दबा कर उत्तर दिया था, परंतु उसकी बात पापा के समीप के कमरे में भी मैं सुन सका था। पत्रिका आँखों के सामने से हट गई। नजर पापा के कमरे में चली गई। पापा ने जरूर सुन लिया था। जान पड़ा, वे कोट हैंगर से उतारकर पहिनने जा रहे थे, कोट उनके हाथ में रह गया। चेहरे पर एक विचित्र, विषण्ण-सी मुस्कान आ गई। कोट उसी प्रकार हाथ में लिए कुर्सी पर बैठ गए। नजर फर्श की ओर परंतु चेहरे पर विषण्ण मुस्कान। कई क्षण बिल्कुल निश्चल बैठे रहे, मानों किसी दूर की स्मृति में खो गए हों।

मैंने दृष्टि पापा की ओर से हटा ली कि नजर मिल जाने से संकोच अथवा असुविधा न अनुभव करें। फिर पत्रिका उठा ली परंतु पढ़ न पाया। अनुमान कर रहा था—‘पापा क्या सोच रहे होंगे?’ सहसा स्मृति में बचपन की याद कौंध गई—तब हम लोग उनके साथ बाहर जाने के लिए कितने लालायित रहते थे। हमारी उस लालसा से उन्हें कभी-कभी परेशानी भी अनुभव हो जाती थी। एक दिन की स्मृति आँखों के सामने प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी—

हम लोग अम्मी और पापा के साथ बाहर जाने की जिद करते तो पापा को अच्छा नहीं लगता था। अम्मी ऐसी अप्रिय स्थिति से बचने का यह उपाय करती थीं कि स्वयं बाहर जाने के लिए साड़ी बदलने से पहले हमें आया हुबिया या नौकर बहादुर के साथ कुछ समय के लिए बाहर भेज देती थीं। हम लोगों के लौटने से पहले ही अम्मी और पापा बाहर जा चुके होते।

एक दिन संध्या अम्मी ने हम दोनों को बुलाकर कहा—“बच्चों, हुबिया साग-सब्जी लेने चौराहे तक जा रही है। तुम लोग भी घूम आओ।” उन्होंने हुबिया से भी कह दिया—“देखो, कुजड़े के यहाँ नरम सिंघाड़े हों तो इन दोनों को ले देना।”

हम लोग हुबिया के साथ घर से बीस-पच्चीस कदम गए थे। मन्दू ने मुझे रोक कर कहा—“सुनो, अम्मी पापा के साथ बाजार जा रही हैं। हम भी उनके साथ बाजार जाएँगे।” मन्दू ने हुबिया को संबोधन किया, “हुबियो, हमारी सैंडल में कील लग रहा है। हम दूसरी सैंडल पहनकर आते हैं।” हम दोनों घर की ओर भाग आए।

मन्दू का अनुमान ठीक था। हम लौटे तो ड्योढ़ी में पहुँचते ही अम्मी की पुकार सुनायी दी—“जी, आइए, मैं चल रही हूँ।” अम्मी बाहर जाने के लिए साड़ी बदले और जूड़े में पिने खोंसती हुई आ रही थीं।

मन्दू अम्मी की कमर से लिपट गई और डबडबाई आँखें अम्मी के मुँह की ओर उठाकर आँसू-भरे स्वर में हिचक-हिचककर गिड़गिड़ाने लगी—“कभी....कभी....कभी बच्चों को भी....तो...साथ....ले जाना चाहिए।”

तब तक पापा भी आ गए थे। उन्होंने पूछा—“क्या है, क्या है ?” वे समझ गए थे, बोले—“अच्छा बच्चों, एकदम तैयार हो जाओ।”

अम्मी ने कहा—“आ मन्दू, तेरी फ़ाक बदल दूँ।”

परंतु मन्दू अपनी इस हरकत से इतना शरमा गई थी कि दोनों हाथों में मुँह छिपाकर भाग गई। पापा और अम्मी के कई बार बुलाने पर भी नहीं आई।

बात पापा के मन में लग गई। उस समय बाहर नहीं जा सके। उसके बाद से हफ़्ते-पखवाड़े में हम लोगों को भी बाज़ार ले जाने लगे थे। कभी-कभी खाने की मेज पर हम लोगों के साथ बैठने पर उस दिन की घटना—मन्दू के रो-रोकर ‘बच्चों को भी कभी साथ ले जाने’ की दुहाई देने की बात सुनाने लगते और इस प्रसंग से मन्दू झेंप जाती है।

आज पापा के साथ चलने के अनुरोध का उत्तर मन्दू दे रही है—“बोर...बुड़ों के साथ बोर..”

पापा अपनी कुर्सी पर निश्चल बैठे, स्मृति में खोए विषण्ण मुस्कान से वही घटना तो नहीं याद कर रहे थे।

पापा सहसा, मानो दृढ़ निश्चय से, कुर्सी से उठ खड़े हुए। कोट पहन लिया। और अम्मी को सम्बोधन कर पुकारा—“सुनो, कई बार पहाड़ से छड़ियाँ लाये हैं, तो कोई एक तो दो!”

एक छड़ी उठाकर मैंने अपने कमरे में रख ली थी। पापा को उत्तर दिया—“एक तो यहाँ पड़ी है, चाहिए?” छड़ी कोने से उठाकर पापा के सामने कर दी।

“हाँ, यह तो बहुत अच्छी है।” पापा ने छड़ी की मूठ पर हाथ फेरकर कहा और छड़ी टेकते हुए किसी की ओर देखे बिना घूमने के लिए चले गए; मानो हाथ की छड़ी को टेककर उन्होंने समय को स्वीकार कर लिया।

## अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. कहानी कला की दृष्टि से ‘समय’ कहानी की समीक्षा कीजिए।
2. यशपाल की ‘समय’ कहानी के कथा-शिल्प एवं शैली पर प्रकाश डालिए।
3. ‘समय’ कहानी का सारांश लिखिए।
4. ‘समय’ कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
5. ‘समय’ कहानी के शीर्षक का मूल्यांकन कीजिए।
6. ‘समय’ कहानी में लेखक ने नौकरी पेशा से जुड़े लोगों के जीवन की किन समस्याओं को उजागर किया है?
7. ‘समय’ कहानी के आधार पर पिताजी की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
8. ‘बललते, परिवेश में ‘समय’ कहानी के आधार पर बालमनोविज्ञान को समझाने में कहानीकार कहाँ तक सफल हुआ है ? स्पष्ट कीजिए।

# जैनेंद्र कुमार

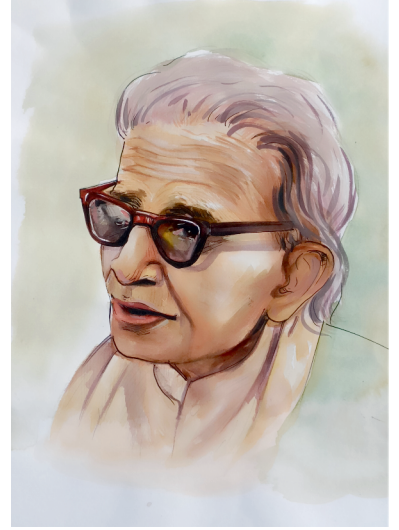
जैनेन्द्र कुमार का जन्म सन् 1905 ई0 में उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जनपद के कौड़ियागंज में हुआ था। जन्म के दो वर्ष पश्चात उनके पिता की मृत्यु हो गई। उनका पालन पोषण उनकी माता तथा मामा ने किया। बचपन में जैनेंद्र का नाम आनंदीलाल था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा हस्तिनापुर के एक गुरुकुल में हुई। पंजाब से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्वविद्यालय से प्राप्त की। सन् 1921 ई0 में विश्वविद्यालय की पढ़ाई छोड़कर असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए दिल्ली आ गए। लगभग दो वर्ष उन्होंने दिल्ली में व्यापार भी किया तत्पश्चात् सन् 1923 ई0 में वे नागपुर चले गए, जहाँ राजनीतिक पत्रों में संवादाता के रूप में कार्य करने लगे। जीविका की खोज में वे कलकत्ता भी गए, लेकिन उन्हें निराश होकर लौटना पड़ा। जैनेंद्र की सर्वप्रथम औपन्यासिक कृति 'परख' का प्रकाशन सन् 1929 में हुआ। उन्हें आगरा विश्वविद्यालय तथा गुरुकुल काँगड़ी समविश्वविद्यालय ने डी0 लिट् की उपाधि से सम्मानित किया। सन् 1988 ई0 में दिल्ली में उनका निधन हो गया।

एक कहानीकार के रूप में जैनेंद्र कुमार की उपलब्धियाँ महत्वपूर्ण हैं। उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं—'फाँसी', 'वातायन', 'नीलम देश की राजकन्या', 'एक रात', 'दो चिड़ियाँ', 'पाजेब', 'जयसंधि'। जैनेंद्र की लिखी हुई समस्त कहानियाँ 'जैनेंद्र की कहानियाँ' के नाम से सात भागों में छपी हैं।

'परख', 'तपोभूमि', 'सुनीता', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', 'सुखदा', 'विवर्त', 'व्यतीत', और 'जयवर्धन' उनके उपन्यास हैं।

निबंध-संग्रह—'प्रस्तुत प्रश्न', 'जड़ की बात', 'पूर्वोदय', 'साहित्य का श्रेय और प्रेय', 'मन्थन', 'सोच-विचार', 'काम-प्रेम और परिवार', 'साहित्य संचय', 'विचार वल्लरी' आदि हैं।


जैनेंद्र की रचनाओं में दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उभर कर आया है। दार्शनिक आधार पर लिखी गई अनेक कहानियों में गंभीर चिंतन एवं बौद्धिक सघनता का समावेश हुआ है। उनकी कहानियाँ मनोविश्लेषणात्मक भी हैं। उनकी कहानियों के कथानक सुस्पष्ट तथा सूक्ष्म हैं। इनमें व्यक्ति को केंद्र में रखकर समाज के जीवन का चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त जैनेंद्र ने कथा-वस्तु के विकास में सत्य, अहिंसा, प्रेम करुणा तथा मानवीय आदर्शों के महत्त्व को स्थान दिया है।



(सन् 1905—1988 ई.)

जैनेन्द्र ने चरित्र-चित्रण पर विशेष बल देते हुए विविध प्रकार के चरित्रों की सृष्टि की है। मनोविश्लेषण के माध्यम से पात्रों के आंतरिक द्वंद्वों तथा मानसिक उलझनों को व्यक्त किया है। उनके उपन्यासों में नारी पात्रों के चरित्र-चित्रण में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का परिचय मिलता है।

जैनेन्द्र की प्रमुख शैलियों में दृष्टांत, वार्ता तथा कथा शैलियाँ मुख्य हैं। संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी शब्दों के साथ भावपूर्ण, चित्रात्मक एवं सशक्त भाषा का प्रयोग किया गया है। उनकी कहानियों में संवादों की सीमित योजना तथा कथोपकथन मानव-चरित्र का विश्लेषण करते हुए, पात्रों की चरित्रगत विशेषताएँ तथा मानसिक स्थितियों को उजागर करते हैं।



# ध्रुव-यात्रा

( 1 )

राजा रिपुदमन बहादुर उत्तरी ध्रुव को जीतकर योरुप के नगर-नगर से बधाइयाँ लेते हुए हिंदुस्तान आ रहे हैं। यह खबर अखबारों ने पहले सफे पर मोटे अक्षरों में छापी।

उर्मिला ने खबर पढ़ी और पास पालने में सोते शिशु का चुंबन लिया।

अगले दिन पत्रों ने बताया कि योरुप के तट एथेन्स से हवाई जहाज पर भारत के लिए रवाना होते समय उन्होंने योरुप के लिए संदेश माँगने पर कहा कि उसे 'अद्भुत' की पूजा की आदत छोड़नी चाहिए।

उर्मिला ने यह भी पढ़ा।

अब वह बंबई आ पहुँचे हैं, जहाँ स्वागत की जोर-शोर की तैयारियाँ हैं। लेकिन उन्हें दिल्ली आना है। नागरिक आग्रह कर रहे हैं और शिष्ट-मंडल मिल रहा है। उसकी प्रार्थना सफल हुई तो वह दिल्ली के लिए कल रवाना हो सकेंगे। अखबार के विशेष प्रतिनिधि का अनुमान है कि उनको झुकाना कठिन होगा। वह यद्यपि सबसे सैजन्य से मिलते हैं, पर यह भी स्पष्ट है कि उनको अपने संबंध के प्रदर्शनों में उल्लास नहीं है। संवाददाता ने लिखा है, "मैं मिला तब उनका चेहरा ऐसा था कि वह यहाँ न हों, जाने कहीं दूर हों।"

उर्मिला ने पढ़ा और पढ़कर अखबार अलग रख दिया।

सचमुच राजा रिपुदमन बंबई नहीं ठहर सके। छपते-छपते की सूचना है कि आज सबरे के झुटपुटे में उनका जहाज निर्विघ्न दिल्ली पहुँच गया है।

एक दिन, दो दिन, तीन दिन। उर्मिला रोज अखबार पढ़ती है। इन दिनों वह कहीं बाहर नहीं गई। राजा रिपु को लोग अवकाश नहीं दे रहे हैं। सुना जाता है कि वह दिल्ली छोड़ेंगे। कहाँ जाएँगे, इसके कई अनुमान हैं। निश्चय यह है कि जाएँगे किसी कठिन यात्रा पर।

उर्मिला ने सदा की भाँति यह भी पढ़ लिया।

चौथे दिन एक बड़ा मोटा-सा लिफाफा उसे मिला। अंदर खत संक्षिप्त था। पढ़ा, और उसी तरह मोड़ेकर लिफाफे में रख दिया। फिर बच्चे की ओर ध्यान दिया। वह जागने को तैयार न था। फिर भी उठा कर उसे कंधे से लगाया और कमरे में डोलने लगी।

( 2 )

इधर राजा रिपुदमन को अपने से शिकायत है। उन्हें नींद कम आती है। मन पर पूरा काबू नहीं मालूम होता। सामने की चीज पर एकाग्र होने में कठिनाई होती है। नहीं चाहते, वहाँ ख्याल जाते हैं।

कभी तो अपनी ही कल्पनाओं से उन्हें डर लगने लगता है। अभी योरुप से आते हुए, ऊपर आसमान की तरह नीचे भी गहन और अपार नीलिमा को देखकर उन्हें होता था कि क्यों इस जहाज से मैं इस सागर में कूद नहीं पड़ूँ। सारांश इसी तरह की अस्त-व्यस्त बातें उनके मन में उठ आया करती हैं और वह अपने से असंतुष्ट हैं।

योरुप में ही उन्होंने मानसोपचार के संबंध में आचार्य मारुति की ख्याति सुनी थी। भारत में और तिस पर दिल्ली में रहकर वह जिन मारुति को नहीं जानते थे, उन्हीं के विषय में योरुप के देशों से वह बड़ी श्रद्धा लेकर लौटे हैं। इसलिए अवकाश पाते ही वह उनकी शरण में पहुँचे। यद्यपि सन् 1960 की बात है कि जिस वर्ष आचार्य का देहांत हुआ पर उस समय वह जीवित थे।

अभिवादन पूर्वक आचार्य ने कहा, “वैद्य के पास रोगी आते हैं। विजेता मेरे पास किस सौभाग्य से आए हैं ?”

रिपु, “रोगी ही आपके पास आया है। विजेता छल है और उस दुनिया के छल को दुनिया के लिए छोड़िए। पर आप तो जानते हैं।”

आचार्य, “हाँ, चेहरे पर आपके विजय नहीं, पराजय देखता हूँ। शिकायत क्या है ?”

रिपु, “मैं खुद नहीं जानता। मुझे नींद नहीं आती। और मन पर मेरा काबू नहीं जमता।”

“हूँ, क्या होता है ?”

“जो नहीं चाहता, मन के अंदर वह सब कुछ हुआ करता है।”

“खासतौर पर आप क्या नहीं चाहते ?”

“क्या कहूँ ? यही देखिए के हिंदुस्तान लौट आया हूँ, जबकि ध्रुव पर अभी बहुत काम बाकी है। विजेता शब्द व्यंग्य है, ध्रुव देश भी हम सबके लिए उद्यान होना चाहिए। एक अकेला झंडा गाड़ आने से क्या होता है ? वह सब काम बाकी है। फिर भी मैं हिंदुस्तान आ गया। भला क्यों ?”

मारुति गौर से, रिपुदमन को देखते रहे। बोले, “तो हिंदुस्तान न आना जरूरी था।”

“हाँ, आना किसी भी तरह जरूरी न था।”

“क्यों ? हिंदुस्तान तो घर है।”

“पर क्या मेरा ? मेरा घर तो ध्रुव भी हो सकता है।”

आचार्य ने ध्यानपूर्वक रिपुदमन को देखते हुए कुछ हँसकर कहा, “यानी हिंदुस्तान को छोड़कर कोई घर हो सकता है।”

राजा रिपुदमन ने उत्साह से कहा, “लेकिन क्यों कोई घर हो ? और मेरे जैसे आदमी के लिए !”

आचार्य, “खैर, अब हम काम की बातें करें। अभी मैं कुछ नहीं कह सकता। कल पहली बैठक दीजिए, तीन बजकर बीस मिनट पर। डायरी रखते हैं ? नहीं, तो अब से कल तक की डायरी रखिए। साथ जो खर्च करें उसका पाई-पाई हिसाब और जिनसे मिलें उनका ब्यौरा भी लिखिएगा।”

“वह सब अभी न कह सकूँगा। मैं सोचता हूँ, कोई खराबी नहीं है। मैं वैज्ञानिक से अधिक विश्वासी हूँ। विश्वास में बहुत शक्ति है। अब हम कल मिलेंगे।.....जी नहीं, इसके लिए बाहर सेक्रेटरी है।”

बड़े-बड़े नोटों को वापस पर्स में रखते हुए राजा ने कहा, “मेरा स्वास्थ्य आप मुझे दे दें तो मैं बड़ा ऋणी होऊँ।”

आचार्य हँसकर बोले, “लेकिन आप तो स्वस्थ ही हैं। मैं आत्मा को मानता और शरीर को जानता हूँ। शरीर आत्मा का यंत्र है। यंत्र आपका साबित है, निरोग है—सब अवयव ठीक है। कृपया कल सबेरे आप यहाँ के यंत्र-मंदिर में भी हो आँ। सेक्रेटरी सब बता देंगे। वहाँ आपके हृदय, मस्तिष्क और शेष शरीर का पूरा निरीक्षण हो जायगा और परिणाम दोपहर तक मैं देख चुकूँगा। यह सब शास्त्रीय सावधानी है और उपयोगी भी है। लेकिन आप मान लें कि आपका शरीर एक दम तंदुरुस्त है।.....कल डायरी लाइएगा।”

अगले दिन रिपुदमन समय पर पहुँचे। आचार्य ने तरह-तरह के नक्शे और चित्र उनके आगे रखे और कहा, “देखिए, आपके यंत्र का पूरा खुलासा मौजूद है। मस्तक और हृदय-संबंधी परिणाम सही नहीं उतरे हैं तो विकार उन अवयवों में मत मानिए। व्यतिरेक यों है भी सूक्ष्म.....डायरी है ?”

रिपुदमन ने क्षमा माँगी। कहा, “मैं चित्त को उस जितना भी तो एकाग्र न कर सका।”

आचार्य हँसे बोले, “कोई बात नहीं; अगली बार सही, यह कहिए कि अपने भाई महाराज-साहब और रानी-माता से मिलने आप जाइएगा। विजेता को जीतने के लिए मारके बहुत हैं, पर अपनों का मन जीतना भी छोटी बात नहीं है। मैंने कल फोन पर महाराज से बातें की थीं। आप जो करो वह उसमें खुशी है। लेकिन अपने सुख से आप इतने विमुख न रहो—यह भी वह चाहते हैं। अच्छे-से-अच्छे संबंध मिल सकते हैं या आप चुन लो। विवाह अनिष्ट वस्तु नहीं है। वह तो एक आश्रम का द्वार है। क्यों, यह चर्चा अरुचिकर है ?”

रिपुदमन ने कहा, “जी, मैं उसके अयोग्य हूँ। विवाह से व्यक्ति रुकता है। वह बँधता है। वह तब सबका नहीं हो सकता। अपना एक कोल्हू बनाकर उसमें जुता हुआ चक्कर में ही घूम सकता है। नहीं, उस बारे में मुझे कुछ कहने को नहीं है।”

आचार्य हँसकर बोले, “विवाह चक्कर सही। लेकिन प्रेम ?”

रिपुदमन ने कुछ जवाब नहीं दिया।

“प्रेम से तो नाराज नहीं हो ? विवाह का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। प्रेम के निमित्त से उसकी सृष्टि है। इससे विवाह की बात तो दुकानदारी की है। सच्चाई की बात प्रेम है। इस बारे में तुम अपने से बात करके देखो। वह बात डायरी में दर्ज कीजिएगा। अब परसों मिलेंगे।”

“परसों यदि न गया।”

“कहाँ न गए ?”

“यही हिमालय या कहीं।”

“जहाँ चाहे जाओ। लेकिन मेरा दो बैठकों का कर्ज अभी बाकी है। परसों वहीं तीन-बीस पर आप आओगे। अब घड़ी हमें समय देना नहीं चाहती।”

“परसों के विषय में मैं आशावान से अधिक नहीं हूँ।”

“अच्छा तो कल उनसे मिलकर आशा को विश्वास बना लीजिए, जिनसे न मिलने के लिए मुझसे मिला जाता है। फोन पर मिलिए, वह न हो और दूरी हो तो हवाई यात्रा कीजिए। पर खटका छोड़कर उनसे मिलिए—अवश्य और कल! रेग्युलेटर जहाँ है उसके विपरीत मेरी सलाह जाकर बेकार ही हो सकती है।”

रिपुदमन ने चमक कर कहा, “किसकी बात आप करते हैं।”

“नहीं जानता वह कौन है! और जानूँगा तो आप ही से जानूँगा।....देखिए, ध्रुव से और हिमालय से लड़ाई भी ठीक-ठीक तभी आपकी चलेगी, जब अपनी लड़ाई एक हद तक सुलझ चुकेगी। प्रेम का इनकार अपने से इनकार है।.....लेकिन घड़ी की आज्ञा का उल्लंघन हम अधिक नहीं करेंगे।”

“देखिए, परसों यदि आ सका।”

“आ आँगे.....नमस्कार।”

“नमस्कार।।”

### ( 3 )

समय सब पर बह जाता है और अखबार कल को पीछे छोड़ आज पर चलते हैं। राजा रिपु नएपन से जल्दी छूट गए। ऐसे समय सिनेमा के एक बॉक्स में उर्मिला से उन्होंने भेंट की। उर्मिला बच्चे को साथ लाई थी। राजा सिनेमा के द्वार पर उसे मिले और बच्चे को गोद में लेना चाहा। उर्मिला ने जैसे यह नहीं देखा और अपने कंधे से उसे लगाए वह उनके साथ जीने पर चढ़ती चली गई। बॉक्स में आकर व्यस्ततापूर्वक उन्होंने बिजली का पंखा खोल दिया। पूछा, “कुछ मँगाऊँ ?”

“नहीं!”

घंटी दबाकर आदमी को बुलाया कहा, “दो क्रीम ?”

उसके जाने पर कहा, “लाओं मुझे दो न, क्या नाम है!”

उर्मिला ने मुस्कराकर कहा, “नाम अब तुम दो।”

“तो लो, आदित्यप्रसन्नबहादुर, खूब है!”

“बड़े आदमी बड़ा नाम चाहते हैं। मैं तो मधु कहती हूँ।”

“तो वह भी ठीक है, माधवेंद्रबहादुर, खूब है।”

“तुम जानो। मुझे तो मधु काफी है।”

इस तरह कुल बातें हुई और बीच ही में जरूरत हुई कि दोनों खेल से उठ जाए और कहीं जाकर आपस की सफाई कर लें।

दूर जमुना किनारे पहुँचकर राजा ने कहा, “अब कहो, मुझे क्या कहती हो ?”



“कहती हूँ कि तुम क्यों अपना काम बीच में छोड़कर आए ?”

“मेरा काम क्या है ?”

“मेरी और मेरे बच्चे की चिंता जरूर तुम्हारा काम नहीं है। मैंने कितनी बार तुमसे कहा, तुम उससे ज्यादा के लिए हो ?”

“उर्मिला, अब भी मुझसे नाराज हो ?”

“नहीं, तुम पर गर्वित हूँ।”

“मैंने तुम्हारा घर छुड़ाया। सब में रुसबा किया। इज्जत ली। तुमको अकेला छोड़ दिया। उर्मिला, मुझे जो कहो थोड़ा। पर अब बताओ, मुझे क्या करने को कहती हो ? मैं तुम्हारा हूँ। न रियासत का हूँ, न ध्रुव का हूँ। मैं बस, तुम्हारा हूँ। अब कहो।”

“देखो राजा, तुम भूलते हो। गिरिस्ती की-सी बात न करो। महाप्राणों की मर्यादा और है। तुम उन्हीं में हो। मेरे लिए क्या यही गौरव कम है कि मैं तुम्हारे पुत्र की माँ हूँ। मुझे दूसरी सब बातों से क्या मतलब है ? लेकिन तुम्हें हक नहीं कि मुझसे घिरो। दुनिया को भी जताने की जरूरत नहीं कि मेरा बालक तुम्हारा है। मेरा जानना मेरे गर्व को काफी है। मेरा अभिमान इसमें तीसरे को शरीक न करेगा। लेकिन मैं अपने को क्षमा नहीं कर सकूँगी, अगर जानूँगी कि मैं तुम्हारी गति में बाधा हूँ। अपने भीतर के वेग को शिथिल न करो, तीर की नाई बड़े चलो कि जब तक लक्ष्य पार हो। याद रखना कि पीछे एक है जो इसी के लिए जीती है।”

“उर्मिला, तुमने मुझे ध्रुव भेजा। कहती थी—उसके बाद मुझे दक्षिणी ध्रुव जीतने जाना होगा। क्या सच अब मुझे वहीं जाना होगा ?”

“राजा, कैसी बात करते हो! तुम कहीं रुक कैसे सकते हो ? जाना होगा, नहीं जाओगे ? अतुल वेग तुममें है, क्या वह यों ही ? नहीं, मैं देखूँगी कि कुछ उसके सामने नहीं टिक सकता। मैं तुम्हारी बनी, तो क्या इतना नहीं कर सकती ? इस पुत्र को देखो। भवितव्य के प्रति यह तुम्हारा दान है। अब तुम उन्मत्त हो, गति के लिए मुक्त हो। ध्रुव धरती के हो चुकेंगे, तबकि आकाश के सामने होंगे। राजा तुमको रुकना नहीं है। पथ अनंत हो, यही गति का आनंद है।”

“उर्मिला, मैं आचार्य मारुति के यहाँ गया था—”

“मारुति! वह ढोंगी ?”

“वह श्रद्धेय है, उर्मिला।”

“जानती हूँ, वह स्त्री को चूल्हे के और आदमी को हल के लिए पैदा हुआ समझता है। वह महत्त्व का शत्रु और साधारणता का अनुचर है। उसने क्या कहा ?”

“तुम उन्हें जानती हो ?”

“माँ उनकी भक्त थी। वह अक्सर हमारे यहाँ आते थे। उन्हीं की सीख से माँ ने मुझे संस्कृत पढ़ाई और नई हवा से बचाया। तभी से जानती हूँ। वह तेजस्विता का अपहर्ता है। अब वहाँ न जाना। उसने कहा क्या था ?”

“कहा था, यह गति अगति है। जगह बदलना नहीं, सचेत होना गतिशीलता का लक्षण है। उसकी शायद राय है कि मुझे घूमना नहीं, विवाह करना चाहिए।”

“मैं जानती थी। और तुम्हारी क्या राय है ?”

“वही जानने तुम्हारे पास आया हूँ। मारुति सब जानते हों, मुझको तुम ही जानती हो। इसलिए तुम्हीं कहो, मुझको क्या करना है ?”

“विवाह नहीं करना है।”

“उर्मिला!”

“तुम्हारा शरीर स्वस्थ है और रक्त उष्ण है तो...”

“उर्मिला!”

“तो स्त्रियों की कहीं कमी नहीं है।”

“बको मत, उर्मिला, तुम मुझे जानती हो।”

“जानती हूँ, इसी से कहती हूँ। तुम्हारे लिए क्या मैं स्त्री हूँ ? नहीं, प्रेमिका हूँ। मैं इस बारे में कभी भूल नहीं करूँगी। इसीलिए किसी स्त्री के प्रति तुममें मैं निषेध नहीं चाह सकती। मुझमें तुम्हारे लिए प्रेम है, इससे सिद्धि के अंत तक तुम्हें पहुँचाए बिना मैं कैसे रह सकती हूँ।”

“उर्मिला, सिद्धि मृत्यु से पहले कहाँ है।”

“वह मृत्यु के भी पार है, राजा! इससे मुझ तक लौटने की आशा लेकर तुम नहीं जाओगे। सौभाग्य का क्षण मेरे लिए शाश्वत है। उसका पुनरावर्तन कैसा ?”

“उर्मिला, तो मुझे जाना ही होगा ? तुम्हारे प्रेम-दया नहीं जानेगा ?”

“यह क्या कहते हो, राजा! मैं तुम्हें पाने के लिए भेजती हूँ, और तुम मुझे पाने के लिए जाते हो। यही तो मिलने की राह है। तुम भूलते क्यों हो ?”

“उर्मिला, आचार्य मारुति ने कहा था—साधारण रहो, सरल रहो। हम दोनों कहीं अपने साथ छल तो नहीं कर रहे हैं ?”

“नहीं राजा, मारुति नहीं जानता। वह समझ की बात समझ से जो परे है, उस तक प्रेम ही पहुँच सकता है। जाओ राजा, जाओ। मुझको परिपूर्ण करो, स्वयं भी संपूर्ण होओ।”

“देखो उर्मिला, तुम भी रो रही हो।”

“हाँ, स्त्री रो रही है, प्रेमिका प्रसन्न है। स्त्री की मत सुनना, मैं भी पुरुष की नहीं सुनूँगी। दोनों जने प्रेम की सुनेंगे। प्रेम जो अपने सिवा किसी दया को, किसी कुछ को नहीं जानता।”

( 4 )

पौने चार बजे राजा रिपु आचार्य के यहाँ पहुँचे। डायरी दी। आचार्य ने उसे गौर से देखा। अनंतर नोटबुक अलग रखी। कुछ देर विचार में डूबे रहे। अनंतर सहसा उबरकर बोले, “क्षमा कीजिएगा। मैं कुछ याद करता रह गया। आपने डायरी में संक्षिप्त लिखा। उर्मिला माता है और कुमारी है—यही न ?”

“जी।”

“तुम्हारे पुत्र की अवस्था क्या है ?”

“वर्ष से कुछ अधिक।”

“उत्तरी ध्रुव जाने में उर्मिला की सम्मति थी ?”

“प्रेरणा थी।”

“यह विचार उसने कहाँ से पाया ?”

“शायद मुझसे ही।”

“आरंभ से तुम विवाह को उद्यत थे, वह नहीं ?”

“जी नहीं। मैं बचता था, वह उद्यत थी।”

“हुँह! बचते थे, अपनी स्थिति और माता-पिता के कारण ?”

“कुछ अपने स्वप्नों के कारणा भी।”

“हुँह...फिर ?”

“गर्भ के बाद मैं तैयार हुआ कि हम साथ रहें।”

“विवाहपूर्वक ?”

“जी, वह चाहे तो विवाहपूर्वक भी।”

“हुँह,.....फिर ?”

“तब उसका आग्रह हुआ कि मुझे ध्रुव के लिए जाना होगा।”

“तो उस आग्रह की रक्षा में आप गए ?”

“पूरी तरह नहीं। मन से मैं भी साथ रहने का बहुत इच्छुक न था। इससे निकल जाना चाहता था।”

“तुम्हारे आने से तो वह प्रसन्न हुई।”

“शायद हुई। लेकिन रुकने से अप्रसन्न है।”

“क्या कहती है ?”

“कहती है कि जाओ। जय-यात्रा की कहीं समाप्ति नहीं। सिद्धि तक जाओ जो मृत्यु के पार है।”

अकस्मात् आवेश में आकर आचार्य बोले, “कौन, उर्मिला ? वही धनंजयी की लड़की ? वह यह कहती है ?

“जी!”

“वह पागल है।”

“यही वह आपके बारे में कहती है।”

आचार्य जोर से बोले, “चुप रहो, तुम जानते नहीं। वह मेरी बेटी है।”

“बेटी!”

“मैं बुढ़ा हूँ। रिपु, तुम समझदार हो। हाँ, सगी बेटी।”

“आचार्य जी, यह आप क्या कह रहे हैं ? तो आप सब जानते थे।”

“सब नहीं तो बहुत-कुछ जानता ही था। देखो रिपुदमन, अब बताओं तुम क्या कहते हो ?”

“मैं कुछ नहीं जानता, कुछ नहीं कहता। मेरे लिए सब ऊर्मि से पूछिए।”

“सुनो रिपुदमन, तुम अच्छे लड़के हो। ऊर्मि मुझसे बाहर न होगी। पुत्र की व्यवस्था हो जाएगी और तुम लोग विवाह करके यहीं रहोगे।”

रिपुदमन ने हाथों से मुँह ढककर कहा, “मैं कुछ नहीं जानता। उर्मि कहे, वही मेरी होनहार है।”

“उर्मि तो मेरी ही बेटी है। रिपुदमन, निराश न हो।”

### ( 5 )

आचार्य के समक्ष पहुँचकर उर्मिला ने कहा, “आपने मुझे बुलाया था ?”

“हाँ बेटी, रिपुदमन ने सब कहा है। जो हुआ, हुआ। अब तुम्हें विवाह कर लेना चाहिए।”

“अब से मतलब कि पहले नहीं करना चाहिए था ?”

“विवाह हुआ है तब तो खुशी की बात है, फिर वह प्रकट क्यों न हो ? तुम दोनों साथ रहो।”

“भगवान् पर तो सब प्रकट है। और साथ बहुतेरे लोग रहते हैं।”

“तो तुम क्या चाहती हो ?”

“वही जो राजा रिपुदमन उस अवस्था में चाहते थे, जब मुझे मिले थे। उनके स्वप्न मेरे कारण भग्न होने चाहिए कि पूर्ण ? मेरी चिंता उन्हें उनके प्रकृत मार्ग से हटाए, यह मैं कैसे सह सकती हूँ?”

“स्वप्न तो सत्य नहीं है, बेटी! तब की मन की बहक को उसके लिए सदा क्यों अंकुश बनाए रखना चाहती हो ? एक भूल के लिए किसी से इतना चिढ़ना न चाहिए।”

“आचार्यजी, आप किस अधिकार से मुझसे यह कह रहे हैं ?”

“रिपु ने जो अपनी हैसियत और माता-पिता के ख्याल से आरंभ में विवाह में झिझक की, इसी का न यह बदला है ?”

“आचार्यजी, आप इन बातों को नहीं समझेंगे। शास्त्र में से स्त्री को आप नहीं जान लेंगे।”

“बेटी, फिर कोई किसमें से किसको जानेगा, बता दो ?”

“सब-कुछ प्रेम में से जाना जायगा जो कि मेरे लिए आपके पास नहीं है।”

“सच बेटी, मेरे पास वह नहीं है। और तेरे लिए जितना चाहूँ उतना है, यह मैं किसी तरह न कह सकूँगा। लेकिन तुमसे जो सच्चाई छिपाता रहा हूँ और अब छिपा रहा हूँ, वह अनर्थ अपने लिए नहीं, तेरे प्रेम के लिए ही मुझसे बन सका है, यह भी झूठ नहीं है। बेटी, मैं काफी जी लिया। अब मरने में देर लगाने की बिलकुल इच्छा नहीं है। ऐसे समय तेरे अहित की बात कह सकूँगा, ऐसा निष्ठुर मुझे न मानना। रिपुदमन को भरमा मत, उर्मिला! किसी का सपना होने के लिए वह नहीं है। तुम लोग विवाह करो और राज-मार्ग पर चल पड़ो।”

उर्मिला ने हँसकर कहा, “आप थक गए हैं, आचार्यजी। भीड़ चलती रही है, इसी कारण जो प्रशस्त और स्वीकृत हो गया है, वहाँ आपका राज-मार्ग है न ? पर मुक्ति का पथ अकेले का है। अकेले ही उस पर चला जायगा। वहाँ पांडव तक पाँच नहीं हैं। सब एक-एक हैं।”

“बेटी, यह क्या कहती है ? सनातन ने जिसको प्रतिष्ठा दी है, बुद्धि के अहंकार में उसका तर्जन श्रेयस्कर नहीं होने वाला है। उर्मिला, यह एक बुद्धे की बात सुन रखो। पर बेटी, उसे छोड़ो। बताओं, मुझे माफ कर सकोगी ?”

“आप रिपुदमन को, अपनी समझ से उसके हित की ओर मोड़ना चाहते हैं, उसके लिए आपको क्षमा माँगने की जरूरत है ?”

“तो तुम रिपु से नाराज ही रहोगी ? उसके साथ अपने को भी दंड ही देती रहोगी ?”

“मुझे पाने के लिए उन्हें जाना होगा, उन्हें पाने के लिए मुझे भेजना होगा—यह आपको कैसे समझाऊँ ?”

“हाँ, मैं नहीं समझ सकूँगा। लेकिन मेरा हक और दावा है। सोचता था, भगवान् के आगे पहुँचूँगा, उससे पहले उस बात को कहने का मौका नहीं..... ! क्यों तू अपने पिता की भी बात नहीं मानेगी ?”

“पिता को जीते-जी इस संबंध में, मैं कब संतोष दे सकी ?”

“बेटी, अब भी नहीं दे सकेगी ?”

“उर्मिला ने चौंककर कहा, “क्या आचार्यजी ?”

मारुति का कंठ भर आया। काँपते हुए बोल, “हाँ बेटी ! चाहे तो अब तू अपने बाप को संतोष और क्षमा दोनों दे सकती है।”

उर्मि स्तब्ध, आचार्य को देखती रही। उनकी आँखों से तार-तार आँसू बह रहे थे। उनकी दशा दयनीय थी। बोली, “मुझ अभागिन के भाग्य में आज्ञा-पालन तक का सुख, हाय, विधाता क्यों नहीं लिख सका ? जाती हूँ, इस हतभागिन को भूल जाइएगा।”

( 6 )

रिपुदमन ने कहा, “आचार्य से तुम मिली थीं ?”

“मिली थी।”

“अब मुझे क्या करना है ?”

“करना क्या है राजा, तुम्हें जाना है, मुझे भेजना है !”

“कहाँ जाना है—दक्षिणी ध्रुव !”

“हाँ, नहीं तो उत्तर के बाद कहीं तुम दक्षिण के लिए शेष न रहो।”

“दक्षिण के बाद फिर किसी के लिए शेष बचने की बात नहीं रह जायगी न ?”

“दिशाओं के द्वार-दिगंत में हम खो जायँ। शेष यहाँ किसको रहना है ?”

“छोड़ो, मैं तुम्हें नहीं समझता, तुम्हारी संस्कृत नहीं समझता। सीधे बताओ, मुझे कब जाना है ?”

“जब हवाई जहाज मिल जाय।”

“तो लो, तुम्हारे सामने फोन से तय किए लेता हूँ।”

फोन पर भी बात करते समय टकटकी बाँधकर उर्मिला रिपु को देखती रही। अनंतर पूछा, “तो परसों शटलैंड द्वीप के लिए पूरा जहाज हो गया ?”

“हाँ, हो गया।”

“लेकिन परसों कैसे जाओगे, दल जुटाना नहीं है ?”

“तुम्हारा मन रखूँगा ! दल के लिए नहीं ठहरूँगा।”

“लेकिन उसके बिना क्या होगा ? नहीं, परसों तुम नहीं जाओगे।”

“और न सताओ उर्मिला, जाऊँगा। अमरीका को फोन किए देता हूँ। दक्षिण से कुछेक साथी हो जायँगे।”

“नहीं राजा, परसों नहीं जाओगे।”

“मैं स्त्री की बात नहीं सुनूँगा; मुझे प्रेमिका के मंत्र का वरदान है।”

आँखों में आँसू लाकर उर्मिला ने रिपु के दोनों हाथ पकड़ कर कहा, “परसो नहीं जाओगे तो कुछ हर्ज है ? यह तो बहुत जल्दी है ?”

रिपु हाथ झटक कर खड़ा हो गया। बोला, “मेरे लिए रुकना नहीं है। परसों तक इसी प्रायश्चित में रहना है कि तब तक क्यों रुक रहा हूँ ?”

उर्मिला के फैले हुए हाथ खाली रहे। और वह कहती ही रही, “राजा, ओ मेरे राजा !”

( 7 )

दुनिया के अखबारों में धूम मच गई। लोगों की उत्कंठा का ठिकाना न था। योरुप, अमरीका, रूस आदि देशों के टेलीफोन जैसे इसी काम के हो गए। ध्रुव-यात्रा योजना की बारीकियाँ पाने के बारे में संवाददाताओं में होड़ मच उठी। रिपुदमन उन्हें कुछ न बता सका, यह उसकी दक्षता का प्रमाण बना। हवाई जहाज जो शटलैंड के लिए चार्टर हुआ था, उसकी भिन्न-भिन्न कोणों से ली गई असंख्य तस्वीरें छपीं।

उर्मिला अखबार लेती, पढ़ती और रख देती। अनंतर शून्य में देखती रह जाती। नहीं तो अपने बच्चे में डूबती।

एक दिन, दो दिन। वह कहीं बाहर नहीं गई। टेलीफोन पास रख छोड़ा। पर कोई नहीं, कुछ नहीं। अखबार के पन्नों से आगे और कोई बात उस तक नहीं आई।

आज अंतिम संध्या है। राष्ट्रपति की ओर से दिया गया भोज हो रहा होगा। सब राष्ट्रदूत होंगे, सब नायक, सब दलपति। गई रात तक वह इन कल्पनाओं में रही।

तीसरा दिन। उर्मिला ने अखबार उठाया। सुखी है और बॉक्स में खबर है। राजा रिपुदमन सबेरे खून में भरे पाए गए। गोली का कनपटी के आर-पार निशान है।

खबर छोटी थी, जल्दी पढ़ ली गई। लेकिन पूरे अखबार में विवरण और विस्तार के साथ दूसरी सूचनाएँ थीं। जिन्हें उर्मिला पढ़ती ही चली गई, पढ़ती ही चली गई। पिछली संध्या को जगह-जगह राजा रिपुदमन के सम्मान में सभाएँ हुई थीं। उनकी चर्चा थी। खासकर राष्ट्रपति के उस भोज का पूरा विवरण था, जिसे दुनिया का एक महत्वपूर्ण समारोह कहा गया था।

उर्मिला रस की एक बूँद नहीं छोड़ सकी। उसने अक्षर-अक्षर सब पढ़ा।

दोपहर बीत गई, तब नौकरानी ने चेताया कि खाना तैयार है। इस समय उसने भी तत्परता से कहा, “मैं भी तैयार हूँ। यहीं ले आओ। प्लेट्स इसी अखबार पर रख दो।”

उसी दिन अखबारों में अपने खास अंक में मृत व्यक्ति का तकिए के नीचे से मिला जो पत्र छापा था, वह भी नीचे दिया जाता है।

“सब के प्रति—

बंधुओं,

मैं दक्षिणी ध्रुव जा रहा था, सब तैयारियाँ थीं। ध्रुव में मुझे महत्व नहीं है। फिर भी मैं जाना चाहता था। कारण, इस बार मुझे वापस आना नहीं था। ध्रुव के एकांत में मृत्यु सुखकर होती। ध्रुव-यात्रा मेरी व्यक्तिगत बात थी, उसे सार्वजनिक महत्व दिया गया, यह अन्याय है। इसी शाम राष्ट्रपति और राष्ट्रदूतों ने मुझे बधाइयाँ दीं, मेरे पराक्रम को सराहा। पर उन्हें छल हुआ है। मैं यह श्रेय नहीं ले सकता। वह चोरी होगी। उस भ्रम में लोगों को रखना मेरे लिए गुनाह है। क्या अच्छा होता कि ध्रुव मैं जा सकता, लेकिन लोगों ने सार्वजनिक रूप से जो श्रेय मुझ पर डाला, उसका स्वल्पांश भी किसी तरह अपने साथ लेकर मैं नहीं बढ़ सकता हूँ। यात्रा एकदम निजी कारणों से थी। मुझे बहुत खेद है कि मैं किसी से मिले आदेश और उसे दिए अपने वचन को पूरा नहीं कर पा रहा हूँ, लेकिन ध्रुव पर भी मुझे बचना था नहीं। इसलिए बचना अब नहीं है। मुझे संतोष है कि किसी की परिपूर्णता में, काम आ रहा हूँ। मैं पूरे होश-हवाश में अपना काम तमाम कर रहा हूँ। भगवान् मेरे प्रिय के अर्थ मेरी आत्मा की रक्षा करे !”

## अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

1. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहानी की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।
2. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
3. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. कहानी तत्त्वों के आधार पर ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी की समीक्षा कीजिए।
5. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी के आधार पर उर्मिला का चरित्र-चित्रण कीजिए।
6. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
7. ‘ध्रुवयात्रा’ कहानी की भाषा-शैली की समीक्षा कीजिए।

# भाग—II

## संस्कृत खंड





# संस्कृत दिग्दर्शिका

प्रथमः पाठः

## वन्दना

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।  
यद् भद्रं तन्न आसुव ॥ 1 ॥  
ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत् ।  
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ॥ 2 ॥  
सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।  
तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ 3 ॥  
उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत ॥ 4 ॥  
यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु ।  
शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः ॥ 5 ॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

- (1) वन्दनायाः प्रथमे मंत्रे का प्रार्थना कृता ?
- (2) 'विश्वानि' इति पदे का विभक्तिः ?
- (3) 'गृधः' इति पदस्य कः अर्थः ?
- (4) चतुर्थे मंत्रे कः सन्देशः अस्ति ?
- (5) वयं कथं जीवनं यापयेयम् ?

### II. निम्नलिखित मन्त्रों का ससन्दर्भ हिन्दी अनुवाद कीजिए –

- (क) विश्वानि देव ..... तन्न आसुव।
- (ख) ईशावास्यमिदं ..... कस्यस्विद् धनम्।
- (ग) सह नाववतु ..... मा विद्विषावहै।
- (घ) यतो यतः ..... नः पशुभ्यः।

### III. व्याकरण-बोध

#### 1. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए–

शब्द	सन्धि-विच्छेद
नावधीतम्	नौ + अधीतम्
तन्न	—
शन्नः	—
प्रजाभ्योऽभयम्	—
नाववतु	—

#### 2. निम्नलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन का निर्देश कीजिए–

शब्द	विभक्ति	वचन
त्यक्तेन	तृतीया	एकवचन
जगत्याम्	—	—
अवतु	—	—
विद्विषावहै	—	—
प्रजाभ्यः	—	—

## शब्दार्थ

विश्वानि = सम्पूर्ण। दुरितानि = पापों को। परासुव = दूर कर दीजिए। यद् = जो। भद्रम् = मंगलकारी, शुभकारी। आसुव = प्रदान कीजिए। ईशावास्यम् = ईश्वर से आच्छादित। त्यक्तेन = त्याग भाव से। भुञ्जीथाः = उपभोग करो। मा = मत। गृधः = लोभ (लालच)। शम् = कल्याण। अभयम् = निर्भय। नः = हमको। पशुभ्यः = पशुओं से।

## द्वितीयः पाठः

### प्रयागः

भारतवर्षस्य उत्तरप्रदेशराज्ये प्रयागस्य विशिष्टं स्थानमस्ति। अत्र ब्रह्मणः प्रकृष्टयागकरणात् अस्य नाम प्रयागः अभवत्। गङ्गा-यमुनयोः सङ्गमे सितासितजले स्नात्वा जनाः विगतकल्मषा भवन्ति इति जनानां विश्वासः। अमायां पौर्णमास्यां संक्रान्तौ च स्नानार्थिनामत्र महान् सम्मर्दः भवति। प्रतिवर्षं मकरं गते सूर्ये माघमासे तु अनेकलक्षाः जनाः अत्र आयान्ति मासमेकमुषित्वा च सङ्गमस्य पवित्रेण जलेन, विदुषां महात्मनामुपदेशामृतेन च आत्मानं पावयन्ति। अस्मिन्नेव पर्वणि महाराजः श्रीहर्षः प्रतिपञ्चवर्षम् अत्रागत्य सर्वस्वमेव याचकेभ्यो दत्त्वा मेघ इव पुनः सञ्चयार्थं स्वराजधानीं प्रत्यगच्छत्।

ऋषेः भरद्वाजस्य आश्रमः अपि अत्रैव अस्ति, यत्र पुरा दशसहस्रमिताः विद्यार्थिनः अधीतिनः आसन्। पितुः आज्ञां पालयन् पुरुषोत्तमः श्रीरामः अयोध्यायाः वनं गच्छन् 'कुत्र मया वस्तव्यम्' इति प्रष्टुम् अत्रैव भरद्वाजस्य समीपम् आगतः। चित्रकूटमेव त्वन्निवासयोग्यम् उचितं स्थानम् इति तेनादिष्टः रामः, सीतया लक्ष्मणेन च सह चित्रकूटम् अगच्छत्।

पुरा वत्सनामकमेकं समृद्धं राज्यमासीत्। अस्य राजधानी कौशाम्बी इतः नातिदूरेऽवर्तत। अस्य राज्यस्य शासकः महाराजः उदयनः वीरः अप्रतिमसुन्दरः ललितकलाभिज्ञश्चासीत्। यमुनातटे आधुनिक 'सुजावन' ग्रामे तस्य सुयामुनप्रासादस्य ध्वंसावशेषाः तस्य सौन्दर्यानुरागं ख्यापयन्ति। प्रियदर्शी सम्राट् अशोकः कौशाम्ब्यामेव स्वशिलालेखमकारयत् योऽधुना कौशाम्ब्याः आनीय प्रयागस्य दुर्गे सुरक्षितः।

गङ्गायाः पूर्वं पुराणप्रसिद्धस्य महाराजस्य पुरुरवसः राजधानी प्रतिष्ठानपुरम् झूँसीत्याधुनिकनाम्ना प्रसिद्धमस्ति। यस्य प्रतिष्ठा अद्यापि विदुषां महात्मनाञ्च स्थित्या अक्षुण्णैव।

इतिहासप्रसिद्धः नीतिनिपुणः मुगलशासकः अकबरनामा दिल्ल्याः सुदूरे पूर्वस्यां दिशिस्थितयोः कडाजौनपुरनामकयोः समृद्धयोः राज्ययोः निरीक्षणं दुष्करं विज्ञाय तयोर्मध्ये प्रयागे गङ्गायमुनाभ्यां परिवृतं दृढं दुर्गमकारयत् गङ्गाप्रवाहाच्चास्य रक्षणाय विशालं बन्धमप्यकारयत्, योऽद्यापि नगरस्य गङ्गायाश्च मध्ये सीमा इव स्थितोऽस्ति। अयमेव प्रयागस्य नाम स्वकीयस्य 'इलाही' धर्मस्यानुसारेण 'इलाहाबाद' इत्यकरोत्। इदं दुर्गमतीव विशालं सुदृढं सुरक्षादृष्ट्या च अतिमहत्त्वपूर्णमस्ति।

भारतस्य स्वतन्त्रतान्दोलनस्य इदं नगरं प्रधानकेन्द्रम् आसीत्। श्रीमोतीलालनेहरू, महामना मदनमोहनमालवीय, आजादोपनामकश्चन्द्रशेखरः, अन्ये च स्वतन्त्रतासंग्रामसैनिकाः अस्यामेव पावनभूमौ उषित्वा आन्दोलनस्य सञ्चालनम् अकुर्वन्। राष्ट्रनायकस्य पण्डितजवाहरलालस्य इयं क्रीडास्थली कर्मभूमिश्च।

राष्ट्रभाषा-हिन्दी-प्रचारे संलग्नं हिन्दीसाहित्यसम्मेलनम् अत्र स्थितम् अत्रैव च अनेकसहस्रसंख्यैः देशविदेशविद्यार्थिभिः परिवृतः विविधविद्यापारङ्गतैः विद्वद्वरेण्यैः उपशोभितः च प्रयागविश्वविद्यालयः भरद्वाजस्य प्राचीन-गुरुकुलस्य नवीनं रूपमिव शोभते । स्वतन्त्रेऽस्मिन् भारते प्रत्येकं नागरिकाणां न्यायप्राप्तेरधिकारघोषणामिव कुर्वन् उच्चन्यायालयः अस्य नगरस्य प्रतिष्ठां वर्द्धयति ।

एवं गङ्गा-यमुना-सरस्वतीनां पवित्रसङ्गमे स्थितस्य भारतीयसंस्कृतेः केन्द्रस्य च महिमानं वर्णयन् महाकविः कालिदासः सत्यमेव अकथयत्—

समुद्रपत्न्योर्जलसन्निपाते

पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात् ।

तत्त्वावबोधेन विनापि भूयस्-

तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः ॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए —

1. प्रयागः भारतस्य कस्मिन् राज्ये वर्तते ?
2. गङ्गायामुनयोः सङ्गमः कुत्र वर्तते ?
3. ऋषेः भरद्वाजस्य आश्रमः कुत्र आसीत् ?
4. रामः सीतया लक्ष्मणेन च सह कुत्र अगच्छत् ?
5. वत्सराज्यस्य राजधानी का आसीत् ?
6. महाराजस्य पुरुरवसः राजधानी कुत्र आसीत् ?
7. कः शासकः प्रयागस्य नाम 'इलाहाबाद' इति अकरोत् ?
8. इलाही धर्मस्य स्थापना केन कृता ?
9. भारतस्य स्वतंत्रता-आन्दोलनस्य किं नगरं प्रधानकेन्द्रम् आसीत् ?
10. सम्राट् अशोकः स्वशिलालेखं कुत्र अकारयत् ?
11. पण्डितजवाहरलालस्य का नगरी क्रीडास्थली कर्मभूमिश्च आसीत् ?
12. हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनं कुत्र अस्ति ?
13. उत्तरप्रदेशराज्यस्य उच्चन्यायालयः कुत्र अस्ति ?

### II. निम्नलिखित संस्कृत गद्यांशों का ससन्दर्भ हिन्दी अनुवाद कीजिए—

- (क) भारतवर्षस्य ..... आत्मानं पावयन्ति ।
- (ख) अमायां पौर्णमास्यां ..... स्वराजधानीं प्रत्यगच्छत् ।
- (ग) ऋषेः भरद्वाजस्य ..... चित्रकूटम् अगच्छत् ।
- (घ) पुरा वत्सनामकमेकं ..... दुर्गे सुरक्षितः ।

- (ड) इतिहासप्रसिद्धः ..... अतिमहत्त्वपूर्णमस्ति ।  
 (च) भारतस्य ..... कर्मभूमिश्च ।  
 (छ) राष्ट्रभाषा-हिन्दी-प्रचारे ..... प्रतिष्ठां वर्द्धयति ।  
 (ज) समुद्रपत्न्योः ..... शरीरबन्धः ।

### III. व्याकरण—बोध

#### 1. निम्नलिखित शब्दों में समास बताते हुए उसका-विग्रह भी कीजिए—

समस्त पद	समास का नाम	विग्रह
महाराजः	कर्मधारय समास	महान् च असौ राजा
सितासितजले	—	—
गङ्गाप्रवाहात्	—	—
हिन्दीसाहित्यसमेलनम्	—	—
नीतिनिपुणः	—	—

#### 2. अधोलिखित शब्दों में प्रत्यय-निर्देश कीजिए—

शब्द	प्रत्यय
उषित्वा	क्त्वा
वस्तव्यम्	—
प्रष्टुम्	—
सुरक्षितः	—
वर्णयन्	—

#### शब्दार्थः

**ब्रह्मणः** = ब्रह्मा के द्वारा। **सितासितजले** = श्वेत और श्याम (काले) जल में (गंगा और यमुना के जल में)। **स्नात्वा** = स्नान करके। **विगतकल्मषा** = पापरहित। **सम्मर्दः** = भीड़। **उषित्वा** = ठहरकर। **सञ्चयार्थम्** = इकट्ठा करने के लिए। **दशसहस्रमिताः** = दश हजार तक। **वस्तव्यम्** = निवास करना चाहिए। **प्रष्टुम्** = पूछने के लिए। **ख्यापयन्ति** = प्रकट करते हैं। **पुरुषवसः** = पुरुषवा राजा की। **विदुषाम्** = विद्वानों के। **दुष्करम्** = कठिन। **परिवृतः** = घिरा हुआ। **विविधविद्यापारङ्गतैः** = अनेक विद्याओं में दक्ष। **अभिषेकात्** = स्नान से। **शरीरबन्धः** = शरीर का बन्धन (पुनर्जन्म का लेना)।

तृतीयः पाठः

## सदाचारोपदेशः

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।  
देवा भागं यथा पूर्वं सञ्जानाना उपासते ॥ 1 ॥  
कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।  
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ 2 ॥  
मधुमन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम् ।  
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसदृशः ॥ 3 ॥  
आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम् ।  
आचारात् कीर्तिमाप्नोति पुरुषः प्रेत्य चेह च ॥ 4 ॥  
ये नास्तिकाः निष्क्रियाश्च गुरुशास्त्रातिलङ्घिनः ।  
अधर्मज्ञा दुराचारास्ते भवन्ति गतायुषः ॥ 5 ॥  
ब्रह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत् ।  
उत्थायाचम्य तिष्ठेत पूर्वा सन्ध्यां कृताञ्जलिः ॥ 6 ॥  
अक्रोधनः सत्यवादी भूतानामविहिंसकः ।  
अनुसूयुरजिह्मश्च शतं वर्षाणि जीवति ॥ 7 ॥  
अकीर्तिं विनयो हन्ति हन्त्यनर्थं पराक्रमः ।  
हन्ति नित्यं क्षमा क्रोधमाचारो हन्त्यलक्षणम् ॥ 8 ॥  
अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।  
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥ 9 ॥  
वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमायाति याति च ।  
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः ॥ 10 ॥  
सत्येन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते ।  
मृजया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते ॥ 11 ॥  
श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम् ।  
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥ 12 ॥

## अभ्यास

## I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

1. आयुः कुतः लभते ?
2. गतायुषः के भवन्ति ?
3. कः शतं वर्षाणि जीवति ?
4. विनयः किं हन्ति ?
5. अलक्षणं कः हन्ति ?
6. जनः आचारात् किं किं लभते ?
7. वृत्तं कथं संरक्षेत् ?
8. धर्मः केन रक्ष्यते ?
9. विद्या कथं रक्ष्यते ?
10. कुलं केन रक्ष्यते ?

## II. निम्नलिखित श्लोकों का सन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए–

- (क) संगच्छध्वं ..... उपासते ।  
 (ख) कुर्वन्नेवेह ..... लिप्यते नरे ।  
 (ग) आचाराल्लभते ..... प्रेत्य चेह च ।  
 (घ) ये नास्तिकाः ..... गतायुषः ।  
 (ङ) ब्रह्मे मुहूर्ते ..... कृताञ्जलिः ।  
 (च) अक्रोधनः ..... वर्षाणि जीवति ।  
 (छ) अभिवादनशीलस्य ..... यशो बलम् ।  
 (ज) वृत्तं यत्नेन ..... हतो हतः ।  
 (झ) सत्येन रक्ष्यते ..... वृत्तेन रक्ष्यते ।

## III. व्याकरण–बोध :

## 1. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए और सन्धि का नाम भी बताइए–

शब्द	सन्धि-विच्छेद	सन्धि का नाम
(क) एवेह	एव + इह	गुण सन्धि
(ख) धर्मार्थौ	—	—
(ग) हन्त्यलक्षणम्	—	—
(घ) आयुर्विद्या	—	—



## 2. निम्नलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास लिखिए-

समस्त पद	विग्रह	समास का नाम
(क) धर्मार्थौ	धर्मश्च अर्थश्च	द्वन्द्व समास
(ख) मधुसदृशः	—	—
(ग) धर्मसर्वस्वम्	—	—

## शब्दार्थः

संगच्छध्वम् = साथ-साथ चलो। सञ्जानानाः = परस्पर मिलकर। कुर्वन्नेवेह = (कुर्वन् एव इह) = करते हुए ही इस संसार में। कर्माणि = कर्मों को (सद्कर्मों को)। जिजीविषेत् = जीने की इच्छा करनी चाहिए। शतम् = सौ। समाः = वर्ष। मधुमत् = मधुर। मे = मेरा। निष्क्रमणम् = जाना, निकलना। परायणम् = दूर हटना। प्रेत्य = मृत्यु के बाद परलोक में। इह = इस संसार में। नास्तिकाः = वेद की निन्दा करने वाले। गतायुषः = क्षीण (कम) आयु वाले। कृताञ्जलिः = हाथ जोड़कर। अक्रोधनः = क्रोध न करने वाला। भूतानाम् = प्राणियों की। अविहिंसकः = हिंसा न करने वाला। अनसूयुः = दूसरों से असूया अर्थात् ईर्ष्या न करने वाला। अजिह्मः = जो कुटिल नहीं है। अलक्षणम् = अशुभ लक्षणों को। वृत्तम् = चरित्र को। वित्ततः = धन से। योगेन = अभ्यास से। मृजया = स्वच्छता से। धर्मसर्वस्वम् = धर्म का सारतत्त्व। अवधार्यताम् = धारण करो।



चतुर्थः पाठः

## हिमालयः

भारतदेशस्य सुविस्तृतायाम् उत्तरस्यां दिशि स्थितो गिरिः पर्वतराजो 'हिमालय' इति नाम्नाभिधीयते जनैः। अस्य महोच्चानि शिखराणि जगतः सर्वानपि पर्वतान् जयन्ति। अतः एव लोका एनं पर्वतराजः कथयन्ति। अस्योन्नतानि शिखराणि सदैव हिमैः आच्छादितानि तिष्ठन्ति। अत एवास्य हिमालय इति हिमगिरिरित्यपि च नाम सुप्रसिद्धम्। 'एवरेस्ट', 'गौरीशङ्कर' प्रभृतीनि अस्य शिखराणि जगति उन्नततमानि सन्ति। अस्य अधित्यकायां त्रिविष्टप-नयपाल-भूतान-देशाः पूर्णसत्तासम्पन्नाः, कश्मीरहिमाचलप्रदेशासम सिक्किम मणिपुरप्रभृतयः भारतीयाः प्रदेशाः सन्ति। उत्तरभारतस्य पर्वतीयो भागोऽपि हिमालयस्यैव प्रान्तरे तिष्ठति।

अयं पर्वतराजः भारतवर्षस्य उत्तरसीम्नि स्थितः तत् प्रहरीव शत्रुभ्यः सततं रक्षति। हिमालयादेव समुद्रगम्य गङ्गा-सिन्धु-ब्रह्मपुत्राख्याः महानद्यः, शतद्रि-विपाशा-यमुना-सरयू-गण्डकी-नारायणीकौशिकीप्रभृतयः नद्यश्च समस्तामपि उत्तरभारतभुवं स्वकीयैः तीर्थोदकैः न केवलं पुनन्ति, अपितु इमां सस्यश्यामलामपि कुर्वन्ति।

अस्योपत्यकासु सुदीर्घाः वनराजयो विराजन्ते, यत्र विविधाः ओषधयो वनस्पतयस्तरवश्च तिष्ठन्ति। इमाः ओषधयः जनान् आमयेभ्यो रक्षन्ति, तरवश्च आसन्द्यादिगृहोपकरणनिर्माणार्थं प्रयुज्यन्ते। हिमालयः वर्षर्तौ दक्षिणसमुद्रेभ्यः समुत्थिता मेघमाला अवरुध्य वर्षणाय ताः प्रवर्तयति।

अस्योपत्यकायां विद्यमानः कश्मीरो देशः स्वकीयाभिः सुषमाभिः भूस्वर्ग इति संज्ञया अभिहितो भवति लोके, ततश्च पूर्वस्यां दिशि स्थितः किन्नर-देशो देवभूमिनाम्ना प्राचीनसाहित्ये प्रसिद्धः आसीत्। अद्यापि 'कुलूघाटी' इति नाम्ना प्रसिद्धोऽयं प्रदेशः रमणीयतया केषां मनो न हरति। शिमला-देहरादून-मसूरी-नैनीताल-प्रभृतीनि नगराणि देशस्य सम्पन्नान् जनान् ग्रीष्मर्तौ बलादिव भ्रमणाय आकर्षन्ति। एभ्योऽपि पूर्वस्मिन् भागेऽवस्थितः रमणीयतमः प्रदेशः कामरूपतया 'कामरूप' इति संज्ञया अभिधीयते।

अस्यैव कन्दरासु तपस्यन्तः अनेके ऋषयो मुनयश्च परां सिद्धिं प्राप्तवन्तः। अस्य सिद्धिमत्त्वं विलोक्यैव 'उपगह्वरे' गिरीणां संङ्गमे च नदीनां धिया विप्रोऽजायत' इत्यादि कथयन्तः वैदिका ऋषयः अस्य महत्त्वं स्वीकृतवन्तः। पुराणेषु सर्वविधानां सिद्धीनां प्रदातुः शिवस्य स्थानम् अस्यैव पर्वतस्य कैलासशिखरे स्वीकृतमस्ति। अस्यैव प्रदेशेषु बदरीनाथ-केदारनाथ-पशुपतिनाथ-हरिद्वार-हृषीकेश-वैष्णवदेवी-ज्वालादेवीप्रभृतीनि तीर्थस्थानानि सन्ति।

अतएव पर्वतराजोऽयं हिमालयः रक्षकतया, पालकतया, सर्वोषधिभिः संरक्षकतया, सर्वसिद्धिप्रदातृतया च भारतीयेषु जनेषु सुतरां समादृतः पर्वतराजः इति।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

1. पर्वतराजो हिमालयः कुत्र स्थितोऽस्ति ?
2. कस्य पर्वतस्य उन्नतानि शिखरानि सदैव हिमैः आच्छादितानि तिष्ठन्ति ?
3. हिमालयस्य सर्वोच्चशिखरस्य किं नाम अस्ति ?
4. हिमालयस्य कानि शिखराणि जगति उन्नतमानि सन्ति ?
5. हिमालयस्य अधित्यकायां के देशाः के च भारतीयप्रदेशाः सन्ति ?
6. हिमालयतः काः नद्यः प्रभवन्ति ?
7. सुदीर्घाः वनराजयः कस्य उपत्यकासु विराजन्ते ?
8. भारतदेशस्य कः शत्रुभ्यः रक्षति ?
9. 'भूस्वर्ग' इति संज्ञया कः अभिहितः लोके ?
10. 'कुलूघाटी' प्रदेशस्य प्राचीनसाहित्ये किं नाम आसीत् ?
11. ग्रीष्मर्तौ हिमालयस्य कानि नगराणि जनान् बलादिव भ्रमणाय आकर्षन्ति ?
12. भगवतः शिवस्य स्थानं कुत्र स्वीकृतमस्ति ?
13. हिमालये कानि तीर्थस्थानानि सन्ति ?

### II. निम्नलिखित पद्यांशों का ससन्दर्भ हिन्दी अनुवाद कीजिए–

- (क) भारतदेशस्य ..... उन्नततमानि सन्ति ।
- (ख) अस्य महोच्चानि ..... प्रान्तरे तिष्ठति ।
- (ग) अयं पर्वतराजः ..... शस्यश्यामलामपि कुर्वन्ति ।
- (घ) अस्योपत्यकासु ..... ताः प्रवर्तयति ।
- (ङ) अस्योपत्यकायां ..... संज्ञया अभिधीयते ।
- (च) अस्यैव कन्दरासु ..... तीर्थस्थानानि सन्ति ।

### III. व्याकरण—बोध :

#### 1. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद कीजिए और सन्धि का नाम बताइए–

शब्द	सन्धि-विच्छेद	सन्धि का नाम
(क) इत्यादीनि	इति + आदीनि	यण् सन्धि
(ख) हिमालयस्यैव	—	—
(ग) तीर्थोदकैः	—	—
(घ) प्रसिद्धोऽयम्	—	—
(ङ) ग्रीष्मर्तौ	—	—

## 2. निम्नलिखित शब्दों में प्रकृति, प्रत्यय का निर्देश कीजिए-

शब्द	प्रकृति	प्रत्यय
(क) रमणीयतमः	रम्	अनीयर् + तमप्
(ख) कथयन्तः	—	—
(ग) प्रसिद्धम्	—	—
(घ) समुद्गम्य	—	—
(ङ) अवरुध्य	—	—

## शब्दार्थः

अभिधीयते = कहा जाता है। आच्छादितानि = ढके हुए। अधित्यका = पर्वत के ऊपर की समतल भूमि, पठार। उपत्यका = पर्वत की तलहटी, घाटी। आमयेभ्यः = बीमारियों से। आसन्धादि = कुर्सी आदि। प्रवर्तयति = प्रेरित करता है। ग्रीष्मर्तौ = ग्रीष्म ऋतु में। कन्दरासु = गुफाओं में। तपस्यन्तः = तपस्या करते हुए। उपगहरे = गुफा में। धिया = बुद्धि से। प्रदातुः = प्रदान करने वाले का। सुतराम् = अत्यधिक। समादृतः = आदर पाने वाला।



पञ्चमः पाठः

## गीतामृतम्

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।  
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥  
क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ! नैतत्त्वय्युपपद्यते ।  
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥ २ ॥  
अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।  
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥ ३ ॥  
देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।  
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ ४ ॥  
य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।  
उभौ तौ न विजानीतौ नायं हन्ति न हन्यते ॥ ५ ॥  
वासांसि जीर्णानि यथा विहाय  
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।  
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-  
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥ ६ ॥  
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।  
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ ७ ॥  
जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।  
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ ८ ॥  
यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।  
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ! लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥ ९ ॥  
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।  
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय! युद्धाय कृतनिश्चयः ॥ १० ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता)

## अभ्यास

## I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

1. विषादमापन्नमर्जुनं मधुसूदनः किम् उपादिशत् ?
2. के पण्डिताः सन्ति ?
3. धीरः कुत्र न मुह्यति ?
4. कः न हन्ति न हन्तये ?
5. कं न शस्त्राणि छिन्दन्ति ?
6. सुखिनः क्षत्रियाः किं लभन्ते ?
7. श्रीमद्भगवद्गीता कस्मिन् ग्रन्थे प्राप्यते ?
8. आत्मा अमरः इति कस्य उपदेशः ?
9. कौन्तेय इति शब्देन कस्य सम्बोधनं भवति ?

## II. निम्नलिखित श्लोकों का सन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए–

- (क) तं तथा ..... मधुसूदनः ।  
 (ख) क्लैब्यं ..... परन्तप ।  
 (ग) अशोच्यानन्वशोचस्त्वं ..... पण्डिताः ।  
 (घ) देहिनोऽस्मिन् ..... न मुह्यति ।  
 (ङ) य एनं ..... न हन्यते ।  
 (च) वासांसि जीर्णानि ..... नवानि देही ।  
 (छ) नैनं ..... मारुतः ।  
 (ज) हतो वा ..... कृतनिश्चयः ।

## III. व्याकरण—बोध :

## 1. अधोलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास का उल्लेख कीजिए–

समस्त पद	विग्रह	समास का नाम
(क) कृतनिष्पद्यः	कृतः निष्पद्यः येन सः	बहुब्रीहि समास
(ख) हृदयदौर्बल्यम्	—	—
(ग) स्वर्गद्वारम्	—	—
(घ) मधुसूदनः	—	—
(ङ) परन्तप	—	—

## 2. निम्नलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन का निर्देश कीजिए-

शब्द	विभक्ति	वचन
(क) वासांसि	प्रथमा	बहुवचन
(ख) पण्डिताः	—	—
(ग) देहे	—	—
(घ) सुखिनः	—	—
(ङ) देही	—	—

## 3. अधोलिखित क्रियापदों में धातु एवं लकार का निर्देश कीजिए-

क्रियापद	धातु	लकार	वचन
(क) लभन्ते	लभ्	लट्	बहुवचन
(ख) मन्यते	—	—	—
(ग) उवाच	—	—	—
(घ) मुह्यति	—	—	—
(ङ) शोषयति	—	—	—

## शब्दार्थः

कृपयाविष्टम् = करुणा से भरे हुए। विषीदन्तम् = दुःखी होते हुए। क्लैव्यम् = नपुंसकता को, कायरता को। उपपद्यते = उचित है। क्षुद्रम् = तुच्छ। हृदयदौर्बल्यम् = हृदय की दुर्बलता को। अशोच्यानन्वशोचस्त्वम् (अशोच्यान् + अन्वशोचः)। अशोच्यान् = शोक न करने योग्य विषयों या लोगों के लिए। अन्वशोचः = शोक करते हो। प्रज्ञावादान् = विद्वानों की तरह बातों को। भाषसे = कहते हो। गतासून् (गत + असून्) = प्राण जिनके चले गये हैं। देहिनः = जीवात्मा की। न मुह्यति = मोह नहीं करते या भ्रम में नहीं पड़ते। एनम् = इस आत्मा को। वेत्ति = जानता है। हन्तारम् = मारने वाला। हतम् = मरा हुआ। अपराणि = दूसरे। विहाय = छोड़कर। संयाति = ग्रहण कर लेता है। देही = आत्मा, देहधारी। छिन्दन्ति = काट सकते हैं, खण्ड कर सकते हैं। क्लेदयन्ति = भिगो सकता है। जातस्य = जन्म लेने वाले की। ध्रुव = अटल है, शाश्वत है। अपरिहार्ये = जिससे बचा न जा सके। अर्थे = विषय में। यदृच्छया = अपने आप। उपपन्नम् = प्राप्त। अपावृतम् = खुला हुआ। भोक्ष्यसे = उपभोग करोगे।

षष्ठः पाठः

## चरैवेति-चरैवेति

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति । सत्यं वद । धर्मं चर । स्वाध्यायान्मा प्रमदः । आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः । सत्यान्न प्रमदितव्यम् । धर्मान्न प्रमदितव्यम् । कुशलान्न प्रमदितव्यम् । भूत्यै न प्रमदितव्यम् । स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम् ॥ 1 ॥

देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम् । मातृदेवो भव । पितृदेवो भव । आचार्यदेवो भव । अतिथिदेवो भव । यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि । नो इतराणि । यान्यस्माकँ सुचरितानि । तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि ॥ 2 ॥

ये के चास्मच्छ्रेयाँसो ब्राह्मणाः । तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वसितव्यम् । श्रद्धया देयम् । अश्रद्धयादेयम् । श्रिया देयम् । ह्रिया देयम् । भिया देयम् । संविदा देयम् । अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात् ॥ 3 ॥

ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः । युक्ता आयुक्ताः । अलूक्षा धर्मकामाः स्युः । तथा ते तत्र वर्तेरन् । तथा तत्र वर्तेथाः । अथाभ्याख्यातेषु । ये त ब्राह्मणाः संमर्शिनः । युक्ता आयुक्ताः । अलूक्षा धर्मकामाः स्युः । यथा ते तेषु वर्तेरन् । तथा तेषु वर्तेथाः । एष आदेशः । एष उपदेशः । एषा वेदोपनिषत् । एतदनुशासनम् । एवमुपासितव्यम् । एवमु चैतदुपास्यम् ॥ 4 ॥

### अभ्यास

#### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए —

1. आचार्यः अन्तेवासिनं किम् अनुशास्ति ?
2. सत्यात् किं न कर्तव्यम् ?
3. 'चरैवेति' इति पदस्य कः अर्थः ?
4. कानि कर्माणि सेवितव्यानि ?
5. श्रद्धया किं कार्यम् ?
6. अतिथिः केन सदृशः भवति ?



## II. निम्नलिखित गद्यांशों का सन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए-

- (क) वेदमनूच्या ..... न प्रमदितव्यम्।।  
 (ख) देवपितृकार्याभ्यां ..... नो इतराणि।।  
 (ग) ये के चास्मच्छ्रेयाँसो ..... वा स्यात्।।  
 (घ) ये तत्र ब्राह्मणाः ..... चैतदुपास्यम्।।

## III. व्याकरण-बोध :

### 1. निम्नलिखित शब्दों में प्रकृति एवं प्रत्यय का निर्देश कीजिए-

शब्द	प्रकृति	प्रत्यय
(क) गत्वा	गम्	क्त्वा
(ख) प्रमदितव्यम्	—	—
(ग) देयम्	—	—
(घ) युक्ता	—	—
(ङ) सेवितव्यानि	—	—

### 2. अधोलिखित शब्दों में से अव्यय पदों को अलग करके उनका अर्थ लिखिए-

चर, वा, भव, अथ, यदि, तत्र, यथा, एषा।

## शब्दार्थ

**अनूच्य** = पढ़ाकर। **अन्तेवासिनम्** = शिष्य को (गुरुकुल में रहकर शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों को अन्तेवासी कहा जाता था)। **चर** = आचरण करो। **स्वाध्यायात्** = स्वाध्याय से। **मा** = मत, नहीं। **प्रमदः** = प्रमाद करो, लापरावाही करो। **आहत्य** = लाकर। **प्रजातन्तुम्** = सन्तान परम्परा को। **मा व्यवच्छेत्सीः** = नष्ट मत करो। **भूत्यै** = उन्नति के साधनों से। **स्वाध्यायप्रवचनाभ्याम्** = वेदों के अध्ययन और अध्यापन से। **अनवद्यानि** = श्रेष्ठ या प्रशंसनीय। **सेवितव्यानि** = सेवन करना चाहिए, करना चाहिए। **प्रश्वसितव्यम्** = आश्वस्त करना चाहिए। **श्रिया** = सम्पत्ति के अनुसार। **देयम्** = देना चाहिए। **द्विया** = लज्जापूर्वक। **भिया** = भय से। **संविदा** = मैत्री भावना से। **कर्मविचिकित्सा** = कर्मों के विषय में संदेह। **वृत्तिविचिकित्सा** = आचरण के विषय में संदेह। **संमर्शिनः** = विवेकशील। **युक्ता** = कर्मशील। **आयुक्ताः** = स्वेच्छापूर्वक काम करने वाले। **अलूक्षा** = सरल स्वभाव वाले। **वर्तथाः** = आचरण करना चाहिए। **उपासितव्यम्** = उपासना करनी चाहिए।

सप्तमः पाठः

## लोभः पापस्य कारणम्

एको वृद्धव्याघ्रः स्नातः कुशहस्तः सरस्तीरे ब्रूते । भोः भोः पान्थाः ! इदं सुवर्ण-कङ्कणं गृह्यताम् । ततो लोभाकृष्टेन केनचित् पान्थेनालोचितम्- भाग्येनैतत् संभवति किन्तु अस्मिन् आत्मसन्देहे प्रवृत्तिर्न विधेया । यतः-

न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति ।

संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति ॥

स आह- कुत्र तव कङ्कणम् ? व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति । पान्थोऽवदत्- कथं मारात्मके त्वयि विश्वासः । व्याघ्र उवाच- शृणु रे पान्थ ! प्रागेव यौवनदशायामहमतीव दुर्वृत्त आसम् । अनेकगोमानुषाणां बधान्मे पुत्रा मृताः दाराश्च वंशहीनश्चाहम् । ततः केनचिद् धार्मिकेणाहमादिष्टः- दानधर्मादिकं चरतु भवान् । तदुपदेशादिदानीमहं स्नानशीलो दाता वृद्धो गलितनखदन्तो न कथं विश्वासभूमिः । मम चैतावान् लोभविरहो येन स्वहस्तस्थमपि सुवर्णकङ्कणं यस्मैकस्मैचिद् दातुमिच्छामि । तथापि व्याघ्रो मानुषं खादति इति लोकप्रवादो दुर्निवारः । मया च धर्मशास्त्राणि अधीतानि-

मरुस्थल्यां यथा वृष्टिः क्षुधार्ते भोजनं तथा ।

दरिद्रे दीयते दानं सफलं पाण्डुनन्दन ॥

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत् ।

आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः ॥

त्वं चातीव दुर्गतः तत्तुभ्यं सुवर्णकङ्कणं दातुं सयत्नोऽहम् । यतः-

दरिद्रान् भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम् ।

व्याधितस्यौषधं पथ्यं नीरुजस्य किमौषधैः ॥

तदत्र सरसि स्नात्वा सुवर्णकङ्कणं गृहाण । ततो यावदसौ तद्वचः प्रतीतो लोभात् सरः स्नातुं प्रविशति तावत् महापङ्के निमग्नः पलायितुमक्षयः । पङ्गके पतितं दृष्ट्वा व्याघ्रोऽवदत्- अहह! महापङ्के पतितोऽसि । अतस्त्वामहमुत्थापयामि इत्युक्त्वा शनैः शनैरुपगम्य तेन व्याघ्रेण भक्षितः ।

(हितोपदेश)

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

1. लोभः कस्य कारणम् अस्ति ?
2. वृद्धव्याघ्रः सरस्तीरे किं ब्रूते ?
3. व्याघ्रः हस्तं प्रसार्य किं दर्शयति ?
4. व्याघ्रस्य विषये कः लोकप्रवादः दुर्निवारः ?
5. व्याघ्रस्य वचनं श्रुत्वा पथिकः किम् अचिन्तयत् ?
6. दानं कस्मै दीयते ?
7. पङ्के पतितं पथिकं दृष्ट्वा व्याघ्रः किम् अवदत् ?

### II. निम्नलिखित अवतरणों का ससन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए–

- (क) स आह— ..... लोकप्रवादो दुर्निवारः ।  
 (ख) मरुस्थल्यां ..... स पण्डितः ॥  
 (ग) दरिद्रान् ..... किमौषधैः ॥  
 (घ) तदत्र ..... भक्षितः ।

### III. व्याकरण—बोध :

#### 1. निम्नलिखित पदों में विग्रहसहित समास बताइए–

समस्त पद	विग्रह	समास का नाम
(क) कुशहस्तः	कुशं हस्ते यस्य सः	बहुब्रीहि समास
(ख) लोभाकृष्टेन	—	—
(ग) वंशहीनः	—	—
(घ) गलितनखदन्तः	—	—
(ङ) लोभविरहः	—	—

#### 2. अधोलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन का उल्लेख कीजिए–

शब्द	विभक्ति	वचन
(क) अस्मिन्	सप्तमी	एकवचन
(ख) एतावान्	—	—
(ग) मानुषम्	—	—
(घ) महापङ्के	—	—
(ङ) व्याघ्रेण	—	—

## शब्दार्थ

स्नातः = स्नान किया हुआ। गृह्यताम् = ले लो। लोभाकृष्टेन = लोभ से आकृष्ट। पान्थेन = राहगीर के द्वारा। अनारुह्य = चढ़े बिना। दुर्वृत्तः = पापी, दुराचारी। दाराः = पत्नी। आदिष्टः = आदेश दिया। चरतु = आचरण करो। गलितनखदन्तः = गिरे हुए नख और दाँतों वाला। विश्वासभूमिः = विश्वासपात्र। क्षुधार्थे = भूखे के लिए। लोष्ठवत् = ढेले के समान। नीरुजस्य = निरोगी के लिए। सरसि = सरोवर में। उपगम्य = पास जाकर। भक्षितः = खा लिया।



अष्टमः पाठः

## विश्ववन्द्याः कवयः

वाल्मीकिः

कवीन्दुं नौमि वाल्मीकिं यस्य रामायणीं कथाम् ।  
चन्द्रिकामिव चिन्वन्ति चकोरा इव कोविदाः ॥  
वाल्मीकिकविसिंहस्य कवितावनचारिणः ।  
शृण्वन् राम-कथा-नादं को न याति परं पदम् ॥  
कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।  
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥



व्यासः



श्रवणाञ्जलिपुटपेयं विरचितवान् भारताख्यममृतं यः ।  
तमहमरागमकृष्णं कृष्णद्वैपायनं वन्दे ॥  
नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे ।  
चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥  
नमोस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ।  
येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ॥

कालिदासः

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः ।  
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव ॥  
कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती ।  
चतुर्मुखोऽथवा ब्रह्मा विदुर्नान्ये तु मादृशाः ॥  
निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु ।  
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीष्विव जायते ॥



## अभ्यास

## I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए –

1. विश्ववन्द्याः कवयः के के सन्ति ?
2. संस्कृतस्य आदिकविः कः आसीत् ?
3. 'रामायणम्' कस्य कवेः कृतिः अस्ति ?
4. महाभारतमहाकाव्यं केन विरचितम् ?
5. कृष्णद्वैपायनः कस्य नाम अस्ति ?
6. भारततैलपूर्णः ज्ञानमयः प्रदीपः केन प्रज्वालितः ?
7. पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कालिदासः कुत्र अधिष्ठितः ?
8. कालिदासस्य सूक्तीनां का विशेषता अस्ति ?

## II. निम्नलिखित श्लोकों का ससन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए–

- (क) कवीन्दुम् ..... इव कोविदाः॥  
 (ख) कूजन्तम् ..... वाल्मीकिकोकिलम्॥  
 (ग) नमः सर्वविदे ..... भारतम्॥  
 (घ) नमोस्तु ते ..... ज्ञानमयः प्रदीपः॥  
 (ङ) पुरा कवीनाम् ..... सार्थवती बभूव॥  
 (च) कालिदासगिराम् ..... तु मादृशाः॥  
 (छ) निर्गतासु न ..... जायते॥

## III. व्याकरण–बोध :

## 1. निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद करते हुए सन्धि का नाम बताइये–

शब्द	सन्धि-विच्छेद	सन्धि का नाम
(क) अद्यापि	अद्य + अपि	दीर्घ सन्धि
(ख) कवीन्दुम्	—	—
(ग) चतुर्मुखोऽथवा	—	—
(घ) कवेरभावात्	—	—
(ङ) मञ्जरीष्विव	—	—

## 2. अधोलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास बताइए–

समस्त पद	विग्रह	समास का नाम
(क) कविताषाखाम्	कवितायाः शाखा, ताम्	तत्पुरुष
(ख) कवितावनचारिणः	—	—
(ग) श्रवणाञ्जलिपुटपेयम्	—	—
(घ) भारततैलपूर्णः	—	—
(ङ) कालिदासगिराम्	—	—

### शब्दार्थ

**कवीन्दुम्** = कवि रूपी इन्दु (चन्द्रमा) को। **कोविदाः** = विद्वान्। **वाल्मीकिकविसिंहस्य** = वाल्मीकि कवि रूपी सिंह के। **शृण्वन्** = सुनते हुए। **याति** = प्राप्त होता है। **परं पदम्** = मोक्ष को। **कूजन्तम्** = बोलते हुए। **कविताशाखाम्** = कविता रूपी डाल पर। **श्रवणाञ्जलिपुटपेयम्** = कान रूपी अंजली के पुट से पान करने योग्य। **भारताख्यममृतम्** = महाभारत नाम रूपी अमृत को। **सर्वविदे** = सब कुछ जानने वाले। **कविवेधसे** = कवि रूपी ब्रह्मा को। **चक्रे** = बना दिया, कर दिया। **फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र** = खिले हुए कमल की पंखुड़ियों की तरह नेत्रों वाले। **पुरा** = प्राचीन काल में। **सार्थवती** = सार्थक। **गिरा** = वाणी। **सारम्** = सारतत्त्व को। **निर्गतासु** = निकलने पर, उच्चरित होने पर।



नवमः पाठः

## चतुरश्चौरः

आसीत् काञ्ची नाम राजधानी। तत्र सुप्रतापो नाम राजा। तत्रैकदा कस्यापि धनिकस्य धनं चोरयन्तश्चत्वारश्चौराः सन्धिद्वारि प्रशास्तृपुरुषैः शृङ्खलया बद्ध्वा राज्ञे निवेदिताः राजा च घातकपुरुषानादिष्टवान्- रे घातकपुरुषाः ! इमान् नीत्वा मारयत। यतः-

संवर्द्धनञ्च साधूनां दुष्टानाञ्च विमर्दनम्।

राजधर्मं बुधा प्राहुर्दण्डनीति-विचक्षणाः॥

ततो राजाज्ञया त्रयश्चौराः शूलमारोप्य हताः। चतुर्थेन चिन्तितम्-

प्रत्यासन्नेऽपि मरणे रक्षोपायो विधीयते।

उपाये सफले रक्षा निष्फले नाधिकं मृतेः॥

व्याधिना पीड्यमानोऽपि मार्यमाणोऽपि भूभुजा।

प्रत्यायाति यमद्वारात् प्रतीकारपरो नरः॥

चौरोऽवदत्-रे रे घातकपुरुषाः ! त्रयश्चौराः युष्माभिर्हता एव राजाज्ञया, मां तु राजसन्निधानं कृत्वा मारयत। यतोऽहमेकां महतीं विद्यां जानामि। मयि मृते सा विद्या अस्तं यास्यति। राजा तु तां गृहीत्वा मां मारयतु येन सा विद्या मर्त्यलोके तिष्ठतु।

घातका अब्रुवन्- रे चौर ! पापपुरुषाधम् ! वधस्थानमानीतोऽसि। किमपरं जीवितुमिच्छसि ? कां विद्यां जानासि ? कथं वा तवाधमस्य विद्या भूपालेन पूजयितव्या ? चौरोऽवदत्- रे घातकाः ? किं ब्रूथ ? राजकार्ये विघ्नं कर्तुमिच्छथ ? यूयं गत्वा निवेदयत, यदि राजा ज्ञातुमिच्छति तां विद्यां तदा गृह्णातु। कथं सा विद्या युष्मभ्यं मया दातव्या।

ततश्चौरस्य वचनैः राजकार्यानुरोधेन च सा वार्ता तैः राज्ञे निवेदिता। राजा च सकौतुकं चौरमाहूय अपृच्छत्-रे चौर ! कां विद्यां जानासि ? चौरोऽवदत् देव ! सर्षपपरिमाणानि सुवर्णबीजानि कृत्वा भूमौ उप्यन्ते मासमात्रेणैव च कन्दल्यो भवन्ति पुष्पाणि च। तानि पुष्पाणि सुवर्णान्येव भवन्ति। रक्तिकामात्रेण बीजेन पलसंख्याकानि भवन्ति। तद् देवः प्रत्यक्षं पश्यतु। राजाऽवदत्- चौर ! सत्यमेतत् ? चौरोऽवदत्- देवस्य पुरतः कस्यासत्यभाषणे शक्तिः। यदि मम वचनं व्यभिचरितं तदा मासान्ते ममाप्यन्तो भविष्यति। राजाऽवदत्- भद्र ! वप सुवर्णम्।



ततश्चौरः सुवर्णं दाहयित्वा सर्षपमात्राणि बीजानि कृत्वा, राजान्तःपुरक्रीडासरस्तीरे परमनिगूढस्थाने भूपरिष्कारं कृत्वा अभाषत्- देव ! क्षेत्र-बीजे सम्पन्ने, वप्ता कश्चिद् दीयताम्। राजाऽवदत्- त्वमेव किं न वपसि ? चौराऽवदत्- महाराज ! यदि सुवर्णवपने एव ममाधिकारो भवेत् तदानया विद्यया कथमहं दुःखी भवामि। किन्तु चौरस्य सुवर्णवपनाधिकारो नास्ति। येन कदापि किमपि न चोरितं स वपतु। देव एव किं न वपति ?

राजाऽवदत्- मया चारणेभ्यो दातुं तातचरणानां धनं चोरितम्। चौराऽवदत्- तर्हि मन्त्रिणो वपन्तु। मन्त्रिणोऽवदन्- वयं राजोपजीविनः कथमस्तेयिनो भवामः। चौराऽवदत्- तर्हि धर्माधिकारी वपतु। धर्माध्यक्षोऽकथयत्- मया बाल्यदशायां मातुर्मोदकाश्चोरिताः।

चौराऽवदत्- यदि यूयं सर्वेऽपि चौराः कथमहमेको मारणीयोऽस्मि। तच्चौरवचनं श्रुत्वा सभासदाः सर्वे हसितवन्तः। राजापि हास्यरसापनीतक्रोधो विहस्याकथयत्- रे चौर ! न मारणीयोऽसि। हे मन्त्रिणः ! कुबुद्धिरपि बुद्धिमानयं चौरो हास्यरसप्रवीणश्चः। ततो ममैव सन्निधाने तिष्ठतु प्रस्तावे मां हासयतु खेलयतु च, इत्युक्त्वा स चौरः राजा स्वसन्निधाने धृतः।

न चौरादधमः कश्चित् स च हासेन विद्यया।

मृत्यु-पाशं समुच्छिद्य राज्ञो वल्लभतां गतः॥

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए -

1. राज्ञः सुप्रतापस्य राजधानी का आसीत् ?
2. चौराः कस्य धनम् अचोरयन् ?
3. महतीं विद्यां कः जानाति ?
4. राजा सकौतुकं चौरम् आहूय किम् अपृच्छत् ?
5. राज्ञा कस्य धनम् चोरितम् ?
6. सुवर्णवपने कस्य अधिकारः ?
7. धर्माध्यक्षः किम् अचोरयत् ?
8. शूलमारोप्य कति चौराः हताः ?

### II. निम्नलिखित अंशों का सन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए-

- (क) संवर्द्धनञ्च ..... विचक्षणाः।  
 (ख) प्रत्यासन्नेऽपि ..... नरः।  
 (ग) घातका अब्रुवन् ..... मया दातव्या।  
 (घ) ततश्चौरस्य ..... प्रत्यक्षं पश्यतु।  
 (ङ) ततश्चौरः ..... किं न वपति ?  
 (च) चौराऽवदत् ..... स्वसन्निधाने धृतः।

## III. व्याकरण—बोध :

## 1. अधोलिखित शब्दों में विभक्ति एवं वचन बताइए—

शब्द	विभक्ति	वचन
(क) साधूनाम्	षष्ठी	बहुवचन
(ख) राजाज्ञया	—	—
(ग) मर्त्यलोके	—	—
(घ) मयि	—	—
(ङ) विद्याम्	—	—

## 2. निम्नलिखित शब्दों में प्रकृति-प्रत्यय का निर्देश कीजिए—

शब्द	प्रकृति	प्रत्यय
(क) नीत्वा	नी	क्त्वा
(ख) दातव्या	—	—
(ग) चोरितम्	—	—
(घ) हसितवन्तः	—	—
(ङ) धृतः	—	—

## शब्दार्थ

सन्धिद्वारि = संध के द्वार पर। प्रशास्तृपुरुषैः = सिपाहियों के द्वारा। घातकपुरुषान् = जल्लादों को। विमर्दनम् = दण्ड देना। शूलमारोप्य = सूली पर चढ़कर। प्रत्यायाति = लौट आता है। प्रतीकारपरः = उपाय ढूँढ़ने में लगा हुआ। यास्यति = चली जाएगी। वार्ता = बात। सकौतुकम् = आश्चर्य के साथ। सर्षपपरिमाणानि = सरसों के दाने भर। उप्यन्ते = बोये जाते हैं। कन्दल्यः = अंकुर। परमनिगूढस्थाने = अत्यन्त गुप्त स्थान पर। भूपरिष्कारं कृत्वा = जमीन को साफ करके। वप्ता = बोने वाला। उपजीविनः = आश्रित। सन्निधाने = पास में। समुच्छिद्य = काटकर। वल्लभतां गतः = प्रिय हो गया।



दशमः पाठः

## सुभाषचन्द्रः

सप्तनवत्युत्तराष्टादशशततमेऽब्दे (1897) जनवरी मासस्य त्रयोविंशतित्थौ श्रीसुभाषः स्वजन्मना बङ्गभुवमलञ्चकार। अस्य पिता जानकीनाथवसुः राजकीय-प्राङ्गविवाकः आसीत्। सुभाषः बाल्यादेव बुद्धिमान्, धीरः, साहसी प्रतिभासम्पन्नश्चासीत्। अयं कलिकातानगर्या शिक्षां प्राप्य सम्मानिताम् आई० ए० एस० परीक्षामुत्तीर्यापि विदेशीयशासनस्य भृत्यत्वं न स्वीकृतवान्।

आङ्गलशासकानां भारते नाधिकारः, ते विदेशीयाः कथमत्र शासनं कुर्वन्ति इति चिन्तापरोऽयं स्वप्रयत्नेन भारतवर्षस्य स्वातन्त्र्यार्थं बहून् भारतीयान् स्वपक्षे अकरोत्। एवं विधेभ्यः अस्योग्रविचारेभ्यः भीताः आङ्गलशासकाः इमं पुनः पुनः कारागारे अक्षिपन् परं वीरोऽयं स्वातन्त्र्यार्थं स्वप्रयासं नात्यजत्।



सप्तत्रिंशदुत्तरैकोनविंशतिशततमे (1937) वर्षे त्रिपुरा कांग्रेससाधिवेशने अयं सर्वसम्मत्या सभापतिः वृत्तः, अस्य सम्मानार्थञ्च पञ्चाशद्वृषभयुक्ते रथेऽस्य शोभायात्रा नागरिकैः सम्पादिता।

‘अहिंसामात्रेण स्वातन्त्र्यप्राप्तेः प्रयासः कल्पनामात्रमेव’ इति निश्चित्य सः क्रान्तिपक्षमङ्गीकृतवान्। अस्योग्रक्रान्तेः भीताः आङ्गलशासकाः पुनरिमं कलिकातानगर्या कारागारे अक्षिपन्। कष्टकरमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा सुभाषानुरक्तानां भारतीयानां हृदयं व्यदीर्यत। एकदा रात्रौ निद्रावशीभूतेषु कारागारनिरीक्षकेषु वीरोऽयं सहसा समुत्थाय ‘शठे शाठ्यं समाचरेत्’ इति नीतिमनुसरन्, स्वेष्टसिद्धिं कामयमानश्च सिद्धिदात्रीं जगदम्बां संस्मृत्य कारागाराद् बहिर्गतः।

प्रातः सुभाषमनवलोक्य सर्वे कारागारनिरीक्षकाः आश्चर्यचकिता जाताः, भृशमन्विष्यापि ते प्राप्तुं नाशक्नुवन्। कारागाराद् बहिरागत्य सुभाषः वेषपरिवर्तनं विधाय पुरुषपुर (पेशावर) नगरमगच्छत्। तत्र उत्तमचन्द्रनाम्नः वणिजो गेहे कञ्चित् कालमवसत्। ततश्च आङ्गलशासकैः अवधानपूर्वकं निरीक्षणे कृतेऽपि ‘जियाउद्दीन’ इति नाम्ना ‘जर्मन’ देशं गतः। तत्रत्यशासकेन हिटलर नामकेन सह मैत्रीं विधाय वायुयानेन जयपाणि (जापान) देशं गतः।

मलयदेशे स्वसङ्घटनकौशलेन 'आजाद हिन्दी फौज' इत्याख्यां सेनां सङ्घटितवान्। अस्यास्मिन् सङ्घटने हिन्दुयवनादिसर्वसम्प्रदायावलम्बिनः राष्ट्रानुरागिणः वीरवाराः सम्मिलिता आसन्। अस्य सङ्घटनस्य अभिवादनपदम् 'जय हिन्द' इति, उद्घोषश्च 'दिल्ली चलत' इत्यासीत्।

'यूयं मह्यं रक्तमर्पयत, अहं युष्मभ्यं स्वतन्त्रतां दास्यामि' इति रोमाञ्चकरः शब्दसमूहः सुभाषस्य मुखात् येनापि श्रुतः सः त्वरितमेव तेन सह स्वातन्त्र्यसंग्रामे सैनिकरूपेण अवतीर्णः। तस्मिन्नेव समये ब्रह्मदेशनिवासिनीभिः नारीभिः स्वभूषणैः सह सौभाग्यसूचकानि स्वर्णसूत्राण्यपि सुभाषचरणयोरर्पितानि।

'दिल्ली चलत, दिल्ली नातिदूरे वर्तते' इत्येतैः सुभाषस्य प्रोत्साहनवचनैः सैनिकाः दिल्लीं प्रति प्रस्थिताः। एतदनन्तरे एव दुर्भाग्यवशात् जयपाणिदेशस्य पराजयात् सुभाषस्य सर्वे सैनिकाः आङ्गलशासकैः बन्दीकृताः।

अस्य वीरवरस्य स्वातन्त्र्यप्राप्तेः कामना सप्तचत्वारिंशदुत्तरैकोनविंशतिशततमेऽब्दे (1947) अगस्तमासस्य पञ्चदशतिथौ पूर्णा जाता। अद्यास्माकं मध्येऽनुपस्थितोऽपि सुभाषः 'कीर्तिर्यस्य स जीवति' इत्युक्त्या सदैवामरः इति सुनिश्चितम्।

## अभ्यास

### I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संस्कृत में दीजिए—

1. सुभाषचन्द्रस्य जन्म कुत्र अभवत् ?
2. सुभाषस्य पितुः नाम किम् आसीत् ?
3. सुभाषस्य उग्रविचारेभ्यः भीताः आङ्गलशासकाः किम् अकुर्वन् ?
4. सुभाषः कारागारात् बहिः आगत्य कुत्र अगच्छत् ?
5. सुभाषः 'आजाद हिन्द फौज' इत्याख्यां सेनां कस्मिन् देशे संघटितवान् ?
6. आजादहिन्दफौजस्य अभिवादनपदं किम् आसीत् ?
7. अस्य संघटनस्य उद्घोषः कः आसीत् ?
8. सुभाषस्य रोमाञ्चकराः शब्दाः के आसन् ?

### II. निम्नलिखित गद्यांशो का सन्दर्भ सहित हिन्दी अनुवाद कीजिए—

- (क) आङ्गलशासकानां ..... नात्यजत्।
- (ख) अहिंसामात्रेण ..... बहिर्गतः।
- (ग) प्रातः सुभाषमनवलोक्य ..... देशं गतः।
- (घ) मलयदेशे ..... इत्यासीत्।
- (ङ) यूयं मह्यं ..... सुभाषचरणयोरर्पितानि।
- (च) 'दिल्ली चलत' ..... बन्दीकृताः।

### III. व्याकरण-बोध :

#### 1. अधोलिखित शब्दों में सन्धि-विच्छेद करते हुए सन्धि का नाम लिखिये-

शब्द	सन्धि-विच्छेद	सन्धि का नाम
(क) नात्यजत्	न + अत्यजत्	दीर्घ सन्धि
(ख) अस्योग्रक्रान्तेः	—	—
(ग) पुनरिमम्	—	—
(घ) इत्याख्याम्	—	—
(ङ) अस्यास्मिन्	—	—

#### 2. निम्नलिखित संख्याओं को संस्कृत-शब्दों के अनुसार लिखने का अभ्यास कीजिए-

संख्या	शब्दों में
(क) 1897	सप्तनवत्यधिकाष्टादषषततमम्
(ख) 1937	—
(ग) 1947	—
(घ) 1950	—
(ङ) 1939	—

#### शब्दार्थ

अलञ्चकार = अलंकृत किया, सुशोभित किया। प्राड्विवाकः = वकील। भृत्यत्वम् = नौकरी।  
 भीताः = डरे हुए। अक्षिपन् = डाला। व्यदीर्यत = फट गया। कामयमानः = कामना करते हुए।  
 भृशम् = बहुत। विधाय = करके। अवधानपूर्वकम् = सावधानी से। ब्रह्मदेशनिवासिनीभिः = वर्मा  
 (म्यामांर) देश की निवासिनी स्त्रियों के द्वारा। स्वर्णसूत्राणि = मंगलसूत्र।



व्याकरण एवं पत्र-लेखन



# सन्धि

जब दो शब्द पास-पास आते हैं, तो एक-दूसरे की समीपता के कारण पहले शब्द के अन्तिम अक्षर तथा दूसरे शब्द के प्रथम अक्षर अथवा दोनों में कुछ परिवर्तन हो जाता है। इसी को सन्धि कहा जाता है। जैसे रमा ईश इन दोनों शब्दों के परस्पर निकट आने पर गुण संधि के नियमानुसार 'रमा' शब्द के अन्तिम वर्ण 'आ' तथा 'ईश' शब्द के 'ई' वर्ण को हटाकर 'ए' अक्षर रखने के बाद रमेश शब्द बनता है। सन्धि के तीन भेद होते हैं— स्वर सन्धि, व्यञ्जन सन्धि और विसर्ग सन्धि। निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार सन्धि का परिचय इस प्रकार है—

## (1) स्वर—सन्धि

### अयादि सन्धि

**सूत्र— एचोऽयवायावः ।**

इस सूत्र के पदच्छेद से अयादि सन्धि का स्वरूप आसानी से स्पष्ट हो जाता है—

एचः अय् अव् आय् आव् ।

'एच्' एक प्रत्याहार है, जिसमें ए, ओ, ऐ, औ ये चार स्वर आते हैं। जब एच् (ए, ओ, ऐ, औ) के बाद कोई स्वर आये तो ए के स्थान पर अय्, ओ के स्थान पर अव्, ऐ के स्थान पर आय् तथा औ के स्थान पर आव् आदेश हो जाता है। जैसे—

ने + अनम् = नयनम् ।

इस उदाहरण में वर्णों को अलग करके इस प्रकार समझा जा सकता है—

न् ए अनम् ।

= न् अय् अनम् ।

= नयनम् ।

**नोट—** संधि करते समय धन का चिन्ह (+) लगाना ऐच्छिक है ।

इसी प्रकार—

शे अनम् = शयनम् ।

चे अनम् = चयनम् ।

पो + अनः = पवनः ।

भो + अनम् = भवनम् ।

विष्णो + ए = विष्णवे ।

गै + अकः = गायकः ।



गै + इकाः = गायिकाः ।  
 शै + अकः = शायकः ।  
 पौ + अकः = पावकः ।  
 नौ + इकः = नाविकः ।  
 बालकौ + अपि = बालकावपि ।  
 द्वौ + अपि = द्वावपि ।

### पूर्वरूप सन्धि

**सूत्र- एङः पदान्तादति ।**

पदान्त (पद के अन्त में आये) ए, ओ के बाद अ वर्ण आने पर वह 'अ' अपने से पूर्व के अक्षर (क्रमशः ए, ओ) के रूप जैसा हो जाता है। इसी को पूर्वरूप कहा जाता है। अर्थात् अ का लोप हो जाता है और 'व' ए या ओ में सन्निहित होकर उन्हीं के उच्चारण जैसा उच्चरित होता है, फिर भी यह बताने के लिए कि यहाँ अ को पूर्वरूप किया गया है, अवग्रह (ऽ) का चिह्न लगा दिया जाता है।

जैसे— हरे + अव = हरेऽव (हे हरि, रक्षा कीजिए) ।  
 विष्णो + अव = विष्णोऽव ।  
 वने + अत्र = वनेऽत्र ।  
 को + अपि = कोऽपि ।

### पररूप सन्धि

**सूत्र- एङि पररूपम् ।**

जब अकारान्त उपसर्ग के बाद ए अथवा ओ से आरम्भ होने वाली धातु आये, तो दोनों (पूर्व तथा पर) के स्थान पर पररूप एकादेश हो जाता है। यहाँ 'पर' का अर्थ है— आगे वाला वर्ण। अर्थात् उपसर्ग के अन्त में आया हुआ 'अ' वर्ण ए अथवा ओ के रूप जैसा हो जाता है।

जैसे— प्र + एजते = प्रेजते (अधिक काँपता है) ।  
 उप + ओषति = उपोषति (जलाता है) ।  
 प्र + एषयति = प्रेषयति ।  
 प्र + एषणीयम् = प्रेषणीयम् ।

### (2) व्यंजन सन्धि

व्यंजन सन्धि को हल् सन्धि भी कहा जाता है, क्योंकि हल् एक प्रत्याहार है, जिसमें सभी व्यंजन वर्ण आते हैं। जब किसी व्यंजन के बाद व्यंजन अथवा व्यंजन के बाद स्वर आता है, तब व्यंजन सन्धि होती है।

जैसे— सत् चित् = सच्चित् ।  
 जगत् + ईश = जगदीश ।

## श्चुत्व सन्धि

**सूत्र- स्तोः श्चुना श्चुः।**

जब स् तथा तवर्ग (त्, थ्, द्, ध्, न्) श् तथा चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्) के साथ आते हैं अर्थात् उनका योग होता है, तो स् के स्थान पर ष् तथा तवर्ग के स्थान पर चवर्ग हो जाता है।

तवर्ग तथा चवर्ग दोनों वर्गों में पाँच वर्ण हैं। अतः यह आदेश क्रमशः होता है। अर्थात् त् के स्थान पर च, थ् के स्थान पर छ्, द् के स्थान पर ज् इत्यादि।

यहाँ यह ध्यान देना है कि जहाँ योग होता है, वहाँ यह आवश्यक नहीं है कि सकार का योग शकार से हो, तकार का चकार से, थकार का छकार से इत्यादि। सकार या तवर्ग का शकार या चवर्ग में स्थित किसी भी वर्ण के साथ योग हो सकता है।

जैसे- रामस् + शेते = रामश्शेते।

रामस् + चिनोति = रामश्चिनोति।

इन उदाहरणों में सकार का एक बार शकार के साथ तथा दूसरी बार चकार से योग हुआ है। यह योग आगे या पीछे किन्हीं भी अवस्थाओं में हो सकता है।

किन्तु 'शात्' सूत्र के अनुसार श् वर्ण के पश्चात् तवर्ग का कोई अक्षर आने पर तवर्ग को चवर्ग नहीं होता। जैसे- विश् + नः = विश्नः।

यहाँ न् 'ञ' के रूप में परिवर्तित नहीं हुआ।

इस सन्धि के अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं-

सत् + चित् = सच्चित्।

सत् + चरित्रम् = सच्चरित्रम्।

विपद् + जालम् = विपज्जालम्।

याच् + ना = याच्ना।

शार्ङ्गिन् + जय = शार्ङ्गिज्जय (भगवान् विष्णु की जय)।

## ष्टुत्व सन्धि

**सूत्र- ष्टुना ष्टुः।**

जब सकार और तवर्ग का षकार तथा टवर्ग के साथ योग होता है, तो स् के स्थान पर ष् तथा तवर्ग के स्थान पर टवर्ग हो जाता है।

जैसे- रामस् + टीकते = रामष्टीकते (राम जाता है)।

रामस् षष्ठः = रामष्षष्ठः।

पेष् + ता = पेष्टा।

तत् + टीका = तट्टीका।

चक्रिन् + ढौकसे = चक्रिण्डौकसे (चक्रधारी जाते हो)।

### जश्त्व सन्धि

जश्त्व संधि के दो भेद होते हैं— पदान्त जश्त्व तथा अपदान्त जश्त्व संधि। पाठ्यक्रम में निर्धारित अपदान्त जश्त्व का सूत्र है—

**झलां जश् झशि।**

झल् (वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ अक्षर तथा श्, ष्, स्, ह्) के बाद झश् (वर्गों के तृतीय और चतुर्थ अक्षर) आने पर झल् वर्णों के स्थान पर जश् (वर्गों का तृतीय अक्षर) हो जाता है।

जैसे— वृध् + धः = वृद्धः।

लभ् + धः = लब्धः।

क्रुध् + धः = क्रुद्धः।

### चर्त्व सन्धि

**सूत्र— खरि च।**

जब झल् वर्णों (वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ अक्षर तथा श्, ष्, स्, ह्) के बाद खर् प्रत्याहार का वर्ण (वर्गों का प्रथम एवं द्वितीय वर्ण तथा श्, ष्, स्) आये तो झल् के स्थान पर चर् प्रत्याहार (क्, च्, ट्, त्, प्, श्, ष्, स्) का वर्ण हो जाता है।

ध्यान रहे प्रत्येक वर्गों के चार अक्षर (क्, ख्, ग्, घ् इत्यादि) के स्थान पर उसी वर्ग का प्रथम अक्षर जैसे— क्, च्, ट्, त्, प् होता है।

जैसे— लभ् + स्यते = लप्स्यते।

उद् + पन्नः = उत्पन्नः।

युयुध् + सा = युयुत्सा (युद्ध करने की इच्छा)।

तद् + परः = तत्परः।

### अनुस्वार सन्धि

**सूत्र— मोऽनुस्वारः।**

पदान्त म् के बाद कोई व्यंजन वर्ण आने पर म् को अनुस्वार (ं) हो जाता है।

जैसे— हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे।

रामम् + वन्दे = रामं वन्दे।

फलम् + पतति = फलं पतति।

पुस्तकम् + नय = पुस्तकं नय।

गृहम् + गच्छति = गृहं गच्छति।

मधुरम् + वदति = मधुरं वदति।

ध्यान रहे पदान्त म् के बाद स्वर आने पर म् में स्वर वर्ण मिल जाता है। जैसे—

अहम् अपि = अहमपि।

पुस्तकम् आनय = पुस्तकमानय।

## लत्व सन्धि

### सूत्र तोर्लि ।

जब तवर्ग (त्, थ्, द्, ध्, न्) के पश्चात् लकार (ल् अक्षर) आये तो तवर्ग के स्थान पर परसवर्ण ल् हो जाता है।

जैसे— तद् + लयः = तल्लयः।

उद् + लेखः = उल्लेखः।

विद्वान् + लिखति = विद्वाल्लिखति।

यहाँ न् के स्थान पर अनुनासिक लकार का आदेश हुआ है।

## परसवर्ण सन्धि

### सूत्र- अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः।

जब अपदान्त अनुस्वार के बाद यय् प्रत्याहार का वर्ण (श्, ष, स्, ह को छोड़कर कोई भी व्यंजन) आये तो अनुस्वार के स्थान पर आगे आने वाले वर्ण का पाँचवा अक्षर (परसवर्ण) हो जाता है।

जैसे— शां + तः = शान्तः।

अं + कितः = अङ्कितः।

कुं + ठितः = कुण्ठितः।

गुं + फितः = गुम्फितः।

अं + चितः = अञ्चितः।

गुं + जति = गुञ्जति।

## विसर्ग सन्धि

जब विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन मिलने पर कोई विकार उत्पन्न हो, वहाँ विसर्ग सन्धि होती है। विसर्ग सन्धि के पाठ्यक्रम निर्धारित कतिपय सूत्रों का विवेचन इस प्रकार है—

### सूत्र- विसर्जनीयस्य सः।

जब विसर्ग के बाद खर् प्रत्याहार का कोई वर्ण (वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण तथा श्, ष्, स्) आता है, तो वहाँ विसर्ग के स्थान पर सकार हो जाता है।

जैसे— विष्णुः + त्राता = विष्णुस्त्राता।

छात्रः + तिष्ठति = छात्रस्तिष्ठति।

रामः + तत्र = रामस्तत्र।

यशः + तनोति = यशस्तनोति।

नमः + ते = नमस्ते।

**सूत्र- ससजुषो रुः।**

पद के अन्त में आये 'स्' को तथा 'सजुष्' शब्द के षकार को रु (रु) आदेश होता है। यहाँ रु के उ की इत् संज्ञा और लोप होकर र ही शेष रहता है।

जैसे- हरिस् इव = हरिर् इव = हरिरिव।

कविस् + अयम् = कविरयम्।

कविस् + गच्छति = कविर् गच्छति = कविर्गच्छति।

गुरोस् + आदेशः = गुरोरादेशः।

सजुष् + ऋषिभिः = सजुर् ऋषिभिः = सर्जुर्ऋषिभिः।

शिवस् अर्च्यः = शिवर् अर्च्यः।

**सूत्र-अतोरोरप्लुतादप्लुते।**

अप्लुत अ के बाद रु (रु) के स्थान पर 'उ' आदेश होता है यदि उसके बाद भी अप्लुत अ हो तो। मात्रा (काल) के आधार पर स्वर के तीन भेद होते हैं। जिन स्वरों में तीन मात्रा लगती है, उन्हें प्लुत स्वर कहा जाता है। स्वर के आगे ३ संख्या लिखकर इसको निर्दिष्ट करते हैं। जैसे अ३, ओ३ इत्यादि। यहाँ अप्लुत का अर्थ है, जो प्लुत न हो।

जैसे- 'शिवस् अर्च्यः' इस उदाहरण में 'ससजुषोरुः' सूत्र से शिवस् के स् को रु आदेश होता है-

शिवर् अर्च्यः। यहाँ शिव शब्द के व का अ अप्लुत है, उसके बाद रु (रु) आया है और उसके पश्चात् अर्च्यः का अ भी अप्लुत है (ह्रस्व है)। अतः यहाँ 'अतोरोरप्लुतादप्लुते' सूत्र से रु (रु) को उ आदेश हुआ, फिर रूप बना - शिव उ अर्च्यः।

अब अ के बाद उ आने पर गुण सन्धि होगी। अर्थात् अ और उ दोनों के स्थान पर ओ हो जाएगा-

शिव् ओ अर्च्यः = शिवो अर्च्यः।

अब पूर्वरूप संधि होकर रूप सिद्ध होगा - शिवोऽर्च्यः।

इसी प्रकार छात्रस् अयम् = छात्रोऽयम्।

बालकस् अस्ति = बालकोऽस्ति।

नृपस् अस्ति = नृपोऽस्ति।

**सूत्र- हशि च।**

यह सूत्र 'अतोरोरप्लुतादप्लुते' का विस्तारक सूत्र है। यदि अप्लुत अ के बाद आये रु के बाद हश् प्रत्याहार का वर्ण (वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पंचम वर्ण तथा ह, य्, व्, र्, ल्) आये, तब भी 'रु' को 'उ' आदेश हो जाता है।

जैसे— शिवस् वन्द्यः = शिवो वन्द्यः ।  
छात्रः हसति = छात्रस् हसति = छात्रो हसति ।  
मृगस् + धावति = मृगो धावति ।

**सूत्र- रो रि ।**

इस सूत्र के अनुसार र् के बाद पुनः र् आने पर प्रथम र् का लोप हो जाता है ।

जैसे— पुनर् रमते = पुन रमते ।  
कविर् राजते = कवि राजते ।  
हरिर् रम्यः = हरि रम्यः ।

## अभ्यास

1. सन्धि किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार की होती है ।
2. निम्नलिखित शब्दों का सन्धि-विच्छेद कीजिए—  
रामोऽस्ति, शायकः, सच्चरित्रम्, तल्लयः, प्रेजते
3. निम्नलिखित शब्दों की सन्धि कीजिए तथा सन्धि का नाम भी बताइए—  
बालकौ + अपि, पेष + ता, जलम् + पिबति, उद् + पन्नः, वृध + धः
4. 'सच्चित्' में कौन सी सन्धि है, सही विकल्प चुनिए—  
(क) स्वर सन्धि (ख) अनुस्वार सन्धि (ग) ष्टुत्व सन्धि (घ) श्चुत्व सन्धि
5. 'उपोषति' का सन्धि-विच्छेद क्या होगा—  
(क) उप + ओषति (ख) उपो + षति (ग) उ + पोषति (घ) उपोष + ति
6. 'विष्णवे' में किस नियम के अनुसार सन्धि की गयी है, दिये गये विकल्पों में सही विकल्प चुनिए—  
(क) अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः । (ख) ष्टुना ष्टुः ।  
(ग) एचोऽयवायावः । (घ) मोऽनुस्वारः ।

# समास

**‘समसनं समासः’** इस परिभाषा के अनुसार समास का अर्थ होता है— संक्षेप। जब दो या दो से अधिक पदों की विभक्ति का लोप करके एक पद बना दिया जाता है, तो इस प्रक्रिया को समास कहते हैं। इस प्रकार शब्द छोटे कर देने से अर्थ में कोई कमी नहीं होती है।

जैसे— राज्ञः पुरुषः = राजपुरुषः।

यहाँ राज्ञः पुरुषः कहने से जो अर्थ निकल रहा है, विभक्ति का लोप हो जाने के बाद (समास कर देने से) **‘राजपुरुषः’** शब्द से भी उसी अर्थ का बोध है। समस्त पद को तोड़कर उसका पहले का रूप प्रदान कर देना विग्रह कहलाता है।

## 1. अव्ययीभाव समास

अव्ययीभाव शब्द का अर्थ है— जो अव्यय नहीं था, उसका अव्यय हो जाना। इस समास में पहला पद प्रायः अव्यय रहता है और दूसरा पद संज्ञा। ये दोनों मिलकर अव्यय हो जाते हैं। अव्यय हो जाने से इसके रूप नहीं चलते और उसका रूप नपुंसकलिंग, एकवचन में बनता है। इस समास में प्रायः पूर्व पद का अर्थ प्रधान होता है।

अव्ययीभाव में विभक्ति, समीपता, समृद्धि, ऋद्धि (सम्पन्नता) का अभाव, अर्थ (वस्तु) का अभाव, अत्यय (नष्ट होना) अनुचित, शब्द की अभिव्यक्ति, पश्चात्, तथा, अनुक्रम, एक साथ होना, सादृश्य, सम्पत्ति, सम्पूर्णता तथा अन्त अर्थों में आने वाले अव्ययों का किसी संज्ञा के साथ समास होता है।

जैसे उपगङ्गम् = गङ्गायाः समीपम् (गङ्गा के समीप)। यहाँ ‘उप’ अव्यय (उपसर्ग) पद है, जिसका अर्थ-समीप होता है, उसका ‘गंगा’ (संज्ञा) के साथ समास हुआ है।

इसी प्रकार— उपकृष्णम् = कृष्णस्य समीपम् (कृष्ण के समीप)।

प्रतिदिनम् = दिनं दिनं प्रति (रोज, नित्य)।

सुमद्रम् = मद्राणां समृद्धिः (मद्र देश के राजाओं की समृद्धि)।

सहरि = हरेः सादृश्यम् (हरि का सादृश्य)।

निर्मक्षिकम् = मक्षिकाणाम् अभावः (मक्खियों का अभाव)।

अतिहिमम् = हिमस्य अत्ययः (हिम की समाप्ति)।

अनुरूपम् = रूपस्य योग्यम् (रूप के योग्य)।

अनुविष्णु = विष्णोः पश्चात् (विष्णु के पीछे)।

यथाशक्ति = शक्तिम् अनतिक्रम्य (शक्ति का अतिक्रमण न करके)।

यथाकामम् = कामम् अनतिक्रम्य (काम के अनुसार)।

सचक्रम् = चक्रेण युगपद् (चक्र के साथ ही)।

**नोट— 'नदीभिश्च'** इस सूत्र के अनुसार नदीवाची शब्दों के साथ संख्यावाची शब्दों का समास भी अव्ययीभाव समास कहलाता है। यह समास समाहार (समूह) अर्थ में होता है—

पञ्चगङ्गम् = पञ्चानां गङ्गानां समाहारः (पाँच गंगाओं का समूह), द्वियमुनम् = द्वयोः यमुनयोः समाहारः (दो यमुनाओं का समाहार)।

## 2. कर्मधारय समास

कर्मधारय समास तत्पुरुष का एक भेद है। समानाधिकरण तत्पुरुष समास को कर्मधारय कहा जाता है। समान अधिकरण का अभिप्राय यह कि जिनका पूर्वपद और उत्तर पद दोनों एक ही वस्तु के लिए हो अथवा यह कि जिनके दोनों पदों में प्रथमा विभक्ति ही लगी हो। व्यधिकरण तत्पुरुष, जिसको हम सामान्यतः तत्पुरुष समास कहते हैं, वहाँ पहले पद में प्रथमा को छोड़कर कोई अन्य विभक्ति तथा दूसरे पद में प्रथमा विभक्ति आती है। **'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'** इस नियम के अनुसार कर्मधारय समास विशेषण और विशेष्य का परस्पर समास है। इस समास में विशेषण विशेष्य भाव की निम्न अवस्थाएँ होती हैं—

### (i) विशेषण पूर्वपद कर्मधारय समास—

कर्मधारय के इस भेद में पहला पद विशेषण होता है और दूसरा विशेष्य होता है।

जैसे— कृष्णसर्पः = कृष्णः सर्पः।

पीताम्बरम् = पीतम् अम्बरम्।

नीलकमलम् = नीलं कमलम्।

वीरपुरुषः = वीरः पुरुषः।

### (ii) विशेषण उभयपद कर्मधारय समास—

इस प्रकार के कर्मधारय समास में दोनों पद विशेषण होते हैं। जैसे—

कृष्णश्वेतः = कृष्णः च श्वेतः च (काला और सफेद घोड़ा)।

श्वेतपीतः = श्वेतः च पीतः च।

उपमान वाचक शब्दों का समान धर्म वाचक शब्दों के साथ जो समास होता है, वह भी कर्मधारय समास कहलाता है। इसके भी दो भेद हैं—

**(i) उपमानपूर्वपद कर्मधारय समास—** जिस वस्तु से तुलना की जाती है उसे उपमान कहते हैं तथा जिसकी तुलना की जाती है, वह उपमेय। समान धर्म वह है, जो उपमेय और उपमान दोनों में रहे। जैसे 'चन्द्र के समान' सुन्दर मुख है' इस उदाहरण में चन्द्र उपमान, मुख उपमेय तथा सुन्दरता समानधर्म वाचक है। उपमान पूर्वपद कर्मधारय समास के उदाहरण हैं—

घनश्यामः = घन इव श्यामः।

चन्द्राह्लादकः = चन्द्रः इव आह्लादकः।



**(ii) उपमान उत्तरपद कर्मधारय समास-**

कर्मधारय के इस भेद में उपमेय और उपमान दोनों आते हैं, किन्तु उपमान का प्रयोग बाद में होता है।

जैसे- मुखकमलम् = मुखं कमलम् इव।  
 पुरुषव्याघ्रः = पुरुषः व्याघ्रः इव।  
 नरसिंहः = नरः सिंहः इव।

**3. बहुव्रीहि समास**

बहुव्रीहि समास में आये हुए दोनों पद अप्रधान होते हैं तथा वे मिलकर किसी अन्य पद के विशेषण के रूप में कार्य करते हैं। इसमें अन्य पद का अर्थ ही प्रधान होता है।

जैसे- पीताम्बरः = पीतम् अम्बरं यस्य सः।

पीला है कपड़ा जिसका वह, अर्थात् भगवान् विष्णु।

यहाँ न तो प्रथम पद (पीतम्) प्रधान है न ही द्वितीय पद (अम्बरम्), प्रत्युत ये दोनों पद मिलकर अन्य पदार्थ (विष्णु या कृष्ण) के विशेषण हो जाते हैं और भगवान् विष्णु रूपी अर्थ प्रधान हो जाता है।

बहुव्रीहि समास के मुख्यतः दो भेद हैं-

**समानाधिकरण बहुव्रीहि समास-**बहुव्रीहि के इस भेद में दोनों पद एक ही विभक्ति (समान विभक्ति) में रहते हैं।

जैसे- प्राप्तोदकः = प्राप्तम् उदकं यं सः (प्राप्त हो गया जल जिसको ऐसा गाँव)।  
 जितेन्द्रियः = जितानि इन्द्रियाणि येन सः।  
 पीताम्बरः = पीतम् अम्बरं यस्य सः।  
 महाशयः = महान् आशयः यस्य सः।  
 दशाननः = दश आननानि यस्य सः।

**(ii) व्यधिकरण बहुव्रीहि समास-** इस प्रकार के बहुव्रीहि समास में एक पद प्रथमान्त होता है तथा अन्य पद षष्ठी या सप्तमी में होता है। यथा-

चन्द्रशेखरः = चन्द्रः शेखरे यस्य सः।  
 चन्द्रकान्तिः = चन्द्रस्य कान्तिः इव कान्तिः यस्य सः।  
 कण्ठकालः = कण्ठे कालः यस्य सः।  
 चक्रपाणिः = चक्रं पाणौ यस्य सः।

## अभ्यास

1. समास किसे कहते हैं, उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
2. अधोलिखित समस्त-पदों का विग्रह कीजिए और समास का नाम भी बताइए—  
कृष्णसर्पः, घनश्यामः, पीताम्बर, अतिहिमम्, चन्द्रकान्तिः
3. निम्नलिखित विकल्पों में कौन से पद में अव्ययीभाव समास है—  
(क) पीताम्बरः                      (ख) यथाशक्ति                      (ग) दशाननः                      (घ) मुखकमलम्
4. दिये गये विकल्पों में सही विग्रह वाले पद का चयन कीजिए—  
(क) कण्ठेकालः — कण्ठं कालः यस्य सः                      (ख) महाराजः— महा च राजा च  
(ग) पुरुषव्याघ्रः — पुरुषः व्याघ्रः इव                      (घ) प्रतिदिनम्— प्रति एव दिनम्
5. निम्नलिखित विकल्पों में कर्मधारय समास कौन सा है—  
(क) पीतवस्त्रम्                      (ख) सहरि                      (ग) मृगनयनी                      (घ) लम्बोदरः
6. अन्य पद के अर्थ की प्रधानता होती है—  
(क) तत्पुरुष समास में                      (ख) कर्मधारय समास में  
(ग) अव्ययीभाव समास में                      (घ) बहुव्रीहि समास में

## शब्दरूप (संज्ञा)

### आत्मन्—आत्मा (पुँल्लिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
द्वितीया	आत्मानम्	आत्मानौ	आत्मनः
तृतीया	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः
चतुर्थी	आत्मने	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
पंचमी	आत्मनः	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
षष्ठी	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
सप्तमी	आत्मनि	आत्मनोः	आत्मसु
सम्बोधन	हे आत्मन् !	हे आत्मानौ !	हे आत्मानः !

### नामन्—नाम (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नाम	नाम्नी, नामनी	नामानि
द्वितीया	नाम	नाम्नी, नामनी	नामानि
तृतीया	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
चतुर्थी	नाम्ने	नामभ्याम्	नामभ्यः
पंचमी	नाम्नः	नामभ्याम्	नामभ्यः
षष्ठी	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
सप्तमी	नाम्नि, नामनि	नाम्नोः	नामसु
सम्बोधन	हे नाम, हे नामन्	हे नाम्नी, हे नामनी	हे नामानि

### राजन्—राजा (पुँल्लिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पंचमी	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि/राजनि	राज्ञोः	राजसु
सम्बोधन	हे राजन् !	हे राजानौ !	हे राजानः !

## जगत्-संसार (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जगत्, जगद्	जगती	जगन्ति
द्वितीया	जगत्, जगद्	जगती	जगन्ति
तृतीया	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः
चतुर्थी	जगते	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
पंचमी	जगतः	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
षष्ठी	जगतः	जगतोः	जगताम्
सप्तमी	जगति	जगतोः	जगत्सु
सम्बोधन	हे जगत् !, हे जगद् ! हे जगती !		हे जगन्ति !

## सरित्-नदी (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सरित्, सरिद्	सरितौ	सरितः
द्वितीया	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृतीया	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
चतुर्थी	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पंचमी	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
षष्ठी	सरितः	सरितोः	सरिताम्
सप्तमी	सरिति	सरितोः	सरित्सु
सम्बोधन	हे सरित्, हे सरिद्	हे सरितौ	हे सरितः

## शब्दरूप (सर्वनाम)

## सर्व-सब (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पंचमी	सर्वस्मात्, द्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

### सर्व-सब (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पंचमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

### सर्व-सब (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पंचमी	सर्वस्मात्, द्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

### इदम्-यह (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्, एनम्	इमौ, एनौ	इमान्, एनान्
तृतीया	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी	अस्मात्, द्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः, एनयोः	एनाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः, एनयोः	एषु

## इदम्-यह (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया	इमाम्, एनाम्	इमे, एने	इमाः एनाः
तृतीया	अनया, एनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पंचमी	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
षष्ठी	अस्याः	अनयोः, एनयोः	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	अनयोः, एनयोः	आसु

## इदम्-यह (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि
द्वितीया	इदम्, एनत्	इमे, एने	इमानि, एनानि
तृतीया	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी	अस्मात्, द्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः, एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः, एनयोः	एषु

## यद्-जो (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पंचमी	यस्मात्, द्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

### यद्—जो (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पंचमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

### यद्—जो (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यत्, द्	ये	यानि
द्वितीया	यत्, द्	ये	यानि
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पंचमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

### धातुरूप

#### परस्मैपदी धातु

#### स्था (तिष्ठ) ठहरना

#### वर्तमानकाल— लट् लकार (ठहरता है)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिष्ठति	तिष्ठतः	तिष्ठन्ति
मध्यम पुरुष	तिष्ठसि	तिष्ठथः	तिष्ठथ
उत्तम पुरुष	तिष्ठामि	तिष्ठावः	तिष्ठामः

#### आज्ञार्थक— लोट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिष्ठतु/तिष्ठतात्	तिष्ठताम्	तिष्ठन्तु
मध्यम पुरुष	तिष्ठ	तिष्ठतम्	तिष्ठत
उत्तम पुरुष	तिष्ठानि	तिष्ठाव	तिष्ठाम

**चाहिए अर्थ— विधिलिङ् लकार**

प्रथम पुरुष	तिष्ठेत्	तिष्ठेताम्	तिष्ठेयुः
मध्यम पुरुष	तिष्ठेः	तिष्ठेतम्	तिष्ठेत
उत्तम पुरुष	तिष्ठेयम्	तिष्ठेव	तिष्ठेम

**अनद्यतनभूत— लङ् लकार**

प्रथम पुरुष	अतिष्ठत्	अतिष्ठताम्	अतिष्ठन्
मध्यम पुरुष	अतिष्ठः	अतिष्ठतम्	अतिष्ठत
उत्तम पुरुष	अतिष्ठम्	अतिष्ठाव	अतिष्ठाम

**सामान्य भविष्य— लृट् लकार**

प्रथम पुरुष	स्थास्यति	स्थास्यतः	स्थास्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्थास्यसि	स्थास्यथः	स्थास्यथ
उत्तम पुरुष	स्थास्यामि	स्थास्यावः	स्थास्यामः

**परस्मैपदी  
पा (पिब) — पीना****वर्तमानकाल— लट् लकार**

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबति	पिबतः	पिबन्ति
मध्यम पुरुष	पिबसि	पिबथः	पिबथ
उत्तम पुरुष	पिबामि	पिबावः	पिबामः

**आज्ञार्थक— लोट लकार**

प्रथम पुरुष	पिबतु/पिबतात्	पिबताम्	पिबन्तु
मध्यम पुरुष	पिब	पिबतम्	पिबत
उत्तम पुरुष	पिबानि	पिबाव	पिबाभ

**चाहिए अर्थ— विधिलिङ् लकार**

प्रथम पुरुष	पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः
मध्यम पुरुष	पिबेः	पिबेतम्	पिबेत
उत्तम पुरुष	पिबेयम्	पिबेव	पिबेम



### अनद्यतनभूतकाल— लङ्लकार

प्रथम पुरुष	अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्
मध्यम पुरुष	अपिबः	अपिबतम्	अपिबत
उत्तम पुरुष	अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम

### सामान्यभविष्य — लृट्लकार

प्रथम पुरुष	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पुरुष	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पुरुष	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

### नी (नय) लेना या ले जाना परस्मैपदी

#### वर्तमानकाल— लट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयति	नयतः	नयन्ति
मध्यम पुरुष	नयसि	नयथः	नयथ
उत्तम पुरुष	नयामि	नयावः	नयामः

### आज्ञार्थक— लोट् लकार

प्रथम पुरुष	नयतु/नयतात्,	नयताम्	नयन्तु
मध्यम पुरुष	नय	नयतम्	नयत
उत्तम पुरुष	नयानि	नयाव	नयाम

### चाहिए अर्थ— विधिलिङ् लकार

प्रथम पुरुष	नयेत्	नयेताम्	नयेयुः
मध्यम पुरुष	नयेः	नयेतम्	नयेत
उत्तम पुरुष	नयेयम्	नयेव	नयेम

### अनद्यतन भूत— लङ् लकार

प्रथमपुरुष	अनयत्	अनयताम्	अनयन्
मध्यम पुरुष	अनयः	अनयतम्	अनयत
उत्तम पुरुष	अनयम्	अनयाव	अनयाम

### सामान्य भविष्य—लृट् लकार

प्रथम पुरुष	नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नेष्यसि	नेष्यथः	नेष्यथ
उत्तम पुरुष	नेष्यामि	नेष्यावः	नेष्यामः

## दा-देना

## परस्मैपद

## वर्तमानकाल- लट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददाति	दत्तः	ददति
मध्यम पुरुष	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पुरुष	ददामि	दद्वः	ददमः

## आज्ञार्थक- लोट् लकार

प्रथम पुरुष	ददातु/दत्तात्	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पुरुष	देहि/दत्तात्	दत्तम्	दत्त
उत्तम पुरुष	ददानि	ददाव	ददाम

## चाहिए अर्थ- विधिलिङ् लकार

प्रथम पुरुष	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पुरुष	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पुरुष	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

## अनद्यतनभूत- लङ् लकार

प्रथम पुरुष	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पुरुष	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पुरुष	अददाम्	अदद्व	अददम

## सामान्य भविष्य-लृट् लकार

प्रथम पुरुष	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पुरुष	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पुरुष	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

## कृ-करना

## परस्मैपद

## वर्तमानकाल- लट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पुरुष	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

### आज्ञा— लोट् लकार

प्रथम पुरुष	करोतु/कुरुतात्	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	कुरु/कुरुतात्	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम

### चाहिए अर्थ— विधिलिङ् लकार

प्रथम पुरुष	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पुरुष	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पुरुष	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

### अनद्यतनभूत—लङ् लकार

प्रथम पुरुष	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पुरुष	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पुरुष	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

### सामान्यभविष्य— लृट् लकार

प्रथम पुरुष	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पुरुष	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

### चुर्— चुराना परस्मैपद

### वर्तमानकाल— लट् लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

### आज्ञार्थक— लोट् लकार

प्रथम पुरुष	चोरयतु/चोरयतात्	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय/चोरयतात्	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम

**चाहिए अर्थ— विधिलिङ् लकार**

प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पुरुष	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

**अनद्यतनभूतकाल— लङ् लकार**

प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

**सामान्य भविष्य— लृट् लकार**

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

**अभ्यास**

- आत्मन् शब्द के षष्ठी विभक्ति एकवचन का रूप होगा—  
(क) आत्मनि (ख) आत्मभ्यः (ग) आत्मनाम् (घ) आत्मनः
- 'नामन्' पद का लिंग क्या है ?  
(क) पुँल्लिङ्ग (ख) स्त्रीलिङ्ग (ग) नपुंसकलिङ्ग (घ) अलिङ्गी षब्द
- 'राज्ञि' पद में विभक्ति है—  
(क) सप्तमी (ख) चतुर्थी (ग) पंचमी (घ) द्वितीया
- सरित् शब्द के षष्ठी, बहुवचन का रूप होगा—  
(क) सरितः (ख) सरिताम् (ग) सरिद्भ्याम् (घ) सरित्सु
- नी धातु, लोट् लकार उत्तम पुरुष, एकवचन का रूप है—  
(क) नयन्ति (ख) नयसि (ग) नय (घ) नयानि
- पा धातु, विधिलिङ् लकार, प्रथम पुरुष, द्विवचन का रूप है—  
(क) पिबथ (ख) पिबेताम् (ग) अपिबम् (घ) पिबतः
- 'अकुर्वन्' कृ धातु के किस लकार, पुरुष और वचन का रूप है—  
(क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन (ख) विधिलिङ् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन  
(ग) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन (घ) लङ् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन
- लृट् लकार का रूप है—  
(क) अभविष्यत् (ख) दास्यतः (ग) चोरयतात् (घ) कुर्याः

# प्रत्यय

जो किसी धातु या शब्द के अन्त में जुड़कर उनके अर्थ में विशेषता ला देते हैं अथवा नये अर्थ का बोध कराते हैं, प्रत्यय कहे जाते हैं। प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं— कृत् और तद्धित।

जो प्रत्यय धातुओं के साथ जुड़कर उन्हें संज्ञा, विशेषण, अव्यय आदि नये शब्द बना देते हैं, उन्हें कृत् प्रत्यय कहा जाता है। इनसे बने हुए शब्दों को कृदन्त कहते हैं।

## क्त प्रत्यय—

क्त प्रत्यय भूतकाल अथवा किसी कार्य की समाप्ति का बोध कराने के लिए लगाये जाते हैं। जैसे उसने पढ़ लिया है — तेन पठितम्। इस वाक्य से यह सिद्ध होता है कि पढ़ने का कार्य पूरा हो गया है। क्त प्रत्यय प्रायः कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में प्रयुक्त होते हैं। क्त का 'त' ही शेष रहता है। इसके रूप तीनों लिङ्गों और सातों विभक्तियों में विशेष्य के अनुरूप चलते हैं। पुँल्लिङ्ग के रूप 'राम', नपुंसकलिङ्ग के 'फल' तथा स्त्रीलिङ्ग के रूप 'रमा' की तरह चलते हैं। उदाहरण स्वरूप कुछ धातुओं के रूप तीनों में लिङ्गों प्रथमा, एकवचन में दिये जा रहे हैं—

धातु	पुँल्लिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
पठ्	पठितः	पठितम्	पठिता
लिख्	लिखितः	लिखितम्	लिखिता
गम्	गतः	गतम्	गता
कथ्	कथितः	कथितम्	कथिता
कृ	कृतः	कृतम्	कृता
स्था	स्थितः	स्थितम्	स्थिता
पठ्	पठितः	पठितम्	पठिता

**क्त्वा प्रत्यय—**जब दो क्रियाओं का कर्ता एक ही होता है, तब जिस क्रिया के हो जाने पर दूसरी क्रिया आरम्भ होती है, तो उस हो चुकी क्रिया को पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं और उस क्रिया का बोध कराने के लिए धातु से क्त्वा प्रत्यय जोड़ते हैं। जैसे वह पढ़कर भोजन करेगी। सा पठित्वा भोजनं करिष्यति। यहाँ पढ़ना पूर्वकालिक क्रिया है। क्त्वा का 'त्वा' शेष रहता है। क्त्वा प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं। अव्यय होने से इनके रूप नहीं चलते।

जैसे—	धातु	क्त्वा प्रत्ययान्त शब्द
	पठ्	पठित्वा
	गम्	गत्वा

भू	भूत्वा
कृ	कृत्वा
हन्	हत्वा
शी	शयित्वा
नश्	नष्ट्वा, नंष्ट्वा
धृ	धृत्वा
लभ्	लब्ध्वा

**नोट-** धातु के पहले उपसर्ग आने पर क्त्वा के स्थान पर ल्यप् आदेश होता है। ल्यप् का 'य' शेष रहता है।

जैसे— उप + गम् + क्त्वा (ल्यप्) = उपगम्य।

आ + दा + ल्यप् = आदाय।

प्र + स्था + ल्यप् = प्रस्थाय।

**तव्यत् प्रत्यय**—कर्मवाच्य तथा भावाच्य में 'चाहिए' या 'योग्य' अर्थ में तव्यत् प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। तव्यत् का 'तव्य' शेष रहता है। इसके रूप तीनों लिङ्गों में चलते हैं। पुँल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग में अकारान्त और स्त्रीलिङ्ग में आकारान्त की तरह। जैसे— मुझे ग्रन्थ पढ़ना चाहिए। मया ग्रन्थः पठितव्यः।

पढ़ने योग्य पुस्तिका अथवा पुस्तिका पढ़नी चाहिए। पठितव्या पुस्तिका।

उदाहरणार्थ कतिपय रूप दिये जा रहे हैं—

धातु	पुँल्लिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
पठ्	पठितव्यः	पठितव्यम्	पठितव्या
चि	चेतव्यः	चेतव्यम्	चेतव्या
दा	दातव्यः	दातव्यम्	दातव्या
भू	भवितव्यः	भवितव्यम्	भवितव्या
चल्	चलितव्यः	चलितव्यम्	चलितव्या
गम्	गन्तव्यः	गन्तव्यम्	गन्तव्या

**अनीयर् प्रत्यय**—अनीयर् प्रत्यय भी तव्यत् प्रत्यय की तरह ही प्रयुक्त होते हैं। अनीयर् का 'अनीय' शेष रहता है, 'र्' का लोप हो जाता है।

जैसे उसे किताब पढ़नी चाहिए। तेन पुस्तकं पठनीयम्। पुस्तिका पढ़नी चाहिए। पुस्तिका पठनीया।

अनीयर् प्रत्यय के कुछ रूप प्रथमा, एकवचन में नीचे दिए जा रहे हैं—

धातु	पुँल्लिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
पठ्	पठनीयः	पठनीयम्	पठनीया
दृश्	दर्शनीयः	दर्शनीयम्	दर्शनीया
कथ्	कथनीयः	कथनीयम्	कथनीया
पा	पानीयः	पानीयम्	पानीया
कृ	करणीयः	करणीयम्	करणीया
पूज्	पूजनीयः	पूजनीयम्	पूजनीया

**तद्धित प्रत्यय**—जो प्रत्यय किसी संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि में जुड़कर नये अर्थों की प्रतीति कराते हैं, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहा जाता है। तद्धित प्रत्यय अनेक अर्थों में प्रयुक्त होते हैं।

**त्व प्रत्यय**—‘त्व’ प्रत्यय भाव के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। अर्थात् भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए प्रयुक्त होता है। त्व प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं। जैसे—

स्त्री + त्व = स्त्रीत्वम्

महत् + त्व = महत्त्वम्

प्रभु + त्व = प्रभुत्वम्

गो + त्व = गोत्वम्

लघु + त्व = लघुत्वम्

गुरु + त्व = गुरुत्वम्

**मतुप् प्रत्यय**—‘युक्त’ या ‘वाला’ अर्थ में मतुप् प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। मतुप् शब्द के ‘उप्’ का लोप हो जाता है, केवल ‘मत्’ शेष रहता है।

जैसे— गो + मतुप् = गोमत्।

अब गोमत् शब्द के प्रथमा विभक्ति, एकवचन का रूप होगा— गोमान्।

इसी प्रकार—

श्री + मतुप् = श्रीमान्।

रूप + मतुप् = रूपवान्।

विद्या + मतुप् = विद्यावान्।

गुण + मतुप् = गुणवान्।

**वतुप् प्रत्यय**—वतुप् प्रत्यय परिमाण अर्थ (कितना आदि) में प्रयोग किया जाता है। वतुप् शब्द का ‘वत्’ मात्र शेष रहता है।

यत् + वतुप् = यावत् (जितना)।

पुँल्लिङ्ग प्रथमा एकवचन में यावान्।

इसी प्रकार—

तत् + वतुप् = तावान् (उतना) ।

एतत् + वतुप् = एतावान् (इतना) ।

इदम् + वतुप् = इयान् (इतना) ।

किम् + वतुप् = कियान् (कितना) ।

## अभ्यास

1. प्रत्यय किसे कहते हैं, यह कितने प्रकार का होता है ?
2. 'क्त्वा' प्रत्यय किस अर्थ में प्रयुक्त होता है, उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
3. 'कृतः' पद में कौन सा प्रत्यय लगा है—  
(क) क्त्वा (ख) अनीयर् (ग) क्त (घ) क्तवतु
4. 'चलितव्यः' पद में प्रयुक्त धातु एवं प्रत्यय लिखिए।
5. 'मतुप्' प्रत्यय का प्रयोग किन अर्थों में होता है, उदाहरण के साथ लिखिए।
6. 'प्रभुत्वम्' में प्रयुक्त प्रत्यय है—  
(क) मतुप् (ख) अनीयर् (ग) क्त्वा (घ) त्व
7. 'गम्' धातु में 'क्त्वा' प्रत्यय लगने पर शब्द निष्पन्न होगा—  
(क) गन्त्वा (ख) गम्त्वा (ग) गत्वा (घ) गछित्वा
8. अधोलिखित शब्दों में तद्धितप्रत्ययान्त शब्द है—  
(क) इयान् (ख) पठितः (ग) गता (घ) पानीयः



# विभक्ति परिचय

क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध रखने वाले पदार्थ कारक कहे जाते हैं। जैसे राम रावण को बाण से मारता है। इस वाक्य में 'मारना' क्रिया है। इस क्रिया से राम, रावण और बाण तीनों का साक्षात् सम्बन्ध है। राम मारने वाला है, रावण मरता है तथा बाण की सहायता से मारा जाता है। इस प्रकार ये तीनों कारक हुए। राम कर्ता कारक, रावण कर्म कारक तथा बाण करण कारक। विभक्तियों के द्वारा ये कारक भाषा में शब्दों के माध्यम से प्रकट किए जाते हैं। सु, औ, जस् आदि 21 विभक्तियों के प्रत्यय शब्द रूपों में प्रयोग किये जाते हैं। इसमें प्रथमा, द्वितीया और सात विभक्तियों के तीन वचन (एकवचन, द्विवचन, बहुवचन) सम्मिलित हो जाते हैं।

पाठ्यक्रम में निर्धारित विभक्तियों के अन्तर्गत आने वाले सूत्रों की व्याख्या इस प्रकार हैं—

## 1. अभितः परितः समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि ।

अभितः (दोनों ओर), परितः (चारों ओर, सब ओर), समया (समीप), निकषा (समीप), हा (हाय, धिक्कार), प्रति (की ओर) इन अव्ययों के योग में द्वितीया विभक्ति होती है।

जैसे— गृहम् अभितः वृक्षाः सन्ति। (घर के दोनों ओर वृक्ष हैं)  
नगरं परितः जलम् अस्ति। (नगर के चारों ओर पानी है)  
विद्यालयं समया ग्रन्थालयः अस्ति।

### अथवा

विद्यालयं निकषा ग्रन्थालयः अस्ति। (विद्यालय के समीप पुस्तकालय है)  
हा कृष्णाभक्तम्। (हाय कृष्ण का अभक्त)  
नगरं प्रति गच्छति। (नगर की ओर जाता है)

## 2. सहयुक्तेऽप्रधाने ।

साथ के अर्थ के योग में अप्रधान के वाचक शब्द में तृतीया विभक्ति होती है। अर्थात् मुख्य कर्ता का साथ देने वाले व्यक्ति में तृतीया होती है। जैसे पुत्र के साथ पिता जाता है।

पुत्रेण सह पिता गच्छति।

इसी प्रकार 'रामेण सह सीता गच्छतिः' इत्यादि।

ध्यातव्य है कि सह का अर्थ रखने वाले साकम्, समम्, सार्धम् के योग में भी तृतीया होती है।

जैसे— छात्रैः सार्धम् अध्यापकः पठति।

विद्यार्थियों के साथ अध्यापक पढ़ता है।

## 3. येनाङ्गविकारः ।

जिस विकृत (खराब) अङ्ग से अङ्गी का विकार लक्षित होता है (मालूम पड़ता है), उस अङ्गवाची शब्द में तृतीया विभक्ति होती है।

जैसे— सः पादेन खञ्जः अस्ति। (वह पैर से लँगड़ा है)  
 सः अक्षणा काणः अस्ति। (वह आँख से काना है)  
 देवदत्तः शिरसा खल्वाटः अस्ति। (वह सिर से गंजा है)

#### 4. नमः स्वस्तिस्वाहास्वधाऽलं वषट् योगाच्च ।

नमः (नमस्कार), स्वस्ति (कल्याण), स्वाहा (अग्नि में आहुति देते समय बोला जाने वाला शब्द), स्वधा (पितरों के तर्पण में प्रयुक्त शब्द), अलम् (पर्याप्त), वषट् (इन्द्र को हवि देते समय बोला जाने वाला शब्द) के योग में चतुर्थी होती है।

जैसे— कृष्णाय नमः। (कृष्ण को नमस्कार है)  
 हरये नमः। (हरि को नमस्कार है)  
 प्रजाभ्यः स्वस्ति। (प्रजाओं का कल्याण)  
 अग्नये स्वाहा। (अग्नि के लिए स्वाहा)  
 दैत्येभ्यो हरिः अलम्। (दैत्यों के लिए विष्णु समर्थ हैं)  
 इन्द्राय वषट्। (इन्द्र के लिए हविःदान)

#### 5. षष्ठी शेषे ।

यहाँ शेष का अर्थ है, जो बातें अन्य विभक्तियों में नहीं बतायी गयी हैं, उनको स्पष्ट करने के लिए षष्ठी विभक्ति होती है। ये बातें हैं – स्वस्वामिभाव आदि सम्बन्ध विशेष। अर्थात् जहाँ सेवक स्वामी का जन्य-जनक का, कार्य-कारण आदि का सम्बन्ध बताना हो, वहाँ षष्ठी विभक्ति होती है।

उदाहरणार्थ— राज्ञः पुरुषः। (राजा का पुरुष)  
 पुत्रस्य माता। (पुत्र की माता)  
 मृत्तिकायाः घटः। (मिट्टी का घड़ा)  
 रामस्य पुस्तकम्। (राम की पुस्तक)

वस्तुतः सम्बन्ध किन्हीं दो पदार्थों में होता है, किन्तु षष्ठी भेदक (विशेषण) में होती है।

#### 6. यतश्च निर्धारणम् ।

यदि कोई वस्तु अपने समुदाय की अन्य वस्तुओं से किसी विशेषता के कारण अलग दिखाई पड़ती है, तो उस समुदाय वाचक शब्द में षष्ठी या सप्तमी विभक्ति होती है।

जैसे— कविषु कालिदासः श्रेष्ठः।

या

कवीनां कालिदासः श्रेष्ठः। (कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं)

यहाँ कवि समुदाय में कालिदास को उत्कृष्ट काव्य लिखने के कारण श्रेष्ठ बताया गया है। अतः समुदायवाचक शब्द में षष्ठी अथवा सप्तमी लगी है।

इसी प्रकार- नृणां ब्राह्मणः श्रेष्ठाः ।

या

नृषु ब्राह्मणः श्रेष्ठः । (मनुष्यों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है)

छात्राणां मैत्रः पटुः ।

या

छात्रेषु मैत्रः पटुः । (छात्रों में मैत्र पटु (चतुर) है)

गवां कृष्णा बहुक्षीरा ।

गोषु कृष्णा बहुक्षीरा । (गायों में काली गाय बहुत दूध देने वाली हैं)

### अभ्यास

1. 'प्रति' के योग में कौन सी विभक्ति प्रयुक्त होती है—  
 (क) चतुर्थी (ख) पंचमी (ग) द्वितीया (घ) षष्ठी
2. 'सहयुक्तेऽप्रधाने' सूत्र द्वारा किस विभक्ति का निर्देश किया गया है—  
 (क) प्रथमा (ख) द्वितीया (ग) तृतीया (घ) चतुर्थी
3. 'देवदत्तस्य गृहम्' उदाहरण में किस नियम से देवदत्त शब्द में षष्ठी विभक्ति हुई है—  
 (क) यतश्च निर्धारणम् (ख) षष्ठी षेषे (ग) षष्ठी हेतु प्रयोगे (घ) षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन
4. 'स्वस्ति' के योग में विभक्ति होती है—  
 (क) तृतीया (ख) द्वितीया (ग) पंचमी (घ) चतुर्थी
5. 'बालकेषु सोहनः श्रेष्ठः' वाक्य में 'बालकेषु' पद में विभक्ति है—  
 (क) सप्तमी (ख) षष्ठी (ग) तृतीया (घ) चतुर्थी
6. 'रामैः' पद में प्रयुक्त विभक्ति है—  
 (क) चतुर्थी (ख) पंचमी (ग) द्वितीया (घ) तृतीया
7. 'गृहं परितः जलम् अस्ति' वाक्य में 'गृहम्' पद में कौन सी विभक्ति है—  
 (क) प्रथमा (ख) द्वितीया (ग) तृतीया (घ) पंचमी
6. 'अक्ष्णा काणः' में 'अक्ष्णा' पद में विभक्ति निर्देश कराने वाला सूत्र है—  
 (क) येनाङ्ग विकारः (ख) सहयुक्तेऽप्रधाने  
 (ग) यतश्च निर्धारणम् (घ) अभितः परितः समयानिकषा हा प्रतियोगेऽपि

# हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद

हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद करने के लिए संस्कृत-व्याकरण के कुछ विशेष नियमों को जान लेना आवश्यक है। ये नियम प्रायः पुरुष, वचन, लिङ्ग, काल आदि से सम्बन्धित हैं।

**पुरुष-** बातचीत का सम्बन्ध तीन व्यक्तियों से होता है— कहने वाला, सुनने वाला तथा जिसके विषय में कुछ कहा जाय। कहने वाला उत्तम पुरुष, सुनने वाला मध्यम पुरुष तथा जिसके विषय में कहा जाय, वह अन्य पुरुष या प्रथम पुरुष कहलाता है। उत्तम पुरुष अर्थात् स्वयं के लिए अस्मद् शब्द का प्रयोग किया जाता है, जो तीनों लिङ्गों में समान हैं। इसी प्रकार सुनने वाले, जिसको 'तुम' शब्द से अभिहित करते हैं, युष्मद् शब्द का रूप प्रयुक्त है। यह भी तीनों लिङ्गों में एकरूप है। उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष की क्रिया के लिए सभी लकारों में अलग-अलग रूप निर्धारित किये गये हैं। उत्तम और मध्यम पुरुष के अलावा जो भी संज्ञाएँ या सर्वनाम हैं, उनके लिए प्रथम पुरुष की क्रिया का प्रयोग किया जाता है।

**वचन-** संख्या का ज्ञान कराने के लिए वचन का प्रयोग किया है। संस्कृत में तीन वचन होते हैं— एकवचन, द्विवचन और बहुवचन।

एक व्यक्ति या वस्तु का बोध कराने के लिए एकवचन, दो का बोध कराने के लिए द्विवचन तथा तीन या तीन से अधिक का बोध कराने के लिए बहुवचन प्रयुक्त होता है। तीनों वचनों में शब्द रूप और धातुरूप उपलब्ध हैं।

**लिङ्ग-** संस्कृत में लिङ्गों की संख्या भी तीन है— पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग। इनके रूपों में परिवर्तन रहता है। अतः शब्द के लिङ्ग की पहचान कर उनके रूपों का भली भाँति अभ्यास कर लेना चाहिए।

**काल-** काल का अर्थ होता है— समय। काल क्रिया के समय को अभिव्यक्त करता है कि क्रिया के होने का समय क्या है? संस्कृत में काल को लकारों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। लकारों की संख्या 10 है, किन्तु प्रायः निम्नलिखित लकारों का प्रयोग अधिक प्रचलित है—

1. लट् लकार (वर्तमान काल)
2. लङ् लकार (भूतकाल)
3. लृट् लकार (भविष्यत् काल)
4. लोट् लकार (आज्ञा अर्थ में)
5. विधिलिङ् लकार (चाहिए अर्थ में)

**कारक/विभक्ति**—संस्कृत भाषा में छह कारक एवं सात विभक्तियाँ प्रयोग की जाती हैं। 'सम्बोधन' में प्रथमा विभक्ति होती है, लेकिन उसके रूप अलग से दिये जाते हैं। 'सम्बन्ध' को कारक नहीं कहा जाता क्योंकि उसका क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध नहीं रहता है। जैसे राम श्याम की पुस्तक पढ़ता है। इस उदाहरण में पुस्तक और राम का तो पढ़ने की क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध है, किन्तु श्याम का नहीं। श्याम का पुस्तक से सम्बन्ध मात्र है, क्रिया में उसका हाथ नहीं। अतः सम्बन्ध को कारक-विभक्ति नहीं कहा जाता है। 'षष्ठी शेषे' इस नियम से सम्बन्ध में षष्ठी विभक्ति का विधान किया गया है।

विभक्ति के अनुसार कारक चिह्नों को हम निम्नलिखित तालिका में देख सकते हैं—

विभक्ति	कारक	चिह्न
प्रथमा	कर्ता कारक	ने
द्वितीया	कर्म कारक	को
तृतीया	करण कारक	से, द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान कारक	के लिए
पंचमी	अपादान कारक	से (अलग होने में)
षष्ठी	सम्बन्ध	का, की, के
सप्तमी	अधिकरण कारक	में, पै, पर

## लकारों के आधार पर अनुवाद

संस्कृत में अनुवाद करते समय यह ध्यान रखें कि कर्तृवाच्य के कर्ता में प्रथमा विभक्ति होती है। कर्ता, कर्म अथवा क्रिया को आगे, पीछे, बीच में कहीं भी रख सकते हैं। 'आप' शब्द (भवान्, भवती) के लिए प्रथम पुरुष की क्रिया लगेगी।

### लट् लकार (वर्तमान काल)

छात्रः पठति।	छात्र पढ़ता है।
छात्रौ पठतः।	दो छात्र पढ़ते हैं।
छात्राः पठन्ति।	छात्र पढ़ते हैं।
भवान् पठति।	आप पढ़ रहे हो।
भवन्तौ गच्छतः।	आप दोनों जाते हो।
भवन्तः धावन्ति।	आप सब दौड़ते हो।
भवती गायति।	आप गा रही हैं।
भवत्यौ पचतः।	आप दोनों पका रही हैं।
भवत्यः लिखन्ति।	आप सब लिखती हैं।
त्वं खेलसि।	तुम खेलते हो या तुम खेलती हो।

युवां हसथः ।	तुम दोनों हँसते हो ।
यूयं भ्रमथ ।	तुम सब भ्रमण कर रहे हो ।
अहं गच्छामि ।	मैं जाता हूँ । जाती हूँ ।
आवां पठावः ।	हम दोनों पढ़ते हैं ।
वयं क्रीडामः ।	हम सब खेल रहे हैं ।

इसी प्रकार सर्वनाम शब्दों के उदाहरण भी देखे जा सकते हैं। जैसे—

सः धावति ।	वह दौड़ता है ।
तौ धावतः ।	वे दोनों दौड़ते हैं ।
ते खेलन्ति ।	वे खेलते हैं ।
सा लिखति ।	वह लिख रही है ।
अयं खादति ।	यह खा रहा है ।
सर्वे वदन्ति ।	सभी बोलते हैं ।
रमेशः राधा च गच्छतः ।	रमेश और राधा जा रहे हैं ।
विजया सीमा च कूर्दतः ।	विजया और सीमा कूद रही हैं ।
सर्वे शिशवः धावन्ति ।	सभी बच्चे दौड़ते हैं ।

संस्कृत में प्रायः दौड़ते हैं, दौड़ रहे हैं जैसा अनुवाद एक रूप ही होगा। इनके सूक्ष्म अन्तर के लिए प्रत्यय लगाकर अनुवाद किया जाता है। 'और' के लिए 'च' शब्द का प्रयोग होता है, किन्तु वह बीच में न लगकर शब्दों के बाद में लगता है।

### लङ् लकार (भूतकाल)

भूतकाल के लिए लङ् लकार का प्रयोग होता है, किन्तु कहीं-कहीं लट् लकार की क्रिया में 'स्म' जोड़कर भी भूतकाल को व्यक्त कर सकते हैं।

रामः अपठत् ।	राम पढ़ चुका है ।
रमा अपचत् ।	रमा ने पकाया ।
अश्वौ अधावताम् ।	दो घोड़े दौड़ चुके हैं ।
यूयम् अलिखत् ।	तुम लोगों ने लिखा ।
अहम् अस्वादम् ।	मैंने खाया ।
सः पठतिस्म ।	उसने पढ़ लिया ।
बालकाः गच्छन्ति स्म ।	बालक चले गये ।
भिक्षुकः अयाचत् ।	भिक्षुक ने माँगा ।
इमाः बालिकाः अपश्यन् ।	इन लड़कियों ने देखा ।

### लृट् लकार (भविष्यत् काल)

राधिका आगमिष्यति ।	राधिका आयेगी ।
बालकाः अद्य न पठिष्यन्ति ।	बालक आज नहीं पढ़ेंगे ।
राधा श्यामा वा गमिष्यति ।	राधा अथवा श्यामा जायेगी ।
वयं सर्वे स्मरिष्यामः ।	हम सब याद करेंगे ।
सा श्वः गमिष्यति ।	वह कल जाएगी ।
आवां द्रक्ष्यावः ।	हम दोनों देखेंगे ।
त्वं कथं न गमिष्यसि ?	तुम क्यों नहीं जाओगे ?

### लोट् लकार (आज्ञार्थक)

सः पठतु ।	वह पढ़े ।
त्वं तत्र गच्छ ।	तुम वहाँ जाओ ।
मोहनः नित्यं लिखतु ।	मोहन रोज लिखे ।
युवां आगच्छतम् ।	तुम दोनों आओ ।
अहं पठानि ।	मैं पढ़ूँ ।
ते तत्रैव तिष्ठन्तु ।	वे वहीं ठहरें या रुकें ।
सीता सीमा मीनाक्षी च कुर्वन्तु ।	सीता, सीमा और मीनाक्षी करें ।

### विधिलिङ् लकार (चाहिए अर्थ में)

रामः गच्छेत् ।	राम को जाना चाहिए ।
सदा सत्यं ब्रूयात् ।	सदा सत्य बोलना चाहिए ।
त्वं पठेः ।	तुम्हें पढ़ना चाहिए ।
अहं अत्र वसेयम् ।	मुझे यहाँ रहना चाहिए ।
सः किं कुर्यात् ?	वह क्या करे ? या उसे क्या करना चाहिए ?
दानं दद्यात् ।	दान देना चाहिए ।

### कारकों के आधार पर अनुवाद

विभक्ति प्रकरण में कारक के विषय में किञ्चित् उल्लेख किया गया है। यहाँ कारकों के आधार पर सामान्य अनुवाद के नियम निर्देश किये जा रहे हैं—

#### कर्ता कारक

क्रिया को करने वाले को कर्ता कहा जाता है। कर्तृवाच्य के वाक्य में कर्ता में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग किया जाता है। यहाँ कर्ता के अनुसार ही क्रिया के रूप निर्धारित किये जाते हैं।

जैसे-रामः गच्छति। उदाहरण में 'राम' पद प्रथमा विभक्ति के एकवचन का है। अतः उसी के अनुसार क्रिया अन्य पुरुष, एकवचन की प्रयुक्त हुई है।

इसी प्रकार अन्य उदाहरण देखे जा सकते हैं—

बालकाः क्रीडन्ति।	बालक खेलते हैं।
वयं गमिष्यामः।	हम सब जायेंगे।
सर्वे लिखन्तु गच्छन्तु वा।	सभी लिखें या जायें।
अयं शिशुः अस्ति।	यह बच्चा है।
इदम् एकं चित्रम् अस्ति।	यह एक चित्र है।

**‘सम्बोधने च’** इस नियम के अनुसार सम्बोधन (किसी को पुकारना) में भी प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। इसके रूप अलग पंक्ति में दिये जाते हैं। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इसमें कोई अन्य विभक्ति है। सम्बोधन में कतिपय शब्दों के एक वचन का रूप प्रथमा विभक्ति के एकवचन से अलग रहता है, जबकि द्विवचन एवं बहुवचन के रूप किसी शब्द के नहीं बदलते। जैसे राम शब्द के सम्बोधन का रूप है—

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
हे राम !	हे रामौ !	हे रामाः !

यहाँ प्रथमा एकवचन की तरह रामः नहीं है, अपितु राम मात्र है, जबकि द्विवचन, बहुवचन के रूप वही हैं। पुकारने के लिए सम्बोधन के रूपों के पूर्व हे, अरे, भोः आदि लगाते हैं। यह कोई आवश्यक नहीं है कि लगाया जाय।

## कर्म कारक

**‘कर्तुरीप्सिततमं कर्म।’** इस सूत्र के अनुसार कर्ता अपनी क्रिया के द्वारा जिस पदार्थ को सर्वाधिक प्राप्त करना चाहता है, उसे कर्म कहा जाता है और कर्म में (कर्तृवाच्य के वाक्य में) द्वितीया विभक्ति होती है।

**जैसे—** देवदत्तः पयसा ओदनं भुङ्क्ते। देवदत्त दूध से भात खाता है। इस उदाहरण में देवदत्त दूध और भात दोनों खा रहा है, किन्तु भात खाना ही उसे सर्वाधिक अभीष्ट (इच्छित) है, दूध नहीं। दूध तो भात खाने में सहायक मात्र है। अतः ‘ओदन’ शब्द की कर्म संज्ञा हुई और उसमें ‘कर्मणि द्वितीया’ नियम से द्वितीया विभक्ति।

दुह (दुहना), याच् (माँगना), पच् (पकाना), दण्ड् (दण्ड देना), रुधि (रोकना), प्रच्छि (पूछना), चि (चुनना), ब्रू (कहना), शास् (शासन करना), जि (जीतना), मथ् (मथना), मुष् (चुराना), नी (ले जाना), ह (हरण करना), कृष् (खींचना) और वह् (ढोना) इन 16 धातुओं को द्विकर्मक धातु कहते हैं। इनके प्रयोग में जो अप्रधान कर्म होते हैं, उनमें, भी द्वितीया का विधान है।

**जैसे—** श्यामः गां दोग्धि पयः।

श्याम गाय से दूध दुहता है।



यहाँ दूध प्रधान कर्म है, क्योंकि दुहने की क्रिया से श्याम को दूध प्राप्त करना ही अभीष्ट है। 'गाय' (गो) अपादान कारक है, क्योंकि दूध गाय से अलग हो रहा है। (निकाला जा रहा है)। किन्तु प्रयोगकर्ता यहाँ अपादान का प्रयोग नहीं करना चाहता, वह यहाँ कर्म की अपेक्षा करता है। अतः गो शब्द में भी द्वितीया विभक्ति हुई है।

इसी प्रकार—

बलिं याचते वसुधाम्।	बलि से पृथ्वी माँगता है।
तण्डुलान् ओदनं पचति।	चावल से भात पकाता है।
गुरुः शिष्यं प्रश्नं पृच्छति।	गुरु शिष्य से प्रश्न पूछता है।
शतं जयति देवदत्तम्।	देवदत्त से 100 रुपया जीतता है।
वृक्षम् अवचिनोति फलानि।	वृक्ष से फल चुनता है।

### करण कारक

**साधकतमं करणम्।** क्रिया की सिद्धि में सर्वाधिक सहायक वस्तु 'करण' कही जाती है तथा करण कारक में तृतीया विभक्ति होती है। जैसे वृद्धः दण्डेन चलति। बूढ़ा व्यक्ति डण्डे से चलता है। यहाँ चलने की क्रिया में डण्डा सहायक है, अतः उसकी करण संज्ञा हुई और पुनः उसमें तृतीया विभक्ति लगी। इसी प्रकार

शिशवः कन्दुकेन क्रीडन्ति।	बच्चे गेंद से खेलते हैं।
सः चषकेन जलं पिबति।	वह गिलास से पानी पीता है।
जलेन मुखं प्रक्षालयति।	जल से मुँह धोता है।
सः नेत्राभ्यां पश्यति।	वह आँखों से देखता है।
छात्रः कलमेन लिखति।	छात्र कलम से लिखता है।
नरेशः बसयानेन आगच्छति।	नरेश बस से आता है।

### सम्प्रदान कारक

**'कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्'** इस नियम के अनुसार कर्ता जिसको लक्ष्य बनाकर कोई वस्तु प्रदान करता है, वह लक्षित व्यक्ति या पदार्थ सम्प्रदान कहा जाता है। अर्थात् जिसको कोई वस्तु दान या उपहार स्वरूप दी जाती है, वह सम्प्रदान कहा जाता है। सम्प्रदान में चतुर्थी विभक्ति होती है। जैसे राजा ब्राह्मणाय धनं ददाति। राजा ब्राह्मण को धन देता है। यहाँ ब्राह्मण की सम्प्रदान संज्ञा हुई और सम्प्रदान संज्ञा के कारण उसमें चतुर्थी विभक्ति लगी है।

इसी प्रकार—

माता निर्धनाय भोजनं ददाति।	माता निर्धन को भोजन देती है।
माता पुत्राय दुग्धं प्रेषयति।	माता पुत्र को दूध भेजती है।

रुचि अर्थ वाली धातुओं के योग में प्रसन्न होने वाले व्यक्ति की भी संप्रदान संज्ञा होती है।

जैसे— छात्राय अध्ययनं रोचते। छात्र को पढ़ना अच्छा लगता है।

हरये भक्तिः रोचते। हरि को भक्ति अच्छी लगती है।

नरेशाय मिष्टान्नं रोचते। नरेश को मिठाई अच्छी लगती है।

क्रुध् (क्रोध करना), द्रुह् (द्रोह करना), ईर्ष्या (ईर्ष्या करना), असूया (गुणों में दोष निकालना) इन धातुओं के योग में जिनके ऊपर क्रोध आदि किया जाता है, उनकी सम्प्रदान संज्ञा होती है और उसमें चतुर्थी विभक्ति लगती है।

जैसे— शत्रुः हरये क्रुध्यति। शत्रु हरि पर क्रोध करता है।

हरये द्रुह्यति। हरि से द्रोह (दुश्मनी) करता है।

बालकाय ईर्ष्यति। बालक पर ईर्ष्या करता है।

बालकाय असूयति। बालक पर असूया करता है।

## अपादान कारक

### ‘ध्रुवमपायेऽपादानम्।’

जिससे कोई वस्तु अलग होती है, उसे अपादान कारक कहा जाता है और उसमें पंचमी विभक्ति होती है।

उदाहरणार्थ— वृक्षात् पत्राणि पतन्ति। वृक्ष से पत्ते गिरते हैं।

सः विद्यालयात् आयाति। वह विद्यालय से आता है।

पिता प्रासादात् अवतरति। पिताजी महल से उतरते हैं।

हस्तात् जलं पतति। हाथ से जल गिरता है।

भय अर्थ वाली तथा रक्षा अर्थ वाली धातुओं के योग में जो भय का कारण होता है, वह भी अपादान कहलाता है, उसमें पंचमी होती है।

सः चौराद् विभेति। वह चोर से डरता है।

सः चौरात् त्रायते। वह चोर से रक्षा करता है।

नियमपूर्वक विद्याग्रहण में जिस व्यक्ति अथवा शिक्षक से विद्या ग्रहण की जाती है, उसकी भी अपादान संज्ञा होती है। जैसे—

छात्रः अध्यापकात् पठति। छात्र अध्यापक से पढ़ता है।

सा गुरोः संगीतविद्यां पठति। वह गुरु से संगीत विद्या पढ़ती है।

## अधिकरण कारक 'आधारोऽधिकरणम्'

कर्ता और कर्म के द्वारा किसी भी क्रिया का जो आधार होता है, उसे अधिकरण कहते हैं। अधिकरण कारक में सप्तमी विभक्ति होती है।

जैसे— छात्रः विद्यालये पठति।	छात्र विद्यालय में पढ़ता है।
मुनिः आश्रमे निवसति।	मुनि आश्रम में निवास करता है।
सा गृहे पचति।	वह घर में पकाती है।

साधु और असाधु शब्दों के प्रयोग में सप्तमी विभक्ति होती है।

कृष्णः साधुः मातरि।	कृष्ण माता के प्रति साधु है।
कृष्णः असाधुः मातुले।	कृष्ण मामा के प्रति असाधु है।

कुशल, निपुण आदि शब्दों के योग में भी सप्तमी विभक्ति होती है।

जैसे— राधा गृहकार्येषु दक्षा अस्ति।	राधा घरेलू कार्यों में दक्ष है।
सः अक्षेषु निपुणः।	वह पासा फेंकने में निपुण है।



# हिंदी व्याकरण

## शब्द, शब्द रचना एवं प्रयोग

**शब्द**—विचारों, भावों एवं सम्प्रेषण की सबसे प्रमुख साधन भाषा होती है तथा भाषा का सबसे महत्वपूर्ण अंग शब्द है। दो या दो से अधिक ध्वनियों या वर्णों के सार्थक मेल को शब्द कहते हैं।

शब्द की प्रकृति एवं प्रयोग के आधार पर इसे तीन वर्गों में बाँटा गया है—

- (1) अर्थ के आधार पर,
- (2) प्रयोग के आधार पर, तथा
- (3) स्रोत के आधार पर।

अर्थ के आधार पर भी शब्द को चार उप-भागों में वर्गीकृत किया गया है—

- (क) एकार्थी शब्द,
- (ख) अनेकार्थी शब्द,
- (ग) पर्यायवाची शब्द, एवं
- (घ) विलोम शब्द

**(क) एकार्थी शब्द**—जिन शब्दों का अर्थ कभी लिंग, वचन अथवा प्रयोग के आधार पर परिवर्तित नहीं होता है, उसे एकार्थी शब्द कहते हैं।

**(ख) अनेकार्थी शब्द**—प्रयोग और वाक्य प्रकृति के आधार पर अर्थ में परिवर्तित होने वाले शब्द को अनेकार्थी शब्द कहते हैं।

**(ग) पर्यायवाची शब्द**—एक ही अर्थ या वस्तु के व्यंजक-भाव देने वाले जब अनेक शब्द मिलते हैं, तो उसे समानार्थी या पर्यायवाची शब्द कहते हैं।

**(घ) विलोम शब्द**—जो शब्द अपने युग्म-शब्द के विपरीत अर्थ देते हैं, उसे विलोम शब्द कहते हैं।

## शब्द प्रयोग

**शब्दों में सूक्ष्म अंतर**—कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो उच्चारण की दृष्टि से समान प्रतीत होते हैं अथवा सूक्ष्म अंतर वाले होते हैं किंतु उनका अर्थ भिन्न होता है जैसे—

शब्द	अर्थ
1. अविराम	लगातार
अभिराम	सुंदर
2. अन्न	अनाज
अन्य	दूसरा

3.	अनुसरण अनुकरण	पीछे चलना नकल
4.	अंब अंबु	माता पानी
5.	अर्ध अर्घ्य	आधा पूजा का द्रव्य
6.	अवलंब अविलंब	सहारा शीघ्र
7.	कृत कृति	किया हुआ रचना
8.	ग्रह गृह	सूर्य, चंद्र आदि घर
9.	छात्र क्षात्र	विद्यार्थी क्षत्रिय धर्म
10.	जरा ज़रा	बुढ़ापा तनिक
11.	जलद जलज	बादल कमल
12.	मलिन मालिन्य	मैला मैलापन
13.	मनोज मनोज्ञ	कामदेव सुंदर
14.	यंत्रणा मंत्रणा	यातना देना विचार विमर्श करना
15.	वहन बहिन	ढोना बहन
16.	भवन भुवन	घर संसार
17.	मात्र मातृ	केवल माता
18.	मूल मूल्य	जड़ कीमत
19.	वात बात	हवा वार्ता

20.	शूर	वीर, योद्धा
	सुर	देवता
21.	अनिल	हवा
	अनल	आग
22.	श्रवण	कान
	श्रमण	भिक्षु
23.	अंस	कंधा
	अंश	हिस्सा
24.	पुरुष	आदमी
	परुष	कठोर

**अनेकार्थी शब्द—** उदाहरणार्थ—

शब्द	अर्थ
1. अंबुज	कमल, चंद्रमा शंख
2. अंश	भाग, हिस्सा, भाज्य अंक
3. अनल	आग, पित्त, परमेश्वर
4. अमृत	अमर, जल, घी
5. अरुण	प्रातःकालीन सूर्य, गहरा लाल रंग
6. नग	पर्वत, नगीना, वृक्ष
7. नाग	सर्प, हाथी
8. पक्ष	पंख, पखवारा, तरफ
9. मधु	शब्द, शराब, चैत्र का महीना, पराग
10. मित्र	सूर्य, सखा
11. विधि	ब्रह्मा, ढंग
12. तात	पिता, भाई, गुरु
13. नाक	नासिका, स्वर्ग, आकाश
14. पद	पैर, स्थान, अधिकार
15. नीरज	कमल, मोती, धूलरहित
16. निशाचर	राक्षस, उल्लू
17. पवन	वायु, विष्णु, कुम्हार का आँवा
18. मद	नशा, उमाद, गर्व
19. मेघ	बादल, एक राग, समूह

20.	राजा	शासक, स्वामी, धनी, प्रिय
21.	लक्ष्य	निशाना, उद्देश्य, अभीष्ट
22.	सुरभि	कामधेनू, सुगंध, बसंत
23.	वारिद	बादल, जल देने वाला, मेघ
24.	पयोधि	समुद्र, दूध का बर्तन
25.	फूल	पुष्प, एक आभूषण, श्वेत कुष्ठ रोग
26.	द्विज	ब्राह्मण, पक्षी
27.	मुद्रा	अँगूठी, आकृति, रुपया
28.	शिखा	किरण, लौ, चोटी

**शब्द समूहों (वाक्यांश) के लिए एक शब्द**— भाषा में अपनी बात को संक्षेप में प्रकट करने के लिए शब्द समूह के स्थान पर प्रयुक्त किए जाने वाले शब्द जैसे—

शब्द समूह	एक शब्द
1. जिसका कहीं भी अंत न हो	अनंत
2. जिसकी कल्पना न की जा सके	अकल्पनीय
3. जो खाने योग्य न हो	अखाद्य
4. जिसकी गणना न की जा सके	अगण्य
5. जिसका जन्म न हुआ हो	अजन्मा
6. जो बूढ़ा न हो	अजर
7. शरीर के किसी अंग का टूटना	अंग-भंग
8. सत्य आचरण करने वाला	सदाचारी
9. शिक्षा देने वाला	शिक्षक
10. ईश्वर में विश्वास करने वाला	आस्तिक
11. जो पढ़ना-लिखना जानता हो	साक्षर
12. जानने की इच्छा रखने वाला	जिज्ञासु
13. सौ वर्ष का समय	शताब्दी
14. जिसका कोई रक्षक न हो	अनाथ
15. जो सब कुछ जानता हो	सर्वज्ञ
16. जो कीचड़ से उत्पन्न होता है	पंकज
17. वंदना करने योग्य	वंदनीय

18.	जो भूखा हो	बुभुक्षित
19.	जिसकी आँखें हिरण की आँखों के समान हो	मृगनयनी
20.	किसी बात का गूढ़ रहस्य जानने वाला	मर्मज्ञ
21.	वन में रहने वाला	वनवासी
22.	अधिक बोलने वाला	वाचाल
23.	बीता हुआ	विगत
24.	जो नष्ट होने वाला हो	नश्वर
25.	जिसके पास कुछ न हो	अकिंचन
26.	जिसको क्षमा न किया जा सके	अक्षम्य
27.	अनुकरण करने योग्य	अनुकरणीय
28.	जिसके समान कोई दूसरा न हो	अद्वितीय
29.	सदा सत्य बोलने वाला	सत्यवादी
30.	मोक्ष की इच्छा रखने वाला	मुमुक्षु
31.	कम बोलने वाला	मितभाषी

### तत्सम एवं तद्भव शब्द

उत्पत्ति के आधार पर शब्दों के चार भेद हैं—तत्सम्, तद्भव, विदेशी एवं देशज।

**तत्सम्**—तत् + सम् = उसके समान। जो शब्द अपरिवर्तित रूप में संस्कृत से सीधे हिंदी में ले लिए गये हैं अथवा जिन्हें संस्कृत के मूल शब्दों से संस्कृत के ही प्रत्यय लगाकर निर्मित किया गया है, उसे तत्सम् शब्द कहते हैं।

**तद्भव**—तद् + भव = उससे उत्पन्न। संस्कृत के जो शब्द पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट या पुरानी हिंदी से गुजरने के बाद रचना की दृष्टि से अपने मूल स्वरूप से परिवर्तित हो गये हैं, उसे तद्भव शब्द कहते हैं।

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
अग्नि	आग	अक्षर	आखर, अच्छर	अन्यत्र	अनत
अन्न	अनाज	अमावस्या	अमावस	अम्बा	अम्मा
अट्टालिका	अटारी	आश्रय	आसरा	ओष्ठ	ओठ
अँगुली	उँगुली	अश्रु	आँसू	अक्षि	आँख
आम्र	आम	आश्चर्य	अचरज	उलूक	उल्लू
उज्ज्वल	उजाला	उत्थान	उठाना	उष्ट्र	ऊँट



एकत्र	इकट्ठा	कृष्ण	किसन	कर्ण	कान
कृपा	किरपा	कूप	कुँआ	काक	कौआ
कुंभकार	कुम्हार	कोकिल	कोयल	कपाट	किवाड़
कमल	कंवल	कुपुत्र	कपूत	ग्रंथि	गाँठ
ग्राम	गाँव	गृह	घर	गर्दभ	गधा
गर्त	गड्ढा	धूम	धुँआ	चैत्र	चैत
चतुर्दश	चौदह	वत्स	बच्चा	शलाका	सलाई
तिक्त	तीखा	क्षीर	खीर	घोटक	घोड़ा
शत	सौ	भक्त	भगत	ग्राहक	गाहक
जिह्वा	जीभ	क्षेत्र	खेत	पुत्र	पूत
प्रिय	प्यारा	लोहकर	लोहार	महिषी	भैंस
लज्जा	लाज	सप्त	सात	वधू	बहू
वानर	बंदर	यमुना	जमुना	सूत्र	सूत
विवाह	व्याह	स्वप्न	सपना	शांक	साग
स्वर	सुर	चर्मकार	चमार	घट	घड़ा
दुग्ध	दूध	नग्न	नंगा	छत्र	छाता
मृत्तिका	मिट्टी	मुख	मुँह	पुत्र	पूत
वार्ता	बात	वाष्प	भाप	सूर्य	सूरज
हृदय	हिरदय	सर्प	साँप	सूचिका	सूई
हस्ति	हाथी	प्रहर	पहर	शुष्क	सूखा
मित्र	मीत	मयूर	मोर	नृत्य	नाच
मृत्यु	मौत	दीपक	दीया	दुर्बल	दुबला
चक्र	चाक	धैर्य	धीरज	भगिनी	बहन
वर्षा	बरखा	छिद्र	छेद	धैर्य	धीरज
रत्न	रतन	दण्ड	दाड़	मक्षिका	मक्खी
गृह	घर	शिक्षा	सीख	पर्यंक	पलंग
शर्करा	शक्कर	योगी	जोगी	भातृ	भाई
राज्ञी	रानी	श्वसुर	ससुर	वृद्ध	बूढ़ा
शिर	सिर	प्रिय	प्यारा	पत्र	पत्ता

भिक्षा	भीख	भ्रमर	भौरा	हस्त	हाथ
मुष्टि	मुट्ठी	मस्तक	माथा	लक्ष	लाख
जूर्ण	झीना	नासिका	नाक	हास	हँसी
निद्रा	नींद	पृष्ठ	पीठ	रुक्ष	रुखा
क्षण	छन	जंघा	जाँघ	पिपासा	प्यासा
दष	दस	घृत	घी	पञ्च	पाँच
चंद्रिका	चाँदनी	त्वरित	तुरंत	नव	नया
बाहु	बाँह	दधि	दही	सौभाग्य	सुहाग

### वाक्यों में त्रुटि-मार्जन (अशुद्धि संशोधन) (लिंग, वचन, कारक, काल एवं वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियाँ)

**वाक्य**—आकांक्षा योग्यता और आसक्ति से युक्त पद को वाक्य कहते हैं। दूसरे शब्दों में विचारों एवं भावों को पूर्णरूप से प्रकट करने वाले शब्द-समूह को वाक्य कहा जाता है।

भाषा सम्प्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है। प्रभावशाली तथा शुद्ध भाषा के लिए वाक्य का शुद्ध होना आवश्यक है। यदि वाक्य सुस्पष्ट एवं निर्दोष पूर्ण होता है तो वक्ता या लेखक की बात श्रोता या पाठक तक सही ढंग से पहुँच पाती है।

अधिकांशतः वाक्य लिखते या बोलते समय जो त्रुटियाँ होती हैं वह निम्नलिखित हैं—

- (1) अन्विति संबंधी
- (2) पदक्रम संबंधी, एवं
- (3) वाच्य संबंधी

पाठ्यक्रम के आधार पर अन्विति संबंधी त्रुटियाँ एवं त्रुटिमार्जन पर विचार किया जाना है, जो निम्नलिखित हैं—

### लिंग संबंधी त्रुटियाँ

हिंदी में केवल दो ही लिंग होते हैं—पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। वाक्यों में लिंग का निर्धारण खड़ी बोली में प्रयुक्त लिंग व्यवस्था के मानकों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

1. वाक्य में क्रिया का लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होता है। जैसे—

- (1) मीरा पुस्तक पढ़ती है।
- (2) रवि विद्यालय जाता है।

2. यदि कर्ता के साथ 'ने' विभक्ति का प्रयोग हुआ हो तो सकर्मक क्रिया कर्म के लिंग और वचन के अनुरूप होती है, जैसे—

(1) बालक ने पुस्तक पढ़ी।

(2) बालिका ने पत्र लिखा।

3. यदि समान लिंग के विभक्ति रहित अनेक कर्ता पद 'और' से जुड़े हों तो क्रिया उसी लिंग में तथा बहुवचन में होती है। जैसे—

(1) अजय, संजय और विजय विद्यालय आते हैं।

(2) सरिता, लता और सीमा शिल्प मेला देखने जाएँगी।

4. यदि वाक्य में दो भिन्न लिंग विभक्ति रहित एक वचन कर्ता हों तथा दोनों के बीच 'और' संयोजन का प्रयोग हो तो उसकी क्रिया पुल्लिङ्ग बहुवचन में होगी, जैसे—

(1) मोहन और सरिता प्रतिदिन विद्यालय आते हैं।

(2) बकरी और शेर पानी पीते हैं।

5. आधुनिक समाज में कुछ व्यक्तियों के पद/उपाधि, को संकेतिक कराने वाले शब्दों को पुल्लिङ्ग ही माना जाता है चाहे वह व्यक्ति पुरुष हो अथवा स्त्री; जैसे— राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, सचिव, प्रधानाचार्य, डॉक्टर इत्यादि।

### अशुद्ध

मीरा कृष्णभक्त **कवियित्री** नहीं हैं।

सभा में अनेक **विद्वान** महिलाएँ उपस्थित थीं।

पुत्री पराया धन **होता** है।

यह पुस्तक राकेश ने **लिखा**।

मोहन ने अलमारी **खरीदा**।

राधा ने पत्र **पढ़ी**।

दादा जी की बीमारी **बढ़ता** जा रहा है।

### शुद्ध

मीरा कृष्ण भक्त **कवयित्री** हैं।

सभा में अनेक **विदुषी** महिलाएँ उपस्थित थीं।

पुत्री पराया धन **होती** है।

यह पुस्तक राकेश ने **लिखी**।

मोहन ने अलमारी **खरीदी**।

राधा ने पत्र **पढ़ा**।

दादा जी की बीमारी **बढ़ती** जा रही है।

### वचन संबंधी त्रुटियाँ

हिंदी में केवल दो वचन होते हैं— एक वचन तथा बहुवचन। वाक्यों को लिखते समय नियमों का सही ज्ञान न होने के कारण वचन संबंधी त्रुटियाँ हो जाती हैं। वाक्य प्रयोग करते समय एकवचन एवं बहुवचन का प्रयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

1. आदरणीय व्यक्तियों के साथ एकवचन होते हुए भी बहुवचन की क्रिया लगाई जाती है।

2. भाववाचक संज्ञा सदा एकवचन में प्रयुक्त होती है।

जैसे— बुढ़ापा, बचपन, लड़कपन, पागलपन, मादकता।

3. कुछ शब्द सदैव एकवचन होते हैं, जैसे—  
जनता, सामान, माल, जुर्माना
4. कुछ शब्द सदैव बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—  
दर्शन, हस्ताक्षर, आँसू, प्राण, बाल, होश, अनेक आदि।

### अशुद्ध

### शुद्ध

गोली लगते ही **उसका** प्राण निकल गया।  
मैं **आपका** दर्शन करना चाहता हूँ।  
बालक की दशा देखकर **मेरा** आँसू निकल गया।  
**मेरा** बाल सफेद हो रहा है।  
शेर को सामने देखकर **मेरा** होश उड़ गया।  
घर के **सामानों** को रख दो।  
गोदाम में **कितने** माल मिले ?  
आज **मेरा** बड़ा भाई आ गया।

गोली लगते ही **उसके** प्राण निकल गये।  
मैं **आपके** दर्शन करना चाहता हूँ।  
बालक की दशा देखकर **मेरे** आँसू निकल गये।  
**मेरे** बाल सफेद हो रहे हैं।  
शेर को सामने देखकर **मेरे** होश उड़ गये।  
घर के **सामान** को रख दो।  
गोदाम में **कितना** माल मिला ?  
आज **मेरे** बड़े भाई आ गये।

## कारक संबंधी त्रुटियाँ

हिंदी के कारक चिह्न संस्कृत से भिन्न हैं। वाक्य में कारक के चिह्नों का प्रयोग लक्षणों को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

1. कर्ता—ने— जिसके द्वारा कार्य सम्पन्न किया जाता है।
2. कर्म—को— जिस पर क्रिया का प्रभाव पड़ता है।
3. करण—से या द्वारा— जो क्रिया सम्पन्न करने का साधन हो।
4. सम्प्रदान—के लिए या को— जिसके लिए क्रिया की जाती है।
5. अपादान—से— जिससे अलग होने की क्रिया होती है।
6. संबंध— का, के, की, रा, रे, री
7. अधिकरण— में, पर— क्रिया जिस पर आधारित रहती है।
8. संबोधन— हे !, रे !, अरे !

### अशुद्ध

### शुद्ध

1. तुम **मेरे** को पुस्तक दे दो।
2. मेरे **को** फल ले आओ।
3. यह कविता **किसके** द्वारा लिखी गयी ?
4. तुमने सूचना **किसके** प्राप्त की ?

1. तुम **मुझे** पुस्तक दे दो।
2. मेरे **लिए** फल ले आओ।
3. यह कविता **किसने** लिखी ?
4. तुमने सूचना **किससे** प्राप्त की ?

- |   |                                      |
|---|--------------------------------------|
| 5. हम पहाड़ में सैर करने गये थे।          | हम पहाड़ पर सैर करने गये थे।         |
| 6. मैं अभी-अभी खाना खाने को बैठा।         | मैं अभी-अभी खाना खाने के लिए बैठा।   |
| 7. यह बात शीला को पूछो।                   | यह बात शीला से पूछिए।                |
| 8. समाचारपत्र मेज में रखा है।             | समाचार पत्र मेज पर रखा है।           |
| 9. वह नदी को गया।                         | वह नदी की तरफ गया।                   |
| 10. पक्षी पेड़ में हैं।                   | पक्षी पेड़ पर हैं।                   |
| 11. मेरी पढ़ाई में बहुत नुकसान हो रहा है। | मेरी पढ़ाई का बहुत नुकसान हो रहा है। |
| 12. राजा घोड़े में सवार हो गया।           | राजा घोड़े पर सवार हो गया।           |

### काल संबंधी त्रुटियाँ

क्रिया के जिस रूप से कार्य होने का समय ज्ञात हो उसे काल कहा जाता है। हिन्दी में तीन काल हैं—वर्तमान काल, भूतकाल एवं भविष्यत काल। प्रत्येक काल के लिए क्रिया का निश्चित रूप निर्धारित की गयी है। शुद्ध वाक्य लेखन के लिए कालानुसार क्रिया के निश्चित रूप को जानना आवश्यक है।

#### अशुद्ध

- |  |   |
|--|---|
| 1. अध्यापक ने हमसे निबन्ध लिखाया।        | अध्यापक ने हमसे निबन्ध लिखवाया।           |
| 2. प्रस्तुत पंक्तियाँ 'साकेत' से ली हैं। | प्रस्तुत पंक्तियाँ 'साकेत' से ली गई हैं।  |
| 3. नाटक को चार अंकों में विभक्त किया है। | नाटक को चार अंकों में विभक्त किया गया है। |
| 4. मैं इस लड़के को पढ़ाया हूँ।           | मैंने इस लड़के को पढ़ाया है।              |

#### शुद्ध

### वर्तनी संबंधी त्रुटियाँ

वाक्य में प्रयुक्त किसी भी शब्द की वर्तनी अशुद्ध होने पर वाक्य को अशुद्ध माना जाता है। शब्दों में अशुद्धियाँ प्रायः स्वर-व्यंजन, सन्धि, समास, हल् चिह्न एवं विसर्ग से संबंधित पायी जाती हैं। शुद्ध भाषा का व्यवहार करने के लिए शब्दों के शुद्ध रूप का प्रयोग आवश्यक है।

#### अशुद्ध

- |   |  |
|---|--|
| 1. मुझे अत्याधिक थकान हो रही है।              | मुझे अत्यधिक थकान हो रही है।               |
| 2. उपरोक्त कथन सही है।                        | उपर्युक्त कथन सही है।                      |
| 3. स्वामी जी के सदोपदेश का प्रभाव है।         | स्वामी जी के सदुपदेश का प्रभाव है।         |
| 4. मैं आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ। | मैं आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ। |
| 5. नगर का वातावरण शान्तमय था।                 | नगर का वातावरण शान्तिमय था।                |
| 6. उसे हानी-लाभ की चिंता नहीं है।             | उसे हानि-लाभ की चिंता नहीं है।             |

#### शुद्ध

- |   |   |
|---|---|
| 7. इस पत्र में <b>संसोधन</b> कर लिया है।                                  | इस पत्र में <b>संशोधन</b> कर लिया है।                                   |
| 8. मेरी <b>अन्तरात्मा</b> गवाही नहीं देती।                                | मेरी <b>अन्तरात्मा</b> गवाही नहीं देती।                                 |
| 9. राम की <b>पिताभक्ति</b> अनुकरणीय है।                                   | राम की <b>पितृभक्ति</b> अनुकरणीय है।                                    |
| 10. राजा दिलीप बहुत <b>दयालू</b> थे।                                      | राजा दिलीप बहुत <b>दयालु</b> थे।  |
| 11. <b>राजनैतिक</b> लाभ के लिए वह कुछ भी कर सकता है।                      | <b>राजनीतिक</b> लाभ के लिए वह कुछ भी कर सकता है।                        |
| 12. महादेवी वर्मा हिन्दी की <b>कवियत्री</b> हैं।                          | महादेवी वर्मा हिन्दी की <b>कवयित्री</b> हैं।                            |
| 13. मोहन मेरा <b>कनिष्ठ</b> भ्राता है।                                    | मोहन मेरा <b>कनिष्ठ</b> भ्राता है।                                      |
| 14. आपके आगमन से मैं <b>अनुग्रहीत</b> हुआ।                                | आपके आगमन से मैं <b>अनुगृहीत</b> हुआ।                                   |
| 15. स्वतन्त्रता दिवस के <b>उपलक्ष</b> में अनेक कार्यक्रम आयोजित किये गये। | स्वतन्त्रता दिवस के <b>उपलक्ष्य</b> में अनेक कार्यक्रम आयोजित किये गये। |
| 16. यह <b>अनुदित</b> रचना है।   | यह <b>अनूदित</b> रचना है।   |
| 17. आपका <b>आशीर्वाद</b> चाहिए।   | आपका <b>आशीर्वाद</b> चाहिए।   |
| 18. सोहन आपके <b>सममुख</b> कुछ नहीं कहेगा।                                | सोहन आपके <b>सम्मुख</b> कुछ नहीं कहेगा।                                 |
| 19. भारत <b>उन्नतशील</b> देश है।  | भारत <b>उन्नतिशील</b> देश है।   |
| 20. <b>अमावश्या</b> की राज बहुत अंधेरी थी।                                | <b>अमावस्या</b> की राज बहुत अंधेरी थी।                                  |
| 21. शिक्षक ने छात्र की <b>प्रसंशा</b> की।                                 | शिक्षक ने छात्र की <b>प्रशंसा</b> की।                                   |
| 22. चाचा जी की दशा <b>सोचनीय</b> है।                                      | चाचा जी की दशा <b>शोचनीय</b> है।  |
| 23. मैं छात्र <b>परिषद</b> का सदस्य हूँ।                                  | मैं छात्र <b>परिषद्</b> का सदस्य हूँ।                                   |
| 24. जीवन में शांति <b>परम्</b> आवश्यक है।                                 | जीवन में शांति <b>परम</b> आवश्यक है।                                    |
| 25. दूध में <b>जामुन</b> डालने से दही बनता है।                            | दूध में <b>जामन</b> डालने से दही बनता है।                               |



# रस

साहित्य में रस का अभिप्राय आनंद है। काव्य को पढ़ने या नाटक देखने से जो विशेष प्रकार का आनंद प्राप्त होता है, उसे रस कहा गया है। यह आनंद राग द्वेष से मुक्त होता है। इसमें व्यक्तिगत सुख दुःख के भाव नहीं होते। यह व्यक्तिगत संकीर्णताओं से मुक्त होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हृदय की मुक्तावस्था को रस दशा कहा है। हृदय की इस मुक्तावस्था में जीवन का व्यक्तिगत अनुभव और आनंद मनुष्य मात्र का अनुभव और आनंद बन जाता है।

**भाव**—जो अर्थ विभावों द्वारा प्रस्तुत होकर अनुभावों तथा वाचिक आंगिक एवं सात्विक अभिनयों के द्वारा प्रतीत के योग्य बनता है वह भाव कहलाता है। आचार्य भरतमुनि ने अपने ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' में भावों की संख्या 49 मानी है जिसका विभाजन इस प्रकार है—

## “विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्ति”

**टिप्पणी**—भरतमुनि ने अपने सूत्र में स्थायी भाव का उल्लेख नहीं किया है। चूँकि स्थायी भाव सहृदय के हृदय में सदा वासना रूप में चिरस्थायी रहते हैं और अनुकूल परिस्थितियों के अनुसार विभाव, अनुभाव और व्यभिचारि भावों का संयोग होने पर रस रूप में निष्पन्न हो जाते हैं।

## रस के अवयव

रस	स्थायी	विभाव	अनुभाव	संचारी भाव
शृंगार	रति	1. आलंबन विभाव	1. कायिक, 2. वाचिक,	संचारी भाव की
हास्य	हास	(i) आश्रय	3. सात्विक, 4. आहार्य	संख्या <b>33</b> है —
करुण	शोक	(ii) विषय	(सात्विक के 8 भेद हैं—)	निर्वेद, गर्व, दैन्य,
रौद्र	क्रोध	2. उद्दीपन विभाव	1. स्तंभ	श्रम, मद, मोह,
वीर	उत्साह	(i) बाह्य	2. रोमांच	जड़ता, उग्रता,
भयानक	भय	(ii) आलंबन की	3. कंप	विबोध, स्वप्न,
वीभत्स	जुगुप्सा	चेष्टाएँ	4. अश्रु	अपस्मार, आवेग,
अद्भुत	विस्मय		5. प्रलाप	मरण, आलस्य,
वत्सल	वात्सल्य		6. स्वेद	अमर्ष, निद्रा,
शांत	निर्वेद		7. विवर्णता	अवहित्था, उत्सुकता,
			8. स्वरभंग।	उन्माद, शंका, स्मृति,
				मति, व्याधि, संत्रास,
				लज्जा, हर्ष, असूया,
				विषाद, धृति, चपलता,
				ग्लानि, चिंता, वितर्क।

**स्थायी भाव**—सहृदय के अन्तः करण में जो मनोविकार वासना रूप में सदा (स्थायी रूप) से विद्यमान रहते हैं, जिन्हें अन्य कोई भी अविरुद्ध भाव दबा नहीं सकता उन्हें स्थायी भाव कहते हैं। एक स्थायी भाव का संबंध एक रस से होता है। स्थायी भावों की संख्या आचार्यों ने 9 मानी है। परवर्ती आचार्यों यथा— 'मम्मट' ने 'निर्वेद, विश्वनाथ' ने 'वत्सल' और रूप गोस्वामी ने परारति नामक स्थायी भावों की उद्भावना कर स्थायी भावों एवं उनसे निष्पन्न रसों की संख्या ग्यारह निर्धारित की।

**विभाव**—रस के ऐसे उपादान जिनके माध्यम से रति-हास, शोक आदि स्थायी भाव सहृदय के हृदय में जगते हैं, काव्य में विभाव कहलाते हैं। विभाव के दो भेद होते हैं—

1. आलंबन विभाव, 2. उद्दीपन विभाव।

**1. आलंबन विभाव**— जिस व्यक्ति अथवा वस्तु के कारण कोई भाव जाग्रत होता है, उस व्यक्ति अथवा वस्तु को उस भाव का आलंबन विभाव कहा जाता है। आलंबन विभाव के दो भेद होते हैं— (i) आश्रयगत आलंबन (ii) विषयगत आलंबन

**(i) आश्रयगत आलंबन**— जिसके हृदय में भाव जाग्रत होता है अर्थात् जिसे रसानुभूति होती है, उसे आश्रय कहते हैं।

**(ii) विषयगत आलंबन**— वह पात्र या स्थिति जिसे देखकर आश्रय के मन में भाव निष्पन्न होता है, उसे विषयगत आलंबन कहते हैं— जैसे शकुन्तला को देखकर दुष्यन्त के मन में शकुन्तला के प्रति आकर्षण उत्पन्न होना। यहाँ दुष्यन्त आश्रय है और शकुन्तला आलंबन।

**2. उद्दीपन विभाव**— जिन वस्तुओं या स्थितियों के कारण रति आदि स्थायी भाव तीव्रतर हो जाते हैं या उद्दीप्त होने लगते हैं, उन्हें उद्दीपन विभाव कहते हैं। जैसे— चन्द्रोदय, कोकिल, एकान्त स्थान, नदी का तट आदि।

**अनुभाव**— अनुभाव का शाब्दिक अर्थ है— भाव का अनुगमन करने वाला। जिन कार्यों से रति आदि स्थायी भावों का अनुभव होता है, वे अनुभाव कहलाते हैं। दूसरे शब्दों में आलंबन, उद्दीपन आदि कारणों से उत्पन्न काव्य या नाटक के अंतर्गत विभिन्न भावों को प्रकाशित करने वाला कार्य अनुभाव है। अनुभाव के चार भेद माने जाते हैं।

1. कायिक (आंगिक) अनुभाव 2. वाचिक अनुभाव 3. आहार्य अनुभाव 4. सात्त्विक अनुभाव

**1. कायिक (आंगिक) अनुभाव**— शरीर की चेष्टाएँ या क्रिया (कटाक्षपात, हाथ से इशारे करना आदि), निःश्वास, उच्छ्वास आदि से प्रगट होने वाले अंतःकरण के भाव आंगिक या कायिक अनुभाव कहलाते हैं।

**2. वाचिक अनुभाव**— वाक्व्यापार को वाचिक अनुभाव कहा जाता है।

**3. आहार्य अनुभाव**— आरोपित या बनावटी वेश-रचना आहार्य अनुभाव कहलाती है।



**4. सात्त्विक अनुभाव-** सात्त्विक अनुभाव उन्हें कहते हैं, जिनमें सत्त्व के योग से उत्पन्न कायिक चेष्टाएँ होती हैं। यह अंतःकरण की वह स्थिति है, जिनमें तमोगुण और रजोगुण का शमन होकर सत्त्व गुणों का उदेग होता है। ऐसे सत्त्व प्रधान मन में उत्पन्न मनोविकारों का स्वतः प्रादुर्भूत कायिक प्रतिक्रिया द्वारा ब्राह्म प्रस्तुतीकरण ही सात्त्विक अनुभावों के अन्तर्गत आता है। इनमें नायक-नायिका आदि समाधि की स्थिति में पहुँचते हैं। सात्त्विक अनुभावों की संख्या आठ मानी गयी है।

**व्यभिचारी अथवा संचारी भाव-** जो भाव उत्पन्न हुए स्थायी भाव को अधिक पुष्ट करते हैं, मन में केवल अल्पकाल तक संचरण करके चले जाते हैं, वे संचारी भाव कहलाते हैं। संचारी भावों को 'व्यभिचारी भाव' भी कहा जाता है, क्योंकि किसी विशेष संचारी भाव का किसी रस-विशेष से ही संबंध नहीं रहता, अपितु एक संचारी भाव अनेक रसों में संचरण कर सकता है। संचारी भाव की कुल संख्या 33 मानी गयी है।

### रस परिचय

**1. शृंगार रस-** नायक-नायिका के मन में संस्कार रूप में स्थित 'रति' नामक स्थायी भाव जब रसावस्था को पहुँचकर आस्वादन के योग्य होता है, तो वह शृंगार रस कहलाता है। शृंगार रस के दो भेद होते हैं-

(क) संयोग शृंगार, (ख) वियोग (विप्रलम्भ) शृंगार

**(क) संयोग शृंगार-** नायक-नायिका के परस्पर अवलोकन मिलन, आलिंगन तथा रति-क्रीड़ाओं को संयोग शृंगार कहते हैं। यहाँ रति स्थायी भाव प्रिय के संयोग से परिपुष्ट होकर विविध अनुभावों और संचारियों द्वारा प्रकट होता है।

**उदाहरण-**

दूलह श्री रघुनाथ बने-दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माही।  
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि-बेद जुवा जुरि विप्र पढ़ाही।।  
राम को रूप निहारति-जानकी कंकन के नग की परछाहीं।  
यातैं सबै सुधि भूलि, गई कर टेकि रही पल टारत नाहीं।।

(तुलसीदास कवितावली)

**स्पष्टीकरण-**

स्थायी भाव — रति

आलंबन — राम

आश्रय — सीता

उद्दीपन — नग में पड़ने वाला राम का प्रतिबिंब

**अनुभाव** — उस प्रतिबिंब को देखना-हाथ टेकना आदि

**संचारी भाव** — हर्ष, जड़ता आदि

**(ख) वियोग (विप्रलंभ) शृंगार**— एक दूसरे के प्रेम में अनुरक्त नायक-नायिका के मिलन के अभाव को विप्रलंभ शृंगार कहा जाता है।

**उदाहरण—**

अति मलीन वृषभानु कुमारी।

हरि-स्रम जल अंतर-तनु भीजे, ते लालच न धुआवति सारी॥

अधोमुख रहति उरध नहिं चितवति, ज्यों गथहारे थकित जुआरी।

छूटे चिहुर बरन कुम्हिलाने, ज्यों नलिनी हिमकर की मारी॥

हरि संदेश सुनि सहेज मृतक भई, इक विरहिनी दूजे अलि जारी।

सूर स्याम बिनु यो जीवति हैं, ब्रज बनिता सब स्याम दुलारी॥

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव** — रति

**आलम्बन** — कृष्ण

**आश्रय** — राधा

**अनुभाव**— अधोमुख रहना, अन्यत्र नहीं देखना, मुख का कुम्हला जाना, बालों का बिखरना आदि

**संचारी भाव**— ग्लानि, चिन्ता, दैन्य आदि

**टिप्पणी—**

विप्रलम्भ शृंगार के चार रूप माना जाता है—

1. पूर्वराग 2. मान 3. प्रवास 4. करुण

विप्रलम्भ शृंगार की दस दशाएँ मानी जाती हैं।

1. अभिलाषा 2. चिन्ता 3. स्मरण 4. गुण-कथन 5. उद्वेग 6. उन्माद 7. प्रलाप 8. जड़ता 9. व्याधि

10. मरण

**2. हास्य रस**— विकृत वेश-भूषा, क्रिया कलाप, चेष्टा या वाणी को सुनकर हृदय में विनोदजन्य उल्लास जगना, हास्य रस कहलाता है।

**उदाहरण—**

काहु न लखा सो चरित विसेखा। सो सरूप नृप कन्या देखा॥

मर्कट बदन भयंकर देही। देखत हृदय क्रोध भा तेही।

जेहि दिसि बैठे नारद फूलि। सो दिसि तेहि न विलोकी भूली॥

पुनि-पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं। देखि दसा हर-गन मुसकाहीं।

**स्थायी भाव** — हास

**आलम्बन** — नारद

**आश्रय** — हर-गण

**उद्दीपन** — नारद की बन्दर सी आकृति, उनकी बेचैनी।

**अनुभाव** — हर गणों का मुस्कुराना

**संचारी भाव** — हर्ष, उद्वेग, चपलता आदि।

**3. करुण रस**— इष्ट के विनाश, बन्धु वियोग द्रव्य की हानि और प्रेमी से सदैव के लिए बिछुड़ जाने पर शोक स्थायी भाव के रूप में करुण रस निष्पन्न होता है।

**उदाहरण**—

अभी तो मुकुट बँधा था मांथ, हुए कल ही हल्दी के हाथ।

खुले भी न थे लाज के बोल, खिले थे चुम्बन शून्य कपोल॥

हाय रुक गया यहीं संसार, बना सिन्दूर अनल अंगार।

वातहत लतिका—सी सुकुमार, पड़ी है छिन्नाधार॥

**स्पष्टीकरण**—

**स्थायी भाव** — शोक

**आलम्बन** — विनष्ट पति

**आश्रय** — नवोढ़ा नायिका

**उद्दीपन** — मुँकुट का बधना, हल्दी के हाथ होना लाज के बोल का खुलना आदि।

**अनुभाव** — वायु से आहत लतिका के समान नायिका का बेसहारे पड़े रहना।

**संचारी भाव** — विषाद, स्मृति, जड़ता आदि।

**टिप्पणी**— विप्रलम्भ शृंगार एवं करुण रस में अन्तर—यद्यपि दुख का अनुभव वियोग शृंगार में भी होता है, तथापि वहाँ मिलने की आशा भी बँधी रहती है। किन्तु करुण रस में मिलने की सम्भावना पूर्ण रूप से समाप्त हो जाती है।

**4. वीर रस**— युद्ध, दया, दान आदि कार्यों को करने के लिए हृदय में जो उत्साह जाग्रत होता है। उससे वीर रस की निष्पत्ति होती है। वीर रस के चार भेद माने जाते हैं।

1. युद्ध वीर, 2. दान वीर, 3. धर्मवीर, 4. दया वीर।

**उदाहरण—**

फहरी ध्वजा फड़की भुजा, बलिदान की ज्वाला उठी।

निज मातृभूमि के मान में, चढ़ मुण्ड की माला उठी॥

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव — उत्साह**

**आलम्बन —** मातृभूमि की रक्षा का विषय

**आश्रय —** देश भक्त

**उद्दीपन —** ध्वजाएँ लहराना, भुजाओं का फड़कना आदि।

**अनुभाव —** बलिदान होने की भावना

**संचारी भाव—** हर्ष गर्व आदि।

**5. रौद्र रस—** शत्रु की अपमान जनित चेष्टाओं, गुरु निन्दा, देश धर्म का अपकार और अपमान होने पर क्रोध स्थायी भाव से रौद्र रस निष्पन्न होता है।

**उदाहरण—**

उस काल मारे क्रोध के, तन काँपने उनका लगा।

मानों हवा के जोर से, सोता हुआ सागर जगा।।

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव—** क्रोध

**आलम्बन —** कौरव

**आश्रय —** अर्जुन

**उद्दीपन —** अभिमन्यु का शव

**अनुभाव —** हाथ मलना, मुख लाल होना, तन काँपना

**संचारी भाव —** उग्रता आदि।

**6. भयानक रस—** किसी भयानक अथवा अनिष्टकारी वस्तु या व्यक्ति को देखने, उससे संबधित वर्णन सुनने, स्मरण करने आदि से चित्त में जो व्याकुलता उत्पन्न होती है, उसे भय कहते हैं। भय स्थायी भाव के जाग्रत और उद्दीपन होन पर जिस रस की निष्पत्ति होती है, उसे भयानक रस कहते हैं।

**उदाहरण—**

“एक ओर अजगरहि लखि, एक ओर मृग राय।

बिकल बटोही बीच हीं, पर्यो मूर्च्छा खाय।

**स्पष्टीकरण—**

स्थायी भाव — भय

आलम्बन — अजगर एवं सिंह

आश्रय — पथिक (विकल बटोही )

उद्दीपन — अजगर एवं सिंह का दोनों ओर से घेरना।

अनुभाव — पथिक का विकल या मूर्च्छित हो जाना।

संचारी भाव — त्रास, भय, दैन्य, अपस्मार आदि।

7. **वीभत्स रस**— रूधिर, मांस, नैतिक पतन आदि घृणित वस्तुओं को देखकर या सुनकर उत्पन्न हुई, जुगुप्सा स्थायी भाव से “वीभत्स रस” निष्पन्न होता है।

**उदाहरण—**

कहूँ शृंगार कोउ मृतक, अंग पर घात लगावत।

कहूँ कोउ सब पर बैठि, गिद्ध चट चोंच चलावत।

जहँ-तहँ मज्जा, मांस, रूचिर लखि परत बगारे।

जित-तिन छिटके हाड़, सेत कहूँ रतनारे।।

**स्पष्टीकरण—**

स्थायी भाव — जुगुप्सा

आलम्बन — श्मशान

आश्रय — मज्जा, मांस आदि

अनुभाव — नाक भौ सिकोड़ना, थूकना आदि।

संचारी भाव — र्लानि आदि

8. **अद्भुत रस**— किसी विचित्र और अभूतपूर्व असाधारण वस्तु को देखकर हृदय में जो एक प्रकार का अचरज भाव उत्पन्न होता है, उसे आश्चर्य कहते हैं। इसी ‘आश्चर्य’ स्थायी भाव से अद्भुत रस निष्पन्न होता है।

**उदाहरण—**

दिख रावा मातुह निज, अद्भुत रूप अखंड।

रोम-रोम प्रति राजही, कोटि-कोटि ब्रह्मांड।

गइ जननी सिसु पहाँ भयभीत, देखा बाल तहाँ पुनि सूता।

बहुरि आइ देखा सुत सोई, हृदय कंप, मन धीर न होई।।

इहाँ-उहाँ दुई बालक देखा, मति भ्रम मोरि कि आन बिसेखा।

तन पुलकित मुख वचन न आवा, नैन मूँदि चरनन सिर नावा।।

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव** — आश्चर्य

**आलम्बन** — बालक रामचन्द्र

**आश्रय** — कौशल्या

**उद्दीपन** — भगवान का विराट रूप

**अनुभाव** — कौशल्या का पुलकित होना, वचन न निकलना, आंखें बंद करके राम के चरणों में सिर झुकाना।

**संचारी भाव** — जड़ता, भ्रांति, वितर्क आदि।

**9. शांत रस—** संसार और शरीर की नश्वरता से चित्त में एक विशेष प्रकार की उदासीनता उत्पन्न होती है और भौतिक वस्तुओं से विराम हो जाता है। ऐसी मनः स्थिति को 'निर्वेद' कहते हैं। इसी निर्वेद स्थायीभाव से शान्त रस निष्पन्न होता है।

**उदाहरण—**

अब लौं नसानी अब ना नसैहों।

रामकृपा भवनिसा सिरानी, जागे फिर न डसैहों॥

स्याम रूप रुचिर कसौटी, चित कंचनहि कसैहों।

परबस जानि हँस्यों इन इन्द्रिय, निज बस है न हसैहों।

मन मधुकर पान करी तुलसी, रघुपति पद-कमल बसैहों॥

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव** — निर्वेद

**आलंबन** — संसार की असारता का ज्ञान, परमात्मा का चिन्तन

**आश्रय** — गोस्वामी तुलसीदास

**उद्दीपन** — ऋषियों का आश्रम, तीर्थ स्थान, शास्त्रों का अनुशीलन एवं श्रवण, सत्संग, एकान्त स्थान।

**अनुभाव** — अलौकिक प्रसन्नता, एकान्त प्रियता, गद्गद होना, अश्रु विसर्जन

**संचारी भाव—** हर्ष, निर्वेद, धृति, स्मरण आदि।

**10. वात्सल्य रस—** छोटे बच्चों के सौन्दर्य, उनकी चेष्टाओं आदि को देखकर मन में जो स्नेह भाव उत्पन्न होता है, उसी से वात्सल्य रस निष्पन्न होता है। इसका स्थायी भाव पुत्र-पुत्री

विषयक स्नेह होता है। वात्सल्य रस के दो भेद माने जाते हैं। 1. संयोग वात्सल्य 2. वियोग वात्सल्य जब माता-पिता के समीप रहते हुए पुत्र या पुत्री के प्रति स्नेह भाव उत्पन्न होता है, तो संयोग वात्सल्य निष्पन्न होता है। इसके विपरीत पुत्र-पुत्री के दूर होने की स्थिति में माता-पिता की जो प्रेम विह्वलता होती है उससे वियोग वात्सल्य निष्पन्न होता है।

**उदाहरण—**

**(क) संयोग वात्सल्य रस—**

कबहुँ ससि मांगल आरि करें, कबहुँ प्रतिबिम्ब निहारि डरै।  
कबहुँ करताल बजाइ के नाचत, मातु सबै मन मोदभरै॥  
कबहुँ रिसिआइ कहै हठि कै, पुनि लेत सोई जेहि लागी अरै।  
अवधेश के बालक चारि सदा, तुलसी मन मंदिर में बिहरै।

**स्पष्टीकरण—**

**स्थायी भाव —** वत्सलता

**आलम्बन —** बालक राम

**आश्रय —** कौशिल्यादि माताएँ

**उद्दीपन —** बालक राम द्वारा शशि-माँगना, हाथों से ताली बजाकर नाचना आदि वात्सल्य की क्रीडाएँ।

**संचारी भाव—** गर्व, हर्ष, आदि।

**(ख) वियोग वात्सल्य रस—**

संदेसो देवकी सौ कहियौ।  
हौं तो धाय तिहारे सुत की-कृपा करत ही रहियो॥  
जदपि टेव तुम जानति उनकी, तऊ मोहिं कहि आवै।  
प्रातः होत मेरे लाल लड़ैतैं, माखन रोटी भावै॥  
जोड़-जोड़ माँगत सोई-सोई देती-क्रम-क्रम करि कैन्हाते॥  
तेल उबटनौ अरु तातों जल, ताहि देखि नाजि जाते॥  
सूर, पथिक सुनि, मोहिं रैन दिन, बढ़यौ रहत उर सोच।  
मेरौ अलक लड़ैतो मोहन है है करत संकोच॥

**स्पष्टीकरण-**

**स्थायी भाव** – वत्सलता

**आलंबन** – बालक कृष्ण

**आश्रय** – माता यशोदा

**उद्दीपन** – माता यशोदा द्वारा पूर्व में बालक कृष्ण को उबटन, तेल, माखन-रोटी आदि श्रीकृष्ण की इच्छाएँ पूरी करना।

**अनुभाव** – उद्धव के द्वारा देवकी के प्रति यशोदा के मर्म वचन

**संचारी भाव** – क्षोभ-स्मृति आदि।





# अलंकार

**परिभाषा-** अलंकार का शाब्दिक अर्थ है- आभूषण, सजावट या शृंगार।

काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्त्व को अलंकार कहते हैं। अलंकार के मुख्यतः दो भेद होते हैं-1. शब्दालंकार 2. अर्थालंकार

**1. शब्दालंकार-** शब्दालंकार वे अलंकार हैं, जहाँ शब्द विशेष के ऊपर अलंकार की निर्भरता हो। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि काव्य में शाब्दिक सौंदर्य की वृद्धि करने वाले तत्त्व को शब्दालंकार कहा जाता है।

**1. अनुप्रास अलंकार-** जहाँ पर रस के अनुकूल एक ही वर्ण की आवृत्ति दो या दो से अधिक बार होती है, वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है।

**उदाहरण-**

‘चारु चंद्र की चंचल किरणे-खेल रहीं हैं जल थल में।’

**स्पष्टीकरण-** उपरोक्त छंद में ‘च’ वर्ण की आवृत्ति होने के कारण अनुप्रास अलंकार है।

**टिप्पणी-** अनुप्रास अलंकार के पाँच भेद होते हैं 1. छेकानुप्रास 2. वृत्यानुप्रास 3. लाटानुप्रास 4. श्रुत्यानुप्रास 5. अन्त्यानुप्रास

**2. यमक अलंकार-** (यमक का अर्थ है- युग्म या जोड़ा) जहाँ एक शब्द की आवृत्ति दो या दो से अधिक बार होती है किन्तु उनके अर्थ भिन्न हों, वहाँ यमक अलंकार होता है। दूसरे शब्दों में यमक अलंकार का मूलाधार शब्दावृत्ति के साथ अर्थ की विभिन्नता है।

**उदाहरण-**

‘काली घटा का घमण्ड घटा।’

**स्पष्टीकरण-** उपरोक्त छंद में शब्दावृत्ति के साथ अर्थ की भिन्नता है। अतः यहाँ यमक अलंकार है।

कनक कनक तै सौ गुनी, मादकता अधिकाय।

वा खाए बौराइ जग, या पाये बौराय॥

**श्लेष अलंकार-** (श्लेष का शाब्दिक अर्थ है- चिपका हुआ) जब किसी कविता में एक शब्द का प्रयोग एक बार हो और उसके दो या दो से अधिक अर्थ हों, तब श्लेष अलंकार होता है।

**उदाहरण-**

“चरन धरत चिन्ता करत, चितवत चारिहुँ ओर।

‘सुबरन’ को खेजत फिरत, कवि, व्यभिचारी चोर।।”

उक्त छंद में ‘सुबरन’ शब्द शिलष्ट पद है, जिसके तीन अर्थ हैं- सुन्दर वर्ण, सुन्दर स्त्री, सुवर्ण या सोना। अतः यह श्लेष अलंकार का उदाहरण है।

“चिरजीवों जोरी जु रै, क्यों न सनेह गम्भीर।

को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर।।”

**अर्थालंकार**

**परिभाषा-** अर्थालंकार वे अलंकार हैं, जो शब्द की अपेक्षा उसके अर्थ पर आश्रित होते हैं, किसी शब्द के परिवर्तित कर दिए जाने पर भी अलंकार बना रहता है, क्योंकि इस अलंकार का सौन्दर्य अर्थगत होता है। दूसरे शब्दों में काव्य के अर्थ में सौंदर्य बढ़ाने वाले तत्त्व को अर्थालंकार कहते हैं।

प्रमुख अर्थालंकारों का परिचय-

**1. उपमा अलंकार**

**परिभाषा-** जहाँ उपमेय की तुलना उपमान से की जाती है, वहाँ उपमा अलंकार होता है।

**उदाहरण-**

उधर गरजती सिंधु लहरियाँ, कुटिल काल के जालों-सी।

चली आ रहीं फेन उगलती, फन फैलाये व्यालों सी।।

**स्पष्टीकरण-** उपर्युक्त पंक्ति में समुद्र की उँची उठती हुई टेढ़ी लहरों की तुलना, विषैले सर्पों के फन फैलाये हुए टेढ़ी चाल से तथा उन लहरों के ऊपर छाये हुए झाग की तुलना सर्पों के मुख से निकलने वाले झाग (सफेद पदार्थ) से की गयी है। अतः आकृति, गुण आदि में साम्य होने के कारण यहाँ उपमा अलंकार है।

2. उपमा के चार तत्त्व होते हैं:-

**(क)** उपमेय (उपमा देने के योग्य) उपमेय उस प्रस्तुत या उपस्थित वस्तु अथवा व्यक्ति को कहते हैं, जो वर्णनीय हो और जिसको स्पष्ट करने के लिए किसी दूसरी परिचित वस्तु या व्यक्ति के साथ जिसकी तुलना की जाय (समानता प्रदर्शित करना)।

**उदाहरण—** कृष्ण के नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं।

**स्पष्टीकरण—** विवेच्य उदाहरण में कृष्ण के नेत्र उपमेय है, जिसकी समानता कमल पुष्प से प्रदर्शित है।

**(ख) उपमान—** जिस अनुपस्थित प्रसिद्ध वस्तु या व्यक्ति से उपमेय की तुलना या समानता की जाय, उसे उपमान कहते हैं। उपमान को सुपरिचित, व्यापक और अविद्यमान होना चाहिए।

**उदाहरण—** कृष्ण के नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं, विवेच्य उदाहरण में नेत्र की समानता कमल से दिखलायी गयी है, इसलिए कमल उपमान है।

**(ग) साधारण धर्म—** (लक्षण या गुण) जिस गुण, लक्षण या विशेषता के आधार पर 'उपमेय' और उपमान में समानता प्रदर्शित की जाय उसे साधारण धर्म कहते हैं।

**उदाहरण—** कृष्ण के नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। विवेच्य उदाहरण में सुन्दरता पद के आधार पर नेत्र और कमल में समानता प्रदर्शित की गयी है। इस 'सुन्दर' पद यहाँ सामान्य या साधारण धर्म है।

**(घ) वाचक शब्द—** उपमेय और उपमान की तुलना या समानता को प्रगट करने वाले 'वाचक' कहा जाता है।

**उदाहरण—** कृष्ण के नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। विवेच्य उदाहरण में उपमेय कृष्ण और 'उपमा कमल' के मध्य समानता सूचित करने वाला 'समान' पद है। अतः यह 'वाचक' शब्द का उदाहरण है।

**कुछ अन्य वाचक शब्द—** सदृश, सम, समान, तुल्य, सा, सी से, सरिस इत्यादि।

**टिप्पणी—** उपमा के चारो तत्त्वों को निम्नलिखित छंदों के माध्यम से सुगमतापूर्वक समझा जा सकता है।

“जाकी तुलना कीजिये, सोई है उपमेय।  
है सोई उपमान नित, जासो समता देय  
तुलना जासो प्रगटिये, है वाचक पद सोई।  
जा को गहि समता करिय, धरम उभयगत होई।”

**उदाहरण—** (1) 'पीपर पात सरिस मन डोला'

**स्पष्टीकरण—**

**उपमेय —** मन

**उपमान —** पीपर पात (पीपल का पत्ता)

**साधारण धर्म —** डोला

**वाचक शब्द —** सरिस

(2) “हाय ! फूल सी कोमल बच्ची हुई राख की ढेरी।”

## 2. रूपक अलंकार

**परिभाषा-** (रूपक का अर्थ है- रूप का करना अथवा सीधा आरोप करना)- जहाँ उपमान का सम्पूर्ण रूप उपमेय में चित्रित हो और केवल सादृश्य हो का भाव न हो, वरन् एक-रूपता के साथ ही अभेद का भाव भी हो अथवा जहाँ उपमेय पर उपमान का सीधा आरोप हो वहाँ रूपक अलंकार होता है।

**उदाहरण-** बीती विभावरी जाग री,

अम्बर पनघट में डुबो रही, ताराघट उषा नागरी।

**स्पष्टीकरण-** आकाश रूपी पनघट में उषा रूपी, स्त्री तारा रूपी घड़े को डुबो रही है। उपरोक्त पंक्ति में अम्बर (आकाश) पर पनघट का, उषा पर स्त्री का और तारों पर घड़े का अभेद आरोप होने के कारण रूपक अलंकार है।

**अन्य उदाहरण-** “चरण कमल वंदौ हरिराई।”

## 3. उत्प्रेक्षा अलंकार

**परिभाषा-** जहाँ उपमेय (प्रस्तुत) में प्रसिद्ध उपमान (अप्रस्तुत) की संभावना प्रगट की जाती है, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। (उत्प्रेक्षा का अर्थ होता है- अनुमान या संभावना प्रगट करना)

**विशेष-** उत्प्रेक्षा अलंकार के वाचक पद हैं- मनु, मनौ, मानौ, मनुहुँ, ज्यों, जानो, जानहुँ, जनु।

**उदाहरण-**

(1) ‘सोहत ओढ़े पीत-पट, स्याम सलौने गात।

मनहुँ नीलमणि सैल पर आतपु परयौ प्रभात।।’

**स्पष्टीकरण-** उपर्युक्त छंद में उपमेय कृष्ण के सुन्दर शरीर पर पीताम्बर धारण करने की सुन्दरता में, उपमान-नीलमणि पर्वत पर पड़ती हुई प्रातःकालीन धूप के सौन्दर्य की संभावना व्यक्त की गयी है, तथा संभावना को व्यक्त करने के लिए मनहुँ उत्प्रेक्षावाची पद का प्रयोग करने के कारण विवेच्य उदाहरण में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(2) चमचमात चंचल नयन, विच धूँघट पट झीन।

मानहुँ सुरसरिता विमल जल उछरत जुग मीन।

## 4. संदेह अलंकार

**परिभाषा-** जहाँ उपमेय में उपमान की संशय या आशंका हो, वहाँ संदेह अलंकार होता है।

**उदाहरण-**

- (1) कैधो व्योमवीथिका भरे है भूरि धूमकेतु,  
वीर-रस बीर तरवारि सी उघारी है॥  
तुलसी सुरेस चाप, कैधों दामिनी-कलाप।  
कैधों चली मेरु ते कृसानु-सरि भारी है॥

**स्पष्टीकरण**—उपर्युक्त पंक्तियों में लंका दहन के वर्णन में हनुमान जी की जलती पूँछ को देखकर लंकावासियों को यह निश्चित ज्ञान नहीं हो पा रहा है कि, यह हनुमान जी की जलती हुई पूँछ है या आकाश मार्ग में अनेक पुच्छल तारे भरे हैं अथवा वीर पुरुष अपनी चमकती हुई तलवार म्यान से निकाली है अथवा इन्द्र धनुष है या बिजली की तड़क है, या सुमेरु पर्वत से अग्नि की सरिता बह चली है। अतः विवेच्य उदाहरण में उपमेय में उपमान का संशय होने के कारण संदेह अलंकार है।

- (2) आयी है वीरता तपोवन में क्या पुण्य कमाने को?  
या सन्यास साधना में है दैहिक शक्ति जगाने को?

### 5. भ्रान्तिमान अलंकार

**परिभाषा**—जहाँ सादृश्य या समानता के कारण उपमेय को भ्रमवश उपमान समझ लिया जाय, वहाँ भ्रान्तिमान अलंकार होता है।

उदाहरण— (1) पाय महावर दैन कौ, नाइनि बैठी आइ।  
फिरि फिरि जानि महावरि, एड़ी मीड़ति जाइ॥

**स्पष्टीकरण**—उपर्युक्त पंक्ति में नाइन को नायिका की एड़ी की स्वाभाविक लालिमा में महावर की काल्पनिक प्रतीति के कारण भ्रम होने के कारण भ्रान्तिमान अलंकार है।

- (2) नाक का मोती अधर की कांति से,  
वीज दाड़िम का समझ कर भ्रांति से।  
देखकर सहसा हुआ शुक मौन है।  
सोचता है अन्य मह शुक कौन है।  
या संयास साधना में है दैहिक शक्ति जगाने को?

**टिप्पणी**—संदेह एवं भ्रान्तिमान अलंकार में अन्तर-संदेह अनिश्चयात्मक होता है, जबकि भ्रान्तिमान निश्चयात्मक होता है।

### 6. अन्वय अलंकार

**परिभाषा**—जिस कविता की पंक्ति में उपमान के अभाव में उपमेय को ही उपमान मान लिया जाय, वहाँ अन्वय अलंकार होता है।

**उदाहरण-** (1) “निरूपम न उपमा आन राम समानु राम, निगम कहे।”

**स्पष्टीकरण-** उपर्युक्त छन्द में उपमेय राम को ही उपमान कहा जाने के कारण अन्वय अलंकार है।

(2) ‘राम से राम, सिया सी सिया’।

## 7. प्रतीप अलंकार

**परिभाषा-** जहाँ उपमेय को उपमान से श्रेष्ठ बताया जाय और कारण न दिया हो, वहाँ प्रतीप अलंकार होता है।

**उदाहरण-** (1) बहुरि विचार कीन्ह मनमाही। सीय बदन सम हिमकर नाहीं॥

**स्पष्टीकरण-** उपर्युक्त छंद में उपमेय सीता के मुख की सुन्दरता को उपमान चन्द्रमा की कान्ति से श्रेष्ठ बताया गया है। अतः विवेच्य उदाहरण में प्रतीप अलंकार है।

(2) उतरि नहाये जमुन जल जो शरीर सम श्याम।

## 8. दृष्टांत अलंकार

**परिभाषा-** जहाँ उपमेय वाक्य एवं उपमान वाक्य में साधारण धर्मों में बिंब-प्रतबिंब भाव हो, तो वहाँ दृष्टांत अलंकार होता है।

**उदाहरण-**

(1) रहिमन अँसुआ नयन ढरि, जिय दुख प्रगट करेइ।

जाहि निकारयौ गेह ते, कस न भेद कहि देइ॥

(2) बहुत तारे थे अंधेरा कब मिटा, सूर्य का आना हुआ जब तब मिटा।

**स्पष्टीकरण-** उपर्युक्त पंक्ति में प्रथम वाक्य की सत्यता प्रमाणित करने के लिए द्वितीय वाक्य दृष्टांत रूप में कथित है, तथा दोनों के मध्य बिंब प्रतिबिंब भाव है। अतः विवेच्य उदाहरण में दृष्टांत अलंकार है।

## 9. अतिशयोक्ति अलंकार

**परिभाषा-** जहाँ किसी बात को बहुत इतना बढ़ा-चढ़ाकर कह दिया जाय कि वह सीमा या मर्यादा का उल्लंघन कर दे, वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है। (अतिशयोक्ति शब्द, अतिशय + उक्ति के संयोग से बना, जिसका अर्थ है किसी बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहना।)

**उदाहरण-**

(1) पानि परात को हाथ छुओ नहि,

नैनन के जल सो पग धोये॥

(2) विधि हरि हर कवि कोबिद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी॥

यहाँ पर सुदामा के विवाईयुक्त पैर को भगवान श्रीकृष्ण ने अपने आँसुओं से ही धो दिए जो कि सम्भव नहीं है, इसलिए अतिशयोक्ति अलंकार है।

## छंद

**परिभाषा-** काव्य का वह रूप जो उसे समुचित आकार प्रदान करे उसे छंद कहते हैं। पारिभाषित तौर पर कहा जा सकता है कि 'काव्य की लयात्मक प्रवृत्ति' ही छंद है। छंद शास्त्र को 'पिंगलशास्त्र' भी कहते हैं, क्योंकि इसके आदि प्रणेता 'पिंगल ऋषि' माने जाते हैं।

## छंद के तत्त्व (अंग)

चरण/पद/पाद	वर्ण या मात्रा	संख्या एवं क्रम	गण	यति/विराम	गति	तुक
------------	----------------	-----------------	----	-----------	-----	-----

**चरण/पद/पाद-** छंद के प्रायः चार भाग होते हैं। इनमें से प्रत्येक को चरण कहते हैं। दूसरे शब्दों में छंद के चतुर्थांश (चतुर्थ भाग) को चरण कहते हैं। चरण दो प्रकार के होते हैं—1. समचरण 2. विषम चरण। प्रथम व तृतीय चरण को 'विषम चरण' तथा द्वितीय व चतुर्थ चरण को 'समचरण' कहते हैं। कुछ छंदों में चार चरण होते हैं। लेकिन वे लिखे दो ही पंक्तियों में जाते हैं, जैसे—दोहा, सोरठा।

**वर्ण या मात्रा-** वर्ण दो प्रकार के होते हैं— 1. ह्रस्व वर्ण 2. दीर्घ वर्ण।

ह्रस्व वर्ण को 'लघु' और दीर्घ को 'गुरु' कहा जाता है। लघु वर्ण की एक मात्रा और गुरु वर्ण पर दो मात्रा की गणना होती है। किसी वर्ण या ध्वनि के उच्चारण-काल को 'मात्रा' कहते हैं। 'मात्रा' केवल स्वर की होती है। लघु मात्रा का चिह्न ह्रस्व (।) और दीर्घ मात्रा का चिह्न गुरु (ऽ) होता है।

**संख्या एवं क्रम-** वर्णों और मात्राओं की गणना को 'संख्या' कहते हैं। लघु-गुरु के स्थान निर्धारण को क्रम कहते हैं। वर्णित छंदों के सभी चरणों में संख्या (वर्णों की) और क्रम (लघु-गुरु) दोनों समान होते हैं, जबकि मात्रिक छंदों के सभी चरणों में संख्या (मात्राओं की) तो समान होती है, लेकिन क्रम (लघु-गुरु) समान नहीं होते हैं।

**यति/विराम-** छंदों में नियमित वर्ण या मात्रा पर साँस लेने के लिए रुकना पड़ता है। इसी रुकने के स्थान को यति या विराम कहते हैं। छोटे छंदों में साधारणतः यति चरण के अंत में होती है, पर बड़े छंदों में एक ही चरण में एक से अधिक यति या विराम होते हैं। यति का निर्देश प्रायः छंद के लक्षण में ही दे दिया जाता है।

**गति-** गति यति का विलोम होता है। परंतु छंद में यति और गति एक साथ रहती है। जहाँ यति न हो वहाँ बिना अटके या बिना रुके छंद का पाठ करने से गति निर्मित होती है। छंद में लय के साथ एक प्रवाह रहता है। यही प्रवाह गति कहलाता है।

**तुक-** छंद के चरणांत की अक्षर-मैत्री (समान स्वर एवं व्यंजन की स्थापना) को तुक कहते हैं। जिस छंद के अंत में तुक हो, उसे तुकांत छंद और जिसके अंत में तुक न हो उसे 'अतुकांत छंद' कहते हैं।

**गण (समूह)-** लघु-गुरु के नियत क्रम से तीन वर्णों के समूह को गण कहा जाता है। “यमाता राज भान सलगा” सूत्र के आधार पर गणों की संख्या आठ है। वर्णिक छंदों की पहचान इन्हीं गणों के आधार पर होती है।

सूत्र से गण प्राप्त करने की विधि

नाम	सूत्र संकेत	मात्राएँ	उदाहरण
यगण	यमाता	S S	यशोदा
मगण	मातारा	S S S	माता जी
तगण	ताराज	S S	तालाब
रगण	राजभा	S   S	रामजी
जगण	जभान	S	जवान
भगण	भानस	S	भारत
नगण	नसल		नमन
सगण	सलगा	S	सलमा

**छन्द के भेद-** मात्रा और वर्ण के आधार पर छंद मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं।

**(अ)** मात्रा की गणना पर आधारित छन्द ‘मात्रिक छन्द’ कहलाते हैं। इनमें वर्णों की संख्या भिन्न हो सकती है, परन्तु उनमें निहित मात्राएँ नियमानुसार होनी चाहिए। मात्रिक छंद के तीन भेद होते हैं। 1. सममात्रिक छंद 2. अर्द्धसममात्रिक छंद 3. विषममात्रिक छंद



तब 'सोरठा' सगेय यह रसाल भाषै सुमति ।।

## उदाहरण-

IIII    IIS SI    III    III    IIII    IS  
 रहिमन पुतरी स्याम, मनहुँ जलज मधुकर लसै।  
 SS    SII    SI    SS    S IIS IS  
 कैधों सालिक ग्राम, रूपे के अरधा धरै॥

## 4. रोला छंद

**परिभाषा-** ग्यारह और तेरह मात्राओं पर विराम के साथ यह चौबीस मात्राओं का सम मात्रिक छंद है। चरणांत में गुरु वर्ण के रखने से इसकी गति अच्छी रहती है।

## लक्षण-

जाकै प्रति पद माँहि कला चौबीस गनि राखै।  
 ग्यारह तेरह पर विराम रोला कवि भाखै॥

## उदाहरण-

II IIII II SI SI S IIS SII  
 नव उज्ज्वल जल धार, हार हीरकसी सोहत।  
 II II IIII SI II SI IS II SII  
 बिच-बिच छहरत बूँद, मध्य मीन मुक्तामन मोहत।  
 S I III II III II S II II SII  
 लोल लहर लहि पवन, एक पे इक इनि आवत।  
 II IIII II III IS II III IS II  
 जिमि नरगन मन विविध, मनोरथ करत मिटावत।

## 5. बरवै छंद

**परिभाषा -** बारह एवं सात की यति पर उन्नीस मात्राओं से संयुक्त छंद बरवै कहलाता है। इसके विषम चरणों में बारह-बारह एवं सम चरणों में सात-सात मात्राएँ होती हैं।

**लक्षण -** प्रथम तीसरे चरण में बारह मात्रा देय, पुनि दूसरे चरण बस सातहि धरि देय।  
 दूजे, चौथे चरण में अंत जगन पुनि राखि, करुन विरह बरबा भलो कह रसाल दै राखि।

## उदाहरण-

SII IIS II II III IS I  
 चंपक हरवा अँग मिलि, अधिक सुहाय।  
 S I IS II IIS II IIS I  
 जानि परै सिय हियरे, जब कुभिलाय॥

## 6. कुंडलिया छंद

**परिभाषा-** यह विषम अर्द्ध सम मात्रिक छंद है। इसमें छह पंक्तियाँ होती हैं। आदि में एक दोहा और बाद में एक रोला जोड़कर कुंडलिया छंद बनता है। जिस शब्द से इस छंद का प्रारंभ होता है, उसी शब्द से इसका अंत भी होता है। दोहे का चौथा चरण रोला के प्रथम चरण का भाग होकर आता है।

### लक्षण-

धरि दोहा पुनि राखिये, रोला के पद चार।  
आदि अन्त में बरन सम, राखिय यही विचार॥  
दोहे को चौथे चरण, धरि रोला के पूर्व।  
कुंडलिया तब होइ है, मिश्रित छंद अपूर्व।

### उदाहरण-

S S S I I S I S I I S I I I S I  
साई बैर न कीजिए, गुरु पंडित कवि यार।  
S S I I S S I S I S I I S I  
बेता बनिता पौरिया, यज्ञ करावन हार  
I S I S I I S I S I I S S S  
यज्ञ करावन हार, राजमंत्री जो होई।  
I I I S S S S I S I S I S S  
विप्र पड़ोसी वैद्य, आपुनौ तपै रसोई।  
I I I I I I S I I I S I I I S S  
कह गिरिधर कविराय, जुगत सो यह चलि आई।  
I I S I I S I I I S I I S S S S  
इन तेरह को तरह, दिए बनि आवै साई॥

## 7. हरिगीतिका छंद

**परिभाषा** – सोलह और बारह की यति के साथ अट्ठाइस मात्राओं वाले छंद को हरिगीतिका छंद कहते हैं।

**लक्षण** – चार बार सात मात्रा वाले 'हरिगीतिका' शब्द के रखने या कहने से यह छंद बन जाता है। इसका नाम ही लक्षण या संकेत देने वाला है।

जैसे- हरिगीतिका, हरिगीतिका, हरिगीतिका, हरिगीतिका,

उदाहरण-

SS | IIII S | IIS II | S SS | S  
 अन्याय सहकर बैठ रहना, यह महा दुष्कर्म है।  
 SS | IIS S | S S S | SS IS S  
 न्यायार्थ अपने बंधु को भी, दण्ड देना धर्म है।

## वार्षिक छंद

### 1. इंद्रवज्रा

इंद्रवज्रा छंद के प्रत्येक पंक्ति में ग्यारह वर्ण होते हैं। इसका गणात्मक क्रम है तगण, तगण, जगण एवं अंत में दो गुरु वर्ण है।

**लक्षण-** हो इंद्रवज्रा त त जगणों से। दो दीर्घ वर्णांत रखे कहीं जो॥

उदाहरण-

SS | S S | IS | S S  
 संसार है एक महाब्धि खारा।  
 S S IS S | IS | S S  
 है तो यही देह जहाज न्यारा।  
 S S | S S | IS | SS  
 जो धर्म को पाल न पास होगा।  
 S S ISS | IS | S S  
 कैसे महासागर पार होगा॥

### 2. उपेन्द्रवज्रा छंद

**परिभाषा-** उपेन्द्रवज्रा छंद की प्रत्येक, पंक्ति में ग्यारह वर्ण होते हैं। इसका गणात्मक क्रम है- जगण, तगण, जगण और दो गुरु वर्ण।

**लक्षण-** जता जगाकर प्रभु प्रनाम।  
 उपेन्द्रवज्रा छंद बना मनोहर॥

उदाहरण-

IS | S S | IS | S S  
 मुझे नहीं ज्ञात कि मैं कहाँ हूँ।  
 IS | S S | IS | S S  
 अरे ! यहाँ हूँ अथवा वहाँ हूँ।

| S | S | S | | S | S | S

विचारता किन्तु यहीं यहाँ हूँ।

| S | S | S | | S | S | S

नहीं वहाँ क्या तुम मैं जहाँ हूँ।

### 3. सवैया

बाइस से छब्बीस वर्णों तक के चार चरणों वाले छंद को सवैया छंद कहते हैं। इसके अनेक भेद हैं, जिनमें से मत्तगयन्द एवं सुमुखी की परिभाषा, लक्षण और उदाहरण निम्नवत हैं-

### 4. मत्तगयंद (सवैया) छंद

**परिभाषा** – मत्तगयंद सवैया छंद की प्रत्येक पंक्ति में 7 भगण और दो गुरुओं के योग से कुल 23 वर्ण होते हैं।

**लक्षण** – सात भगण अंत गुरु वर्ण, रचि बना मत्तगयंद सवैया।

**उदाहरण** –

S | | S | | S | | S | | S | | S | | S S

सेस महेस गनेस सुरेस निदेसहुँ जाहि निरन्तर गावैं।

S || S | | S | S || S | S || S | | S S

नारद से सुक व्यास रहैं पचि हार तऊ पुनि पार न पावैं।

S | | S | | S | | S | | S | | S | | S S

जाहि अनादि अनंत अखण्ड अहेद अभेद सुबेद बतावैं।

S | | S | | S | S | | S | | S | | S | | S S

ताहि अहीरन छोहरियाँ छछिया भरि छाछन नाचे नचावैं॥

### 5. सुमुखी (सवैया)

**परिभाषा** – सुमुखी छंद में चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 23 वर्ण होते हैं। सात जगण (|S|) एवं अंत में एक लघु और एक गुरु होते हैं।

**उदाहरण** –

| S | | S | | S || S | | S | | S | | S | | S

जु लोग लगैं सिय समहि साथ चलै वन माहि फिरे न चहैं।

| S || S | | S | | S || S S | | S | | S

हमें प्रभु आयसु देहु चलें रउरे यों करि जोरि करैं।

।S ।। S। ।S ।।S। ।S ।। S। ।S ।S

चलें कछु दूरि नमै पगधूरि भले फल जन्म अनेक लहैं।

।S ।।S ।। S। ।S ।। S।। S ।।S ।।S

सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हें बहु भाँतिनि ते समुझाइ रहैं॥

## 6. वसंततिलका

**परिभाषा-** वसंततिलका छंद की प्रत्येक पंक्ति में चौदह वर्ण होते हैं। इसका गणात्मक क्रम इस प्रकार है- तगण, भगण, जगण, जगण एवं अंत में दो गुरु वर्ण होते हैं।

**लक्षण-** अति सुखद सुगोय, वसंततिलका रचित तभणजगण।

**उदाहरण-**

S S । S । ।। S ।। S ।SS

हे चारु चन्द्र नभ मण्डल के बिहारी।

S S ।S ।। ।S । ।S ।SS

चालै भली कुछ कदापि नहीं तुम्हारी।

SS ।S ।। ।S ।। S। S S

देते बड़ा दुःख सदा तुम कोक को हो।

S S । S। ।।S ।। S। S S

उद्दीप्त नित्त करते तुम शोक को हो॥

## 7. मनहर कवित्त

**परिभाषा-** मनहरण को घनाक्षरी छंदों का सिरमौर कहा जाता है। चार पदों वाले इस छंद में प्रत्येक पद में कुल 31 वर्ण होते हैं। यह एक वार्णिक छंद है। 16, 15 वर्णों पर यति होती है। पदांत हमेशा दीर्घ वर्ण ही होता है।

**उदाहरण-**

मैं निज अलिंद में खड़ी थी सखि, एक रात,

रिमझिम बूँदे पड़ती थीं घटा छाई थी।

गमक रहा था केतकी का गंध चारों ओर,

झिल्ली झनकार यही मेरे मन भाई थी।

करने लगी मैं अनुकरण स्वनूपुरों से,

चंचला थी चमकी, घनाली घहराई थी।

चौंक देखा मैंने, चुप कोने में खड़े थे प्रिय,  
माई ! मुख लज्जा उसी छाती में छिपाई थी।

## अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. 'सिर पर बैठो काग, आँखि दोउ खात निकारत', उक्त पद में प्रयुक्त रस का नाम है—  
(क) वात्सल्य (ख) हास्य (ग) शांत (घ) वीभत्स
2. भयानक रस का स्थायी भाव है—  
(क) निर्वेद (ख) वत्सलता (ग) भय (घ) रति
3. आचार्यों ने संचारी भावों की संख्या निश्चित की है—  
(क) 33 (ख) 34 (ग) 35 (घ) 36
4. 'जुगुप्सा' स्थायी भाव है—  
(क) रौद्र रस का (ख) वीभत्स रस का  
(ग) भयानक रस का (घ) अद्भुत रस का
5. 'श्याम और सुंदर दोउ जोरी। निरखति छवि जननी तून तोरी।' उक्त पद में कौन सा रस है—  
(क) शांत रस (ख) वत्सल रस  
(ग) शृंगार रस (घ) करुण रस
6. 'कहूँ हाड़ परौ, कहूँ जरो अधजरो माँस, कहूँ गीध भीर नोचत अरी अहै।' उक्त पद में कौन सा रस है—  
(क) हास्य (ख) वीभत्स  
(ग) भयानक (घ) रौद्र
7. फहरी ध्वजा, फड़कीं भुजा, बलिदान की ज्वाला उठी।  
निज मातृभूमि के मन में, चढ़ मुण्ड की माला उठी।।  
उपर्युक्त पद में कौन सा रस है ?  
(क) शृंगार (ख) वीर  
(ग) शांत (घ) अद्भुत
8. हास्य रस का स्थायी भाव है—  
(क) हास (ख) भय  
(ग) जुगुप्सा (घ) रति
9. शृंगार रस का स्थायी भाव है—  
(क) विस्मय (ख) उत्साह (ग) रति (घ) हास

10. अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ । राम उठाय अनुज उर लायउ ।।  
सकहुँ न दुखित देखि मोहिं काऊ । बन्धु सदा तव मृदुल सुभाऊ ।।  
जौ जनतेऊँ बन बंधु बिछोहू । पिता बचन मनतेऊँ नहिं ओहू ।।  
उपर्युक्त पंक्तियों में कौन सा रस है—  
(क) अद्भुत (ख) करुण (ग) वीर (घ) शांत
11. वीभत्य रस का स्थायी भाव है—  
(क) उत्साह (ख) निर्वेद (ग) जुगुप्सा (घ) रति
12. 'इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा, मति भ्रम मोर कि आन बिसेखा' पद प्रयुक्त रस है—  
(क) शृंगार (ख) अद्भुत (ग) भक्ति (घ) शांत
13. 'ओचिन्ता की पहली रेखा, अरे विश्व वनकी व्याली' में अलंकार है—  
(क) यमक (ख) रूपक (ग) श्लेष (घ) प्रतीष
14. जहाँ उपमेय व उपमान के साधारण धर्म में भिन्नता धर्म में भिन्नता होते हुए भी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कथन किया जाए, वहाँ अलंकार होता है—  
(क) उत्प्रेक्षा (ख) संदेह (ग) दृष्टांत (घ) अतिशयोक्ति
15. 'विदग्ध होके कण धूलि राशि का, तपे हुए लौह कणों समान था।' उक्त पद में अलंकार है—  
(क) अनुप्रास (ख) यमक (ग) श्लेष (घ) उपमा
16. "वर्ण्य विषय को बहुत उत्कृष्ट दिखाने के क्रम में, उसके समान कोई अन्य है ही नहीं सूचित करने के लिए उपमेय को ही उपमान बना देना", किस अलंकार का लक्षण है—  
(क) प्रतीप (ख) भ्रान्तिमान (ग) अनन्वय (घ) संदेह
17. "जनक वचन छूये बिखा लजारु के से, वीर रहे सकल सकुचि सिखाय के।" उक्त पद में अलंकार है—  
(क) अनुप्रास (ख) यमक (ग) श्लेष (घ) उपमा
18. जहाँ उपमेय को उपमान और उपमान को उपमेय बन दिया जाय, वहाँ कौन सा अलंकार है—  
(क) प्रतीप (ख) अनन्वय (ग) भ्रान्तिमान (घ) संदेह
19. कनक कनक तैं सौ गुनी मादकता अधिकाइ ।  
उहिं खाएं बौराइए इहिं पाएं ही बौराइ ।।  
उपर्युक्त पद में अलंकार है—  
(क) रूपक (ख) उत्प्रेक्षा (ग) यमक (घ) श्लेष
20. जहाँ उपमेय में उपमान की कल्पना या सम्भावना की जाती है, वहाँ अलंकार होता है—  
(क) उपमा (ख) संदेह (ग) उत्प्रेक्षा (घ) श्लेष
21. उस काल मारे क्रोध के तनु काँपने उसका लगा ।  
मानो हवा के वेग से सोता हुआ सागर जगा ।



उपर्युक्त पंक्तियों में अलंकार है—

(क) उपमा (ख) संदेह (ग) प्रतीप (घ) उत्प्रेक्षा

22. 'बसन्ततिलका' छंद के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—

(क) 16 (ख) 18 (ग) 28 (घ) 14

23. 'प्रिय पति वह मेरा, प्राण प्यारा कहाँ है ? दुःख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है।' ये प्रयुक्त छंद है—

(क) मालिनी (ख) बसन्ततिलका (ग) इन्द्रवज्रा (घ) उपेन्द्रवज्रा

24. 'हरिगीतिका' छंद का प्रत्येक चरण में कितनी मात्राएँ होती हैं—

(क) 24 (ख) 28 (ग) 22 (घ) 26

25. 'सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखी सासु आन अनुसारी।' में छंद है—

(क) रोला (ख) सोरठा (ग) दोहा (घ) चौपाई

26. 'रोला' छंद के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—

(क) 22 (ख) 24 (ग) 26 (घ) 28

27. 'चम्पक हरवा अंग मिलि, अधिक सुहाय।

जानि परै सिय हियरै, जब कुँभिलाय।।

उक्त में छंद है—

(क) सोरठा (ख) रोला (ग) हरिगीतिका (घ) बरवै



# मुहावरा एवं लोकोक्ति

## मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ—

वाक्य का वह अंश जो सामान्य अर्थ का बोध न कराकर किसी विलक्षण (अलग) अर्थ को प्रतीत कराता है, वह मुहावरा कहलाता है। अर्थात् जब किसी शब्द-समूह का सामान्य अर्थ न लेकर उसका लाक्षणिक अर्थ लिया जाता है, तो उसे मुहावरा कहते हैं। (अभिधेयार्थ) मुहावरा का अर्थ है— अभ्यास या बातचीत।

‘लोकोक्ति’ शब्द ‘लोक’ और ‘उक्ति’ शब्दों के योग से बना है। लोक (संसार) में प्रचलित उक्ति को ही ‘लोकोक्ति’ या ‘कहावत’ कहा जाता है। कथन की पुष्टि अथवा उपदेश के लिए लोकोक्तियों का प्रयोग प्रभावी सिद्ध होता है। लोकोक्तियों में उनके व्यंजित अर्थ के साथ-साथ कोशगत अर्थ भी बना रहता है।

## मुहावरों एवं लोकोक्तियों में अंतर—

### मुहावरे

- 1 मुहावरे अपना शाब्दिक/कोशगत अर्थ छोड़कर नया अर्थ देते हैं।
- 2 मुहावरा वाक्य का अंश होता है। उसका क्रियारूप लिङ्ग, वचन, कारक के अनुसार बदल जाता है।
- 3 मुहावरे के अंत में क्रियाकलाप अवश्य होता है।

### लोकोक्ति

1. लोकोक्तियाँ विशेष अर्थ देती हैं, लेकिन उनका कोशगत/शाब्दिक अर्थ भी बना रहता है।
2. लोकोक्तियाँ स्वयं में एक स्वतंत्र वाक्य होती हैं। प्रयोग में आने पर उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता है।
3. लोकोक्ति के अंत में क्रियापद का होना आवश्यक नहीं है।

## मुहावरे

1. **अक्ल पर परदा पड़ना—** (बुद्धि भ्रष्ट होना)। महेश को अपने भले-बुरे का ज्ञान नहीं रहा, क्योंकि उसकी अक्ल पर परदा पड़ा हुआ है।

2. **अक्ल के पीछे लाठी लिए फिरना**— (बुद्धि से काम न लेना)। रमेश हित और अहित का विचार नहीं करता, वह अक्ल के पीछे लाठी लिए फिरता है।
3. **अक्ल के घोड़े दौड़ाना**— (अनेक प्रकार से विचार करना)। मनुष्य ने बहुत अक्ल के घोड़े दौड़ाए किंतु वह परमात्मा की लीला का भेद नहीं पा सका।
4. **अक्ल-चकराना**— (कुछ समझ में न आना)। जब साधारण सी बात में तुम्हारी अक्ल चकरा जाती है, तब तुम गणित का अध्ययन कैसे करोगे।
5. **अक्ल मारी जाना**— (बुद्धि नष्ट होना)। दिन-रात चांडाल चौकड़ी में लगे रहते हो, क्या तुम्हारी अक्ल मारी गई है।
6. **अक्ल का दुश्मन**— (मूर्ख) इसे समझाने की कोई आवश्यकता नहीं है, जानते नहीं यह तो पूरा अक्ल का दुश्मन है।
7. **अगर-मगर करना**— (बहाना करना)। यदि तुमको काम नहीं करना हो तो साफ कहो। अगर-मगर करने से कुछ लाभ नहीं।
8. **अंग-अंग ढीला होना**— (बहुत ज्यादा थक जाना) आज सुबह से शाम तक इतना परिश्रम करना पड़ा कि सोहन का अंग-अंग ढीला हो गया।
9. **अंधे के हाथ बटेर लगना**— (बिना प्रयास बड़ी चीज पा लेना)। भोलू के विवाह का रहस्य यह है कि मानो अंधे के हाथ बटेर लग गयी है।
10. **अंधे की लकड़ी**— (एकमात्र सहारा)। सुरेश— यह किसका लड़का है? विद्या— यह मेरी अंधे की लकड़ी है।
11. **अन्न-जल पूरा हो जाना**— (मर जाना)। मनुष्य के जीवन का विश्वास नहीं, न जाने कब अन्न-जल पूरा हो जाए।
12. **अपना-सा मुँह लेकर रह जाना**— (लज्जित होना, निरुत्तर होना)। नारायण को सबने रोका था कि तुम राम के साथ शास्त्रार्थ मत करो। उसने नहीं माना, शास्त्रार्थ किया और अपना सा मुँह लेकर रह गया।
13. **अपना उल्लू सीधा करना**— (स्वार्थ सिद्ध करना)। दूसरों की चाहे जितनी हानि हो जाय, गोलू अपना उल्लू सीधा करता रहता है।
14. **अपना ही राग अलापना**— (अपने ही मतलब की बात कहना)। तुम दूसरों का सुनना ही नहीं जानते, सदा अपना ही राग अलापते रहते हो।

15. **अपने पैरों पर खड़ा होना**— (स्वावलम्बी होना)। दूसरों पर निर्भर होकर जीवन यापन करना बुरा है। मनुष्य को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए।
16. **अपने मियाँ मिट्टू बनना**— (अपनी प्रशंसा करना, आत्मश्लाघा करना)। रानी अपने स्वादिष्ट व्यंजनों का बखान करती अपने ही मियाँ मिट्टू बन रही थी।
17. **अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारना**— (संकट मोल लेना)। रोहन को अपना भेद बताकर मैंने अपने पावों पर अपने आप कुल्हाड़ी मारी है।
18. **अपने मार्ग में काँटे बोना**— (अपने लिए हानिप्रद कार्य करना)। गुरु से विरोध करके तुम अपने मार्ग में काँटे बो रहे हो।
19. **अवसर—चूकना**— (मौका खो देना)। अवसर चूक जाने पर सिवाय पछाताने के और कोई लाभ नहीं।
20. **अरण्य-रोदन करना**— (व्यर्थ विलाप या भाषण करना)। निर्दयों के समक्ष अपना दुःख कहना अरण्य रोदन ही होता है।
21. **आँख भर आना**— (नेत्रों में आँसू आ जाना)। तीर्थराज आज पाँच साल के बाद घर लौटा है, उसे देखते ही उसकी माता की आँख भर आई।
22. **आँखे चार होना**— (प्रेम होना)। पुष्पवाटिका में राम और सीता की आँखे चार हो गयीं।
23. **आँखों में खून उतर आना**— (क्रोधित होना)। राहुल की बदमाशी को देखते ही मेरी आँखों में खून उतर आता है।
24. **आँखों में धूल झोंकना** — (प्रत्यक्ष धोखा देना)। पुलिस की आँखों में धूल झोंककर चोर भाग गया और पुलिस उसे ढूँढ़ती रह गयी।
25. **आग लगाकर पानी को दौड़ना**— (झगड़ा लगाकर शान्त करने का प्रयत्न करना)। संसार में ऐसे लोगों की कोई कमी नहीं हैं जो पहले आग लगाते हैं फिर पानी लेकर दौड़ते हैं।
26. **आग में पानी डालना**— (क्रोध शान्त करना)। यदि मैं आग में पानी न डालता तो वह इतना उत्तेजित हो गया था कि तुमको भस्म ही कर देता।
27. **आग लगाकर तमाशा देखना**— (झगड़ा कराकर प्रसन्न होना)। सोहन! क्या यह नीचता नहीं है कि तुम आग लगा कर तमाशा देखना चाहते हो?
28. **आग बबूला होना**— (अत्यंत क्रोधित होना)। शिव-धनुष टूटते ही परसुराम आग बबूला हो उठे।
29. **आटा गीला होना**— (मुसीबत बढ़ जाना)। मैं तो पहले से बेरोजगार था, बीमारी आ जाने से मेरा आटा गीला हो गया।

30. **आटे दाल का भाव मालूम होना**— (दुनियादारी का ज्ञान होना)। जब गृहस्थ जीवन में प्रवेश करोगे तब आटे-दाल का भाव मालूम हो जाएगा।
31. **आधा तीतर आधा बटेर**— (बेमेल चीजों का मिश्रण, गड़बड़ झाला) वह एक ही दूकान में कपड़े और किताबें बेचना चाहता था। मैंने उससे कहा कि आधा तीतर आधा बटेर होने पर बिक्री कम होगी।
32. **आसमान से तारे तोड़ना**— (असंभव कार्य करना)। प्रेमी ने प्रेमिका से कहा कि मैं तुम्हारे लिए आसमान के तारे भी तोड़ सकता हूँ।
33. **आसमान टूट पड़ना**— (अचानक बड़ी विपत्ति आ जाना)। अभी वह अपने पैरों पर खड़ा ही हो रहा था कि अचानक उस पर आसमान टूट पड़ा, उसे नौकरी से निकाल दिया गया।
34. **आसमान सिर पर उठाना**— (उत्पात मचाना, उपद्रव करना)। आजकल उस चांडाल चौकड़ी ने आसमान सिर पर उठा रखा है।
35. **आस्तीन का साँप**— (विश्वासघाती, कपटी मित्र)। मैंने तुमसे पहले ही कह दिया था कि संतोष आस्तीन का साँप है। अवसर पाते ही डस लेगा।
36. **आस्तीन के साँप पालना** — (विश्वासघाती को मित्र बनाना)। विश्वासघाती रोहन को अपने पास रखना आस्तीन में साँप पालना है।
37. **ईट से ईट बजाना**— (विध्वंस करना)। यह बात सही है कि तुम जहाँ कहीं भी जाओगे, ईट से ईट बजा दोगे।
38. **ईद का चाँद होना**— (बहुत प्रतीक्षा के बाद मिलना)। मधुसूदन! तुम्हारे तो अब दर्शन ही नहीं होते। यार, तुम तो ईद के चाँद हो गये हो।
39. **उल्टी गंगा बहाना**— (विपरीत कार्य करना)। राजू कभी खेती देखने भी नहीं जाता था। एक दिन खेत में काम करते देख लोगों ने कहा कि आज तो उल्टी गंगा बह रही है।
40. **ओखली में सिर देना**— (जानबूझकर विपत्ति में पड़ना)। अब रोते क्यों हो? तुमने दुष्टों का साथ देकर ओखली में अपना सिर दे दिया है।
41. **काठ का उल्लू**— (बड़ा मूर्ख)। उसे कुछ समझ में नहीं आता, बिल्कुल काठ का उल्लू है।
42. **कान भरना**— (घुगली करना)। तुम्हारी वहाँ कौन सुनने वाला था? तुम्हारे विरुद्ध उस दुष्ट ने साहब के कान भर दिए होंगे।
43. **कोल्हू का बैल**— (नासमझ परंतु परिश्रमी)। अमित अधिक योग्यता नहीं रखता, लेकिन कोल्हू की बैल की तरह मेहनत करता है।

44. **खून खौलना**— (क्रोध आना)। उस चांडाल को देखकर मेरा खून खौल उठता है।
45. **गागर में सागर भरना**— (थोड़े में बहुत कुछ कह देना)। बिहारी ने अपने दोहों में गागर में सागर भर दिया है।
46. **गिरगिट की तरह रंग बदलना**— (एक रंग ढंग पर न रहना)। नेता लोग गिरगिट की तरह रंग बदलते रहते हैं।
47. **चिराग तले अंधेरा होना**— (अपना दोष अपने को न दिखाई देना)। प्रोफेसर साहब का लड़का हाईस्कूल में फेल हो गया, है न चिराग तले अंधेरा।
48. **चुल्लू भर पानी में डूब मरना**— (अत्यधिक लज्जित होना)। तुमने चोरी करना सीख लिया, तुम्हें तो चुल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए।
49. **चेहरे पर हवाइयाँ उड़ना**— (भयभीत होना)। वन में सिंह की गर्जना सुनकर उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी।
50. **जमीन आसमान एक करना**— (बहुत अधिक परिश्रम करना)। तुम्हारे लिए जमीन आसमान एक कर दिया, पर तुम्हारा पता न चला।
51. **टेढ़ी खीर होना**— (कठिन काम होना)। आप के लड़के को सीधा करना तो टेढ़ी खीर हो गया है।
52. **डूबते को तिनके का सहारा**— निराशा में आशा। वह कर्ज में डूबा हुआ था। सौ रुपये मिलने से डूबते को तिनके का सहारा मिल गया।
53. **थूक कर चाटना**— (कह कर मुकर जाना, प्रतिज्ञा भंग करना)। शाम को तुमने रुपये देने को कहा, सुबह इनकार कर गये। तुम्हारी थूक कर चाटने की प्रवृत्ति अच्छी नहीं।
54. **दाँत खट्टे करना**— (पराजित करना)। राणा प्रताप ने हल्दी घाटी के मैदान में मुगलों के दाँत खट्टे कर दिए।
55. **दाल में काला होना**— (संदेह होना)। मैं पहले ही समझ गया था कि दाल में कुछ काला है।
56. **दो नावों पर पैर रखना**— (दो कार्य एक साथ करना)। रमेश नौकरी और व्यवसाय दोनों एक साथ कर दो नाव पर पैर रखे हुए है।
57. **नाक कटना**— (बदनामी होना, इज्जत चली जाना)। उसके पास खाने को कुछ नहीं था और घर में एकाएक मेहमान आ गये, परंतु पड़ोसी की मदद से उसकी नाक कटने से बच गई।
58. **नाकों चने चबाना**— (परेशान करना)। वह अधिकारी बहुत सख्त है उसके साथ काम करने में तुम्हें नाकों चने चबाना पड़ेगा।

59. **नौ दो ग्यारह होना**— (भाग जाना)। राम मोहन को मारकर नौ दो ग्यारह हो गया।
60. **पौ बारह होना**— (खूब लाभ होना)। अपने दादा जी से मिलने के कारण मोहन के पौ बारह हो गये हैं।
61. **फूँक फूँक कर कदम रखना**— (सावधानी से कार्य करना)। आज के वैज्ञानिक युग में हर व्यक्ति को फूँक फूँक कर कदम रखना चाहिए।
62. **बालू से तेल निकालना**— (असंभव को सम्भव कर देना)। उस कंजूस से दस हजार रुपये चंदा लेकर सचमुच राम ने बालू से तेल निकाल लिया।
63. **बहती गंगा में हाथ धोना**— (अवसर का लाभ उठाना)। आजकल बैंकों से छोटे-छोटे कार्यों के लिए ऋण मिल रहा है, तुम भी बहती गंगा में हाथ धो लो।
64. **भैंस के आगे बीन बजाना**— (मूर्ख को उपदेश देना)। निरक्षर व्यक्ति को व्याकरण की अशुद्धियाँ बताना भैंस के आगे बीन बजाना है।
65. **राई का पहाड़ बनाना**— (छोटी बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहना)। कुछ लोग अतिशयोक्ति करने में इतने पटु होते हैं कि राई का पहाड़ बना देते हैं।
66. **रफू चक्कर होना**— (भाग जाना)। सोहन के साथ न जाओ, कोई झगड़ा हो गया तो वह तुमको छोड़ कर रफू चक्कर हो जाएगा।
67. **लकीर का फकीर होना**— (अंधविश्वासी होना, पुरानी प्रथा पर चलना)। गाँवों में अब भी अंध विश्वास इतना फैला हुआ है कि ज्यादातर लोग लकीर के फकीर हैं।
68. **लोहे के चने चबाना**— (कठिन कार्य करना, कठिनाई का सामना करना)। अर्जुन के न रहने पर पांडवों को चक्रव्यूह तोड़ने में लोहे के चने चबाने पड़े।
69. **सिर मुड़वाते ओले पड़ना**— (आरम्भ में ही संकट उपस्थित होना)। उसने जैसे ही स्वर्णकार का काम संभाला, सरकार ने स्वर्ण नियंत्रण नियम लागू कर दिया और उस पर सिर मुड़ाते ही ओले पड़ गये।
70. **सूर्य को दीपक दिखाना**— (महान व्यक्ति का तुच्छ प्रशंसा करना)। रविंद्रनाथ टैगोर को संसार जानता है, तुम सूर्य को दीपक क्यों दिखाते हो?
71. **हवाई किले बनाना**— (कल्पना की उड़ान भरना)। कुछ करके भी दिखाओगे कि सदैव हवाई किले ही बनाते रहोगे।

## लोकोक्तियाँ(कहावर्ते)

1. **अपना हाथ जगन्नाथ—** (स्वयं का किया हुआ कार्य फलदायी होता है)।  
**प्रयोग—** घर का काम नौकरों से करवाने की अपेक्षा स्वयं करना उत्तम है, अपना हाथ जगन्नाथ।
2. **अंत भला तो सब भला—** (परिणाम अच्छा होने पर सब अच्छा मान लिया जाता है)।  
**प्रयोग—** सोहन ठीक से पढ़ाई नहीं कर रहा था, लेकिन हाईस्कूल अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हो गया। इस पर किसी ने कहा कि चलो भाई अंत भला तो सब भला।
3. **आसमान से गिरा खजूर में अटका—** (किसी कार्य के पूरा होते होते बाधा उत्पन्न हो जाना)।  
**प्रयोग—** सोहन परीक्षा में किसी तरह उत्तीर्ण हो गया, परन्तु पूरी फीस जमा न होने से उसका परीक्षाफल रोक दिया गया। इस पर उसके मित्र ने कहा, 'भाई तुम तो आसमान से गिरे तो खजूर में अटके।'।
4. **का वर्षा जब कृषि सुखाने—** (काम बिगड़ने पर सहायता व्यर्थ है)।  
**प्रयोग—** सेवानिवृत्त होने के पश्चात् काफी समय तक उसे पेंशन नहीं मिली। उसका अंत समय निकट आया तो पेंशन स्वीकृत हो गई। इस पर उसने कहा कि 'का वर्षा जब कृषि सुखाने।'।
5. **घी का लड्डू टेढ़ा भला—** (काम की वस्तु कम अच्छी रहने पर भी ठीक रहती है)।  
**प्रयोग—** मनीशा के बेटे के काले रंग को देखकर सब भला बुरा कह रहे थे, तब उन्होंने कहा कि घी का लड्डू टेढ़ा मेढ़ा भला।
6. **चौबे गये छब्बे बनने दुब्बे बनकर आये —** (लाभ के चक्कर में हानि हो जाना)।  
**प्रयोग—** उसने अधिक लाभ कमाने के लिए एक बहुत बड़ा ठेका लिया, परन्तु उसे बहुत अधिक घाटा हो गया। उसकी स्थिति देखकर एक पड़ोसी ने कहा, चौबे गये थे छब्बे बनने दुब्बे बनकर आए।
7. **जंगल में मोर नाचा किसने देखा—** (गुणों का प्रदर्शन अनुपयुक्त स्थान पर करना)।  
**प्रयोग—** गाँव में वापस लौटकर जब वह शहर में बनाये मंदिर की सुंदरता का वर्णन करने लगा तो किसी ने कहा जंगल में मोर नाचा किसने देखा।
8. **भई गति मोर छछूंदर केरी—** (असमंजस की स्थिति में होना)।  
**प्रयोग—** करीम ने रहीम को उधार देकर स्वयं को भई गति मोर छछूंदर केरी की स्थिति में डाल लिया है।
9. **समरथ को नहि दोष गोसाई—** (सबल का कोई दोष नहीं देखता है)।



**प्रयोग—** अमेरिका हिंद महासागर में अपना नौसैनिक अड्डा बना रहा है। इस संबंध में संयुक्त राष्ट्र संघ की भी परवाह नहीं थी। किसी ने ठीक ही कहा है कि समर्थ को नहि दोष गोसाईं।

10. **अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता—** बड़ा काम एक आदमी से नहीं हो सकता।

**प्रयोग—** सभीलोग साथ दें, तभी आंदोलन में सफलता मिल सकती है, अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता।

11. **अधजल गगरी छलकत जाय—** (छोटे आदमी दिखावा बहुत करते हैं)।

**प्रयोग—** पाँच बार हाईस्कूल में फेल हुए हैं और दिखाते हैं यों जैसे बड़े धुरंधर पंडित है, सच है अधजल गगरी छलकत जाय।

12. **अपनी अपनी डफली अपना अपना राग—** (एक मत न होना)।

**प्रयोग—** इस संस्था का शीघ्र ही नाश होगा, कोई नियम नहीं, कोई अध्यक्ष नहीं, सब मुखिया बनते हैं। यहाँ तो बस अपनी अपनी डफली अपना अपना राग।

13. **आँख के अंधे नाम नयनसुख—** (गुण के विपरीत होना)।

**प्रयोग—** लेखक बनें हैं, कलम पकड़ने की तमीज नहीं। सच है आँख के अंधे नाम नयनसुख।

14. **आगे नाथ न पाछे पगहा—** (कोई नाते रिश्तेदार न होना)।

**प्रयोग—** स्वामी जी का कौन खाने वाला बेटा है? उनके तो आगे नाथ न पाछे पगहा।

## अभ्यास

निम्नलिखित मुहावरों एवं लोकोक्तियों का अर्थ लिखते हुए अपने शब्दों में वाक्य प्रयोग कीजिए—

1. अपना हाथ जगन्नाथ।
2. का वर्षा जब कृषि सुखाने।
3. अपने पैरों पर खड़ा होना।
4. गंगा नहाना।
5. पीठ दिखाना।
6. बाल धूप में सफेद होना।
6. सिर चढ़ाना।
7. ख्याली पुलाव पकाना।
8. अक्ल के घोड़े दौड़ाना।

9. तीन-पाँच करना।
10. मेढकी को जुकाम होना।
11. गूलर का फूल होना।
12. अंत भला तो सब भला।
13. सूर्य को दीपक दिखाना।
14. लकीर का फकीर होना।
15. जमीन आसमान एक करना।
16. चुल्लू भर पानी में डूब मरना।



# पत्र-लेखन

**पत्र**—सम्प्रेषण के समस्त लिखित साधनों में पत्र आज भी शक्तिशाली एवं प्रभावपूर्ण साधन है। लेख में व्यक्ति का सम्पूर्ण ध्यान विषय-वस्तु के प्रतिपादन की तरफ रहता है, परन्तु पत्र में निकटतम आत्मीयता रहती है तथा इसलिए लेखक और पाठक दोनों सामीप्य का अनुभव करते हैं। संक्षेप में पत्र-लेखन की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नवत् हैं—

**1. सरलता**—पत्र की भाषा सरल, सुबोध और ग्राह्य होनी चाहिए। जिसमें स्पष्टता का होना अत्यंत आवश्यक है। जटिल और अस्पष्ट भाषा पत्र को निरर्थक और उबाऊ बना देती है। पत्र के द्वारा पत्र-लेखक का आशय अपने पूर्ण रूप में व्यक्त होना चाहिए।

**2. निश्चयात्मकता**—पत्र में अभिप्राय की सुनिश्चितता स्पष्ट होनी आवश्यक है। पत्र पढ़कर यदि पाठक में अनिश्चितता बनी रहे तो पत्र का सारा उद्देश्य निरर्थक हो जाता है।

**3. संक्षिप्तता**—पत्र-लेखक में गागर में सागर भरने की कला होनी चाहिए। पत्र में अनावश्यक विस्तार एवं आलंकारिक शैली के प्रयोग से सदैव बचना चाहिए।

शैली-शिल्प को व्यापक रूप में देखते हुए पत्रों को निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित किया जाता है—

1. अनौपचारिक तथा 2. औपचारिक पत्र।

**1. अनौपचारिक पत्र**—अनौपचारिक पत्र को व्यक्तिगत पत्र भी कहा जाता है। इसीलिए इन पत्रों में व्यक्तिगत अनुभव का विवरण होता है। ये पत्र अपने परिवार के सदस्यों, मित्रों और निकट संबंधियों को लिखे जाते हैं।

**2. औपचारिक पत्र**—यह पत्राचार उन लोगों के साथ किया जाता है, जिनके साथ हमारा कोई निजी परिचय नहीं होता। यदि होता है तो उसमें व्यक्तिगत लगाव और आत्मीयता गौण होती है। इनमें औपचारिकता और कथ्य संदेश ही मुख्य होता है; इनमें तथ्यों और सूचनाओं पर ही अधिक महत्त्व दिया जाता है।

औपचारिक पत्रों के अंतर्गत निम्नलिखित पत्र आते हैं—

(क) आवेदन-पत्र,

(ख) व्यावसायिक-पत्र,

(ग) सरकारी पत्र,

(घ) अव्यावसायिक-पत्र।

औपचारिक और अनौपचारिक पत्रों को एक विशिष्ट प्रकार के ढाँचे में रखकर प्रस्तुत किया जाता है।

**नोट :** परीक्षार्थी को अपनी व्यक्तिगत पहचान बताने की अनुमति नहीं होती है, अतः पत्र लिखते समय यदि पत्र-लेखक के विषय में कोई सूचना नहीं दी गई है तो 'भेजने वाले के पते' के स्थान पर 'परीक्षा भवन' अथवा XYZ लिख देना चाहिए, अन्यथा दी गई सूचना का प्रयोग कर सकते हैं।

### अनौपचारिक पत्रों का प्रारूप

पत्र चाहे औपचारिक हो अथवा अनौपचारिक दोनों में प्रारूप का स्थान महत्वपूर्ण होता है। वस्तुतः औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार के पत्रों के ऐसे विशिष्ट प्रारूप होते हैं, जिनके आधार पर पत्र लेखन किया जाता है। उदाहरण के लिए, अनौपचारिक पत्र का प्रारूप—

211, करिश्मा अपार्टमेंट  
लूकरगंज  
प्रयागराज  
8 नवंबर, 20XX

सेवा में,

पिताजी

सादर प्रणाम।

विगत शाम की डाक से आपका पत्र मिला। आप सभी का कुशलता जानकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई। यहाँ पर सुरेश, महेश और ऐश्वर्य सभी ठीक हैं।

आपने अपने पत्र में ..... दादीजी, माताजी, बुआजी आदि को .....।

पत्र की प्रतीक्षा में

आपका बेटा  
रोहन

उक्त प्रारूप के आधार पर अनौपचारिक पत्र में तीन प्रमुख भाग हैं—

- (i) शीर्ष भाग,
- (ii) मुख्य मध्य भाग
- (iii) अधोभाग।

शीर्ष भाग में अपना पता, दिनांक, संबोधन वाक्य और प्रशस्ति आते हैं। मुख्य मध्य भाग में पत्र का संदेश अथवा कथ्य रहता है तथा अधोभाग में 'स्वनिर्देश' के अंतर्गत अपना नाम और हस्ताक्षर लिखा रहता है।

## औपचारिक पत्र

औपचारिक पत्र का भी अपना एक सुनिश्चित प्रारूप होता है। उसमें शीर्ष भाग में पत्र-प्रेषक का पता बायीं ओर लिखा जाता है तथा पत्र-प्रेषक अपना नाम नीचे 'स्वनिर्देश' के बाद लिखते हैं।

औपचारिक पत्र के मध्य भाग को समाप्त करने के बाद आभार-सूचक वाक्य अथवा 'धन्यवाद' लिखते हैं और उसके बाद ही 'स्वनिर्देश' लिखते हैं।

## औपचारिक पत्रों का प्रारूप

अपनी गली/मोहल्ले की नालियों की समुचित सफ़ाई के लिए नगर निगम के स्वास्थ्य अधिकारी को पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 4 दिसंबर, 20XX

स्वास्थ्य अधिकारी

नगर निगम,

प्रयागराज।

**विषय : मोहल्ले की सफ़ाई हेतु।**

महोदय,

आपका ध्यान ..... करना पड़ता है।

अतः उक्त .....

सकती है।

सधन्यवाद।

भवदीय,

मनोज कुमार

पत्र आरंभ और समाप्त करने की औपचारिक तालिका

पत्र का प्रकार	संबंध	आरंभ	समापन
व्यक्तिगत	माता-पिता, बड़े भाई अथवा बड़ी बहन तथा आदरणीय संबंधियों को	माननीय, पूजनीय, पूज्य, श्रद्धेय, आदरणीय	आपका आज्ञाकारी, स्नेह पात्र, स्नेह भाजन,
	मित्र अथवा सहपाठी को अपने से छोटों को	प्रिय मित्र, मित्रवर, प्रिय, प्रियवर	आपका, तुम्हारा शुभचिंतक, शुभाकांक्षी।
व्यवसायिक	पुस्तक विक्रेता, बैंक मैनेजर या अन्य व्यापारी आदि।	श्रीमान, महोदय, प्रिय महोदय, प्रबंधक महोदय	भवदीय, निवेदक
आवेदन-पत्र	प्रधानाचार्य  संबंधित अधिकारी आदि।	श्रीमान, महोदय / महोदया, मान्यवर  श्रीमान, मान्य, मान्यवर महोदय / महोदया	विनीता, प्रार्थी, भवदीय, आपका आज्ञाकारी आपका स्नेह भाजन भवदीय, विनीत
कार्यालय	संपादक, नगर निगम अधिकारी, केंद्रीय मंत्री, रेलवे अधीक्षक, आदि।	श्रीमान, मान्यवर, महोदय / महोदया	भवदीय, प्रार्थी, कृपाकांक्षी, निवेदक, विनीत

औपचारिक पत्र

(क) आवेदन / प्रार्थना-पत्र (प्रधानाचार्य / मुख्याध्यापक को)

1. अपने प्रधानाचार्य को छात्रवृत्ति के लिए एक आवेदन-पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 15 अप्रैल, 20XX

प्रधानाचार्य,  
राजकीय इ0 का0 प्रयागराज,  
उत्तर प्रदेश।

**विषय : छात्रवृत्ति हेतु आवेदन।**

महोदय,

कक्षाध्यापिका द्वारा यह सुनकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि विद्यालय के उन छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्तियाँ दी जाएँगी, जो अस्सी प्रतिशत तक अंक प्राप्त करने के साथ-साथ किसी-न-किसी सांस्कृतिक प्रवृत्ति में भी विशेष योग्यता रखते होंगे।

महोदय पिछले वर्ष भी मैंने आठवीं कक्षा में अस्सी प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किए थे तथा वाद-विवाद प्रतियोगिता और कविता पाठ प्रतियोगिता में भी मैंने प्रथम स्थान प्राप्त किया था। इस बार भी मैं अंतर्विद्यालय वार्षिक भाषण प्रतियोगिता में पुरस्कृत किया गया हूँ। आशा करता हूँ कि मैं प्रथम सत्र की परीक्षा में भी अच्छे अंक प्राप्त करूँगा। मैं विद्यालय की हॉकी टीम का कैप्टन भी हूँ तथा सभी अध्यापक मुझसे प्रसन्न रहते हैं।

आशा है आप मुझे छात्रवृत्ति की उपर्युक्त सुविधा प्रदान करके प्रोत्साहित करेंगे। मैं सदैव आपका आभारी रहूँगा।

सधन्यवाद।

आपका आज्ञाकारी शिष्य

क0 ख0 ग0

कक्षा .....

## 2. विद्यालय में खेल-कूद की सामग्री की ओर ध्यान दिलाते हुए प्रधानाचार्य को एक प्रार्थना-पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 22 फरवरी, 20XX

प्रधानाचार्य,  
केंद्रीय विद्यालय, कैप्ट  
प्रयागराज।

### विषय : खेल-कूद की सामग्री के लिए आवेदन

महोदय,

सविनय निवेदन है कि इस वर्ष हमारे विद्यालय ने क्षेत्रीय खेल प्रतियोगिताओं में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया है। आगामी खेल प्रतियोगिताओं के लिए टीमों का चुनाव करने से पूर्व यह आवश्यक हो जाता है कि अपने विद्यालय के खेल के मैदान की समुचित सफाई, ऊँचे-नीचे गड्ढों की भराई, माप के अनुसार मैदान की निशानदेही और यथास्थान पोल गड़वाने की समुचित व्यवस्था की जाए। इन सबके अतिरिक्त खेल की आवश्यक सामग्री—गेंद-बल्ले, हॉकी-स्टिक, फुटबॉल, वॉलीबॉल, जाली (नेट) आदि का यथोचित प्रबंध करना भी आवश्यक है।

आशा है ऊपर दिए गए विवरण के अनुसार आवश्यक प्रबंध करने और सामग्री जुटाने की दिशा में आप शीघ्र ही यथोचित कदम उठाने की कृपा करेंगे।

आपका आज्ञाकारी शिष्य

क0 ख0 ग0

.....

## (ख) आवेदन-पत्र (नौकरी के लिए)

## आवेदन-पत्र का प्रारूप

पद जिसके लिए आवेदन किया जा रहा है—कनिष्ठ लिपिक (हिंदी)

1. नाम : .....
2. पिता का नाम : .....
3. जन्म-तिथि : 20-12-2001
4. वर्तमान पता : X Y Z
5. स्थायी पता : X Y Z
6. क्या आप अनुसूचित जाति/  
जनजाति/पिछड़ी जाति के हैं ? : नहीं
7. यदि हाँ, तो जाति का नाम लिखिए : —
8. क्या आप भारतीय नागरिक हैं ? : हाँ
9. यदि नहीं तो अपनी नागरिकता लिखिए : —
10. योग्यता/अर्हताएँ :

कक्षा बारहवीं	प्रथम श्रेणी	2018	के०मा० शिक्षा बोर्ड, नई दिल्ली	हिंदी, अंग्रेजी, गणित, इतिहास, अर्थशास्त्र
बी० ए०	द्वितीय श्रेणी	2021	इलाहाबाद वि०वि०	हिंदी, अंग्रेजी, इतिहास, अर्थशास्त्र।
टंकण डिप्लोमा	2022		आई.टी.आई., प्रयागराज	हिंदी टंकण/अंग्रेजी टंकण।

मैं प्रमाणित करता हूँ कि आवेदित पद के लिए निर्धारित अर्हताएँ मुझमें हैं। जो सूचनाएँ इस आवेदन-पत्र में मैंने दी हैं, वे सही हैं।

आवेदक के हस्ताक्षर

X Y Z

दिनांक : .....

## 3. विज्ञापित पद के लिए आवेदन-पत्र।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 3 नवंबर, 20XX

प्रधानाचार्य,  
केन्द्रीय विद्यालय, कैण्ट  
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।



**विषय : गणित शिक्षक हेतु आवेदन।**

महोदय,

अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में 30 अक्टूबर, 20XX को आपकी ओर से विज्ञापित गणित शिक्षक के पद के लिए मैं अपनी सेवाएँ अर्पित करना चाहता हूँ। मेरी शैक्षिक योग्यताओं और शिक्षण-अनुभव का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

- मैंने सन 1997 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज से गणित में प्रथम श्रेणी के साथ एम0 एस-सी0 किया।
- सन 1999 में मैंने दिल्ली विश्वविद्यालय से संबद्ध राष्ट्रीय शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान से बी0 एड0 प्रथम श्रेणी में किया।
- जुलाई, 2002 से 2006 तक मैंने बाल भारती पब्लिक स्कूल प्रयागराज में गणित के वरिष्ठ शिक्षक के रूप में काम किया। यह एक प्रतिष्ठित विद्यालय है। यहाँ मेरे विद्यार्थियों का परीक्षा परिणाम उल्लेखनीय रहा है।
- एक कुशल शिक्षक होने के साथ-साथ मैं अपने अध्ययन काल में एक श्रेष्ठ वक्ता रहा हूँ और मैंने अनेक बार अंतर्विद्यालयी भाषण प्रतियोगिताओं में अपनी संस्था का सफल प्रतिनिधित्व किया है। इस संबंध में विशेष योग्यताओं के कुछ प्राप्त किए गए प्रमाण-पत्र मेरे पास हैं, जो मैं साक्षात्कार के समय आपके समक्ष प्रस्तुत करूँगा।

यदि महोदय द्वारा मुझे सेवा का अवसर दिया गया तो निश्चय ही मेरी भूमिका से कभी निराश नहीं होना पड़ेगा। आवश्यक प्रमाण-पत्रों की प्रतिलिपियाँ संलग्न कर रहा हूँ, वास्तविक प्रमाण-पत्र साक्षात्कार के समय आपके समक्ष प्रस्तुत करूँगा। आशा है आप मुझे सेवा का अवसर देकर अनुगृहीत करेंगे।

सधन्यवाद।

आवेदक

रामकृपाल सिंह

4. 'नाट्य कला केंद्र' नाम की एक संस्था दूरदर्शन के लिए कार्यक्रम बनाती है। संस्था को कुछ ऐसे युवकों की आवश्यकता है, जो अभिनय जानते हों, कम-से-कम दसवीं तक पढ़े हों और हिंदी और अंग्रेजी शुद्ध बोलते हों। अपनी योग्यताओं का विवरण देते हुए 'नाट्य कला केंद्र' को एक आवेदन पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 2 जनवरी, 20XX

प्रबंधक,

**नाट्य कला केंद्र**

प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।

**विषय : अभिनय के लिए आवेदन।**

महोदय,

मुझे ज्ञात हुआ है कि आपकी संस्था को कुछ ऐसे कलाकारों की आवश्यकता है, जो अभिनय जानते हों और हिंदी-अंग्रेज़ी शुद्ध बोल सकते हों। इस कार्य हेतु मैं स्वयं को एक उम्मीदवार के रूप में प्रस्तुत करता हूँ। मुझसे संबंधित पूर्ण विवरण निम्नलिखित हैं —

नाम : क-ख-ग

पिता का नाम : अ- ब- स

शिक्षा : दसवीं पास

अन्य योग्यताएँ : मुझे बचपन से ही अभिनय में रुचि रही है। विद्यालयी स्तर पर मैंने अनेक नाटकों में अभिनय किया है। अभिनय का डिप्लोमा भी मैंने भारतीय नाटक संस्थान से प्राप्त किया है। मैं हिंदी और अंग्रेज़ी शुद्ध बोलने और लिखने में सक्षम हूँ।

आशा है आप मुझे एक अवसर देने की कृपा करेंगे।

धन्यवाद सहित।

भवदीय,

क0 ख0 ग0

**(ग) कार्यालयी पत्र (सरकारी/अर्धसरकारी संस्थाओं हेतु)**

5. अपनी गली/मोहल्ले की नालियों की समुचित सफ़ाई के लिए नगर निगम के स्वास्थ्य अधिकारी को पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 4 दिसंबर, 20XX

स्वास्थ्य अधिकारी

नगर निगम,

प्रयागराज।

**विषय : मोहल्ले की सफ़ाई हेतु।**

महोदय,

आपका ध्यान अलोपी बाग से संलग्न बस्ती की गन्दगी से उत्पन्न दयनीय स्थिति की ओर आकर्षित किया जाता है। इस बस्ती में सफ़ाई-व्यवस्था इतनी निम्नतर और चिंताजनक है कि यहाँ के निवासियों के स्वास्थ्य के लिए भयानक खतरा उत्पन्न हो गया है। जगह-जगह सड़ते कूड़े-कचरे के ढेर और उन पर भिनभिनाती मक्खियाँ किसी भी महामारी को आमंत्रित कर सकती हैं। साथ ही कूड़े-कचरे के ढेर को बिखरने से भी रास्ता चलने वालों को भी अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

अतः उक्त बस्ती की स्वास्थ्य-सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए अविलंब कोई महत्वपूर्ण कदम उठाया जाए। अन्यथा स्थिति भयावह हो सकती है।

सधन्यवाद।

भवदीय,  
मनोज कुमार

### अनौपचारिक पत्र

#### व्यक्तिगत/पारिवारिक/सामाजिक पत्र

1. विद्यालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर में पुरस्कार-प्राप्ति की प्रसन्नता का वर्णन करते हुए अपनी माता जी को एक पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

दिनांक : 15 मार्च, 20XX

पूज्य माता जी,

सादर चरण स्पर्श।

पिछले एक माह से हम विद्यालय के वार्षिकोत्सव की तैयारी में लगे हुए थे। कल ही यह वार्षिकोत्सव आयोजित किया गया था, जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

विगत वर्ष की तरह इस वर्ष भी विद्यालय को सजाया गया था।

सरस्वती वंदना के साथ वार्षिकोत्सव कार्यक्रम का शुभारंभ प्रधानाचार्य ने अतिथियों का स्वागत करते हुए वर्ष की उपलब्धियों का उल्लेख करते हुए किया। तदनंतर सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। जिसमें लोक-गीत, लोक-नृत्य, मूक-अभिनय तथा नाटक आदि का प्रस्तुतीकरण किया गया। सांस्कृतिक कार्यक्रम का सबसे प्रमुख आकर्षण केन्द्र 'नाटक' था, जिसमें प्रमुख पात्र का अभिनय मेरे द्वारा किया गया, जिसे दर्शकों ने बहुत सराहा। इस अवसर पर कला-प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया, जिसमें नन्हे-मुन्ने कलाकरों के चित्रों को भी प्रदर्शित किया गया था।

सांस्कृतिक कार्यक्रम के पश्चात् मुख्य अतिथि माननीय शिक्षा निदेशक ने विद्यालय की गतिविधियों में भाग लेने वाले छात्रों में पारितोषिक वितरित किया। मुझे सर्वश्रेष्ठ अभिनेता तथा सर्वश्रेष्ठ वक्ता होने का पुरस्कार मिला। यह सब आपके आशीर्वाद तथा गुरुजनों के मार्गदर्शन का परिणाम है। मुख्य अतिथि ने भी मेरे अभिनय की सराहना की।

अंत में मुख्य अतिथि ने विद्यालय की उपलब्धियों की बहुत प्रशंसा की तथा छात्रों को रचनात्मक कार्यों को करते रहने की प्रेरणा भी दी। प्रधानाचार्य द्वारा तभी अतिथियों को धन्यवाद दिए जाने के बाद समारोह का समापन हो गया।

शेष सब कुशल है।

आपका,  
आज्ञाकारी पुत्र  
क ख ग

## 2. किसी पर्यटक स्थल का वर्णन करते हुए अपने मित्र को पत्र लिखिए कि वह भी कुछ दिनों के लिए आपके पास आ जाए।

परीक्षा भवन  
प्रयागराज  
दिनांक : 20 मार्च, 20XX

प्रिय मित्र दिनेश,  
नमस्ते।

आशा करता हूँ तुम सकुशल होगे। कल ही तुम्हारा पत्र मिला। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम्हारी परीक्षा समाप्त हो गई है तथा विद्यालय ग्रीष्मावकाश के उपलक्ष्य में 30 जून तक के लिए बंद हो गया है।

मेरी बहुत दिनों से यह अभिलाषा थी कि तुम्हें कुछ दिनों के लिए अपने पास बुलाऊँ, परन्तु तुम्हारी परीक्षा एवं पढ़ाई का विचार कर ऐसा नहीं कर पा रहा था। अब तुम्हारी परीक्षा समाप्त हो गई है और विद्यालय भी बंद हो गया है, अतः हम तुम्हें अपने घर आने का सप्रेम निमंत्रण प्रेषित करता हूँ।

यद्यपि मेरा घर छोटे से नगर में है, फिर भी इसकी कई विशेषताएँ हैं। इस नगर में अनेक दर्शनीय एवं पर्यटक स्थल हैं। इस नगर का एक-एक कोना अपने नैसर्गिक सौंदर्य से परिपूर्ण है।

मुझे पूरा विश्वास है कि तुम निश्चित रूप से मेरे निमंत्रण को स्वीकार करोगे। हम तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आने से पूर्व यहाँ पहुँचने की तिथि से अवगत कराना, जिससे मैं तुम्हें लेने स्टेशन पर आ सकूँ।

तुम्हारा मित्र  
क0 ख0 ग0

### 3. अपने मित्र को अपने बड़े भाई के विवाह में सम्मिलित होने का निमंत्रण भेजिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 11 मार्च, 20XX

प्रिय मित्र दिनेश,

नमस्कार।

तुम्हें यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि ईश्वर की असीम अनुकम्पा से मेरे अग्रज श्री नीरज कुमार का शुभ विवाह वाराणसी निवासी श्री विनीत कुमार की पुत्री से दिनांक 25 मार्च, 20XX को होना सुनिश्चित हुआ है। वरयात्रा 25 मार्च को प्रातः दस बजे वाराणसी के लिए प्रस्थान करेगी। इस शुभ अवसर पर मैं तुम्हें सप्रेम आमंत्रित करते हुए आशा करता हूँ कि तुम अपनी उपस्थिति से विवाह समारोह की शोभा बढ़ाओगे।

शेष मिलने पर...

तुम्हारा मित्र

क0 ख0 ग0

### 4. 'छात्रावास की जीवनशैली' विषय पर अपने मित्र को एक पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 13 मार्च, 20XX

प्रिय मित्र संतोष,

नमस्ते।

तुम्हारा 4-3-20XX का लिखा पत्र क्या मिला, मानों तुम स्वयं मिल गए। उत्तर में देरी के लिए क्षमा-प्राथी हूँ। तुमने छात्रावास के जीवन के बारे में पूछा है। सच बात तो यह है कि यहाँ के आनंद का वर्णन कर पाना कठिन है।

हमारे छात्रावास का भवन विशाल एवं एकदम नया है। इसका परिसर भी स्वच्छ तथा सुंदर है। चारों ओर हरियाली है तथा दोनों ओर खुले 'लॉन' हैं।

सूर्योदय से पूर्व हमें जगा दिया जाता है। हम दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर उद्यान में घूमने चले जाते हैं। वहाँ योगासन, व्यायाम आदि करने के बाद दौड़ भी लगाते हैं। वापस आकर हम नाश्ता करते हैं। हमारे छात्रावास का भोजन बहुत बढ़िया होता है।

महीने में एक दिन रात्रि के समय हमारे छात्रावास में विनोद-सभा अवश्य होती है। इसमें हम लोग कविता, कहानी, चुटकुले, ग़ज़ल या कभी गीत गाने के साथ-साथ नृत्य भी प्रस्तुत करते हैं।

शेष फिर कभी मिलने पर...

तुम्हारा स्नेहाकांक्षी

क0 ख0 ग0

5. सड़क-दुर्घटना से घायल मित्र को सांत्वना देते हुए एक पत्र लिखिए।

परीक्षा भवन

प्रयागराज

दिनांक : 26 मार्च, 20XX

प्रिय मित्र अर्जुन,

नमस्कार।

कल अमृत के पत्र द्वारा विदित हुआ कि तुम विगत माह में एक सड़क दुर्घटना में घायल हो गये थे। इस समाचार से न केवल मैं, अपितु मेरे माता-पिता भी अत्यंत दुखी हैं। इतनी भयंकर दुर्घटना में कुछ भी हो सकता था; पर ईश्वर ने तुम्हारी रक्षा की। पढ़ाई आदि के बारे में अधिक चिंता मत करना। विपत्ति के समय ही मनुष्य के धैर्य एवं साहस की परीक्षा होती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम इस परीक्षा में अवश्य उत्तीर्ण होगे। तुम न केवल स्वयं साहस का परिचय दोगे बल्कि अपने माता-पिता एवं परिजनों को भी चिंतित होने से बचाने का प्रयास करोगे। मेरे माता-पिता तुम्हारे शीघ्र स्वस्थ होने की कामना करते हैं। मैं शीघ्र ही तुमसे मिलने आऊँगा।

शेष मिलने पर...

तुम्हारा अभिन्न मित्र

क0 ख0 ग0

## अभ्यास

1. कुछ समय पूर्व आपने एक रेफ्रिजरेटर खरीदा, जिनमें अनेक कमियाँ हैं। इस समस्याओं के निवारण हेतु अपने विक्रेता के नाम एक पत्र लिखिए, जहाँ से आपने वह खरीदा है।
2. स्वास्थ्य केंद्र पर उपकरणों एवं औषधियों के अभाव के कारण रोगियों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इस समस्या की ओर अधिकारियों का ध्यान आकर्षित करने के लिए किसी समाचार-पत्र के संपादक को पत्र लिखिए।
3. अपने छोटे भाई को मन लगाकर पढ़ने की सलाह देते हुए पत्र लिखिए।
4. अपनी माता जी की बीमारी पर चिंता व्यक्त करते हुए अपने पिता जी को एक पत्र लिखिए।
5. आपके विद्यालय में होने वाले वार्षिक उत्सव में आपको पुरस्कृत किया जाएगा। आप चाहते हैं कि आपकी माता जी भी इसे देखें। माता जी को बुलाने के लिए पत्र लिखिए।
6. अपनी विशेष रुचियों का परिचय देते हुए अपने पत्र-मित्र को पत्र लिखिए।
7. समय के सदुपयोग और परिश्रम पर बज देते हुए छोटे भाई को एक प्रेरणादायक पत्र लिखिए।

8. अपने जन्म-दिन पर मित्र द्वारा भेजे गए उपहार के लिए धन्यवाद-पत्र लिखिए।
9. विदेश में स्थित अपने पत्र-मित्र को होली की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए पत्र लिखिए।
10. आपकी माताजी जी विधानसभा चुनाव जीत गई हैं। मतदाताओं की अपेक्षाओं में खरे उतरने की कामना करते हुए उन्हें बधाई पत्र लिखें।
11. वाराणसी में रहने वाली प्रज्ञा की ओर से छात्रावास में रहने वाले भाई को व्यायाम का महत्त्व बताते हुए पत्र लिखिए।
12. आप ग्रीष्ममावकाश में मंसूरी स्थित नाट्य-संस्थान से प्रशिक्षण पाना चाहते हैं, परंतु आपकी माताजी सहमत नहीं हैं। उन्हें नाट्य की विशेषताओं से अवगत कराते हुए पत्र लिखिए।
13. उत्तर मध्य रेलवे के महाप्रबंधक को एक पत्र लिखिए, जिसमें टिकट-निरीक्षक के अभद्र व्यवहार की शिकायत की गई हो।
14. आप पर्यटन के लिए चेन्नई गए थे। वहाँ एक स्थानीय छात्र की सहायता से आपका पर्यटन यादगार हो गया। उसे एक धन्यवाद-पत्र लिखिए।
15. आपके विद्यालय के पुस्तकालय में हिंदी की पत्र-पत्रिकाएँ नहीं मँगाई जातीं। इसकी शिकायत करते हुए प्रधानाचार्य को एक पत्र लिखिए।
16. अपने क्षेत्र में पार्क विकसित कराने के लिए नगर निगम के मुख्य उद्यान-निरीक्षक को पत्र लिखिए।
17. वाद-विवाद प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर अपने चचेरे भाई को बधाई देते हुए पत्र लिखिए।
18. राज्य परिवहन निगम के मुख्य प्रबंधक को बस चालक के अप्रशंसनीय व्यवहार का उल्लेख करते हुए शिकायती पत्र लिखिए।
19. अपने मित्र को एक पत्र लिखिए, जिसने रूड़की कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में प्रवेश-परीक्षा में सफलता पर उसे बधाई दी गई हो।
20. आपके छोटे भाई ने बोर्ड-परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया है। पुरस्कार में एक मोटरसाइकिल खरीदने की जिद करने पर उसे पत्र लिखकर समझाइए कि अवयस्क के लिए वाहन चलाने की वैधानिक अनुमति नहीं होती है।

